हिन्दी भाषा ज्ञान

(An Introductory Knowledge
of
Hindi Language)

★

डा० शिवकुमार शुक्ल
एम० ए० (हिन्दी तथा संस्कृत), पी-एच० डी०
हिन्दी विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

कालेज बुक डिपो
पुस्तक-प्रकाशक, विक्रेता एवं मुद्रक
त्रिपोलिया बाजार, जयपुर

भूमिका

हिन्दी भाषा का अध्ययन करते समय, यह बात अनेक बार मन में आई कि कोई ऐसी सर्वांगपूर्ण पुस्तक अवश्य होनी चाहिए, जिससे छात्रों को हिन्दी का शुद्ध और वास्तविक ज्ञान सरलता से प्राप्त हो सके। यों तो अनेक विद्वानों ने इस दिशा में विविध स्तुत्य प्रयास किए हैं, तो भी कुछ अभाव लगातार अनुभूत होता रहा। पक्षपात-दृष्टि से देखने पर तो, उन पुस्तकों से बड़ा सन्तोष भी हुआ, परन्तु मन ही मन यह आग्रह बढ़ता रहा कि स्वयं कुछ प्रयत्न किया जाय।

यह पुस्तक उसी प्रयत्न का परिणाम है। चेष्टा तो सदैव यही रही है कि यह सर्वाङ्गपूर्ण हो, परन्तु स्वयं मनुष्य ही पूर्ण नहीं है। लेखक उन विद्वानों तथा छात्रों के प्रति हृदय से आभारी रहेगा, जो इस पुस्तक की त्रुटियों की ओर इङ्गित करके कुछ ठोस परामर्श भी देंगे, ताकि इसके अन्य संस्करणों में उनका सुविधापूर्वक उपयोग किया जा सके।

इस पुस्तक को अधिक उपयोगी एवं सुरुचिपूर्ण बनाने के लिए जो प्रयास, मेरी पुत्री सुषमा 'विशारद' ने किए हैं, उनकी मैं प्रशंसा करता हूं, किन्तु क्या यह आत्म-प्रशंसा न होगी ?

अन्त में मैं श्री पूनमचन्द जी जैन के प्रति भी कृतज्ञता व्यक्त करता हूं, जिन्होंने इस पुस्तक के इस रूप में प्रकाशन और रूप सज्जा-प्रदान में अथक परिश्रम किया है।

पुस्तक के उज्ज्वल भविष्य की आशा में—

शिवकुमार शुक्ल

विषय-सूची

निबन्ध

पत्र-निबन्ध

हास्य निबन्ध

अन्य निबन्ध

निबन्धों की रूपरेखाएं

निबन्ध

निबन्ध की परिभाषा

'निबन्ध' का शाब्दिक अर्थ है 'निश्चित बन्ध।' इसमें लेखक के सामने एक निश्चित बन्धन होता है। इतना अवश्य है कि 'निबन्ध' के शीर्षक से आप भले ही अनुमान कर सकते है कि वह निबन्ध क्या और कैसा होगा, किन्तु वह केवल अनुमान मात्र ही होगा। 'प्रबन्ध' के सम्बन्ध मे तो आप दावे के साथ कह सकते है कि यही होगा और आपका दावा वहा सच हो जाता है, क्योकि प्रबन्ध का शाब्दिक अर्थ ही है 'प्रकृष्ट बन्ध' (ठीक तरह से बंधा हुआ)। 'प्रबन्ध' मे तो एक रूपरेखा पहले ही स्थिर करली जाती है, फिर तो केवल 'खानापूरी' ही शेष रह जाती है। जितना बड़ा प्रबन्ध लिखना हो, उतना ही रूपरेखा को आप बढाते चले जाइये, बस आपका उद्देश्य सिद्ध है।

'निबन्ध' में इतना बन्धन नही है। वहा इतना ही निश्चित है कि निबन्धकार 'शीर्षक' के संकेत पर आरम्भ करता है और उसी के संकेत पर समाप्त करता है, किन्तु निबन्ध के समस्त विस्तार में, लेखक के निजी भावो तथा विचारों का स्वतन्त्र प्रसार होता है। वह कुछ भी हो सकता है और कैसा भी हो सकता है। बात कुछ अटपटी सी लगती है, किन्तु सच है। इसीलिए तो निबन्ध का कोई पर्याय नही है। रचना, लेख, प्रबन्ध, सन्दर्भ, गद्यविधान आदि अनेक शब्द उसकी भावना का यथावत् स्पर्श करने मे असमर्थ सिद्ध हो चुके हैं।

अंग्रेजी मे निबन्ध के लिए 'एसे' शब्द का प्रयोग किया जाता है। वहां भी उसकी परिभाषा अनेक प्रकार से की जाती है। कहीं 'अस्त व्यस्त विचारो के प्रकाशन' की चर्चा है तो कहीं सुगठित, सीमित और सारगर्भित आयोजन की। इस विरोध के होने पर भी वहां एक सहमति है कि निबन्ध मे साहित्यकार के व्यक्तित्व-विकास की प्रधानता रहती है। आचार्य रामचन्द्र

शुक्ल भी यही मानते है कि आधुनिक पाश्चात्य लक्षणो के अनुसार निबन्धो मे एक व्यक्तिगत विशेषता होती है किन्तु उनके अनुसार वह इतनी नही होनी चाहिए कि उसका लक्ष्य ही तमाशा बन जाय।

निबन्ध की विभिन्न परिभाषाओं का सार यही है कि निबन्ध एक ऐसी गद्य-रचना है जिसमें निबन्धकार के व्यक्तित्व का विशेष सजीव सामंजस्य होता है। इसका कारण यही है कि निबन्धकार अपने निबन्ध मे, वस्तु का स्वाभाविक प्रतिपादन करते हुए भी, कभी बुद्धि के पूर्ण वशगत नही होता है। वह स्थान-स्थान पर अपनी हार्दिक भावनाओ का नैरसा चढाता हुआ चलता है। उसका मन रम जाता है वहां वह कुछ विश्राम भी कर लेता है और पुनः अपने निश्चित लक्ष्य की ओर चल पडता है। अपनी इस बुद्धि-यात्रा मे वह हृदय का पल्ला एक क्षण के लिए भी नही छोडता है, इसीलिए उसके निबन्धो मे उसके व्यक्तित्व का सहृदय संस्पर्श पाया जाता है।

वस्तुतः निबन्ध मे इतनी स्वतन्त्रता होती है कि उसमे न तो कोई बधी-बधी परम्परा या व्यवस्था है, और न कोई नियमित औपचारिकता ही है। यहां निबन्धकार अपने अभीष्ट दृष्टिकोण मे 'वस्तु' का प्रतिपादन करता है। वह, न तो इतिहासकार की तरह खंडहरो मे चक्कर काटता है, न कवि की तरह केवल कल्पना-लोक में ही विचरता है, न दार्शनिक की तरह निरपेक्ष रहता है और न राजनीतिज्ञ की तरह अत्यधिक सापेक्ष हो जाता है। वह तो इन सब का एक अद्भुत समन्वय है। उसमे अतीत का दर्शन भी है, सहृदयता भी है, उचित विकर्षण भी है और उचित आकर्षण भी। उसकी कुछ अपनी सीमाएं हैं, जहा भावो और विचारो का एक सानुपातिक और सन्तुलित संगुम्फन है।

निबन्ध के प्रकार—निबन्ध की परिभाषा से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि उसमे वस्तु से अधिक शैली की प्रधानता होती है। वस्तु दो प्रकार की हो सकती है (१) वर्णन प्रधान और (२) विवरण प्रधान। इसी प्रकार शैली के भी दो भेद होते है (१) भाव प्रधान और (२) विचार प्रधान। अतः निबन्ध के भी, इस दृष्टिकोण से, चार वर्ग किए जा सकते हैं, जैसे:—

(१) वर्णन प्रधान निबन्ध।
(२) विवरण प्रधान निबन्ध।
(३) भाव प्रधान निबन्ध।
(४) विचार प्रधान निबन्ध।

(१) **वर्णन प्रधान निबन्ध** इस प्रकार के निबंधों में वर्ण्य वस्तु के रूप, रंग, आकार, प्रकार आदि का वर्णन प्रधान होता है, जैसे प्रकृति वर्णन, नगर वर्णन, ऐतिहासिक भवन वर्णन, उत्सव वर्णन आदि। ऐसे निबन्धों को सजीव एवं आकर्षक बनाने के लिए निबन्धकार अनेकानेक उदाहरण प्रस्तुत करता है और अन्य स्थानों का तुलनात्मक विवेचन भी करता है। साधारणतया इनमें लेखक उन्हीं विशेषताओं को महत्व देता है, जिनका उसे व्यक्तिगत अनुभव होता है। इन निबन्धों की भाषा भी बड़ी सरल और संक्षिप्त वाक्यों वाली होती है।

(२) **विवरण प्रधान निबन्ध**—जिन निबन्धों में कथाओं, घटनाओं, युद्धों, खोजों, जीवन-चरित्रों, यात्राओं आदि की विभिन्न बातों का एक क्रमबद्ध विवरण प्रस्तुत किया जाता है, वे विवरण-प्रधान निबन्ध कहलाते हैं। इन निबन्धों मे निबन्धकार इतिहास लेखक के बहुत अधिक निकट पहुँच जाता है, किन्तु इतिहासकार जहाँ प्राचीनता और शुष्कता को अधिक महत्व देता है, वहाँ निबन्धकार नवीनता और सप्राणता को ही प्राथमिकता देता है। केवल अपने अपने दृष्टिकोण का अन्तर है। ऐसे निबन्धों मे एक तो क्रमबद्धता की प्रधानता होती है और दूसरे वहाँ यह भी आवश्यक नही है कि ऐतिहासिकता शुद्ध रूप मे होवे ही। समर्थ निबन्धकार काल्पनिक ऐतिहासिकता भी प्रस्तुत कर सकते हैं। इन निबन्धों में लेखक रोचकता का विशेष ध्यान रखता है और उसी के अनुकूल भाषा का प्रयोग करता है।

(३) **भाव प्रधान निबन्ध**—इस प्रकार के निबन्धों मे निबन्धकार मानव-मन के सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावों का निरूपण करता है। वहाँ बौद्धिकता की अपेक्षा भावुकता अथवा सहृदयता की प्रधानता होती है। तर्क और विवाद के झमेले से दूर रहकर लेखक अपने भावों को बड़ी मनोग्राहिणी प्रभावात्मकता के साथ प्रस्तुत करता है। कभी-कभी भावावेश मे आकर वह ऐसी मधुर रस-योजना की सृष्टि करता है कि पाठक आत्म-विभोर हो जाते है। प्रायः इनके शीर्षक भी कोई मानसिक भाव लिए होते हैं, जैसे लोभ, लज्जा, आशा, उत्साह आदि, किन्तु यह आवश्यक नही है। ऐसे निबन्धों मे लेखक के संपूर्ण व्यक्तित्व की एक अमिट छाप रहती है और वह लिखता भी है केवल सन्कक्ष पाठकों के लिए। अविकसित या अधकचरे व्यक्तित्व का या तो वहाँ प्रवेश ही नही हो पाता है अथवा वे वहाँ भ्रान्त हो जाते है।

(४) **विचार प्रधान निबन्ध**—इन निबन्धों में बुद्धि की प्रधानता होती है। वहा तर्क, मनोविज्ञान, वाद-विवाद, प्रमाण, खडन-मंडन आदि की आयोजना रहती है। इसका विश्लेषण भी अधिक वैज्ञानिक होता है। भाषा भी स्वत: गूढ़ और जटिल हो जाया करती है। जीवन की विभिन्न समस्याओ, राजनैतिक प्रतिक्रियाओं, सामाजिक विषमताओ आदि मे इन निबन्धो का विशेष सम्बन्ध होता है। साहित्यिक निबन्धों में आलोचनाओ और कवि या काव्य-गत गुण-दोष विवेचनो का मुख्य स्थान रहता है। भावात्मक निबन्धो के समान इनके लिए भी विशेष पाठक-वर्ग चाहिए। फिर भी इनमे निबन्धकार, सुबोधता का अधिक ध्यान रखता है ताकि उसके विचारों मे अधिकाधिक लोग अवगत हो सके।

निबंध के अंग—प्रत्येक निबन्ध के ३ अंग होते हैं, (१) प्रस्तावना, (२) मध्य भाग और (३) उपसहार।

प्रस्तावना—इस भाग मे निबन्धकार वस्तु अथवा शीर्षक के सम्बन्ध मे एक प्राथमिक जानकारी प्रस्तुत करता है और उसके विभिन्न अंगों के सम्बन्ध मे एक परामर्श देता है। वह उन अगो के पारस्परिक सम्बन्ध की भी विवेचना करता है। संक्षेप मे यह भाग, निबन्ध की उस आधार शिला का काम देता है, जिस पर निबन्धकार अपने भावो या विचारो का प्रासाद स्थापित करता है।

मध्य भाग—इसमे वस्तु या विषय का प्रतिपादन किया जाता है। लेखक की भावुकता, प्रौढ कल्पना शक्ति एवं विचारपूर्ण तार्किकता का यही पता चलता है। निबन्ध की आवश्यकता के अनुसार यह मध्य भाग संक्षिप्त अथवा विस्तृत भी हो सकता है। प्रस्तावना मे उठाए गए अंगोपागो का, इस भाग में समर्थ और सोदाहरण विवेचन होता है। नई नई संभावनाओ की प्रतिष्ठापना होती है और नई नई मान्यताओ को जन्म मिलता है। निबन्धकार के प्रौढ़ व्यक्तित्व के दर्शन इसी भाग मे होते हैं। निबन्ध का यह भाग अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। सक्षेप मे इस भाग को निबन्ध का संपूर्ण शरीर ही कह सकते हैं।

उपसहार—इस भाग मे निबन्धकार अपने निबन्ध का सार प्रस्तुत करता है। अपने समस्त विवेचन की उपलब्धि और अपनी मान्यताओं का परिणाम भी यहाँ दर्शनीय होता है। उपसंहार के बिना निबन्ध अधूरा या

लड़खड़ाता हुआ सा लगता है, क्योंकि इसी भाग मे निबन्धकार अपने निष्कर्ष देकर विभिन्न मतामतों में एक उचित का मार्ग प्रशस्त करता है

निबन्ध की शैलियां—अभी यह कहा जा चुका है कि भाव और विचार के नाम से शैली के दो मुख्य भेद होते हैं। इनके अतिरिक्त शैली की योजना में भाषा का भी एक विशेष सहयोग होता है। भाषा, यदि विषय के अनुकूल चलती है, तो निबन्ध मे एक समर्थता स्वतः आ जाती है। यह भाषा कही सरल, कही आलंकारिक, कही व्यंगपूर्ण, कही मुहावरे या लोकोक्तिपूर्ण, कहीं संस्कृतमयी और कही पाडित्यपूर्ण भी हो सकती है, अतः इसी आधार पर शैलियो के भी अनेक भेद हो जाते हैं, जैसे सरल शैली, आलंकारिक शैली आदि।

इसी प्रकार वाक्य रचना को लेकर भी, शैली पर विचार किया जा सकता है। वाक्य मे कही समस्त पदो का अधिक प्रयोग होता है और कही व्यस्त पदों का, अत. समास-शैली और व्यास-शैली का भी नामकरण होता है।

कही कही प्रतिपादन की रीति के आधार पर भी शैली की विशेषताएं निरूपित की जाती है। लेखक कही क्रम बद्ध आयोजना करता है और कही अस्तव्यस्तता का निर्वाह करता है। इसी आधार पर क्रमबद्ध शैली और अस्तव्यस्त शैली का उल्लेख किया जा सकता है।

कुछ निबन्धों में अनुच्छेदो (पैराग्राफ्स) की विशिष्ट योजनाओं के अनुसार शैली भेद किया जाता है। जैसे कही लेखक आरम्भ के वाक्य में एक सूत्र देकर फिर संपूर्ण अनुच्छेद मे उसी की व्याख्या करता है और कही वह व्याख्या पहले करता है, फिर अन्तिम वाक्य में निष्कर्ष सा देता है। इस पद्धति को आगमन शैली, सूत्र शैली, विगमन शैली या व्याख्यात्मक शैली कह सकते हैं।

इस प्रकार की निबन्ध की शैलियो के अनेकानेक भेद किए जा सकते है। वस्तुत. शैली प्रति व्यक्ति भिन्न होती है, इतना ही नही एक ही निबन्धकार की शैली प्रति वस्तु भी भिन्न हो जाया करती है। इसीलिए अंग्रेजी मे the man' कहा गया है। वहा शैली को संपूर्ण व्यक्तित्व माना जाता है। वस्तुत. प्रत्येक निबन्धकार अपने निबन्ध मे, अपने समस्त ज्ञान गौरव का अधिक से अधिक सार प्रस्तुत करना चाहता है। इसीलिए वह

विशिष्ट शब्दावली का प्रयोग भी करता है। अभ्यास करते करते निबन्ध और निबन्धकार मे इतनी एकात्मता हो जाती है कि फिर निबन्ध का प्रत्येक शब्द, वाक्य और संगठन अपने जनक का यशोगान करने लगता है। यही तो निबन्धकार की पूर्णता है।

निबन्ध लिखने का ढंग—निबन्ध लिखने में सबसे बडी सुविधा हमारे सामने यह होती है 'निश्चित शीर्षक'। एक दिए गए शीर्षक के चारो ओर हमें अपने भावो और विचारो का एक मधुर ताना बाना बुनना पड़ता है। उस शीर्षक के नाम के उच्चारण मात्र से ही, हमारे सामने उससे सम्बन्ध रखने वाली अनेक बातें स्वयमेव प्रस्तुत हो जाती है। उनमें से कुछ प्रधान उल्लेखनीय होती है और कुछ गौण। प्रधान बातें भी यदि ठीक से न कही जाय तो गौण हो जाती है और गौण बातें यदि जोर देकर कही जायं, तो वे ही प्रधान सी जचने लगती हैं। तात्पर्य यह है कि लेखक का दृष्टिकोण ही सर्वत्र प्रधान होता है।

निबंध मे, वस्तु के प्रतिपादन मे भी हम असहाय नही होते। हमारा ज्ञान, अनुभव और कल्पना आदि, सभी हमारी सहायता करते ही हैं। इसी का सम्मिलित नाम 'व्यक्तित्व' है, जिसकी निबन्ध मे सदैव प्रधानता बतलाई जा चुकी है।

वैसे तो निबन्ध-लेखन मे निश्चित रूपरेखा बतलाने की कोई आवश्यकता नही होती, किन्तु अभ्यास के लिए उसे कही न कही बना लेना चाहिए। अच्छे से अच्छे लेखक भी अपने निबन्ध की रूपरेखा स्थिर कर लेते है, भले ही वह उनके मष्तिस्क में ही रहे। नये लेखक तो रूपरेखा से ही अभ्यास कर सकते हैं, विशेषकर छात्रों के लिए, वह एक बहुत बडी अवलम्ब होती है।

नये लेखको अथवा छात्रों को निबन्ध लिखते समय, निम्नलिखित बातो का अवश्य ध्यान रखना चाहिए—

(१) निबन्ध के सम्बन्ध में पहले कुछ मिनट शान्त होकर विचार कीजिए और उससे सम्बन्ध रखने वाली जितनी भी बातें याद आ सकें, उनको कहीं लिख लीजिए।

(२) निबन्ध मे सम्बन्ध रखने वाले विभिन्न उद्धरणों, कविताओ, लोकोक्तियों और तुलनात्मक पंक्तियो पर विशेष ध्यान दीजिए। उन्हे भी कही क्रम मे सजा लीजिए।

(३) निबन्ध के शीषक के विभिन्न शब्दो पर पुनर्विचार करके, उसके अनेक अंग और उपांग स्थिर कर लीजिए और उनमे सम्बन्ध रखने वाले बहुत से उपशीर्षक बना लीजिए और इन्ही उपशीर्षको को दक्षता के साथ प्रस्तावना के रूप मे परिवर्तित कर दीजिए।

(४) जितने पृष्ठों का निबन्ध लिखना हो, उतने मे ही उन उपशीर्षकों की ठीक ढंग से व्याख्या प्रस्तुत कर दीजिए। जैसे यदि दस पृष्ठ लिखना है और ५ उपशीर्षक है तो एक उपशीर्षक के अन्तर्गत दो पृष्ठो की सामग्री चाहिए। इस प्रकार के अनुपात से एक सुव्यवस्था रहती है।

(५) निबन्ध में अनुच्छेद लम्बे नही होने चाहिए। जहा एक बात पूरी हो जाय वही उसे समाप्त कर दीजिए और नई बात से नए अनुच्छेद का श्रीगणेश कीजिए।

(६) स्थान स्थान पर उपयुक्त उद्धरणों, कविताओं और लोकोक्तियो आदि का ऐसी दक्षता के साथ प्रयोग कीजिए कि वे ऊपर से चिपके हुए न जान पड़ें, किन्तु आपके निबन्ध के ही एक अविच्छेद्य अंग लगे।

(७) अन्त मे उपसंहार लिखते समय अपने विचारों का सार एवं निष्कर्ष प्रस्तुत कीजिए। यह उपसहार ऐसा संक्षिप्त किन्तु सम्पूर्ण होना चाहिए कि उससे ही निबन्ध की समस्त विशेषताओ का एक दम पता लग जावे।

(८) ध्यान रहे कि निबन्ध सदा तेजी मे लिखा जाता है, इसलिए उसमे अनेक अशुद्धियां हो जाती है। तेजी से अभिप्राय भावावेग से है, लिखने की तेजी से नही। अतः प्रत्येक लेखक को चाहिए कि वह निबन्ध को दुबारा समग्र रूप में पढकर आवश्यक परिवर्तन और परिमार्जन करले। फिर तो ज्यो ज्यों अभ्यास बढता जायगा, त्यो त्यो अशुद्धिया स्वत कम होती चली जाती हैं।

(९) प्राय यह देखा जाता है कि कुछ लेखक निबन्ध में बहुत अधिक काटापीटी कर देते है। इसका एक ही कारण है कि वे जितनी तेजी से सोचते है, उतनी तेजी से लिख नही पाते, इसीलिए वे बार बार अगला शब्द लिख जाते है और उसे फिर काटना पडता है। ऐसे लेखको को चाहिए कि वे अपने विचार और लेखन मे एक सामंजस्य स्थापित करें और लिखने मे बडी सावधानी बरते। अभ्यास बडी चीज है, उससे सब कुछ हो सकता है।

यह विश्वास है कि यदि उपर्युक्त निर्देशों का ठीक तरह से पालन किया जाय, तो निबन्ध-लेखक से बहुत बड़ी सफलता प्राप्त हो सकती है।

प्रस्तुत निबन्ध संग्रह के दो भाग है, एक मे निबन्ध अपने यथासंभव समग्र रूप में प्रस्तुत किए गए हैं और दूसरे मे केवल उनकी रूपरेखाएं ही दी गई हैं। यहां यह भी ध्यान रखा गया है कि जहा तक हो सके, विभिन्न विषयो पर विचार किया जावे और उनकी सामग्री संजोई जावे। अनेक निबन्धों के प्रतिपादन मे मत-भेद हो सकता है, किन्तु इसके लिए पहले ही पृथक् व्यक्तित्व एवं दृष्टिकोण का महत्व बतलाया जा चुका है।

१. मनोरंजन के साधन

रूपरेखा

१—मनोरंजन की परिभाषा।
२—मनोरंजन की आवश्यकता।
३—मनोरंजन के प्राचीन साधन।
४—मनोरंजन के आधुनिक साधन।
५—उपसंहार।

मनोरंजन का अभिप्राय है, मन को प्रसन्न रखना। जीवन मे आनद और उल्लास का संचार करने के लिए मन की जो आराधना की जाती है, उसी को मनोरंजन कहते हैं। मन को अभीष्ट विषय मे लगाना ही मनोरंजन है।

आज का मनुष्य जीवन इतना अधिक व्यस्त है कि कहीं क्षण भर के लिए भी अवकाश नहीं है। जीविका की समस्या इतनी जटिल है कि कुछ लोगो को दिन के २४ घंटे भी कम पड़ते है। परिवार का प्रत्येक सदस्य जब यथाशक्ति सक्रिय रहता है, तब कही जीवन निर्वाह के योग्य आवश्यक साधन जुटा पाता है। इतने अधिक सतत परिश्रम का परिणाम होता है, जीवनी शक्ति का ह्रास। मनुष्य कैसा भी परिश्रमी क्यों न हो, एक स्थिति ऐसी आती है, जब वह थक जाता है और उस समय यदि वह किसी मनोरंजन के द्वारा तरोताजा नहीं होता है, तो उसकी कार्यक्षमता सदा के लिए कुप्रभावित हो जाती है।

कहावतें हैं कि 'मन चंगा तो कठौती मे गंगा' और 'मन के जीते जीत है, मन के हारे हार।' इनसे मन की विशेषताओं का पता चलता है। यदि मन स्वस्थ है तो आदमी पहाड़ को भी तिल बना सकता है और यदि मन

अस्वस्थ है तो एक तिल भी पहाड हो जाता है । मन की मनौती का ही सारा खेल है

जिस प्रकार थके हुए शरीर के लिए विश्राम अनिवार्य है, उसी प्रकार थके हुए मन के लिए मनोरंजन अनिवार्य होता है । 'जितनी थकान, उतना विश्राम' वाली उक्ति बिल्कुल सही है, प्रत्युत विश्राम अधिक चाहिए, तभी तो नये सिरे से कार्य करने की स्फूर्ति प्राप्त होती है । मनोरंजन के अभाव में, थके हुए मन की दुर्दशा की कल्पना की जा सकती है । वास्तव में यदि मनुष्य का उचित मनोरंजन न हो तो वह अनेक मानसिक एवं शारीरिक रोगों से पीड़ित हो जाय । इसलिए हमारे स्वास्थ्य के लिए मनोरंजन आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है ।

प्राचीन समय में मनोरंजन के अनेक साधन थे । संगीत और अभिनय के विकास के पहिले, मनुष्य व्यक्ति-गत और समूह-गत नृत्य-गान से अपना मनोरंजन कर लेता था । वाद्य यन्त्रों के प्रयोग ने उसके इस आनंद में चार चाँद लगा दिए । आदिम जातियाँ आज भी उसी प्राचीन ढंग से अपना मनोरंजन कर लेती हैं । संगीत और अभिनय के विकास ने मनोरंजन के क्षेत्र में एक क्रान्ति उपस्थित कर दी । मनुष्य स्वभाव से ही संगीत और अभिनय का प्रेमी होता है । यद्यपि मनोरंजन का बहुत बड़ा सम्बन्ध, मनुष्य की रुचि से होता है और प्रत्येक मनुष्य की रुचि भिन्न हुआ करती है, क्योंकि संस्कृत में एक कहावत है कि 'भिन्नरुचिर्हि लोकः' तो भी संगीत और अभिनय के संबंध में प्रायः सभी की रुचियों में एकता पाई जाती है ।

मध्यकाल में नाटक, नौटंकी, रास, कठपुतली आदि के रूपों में अभिनय का बहुत विकास हुआ और उनसे समाज का पर्याप्त मनोरंजन हुआ । इसके अतिरिक्त ताश, चौपड़, शतरंज आदि घरेलू खेलों का भी मनोरंजन के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण स्थान था । पशु पक्षियों के खेल, दौड़ और लड़ाई में भी बड़ा मनोरंजन होता था । इसके अतिरिक्त कुश्ती और नटकला के करने और देखने का भी लोगों को बडा शौक था । मेलों और उत्सवों के आयोजन सामाजिक मनोरंजन के एक प्रकार से अनिवार्य अंग थे ।

राजाओं और महाराजाओं के यहां मनोरंजन का विशेष प्रबन्ध था । वे वस्तुतः बहुत समर्थ थे । मद्यपान, द्यूत-क्रीडा, वेश्या-नृत्य आदि का वहां बहुत प्रचार था । कुछ राजा लोग शिकार में मस्त रहते थे । कुछ ने अपने

ाज्य मे शेर चीता आदि हिंसक पशुओ को बन्दी बना करके एक छोटा मोटा चडियाघर सा स्थापित कर लिया था और वहा शेर और हाथी का युद्ध करके अपना मन बहलाया करते थे। एक क्रूर राजा को पहाड से हाथी लुढका कर उसके क्रन्दन सुनने का शौक था। ऐसे सनकियो का उल्लेख यहा आवश्यक नही है, फिर भी उनका इस प्रकार व्यक्तिगत मनोरंजन तो होता ही था।

आज का युग वैज्ञानिक वरदान है। आज विज्ञान ने हमारे मनोरजन के साधनो मे एक कायापलट सी करदी है। प्राचीन साधनो का एक नवीन रूप आज उपस्थित हो गया है। नाटको का स्थान आज सिनेमा ने ले लिया है, वाद्य यंत्रो का बहुत कुछ स्थान रेडियो ने ले लिया है और 'टैलीविजन' तो सभी का समन्वय है। इसके अतिरिक्त साधारण साधनो में ग्रामोफोन का बडा महत्व है। जहा रेडियो की सुविधा नही है, वहा ग्रामोफोन ही 'अन्धो मे काने राजा' बन जाता है।

आधुनिक साधनो मे सिनेमा का बडा प्रचार है। क्या अमीर क्या गरीब, सभी सिनेमा देखकर अपना यथेष्ट मनोरजन कर लेते है। नाटको मे अब वह विशेषता नही रह गई है। वे बडे कष्टसाध्य एवं व्ययसाध्य हो गए हैं, साथ ही आज उनके लिए आवश्यक धैर्य और समय की भी कमी हो गई है। सिनेमा मे फोटोग्राफी की कला की चरम सीमा है। वहां कथा, नाच, गाना, मारकाट, सस्ता रोमांस, अद्भुत दृश्य आदि अनेक ऐसी विशेषताएं सिनेमा मे हैं कि वह अपने दर्शकों को ३, ४ घंटे तक एकदम भाव-विभोर बनाए रखता है।

सिनेमा के बाद दूसरा लोकप्रिय साधन 'रेडियो' है। धनिकों का अभी तक इस पर एकाधिकार था, किन्तु अब तो बाजारों, दुकानो और गलियो तक में इसकी भरमार हो गई है। देहात मे भी बैटरी के रेडियो पहुँच गए है और वहां सामाजिक केन्द्रो मे उनसे मनोरजन कर लेना अब बहुत सरल हो गया है। बस जरा सा सुई घुमाने की देर है कि आप अनेक प्रकार के गाने, नाटक और देहाती प्रोग्राम सुनकर उनमे आनंद उठा सकते है। यहां हम रेडियो के केवल मनोरंजन पक्ष की चर्चा कर रहे हैं, वैसे उससे अन्य अनेक लाभ भी है। रेडियो का ही विकास 'टैलीविजन' है जिसमे हम बोलने वाले की केवल आवाज ही नही सुन सकते हैं, प्रत्युत उसके दर्शन भी उसी रूप मे कर सकते है। इस प्रकार एक तरह से 'टैलीविजन' का अभिप्राय है 'रेडियो

ने सिनेमा

उपर्युक्त साधनो के अलावा आज खेल कूद से भी हमारा बडा मनोरंजन होता है। 'हाकी मैच' और 'क्रिकेट मैच' में दर्शकों की संख्या कई हजार तक बढ जाती है। सरकस, कार्नीवाल और घुडदौड में भी बड़ी भीड़ होती है। मेलो और उत्सवो का महत्व आज भी पूर्ववत् है। इसके अतिरिक्त मुशायरा और कवि-सम्मेलनो से भी हमारा बडा मनोरंजन होता है।

एकान्तप्रिय लोगों के लिये मनोरजन के साधन दूसरे है। वे उपन्यास, कहानी आदि पढ कर अपना समय काट लेते है। कुछ लोगो को एकान्त भ्रमण मे आनन्द प्राप्त होता है और कुछ लोग अनेक 'हाबियां' पाल लेते हैं और उनमें मस्त रहते है। कोई चित्र बनाता है तो कोई खिलौने बनाता है और कोई कार्टून बनाता है तो कोई फोटो खींचता है। कोई बागवानी करता है, तो कोई मुर्गी पालता है और कोई पहाड पर चढता है तो कोई बरफ पर फिसलता है। इन व्यक्तिगत मनोरजन की संख्या तो अनन्त है। इसके लिए 'भिन्न रुचि वाली' बात कही जा चुकी है।

उपर्युक्त विवेचन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि मनोरंजन का हमारे जीवन मे बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। क्या अमीर क्या गरीब, क्या छोटे क्या बड़े और क्या निरक्षर क्या साक्षर, मनोरंजन सभी के लिए अनिवार्य है और वह सभी को उपलब्ध भी होना चाहिए।

२. आमेर-यात्रा

१. भूमिका—आमेर का आकर्षण
२. आमेर की स्थिति, ऐतिहासिकता
३. आमेर के महल, किला, देवी-मन्दिर
४. यात्रा का आनन्द
५. उपसंहार

'आमेर-दर्शन के बिना जयपुर यात्रा अधूरी है' यह बात रह रह कर मन को कोचती थी। यद्यपि इसके पूर्व २ बार जयपुर घूम चुका था, तो भी आमेर न देख सका। अत इस बार पूर्ण निश्चय किया कि आमेर देखेंगे ही।

जयपुर पहुचते ही अन्य आकर्षणो मे आखे मूद कर मै सीधे बडा चौपड़ पहुँचा। वहाँ 'हवा महल' के पास ही आमेर जाने वाली बस का अड्डा है। शायद कोई बुड्ढा कण्डक्टर था और ड्राइवर भी बुड्ढा था, क्योंकि वे

आपस में इतने प्रेम से वार्तालाप कर रहे थे, मानो लड रहे हो। अस्तु, चार आने का टिकट लिया और मोटर में आगे बताए हुए एक स्थान पर बैठ गया। थोडी देर मे वे कंडक्टर और ड्राइवर, पता नही क्या बहस करते हुए आए और मुझसे बोले 'इधर जनाना बैठेगा, बाबूजी माफ करना, आप 'फ्रंट सीट' पर बैठ जाइए।' क्रोध तो आया किन्तु 'फ्रंट सीट' का आकर्षण भी कम न था। चुपचाप बैठ गया। पीछे मोटर में ठसाठसी चल रही थी, यात्री बिगड रहे थे और कंडक्टर उनकी ठोडी में हाथ लगाकर उन्हे मना रहा था। मै शान मे था और बड़ी उपेक्षा से उन 'थर्ड क्लास' के यात्रियो को देख रहा था, यद्यपि पैसे सबने बराबर दिए थे। मोटर चल पडी, तभी दो सिपाही दौड़ते हुए आए और चिल्लाए 'रोको, रोको, इंस्पेक्टर साहब आ रहे है, वे भी आमेर जायेगे।' मोटर रुक गई। इस बार मुझी पर बीती। कंडक्टर बोला, 'आप पीछे बैठ जाइए, इधर इन्स्पेक्टर बैठेगा' क्या करें साब! आप तो समझते ही हैं'। बडा क्रोध आया, बड़बडाया, लड़ा परन्तु कोई परिणाम नही। टिकट वापस कर दिया। पैसे लेकर एक तांगे पर बैठ गया। बाद में पता चला कि मोटर आधा घण्टा रुकी रही, इन्स्पेक्टर नही आया। सुनकर बडा रोष-तोष हुआ।

तांगा से देर अवश्य लगी, पैसे भी कुछ अधिक लगे, किन्तु मार्ग मे प्राकृतिक दृश्यो का जो आनन्द प्राप्त हुआ, वह मोटर मे दुर्लभ था। आमेर पहुँच कर कुछ प्रसाद लिया, देवी के मंदिर मे चढाने के लिए। किले की ओर बढते ही एक गजराज के दर्शन हुए। मालूम हुआ कि आप 'ट्यूरिस्ट विभाग' से सम्बन्धित हैं और वहा ५) देने पर आप 'ट्यूरिस्ट' को अपने 'पृष्ठासन' पर बिठलाकर ऊपर मन्दिर के चबूतरे पर छोड देते है। थोड़ी देर ही मे एक 'अमेरिकन दम्पत्ति' आए और उस पर विराजमान हो गए। दम्पत्ति मैं अनुमान से ही कह रहा हूं, क्योकि उनकी क्रियाएं वैसी थी। इच्छा तो है कि उनके तमाशे का वर्णन करूं, किन्तु क्या लाभ।

गजराज की घण्टा-ध्वनि का वर्णन करते हुए मैं मन्दिर के द्वार पर पहुच गया। एक विशाल चौक, एक ओर भव्य प्रासाद और उससे मिला हुआ देवी-मंदिर और दूसरी ओर साधारण सी इमारत थी। शायद कुछ कर्मचारी वहा रह रहे थे। पास ही कुछ दुकानें थी, जहां कलापूर्ण पदार्थ बिक रहे थे। एक ओर छोटा सा होटल था और उसके नीचे 'चनाचबेना' की जरासी दुकान थी, जहां देहाती भीडभाड़ लगी हुई थी।

* चौक की विशालता से आतंकित होकर थोड़ा स्वस्थ हुआ था कि सुनाई पड़ा 'महल' का फाटक खुल गया है, दो आना टिकट है, पापा ।'। एक छोटी लड़की फुदकती हुई ऊपर की सीढ़ियों से उतर रही थी। पीछे से कोई स्त्री स्वर गरजा 'धीरे धीरे, गिर पड़ोगी, हम वहीं आते है। ये शायद 'मम्मी' थी। पापा और मम्मी, मम्मी और पापा। कुछ विचार मग्न हो गया। तभी शायद 'पापा' ने कहा 'पहले मन्दिर देखेंगे', किन्तु 'मम्मी' की सहमति न हुई और वे अब महल देखने चले गए, पापा और मम्मी।

मैं संभल गया। सीधे मंदिर मे पहुँचा। प्रसाद चढ़ाया। पुजारी ने शायद 'चरणोदक' दिया। आचमन करके वहीं बैठ गया। ये जयपुर की इष्ट देवी है, जन-जन के मनोरथ को पूरा करने वाली है। इच्छा हुई, कुछ मनौती मानलू, पर चुप रहा पता नही क्यों ? उठ खड़ा हुआ। वहा बने हुए अन्य चित्रो और मूर्तियो को आखो से देखा, हाथो मे देखा, तृप्ति न हुई। कुछ जल्दी थी। महल देखने की भी उत्सुकता थी, अतः देवी को प्रणाम करके चल पड़ा।

टिकट लेकर महल के भीतर पहुँचा। बड़े बड़े चौक, बड़ी बड़ी दालाने बड़े बड़े कमरे। पत्थरो पर अद्भुत कारीगरी। मगर एक अजीब सन्नाटा था, वस्तुतः अजीब, जीवहीन। कभी बहार होगी, मगर आज तो केवल सुरक्षित खण्डहर था। अनेक सेवक थे। एक वृद्ध सेवक से हालचाल पूछा, तो रो पड़ा, इसलिए नही कि उसे पुराने वैभव की याद आ गई, किन्तु इसलिए कि पहले 'ट्यूरिस्टों' से बहुत 'बख्शीश' मिल जाती थी, मगर अब क्या .....।' उसकी मनोवृत्ति पर और अपनी असमर्थता पर एक साथ क्षोभ हुआ। महल के ऊपरी भाग मे 'शीश महल' देखा जहां कुछ लोग किवाड बन्द करके और दियासलाई जला करके और चकाचौंध देखने मे व्यस्त थे। आगे खुली छत से होता हुआ एक कमरे की ओर बढा। वहा वही 'पापा और मम्मी' जलपान कर रहे थे।

महल के दूसरे भाग मे गया, वहा काफी सन्नाटा था, बड़ी भूल-भुलैया सी थी, बहुत कुछ टूटा-फूटा भी था और चमगादड़ो की दुर्गन्ध आ रही थी। साहस करके काफी दूर बढ गया। एक युगल शायद पहले ही वहां भटक रहे थे किन्तु मेरी उपस्थिति से कुछ प्रसन्न नही हुए। शीघ्र लौट आया। उन्ही परिचित स्थानो की दुबारा झांकी लेता हुआ बाहर आ गया।

इस बार दूसरे रास्ते से नीचे आया। वहा शायद एक मन्दिर भी था और बहुत बड़ा तालाब था। बहुत से लोग 'पिकनिक' कर रहे थे। कुछ

बोटिंग की तैयारी में थे और कुछ 'बेदिंग सूट' पहन रहे थे। ईश्वर को धन्यवाद देता हुआ मुख्य सड़क पर आ गया। सामने वही कण्डक्टर था। कुछ हंसा, कुछ झेंपा और जबर्दस्ती मुझे पकड़ कर मोटर पर ले गया और मुझे 'फ्रंट सीट' पर बिठा दिया। मैंने बहुत दिखावटी आनाकानी की मगर मेरी न चली और शायद मैं चलने भी न देता।

इस प्रकार मेरी वह 'आमेर यात्रा' पूरी हुई, जो अपनी अनेक विशेषताओं के कारण मुझे बार-बार याद आ जाती है।

३. आबू-यात्रा

प्रस्तावना

१—आबू का आकर्षण।
२—आबू के दर्शनीय स्थान।
३—यात्रा का आनन्द।
४—उपसंहार।

आबू, राजस्थान का इकलौता पहाड़ी स्थान है, जहाँ बहुत से लोग गर्मियां काट आते हैं। सुना था, वहां बहुत से राजाओं के महल हैं, बहुत से बड़े बड़े भवन हैं, जैन मन्दिर हैं, बहुत बड़ी झील है और सूर्यास्त दर्शन की विशेष सुविधा है, इसलिए उपयुक्त अवसर की ताक मे था। तभी एक इंटरव्यू के लिए अहमदाबाद जाने का निमत्रण मिला। सोचा, वहां से लौटते समय अपनी इस कुमारी इच्छा को भी पूर्ण कर लूंगा।

आबू रेलवे स्टेशन से माउण्ट आबू लगभग १८ मील दूर पड़ता है। मोटर किराए के साथ-साथ यात्री कर भी देना पड़ा, रीझखीझ कर। पहाड़ी रास्ता बहुत आकर्षक है। हरी-भरी, गहरी और ऊंची-नीची घाटियां बड़ी भयानकता के साथ सुन्दर लग रही थीं। बीच में मोटर की सड़क नागिन की तरह बल खाती हुई रेंग रही थी। हर मोड़ पर मोटर कुछ रुकती थी। रुकते ही भय लगता कि कहीं कुछ गड़बड़ तो नहीं हो गया, और मोटर के आगे बढ़ते ही सचमुच बड़ी 'रिलीफ' मिलती। गन्तव्य स्थान पर पहुँच कर एक होटल में ठहरा। प्रबन्ध अच्छा ही था। कुछ विश्राम करके घूमने चल दिया। चला तो था अकेला, किन्तु कुछ सैलानी और मिल गए।

पहले 'नक्की झील' की ओर गए। किनारे पर कुछ घाट बने हुए

थे और बीच मे कुछ टापू जैसे दिखलाई पड रहे थे। नक्की झील के बारे मे अनेक किंवदंतियाँ सुनी उन भोले विश्वासों पर सचमुच बड़ा आनंद आया। पास ही 'गांधी वाटिका' थी, एक आकर्षक सुरम्य स्थल।

एक ओर रघुनाथजी का विशाल मंदिर था। मंदिर कोई भी, कहीं भी हो, भक्तों की भीड़ तो हर समय लगी रहती है। फिर मंदिर के पीछे एक इतिहास था, सब कुछ मिलाकर बहुत अच्छा लगा। मंदिर के पीछे अनेक गुफाओं के नाम सुनाई पड़े, किन्तु हम लोग उधर आकृष्ट नहीं हुए।

दिलवाडा की ओर बढे, जैन मंदिर देखने के लिए। मार्ग मे 'अर्बुदा देवी' का प्रसिद्ध मंदिर मिला। एक ऊंची पहाडी पर एक गुफा के अन्दर। देवी की प्रतिमा थी। बड़ा अटपटा मार्ग था, अब भी रोमांच हो जाता है। दिलवाडा के जैन मन्दिर वस्तुतः दर्शनीय है। ११वी शताब्दी मे गुजरात के राजा भीमदेव के मुख्य मन्त्री विमलशाह ने यहा प्रथम मन्दिर बनवाया था। दूसरा मंदिर लगभग २०० वर्षो के बाद बना। श्वेत संगमरमर के बने हुए ये मन्दिर बड़ी दूर दूर से जैनियो और अन्य यात्रियो को आकर्षित करते रहते है। यहा दीवाल पर, खम्भो पर, छत पर जिधर दृष्टि डालो, एक अद्भुत वैभव के दर्शन होते है। यहा वस्तुतः सजीवता है, जो सुप्रबन्ध के कारण ज्यो की त्यो सुरक्षित है।

इन मंदिरो के पास ही मे कुछ अन्य मन्दिर है। खंडहर और खंडित मूर्तियां। बड़ा क्षोभ हुआ, दोनों की तुलना करके। मित्रों ने कहा कि वे जैन मन्दिर हैं और ये हिन्दू मंदिर हैं। पहली बार ऐसा लगा कि शायद हिन्दू लोग जैन नहीं होते है और जैन भी हिन्दू नहीं होते है। और भी बहुत सी बातें मन मे आईं, उन्हे कुरेदने से क्या लाभ! फिर आगे कुछ भी देखने को मन नहीं हुआ। मित्र लोग सूर्यास्त दर्शन के लिए चले गए और मैं होटल आ गया। इस हिन्दू होटल मे भी कुछ 'हिन्दू' जैसा नहीं लगा। सब कुछ 'सेकुलर' था। सोचा 'हिन्दू होटल' का अर्थ होगा कि 'हिन्दू हो तो टल जा' कुछ संतोष हुआ, लेकिन मन तो उचट चुका था।

दूसरे दिन प्रातःकाल 'गुरुशिखर' पर अभियान किया। दत्तात्रेय के मन्दिर मे पहुँच कर कुछ शान्ति लाभ हुआ। आगे सुना कि कुछ दूरी पर आबू के प्रतिष्ठाता अचलेश्वर महादेव का मंदिर है। बस का रास्ता है। मन्दिर के पास कई कुण्ड है, गुफाए है, कुछ मन्दिर आदि है, परन्तु जा न सका।

बोटिंग की तयारी में थे और कुछ बोटिंग सूट पहन रहे थे। ईश्वर को धन्यवाद देता हुआ दुरुस्त सड़क पर आ गया। सामने वही कण्डक्टर था। कुछ हँसा, कुछ झेंपा और जबर्दस्ती मुझे पकड़ कर मोटर पर ले गया और मुझे 'फ्रंट सीट' पर बिठा दिया। मैंने बहुत दिखावटी आनाकानी की मगर मेरी न चली और शायद मैं चलने भी न देता।

इस प्रकार मेरी वह 'आमेर यात्रा' पूरी हुई, जो अपनी अनेक विशेषताओं के कारण मुझे बार-बार याद आ जाती है।

३. आबू-यात्रा

प्रस्तावना

१—आबू का आकर्षण।
२—आबू के दर्शनीय स्थान।
३—यात्रा का आनन्द।
४—उपसंहार।

आबू, राजस्थान का इकलौता पहाड़ी स्थान है, जहाँ बहुत से लोग गर्मियाँ काटने आते हैं। सुना था, वहाँ बहुत से राजाओं के महल हैं, बहुत से बड़े बड़े भवन हैं, जैन मन्दिर है, बहुत बड़ी झील है और सूर्यास्त दर्शन की विशेष सुविधा है, इसलिए उपयुक्त अवसर की ताक में था। तभी एक इंटरव्यू के लिए अहमदाबाद जाने का निमन्त्रण मिला। सोचा, वहाँ से लौटते समय अपनी इस कुमारी इच्छा को भी पूर्ण कर लूँगा।

आबू रेलवे स्टेशन से माउण्ट आबू लगभग १८ मील दूर पड़ता है। मोटर किराए के साथ-साथ यात्री कर भी देना पड़ा, रीझखीझ कर। पहाड़ी रास्ता बहुत आकर्षक है। हरी-भरी, गहरी और ऊँची-नीची घाटियाँ बड़ी भयानकता के साथ सुन्दर लग रही थीं। बीच में मोटर की सड़क नागिन की तरह बल खाती हुई रेंग रही थी। हर मोड़ पर मोटर कुछ रुकती थी। रुकते ही भय लगता कि कहीं कुछ गड़बड़ तो नहीं हो गया, और मोटर के आगे बढ़ते ही सचमुच बड़ी 'रिलीफ' मिलती। गन्तव्य स्थान पर पहुँच कर एक होटल में ठहरा। प्रबन्ध अच्छा ही था। कुछ विश्राम करके घूमने चल दिया। चला तो था अकेला, किन्तु कुछ सैलानी और मिल गए।

पहले 'नक्की झील' की ओर गए। किनारे पर कुछ घाट बने हुए

थे और बीच मे कुछ टापू जैसे दिखाई पड रहे थे। नक्की झील के बारे मे अनेक किवदंतिया सुनी। उन भोले विश्वासो पर सचमुच बड़ा आनन्द आया। पास ही 'गाधी वाटिका' थी, एक आकर्षक सुरम्य स्थल।

एक ओर रघुनाथजी का विशाल मंदिर था। मदिर कोई भी, कही भी हो, भक्तों की भीड़ तो हर समय लगी रहती है। फिर मंदिर के पीछे एक इतिहास था, सब कुछ मिलाकर बहुत अच्छा लगा। मदिर के पीछे अनेक गुफाओ के नाम सुनाई पड़े, किन्तु हम लोग उधर आकृष्ट नही हुए।

दिलवाड़ा की ओर बढे, जैन मदिर देखने के लिए। मार्ग में 'अर्बुदा देवी' का प्रसिद्ध मदिर मिला। एक ऊंची पहाडी पर एक गुफा के अन्दर। देवी की प्रतिमा थी। बड़ा अटपटा मार्ग था, अब भी रोमाच हो जाता है। दिलवाडा के जैन मन्दिर वस्तुतः दर्शनीय है। ११वी शताब्दी मे गुजरात के राजा भीमदेव के मुख्य मन्त्री विमलशाह ने यहा प्रथम मन्दिर बनवाया था। दूसरा मदिर लगभग २०० वर्षो के बाद बना। श्वेत संगमरमर के बने हुए ये मन्दिर बडी दूर दूर मे जैनियो और अन्य यात्रियो को आकर्षित करते रहते है। यहा दीवाल पर, खम्भो पर, छत पर जिधर दृष्टि डालो, एक अद्भुत वैभव के दर्शन होते है। यहां वस्तुत: सजीवता है, जो सुप्रबन्ध के कारण ज्यो की त्यों सुरक्षित है।

इन मंदिरों के पास ही मे कुछ अन्य मन्दिर हैं। खंडहर और खंडित मूर्तियां। बड़ा क्षोभ हुआ, दोनों की तुलना करके। मित्रो ने कहा कि वे जैन मन्दिर हैं और ये हिन्दू मंदिर है। पहली बार ऐसा लगा कि शायद हिन्दू लोग जैन नही होते है और जैन भी हिन्दू नही होते हैं। और भी बहुत सी बातें मन मे आईं, उन्हें कुरेदने मे क्या लाभ! फिर आगे कुछ भी देखने को मन नही हुआ। मित्र लोग सूर्यास्त दर्शन के लिए चले गए और मै होटल आ गया। इस हिन्दू होटल मे भी कुछ 'हिन्दू' जैसा नही लगा। सब कुछ 'सेकुलर' था। सोचा 'हिन्दू होटल' का अर्थ होगा कि 'हिन्दू हो तो टल जा' कुछ संतोष हुआ, लेकिन मन तो उचट चुका था।

दूसरे दिन प्रातःकाल 'गुरशिखर' पर अभियान किया। दत्तात्रेय के मन्दिर मे पहुँच कर कुछ शान्ति लाभ हुआ। आगे सुना कि कुछ दूरी पर आबू के प्रतिष्ठाता अचलेश्वर महादेव का मंदिर है। बस का रास्ता है। मन्दिर के पास कई कुण्ड है, गुफाएं है, कुछ मन्दिर आदि हैं, परन्तु जा न सका।

लौटकर भोजन के पश्चात् ऐसा सोया कि ४ बज गया शीघ्र ही तैयार होकर सूर्यास्त दर्शन के लिए चल दिया। वहां पहले से ही बहुत से स्त्री पुरुष एकत्र थे। कुछ सीमेंट की बेंचों पर बैठे थे और कुछ पृथ्वी पर पालथी लगाए हुए थे, किन्तु बीच बीच में उठ उठाकर बड़ी उत्सुकता के साथ सूर्य के दर्शन कर लेते थे। ऐसा लग रहा था कि मानों रामलीला में राम की सवारी आने वाली हो और सब लोग बेचैन हों। एक बार जरूर मन में आया, छिपाऊंगा नहीं, कि किसी को फांसी होने वाली हो और सम्बन्धित लोग उस अन्तिम करुण दृश्य के गवाह बनने जा रहे हों।

सूर्यास्त का दृश्य वास्तव में बहुत सुन्दर था। सूर्य धीरे धीरे डूब रहा था। अन्तिम झलक में जरूर एक झटका लगा, फिर जैसे मैदान साफ हो गया। लोगबाग ऊंची सांसे लेकर वापस आ रहे थे।

माउंट आबू वास्तव में देवताओं की क्रीडा स्थली है। बहुत आकर्षक है और प्राकृतिक सौन्दर्य में सारे भारतवर्ष में सर्वश्रेष्ठ है। जब मैंने वहां होटल के एक कर्मचारी से अपनी यह इच्छा व्यक्त की कि यदि यहां जीवन भर नहीं, तो कम से कम एक साल भर रहने का अवसर मिल जाय, तो जीवन सफल हो जाय। उसने उत्तर दिया, 'साब! बस चार महीना ही मौज है, ज्यादा रहने में वह बात नहीं रहती।'

अगले दिन जब मैं वहां से बिस्तर बांध रहा था, तो उस कर्मचारी की बात रह रहकर मन में गूंज रही थी। मैं उस आनन्द की तुलना ससुराली आनन्द से कर रहा था और गुनगुना रहा था:—

'ससुरार सुखन की सार।
पर रहे दिना दो चार॥'

४. विद्यार्थी और अनुशासन

१—विद्यार्थी की परिभाषा।
२—प्राचीन काल के विद्यार्थी।
३—आज के विद्यार्थी की समस्याएं।
४—अनुशासनहीनता के कारण।
५—अनुशासन के उपाय।
६—उपसंहार।

विद्यार्थी का अर्थ है विद्या का अर्थी (इच्छुक)। जो वस्तुत. विद्या का अर्थी है और एकाग्रमन मे विद्या-प्राप्ति की चेष्टा करता है, वही सच्चा विद्यार्थी है। वस्तुतः विद्यार्थी अपने लक्ष्य के प्रति इतना एकात्म रहता है कि वह अन्य किसी वस्तु की—सुख तक की—चिन्ता नही करता है। सुख की कामना करने वाले विद्यार्थी को फिर विद्या लाभ ही नही होता। इसीलिए कहा गया है:—

'सुखार्थी चेत्यजेद् विद्या विद्यार्थी चेत्यजेत् सुखम्।
सुखार्थिन: कुतोविद्या, विद्यार्थिन: कुतः सुखम् ॥'

(सुखार्थी को विद्या छोड़ देनी चाहिए और विद्यार्थी को सुख, क्योंकि सुखार्थी को विद्या नहीं मिलती और विद्यार्थी को सुख।)

प्राचीनकाल में परिस्थितियां भिन्न थी। तब विद्यार्थी गुरुकुल मे अध्यापक के पास रहता था। वह या तो गुरु के अन्न पर पलता था, या भिक्षा माग करके गुरु का भी पोषण करता था। उस समय का विद्यार्थी निरीह था। उसके पास कोई भी सासारिक कामना फटकने नही पाती थी। वह ब्रह्मचर्य का पूर्ण पालन करता था और नगर की तथा समाज की चकाचोंध से सर्वथा दूर रहता था। उस समय सहशिक्षा नही थी, परीक्षा उत्तीर्ण करने की वर्तमान प्रणाली भी नही थी और जीविका की समस्या भी इतनी जटिल नही थी। तब विद्यार्थी विशुद्ध ज्ञानार्जन के उद्देश्य से पढता था और गृहस्थाश्रम मे आने के बाद समाज की विभिन्न मर्यादाओं का निर्वाह करता था।

आज के विद्यार्थी की परिस्थितिया ही दूसरी है। उसके सामने अनेक समस्यायें है जिनके कारण वह चाहते हुए भी शिष्य (शासन योग्य) नहीं बन पाता है। आज का समाज भी विद्यार्थी के प्रति सहानुभूतिपूर्वक नही सोच पाता है। सब उसे उच्छृंखल, उद्दण्ड एवं स्वेच्छाचारी बतलाते है। यह अवश्य है कि कुछ विद्यार्थी, इस पवित्र धर्म को अवश्य कलंकित कर रहे है, जिनके कारण सारा विद्यार्थी-समुदाय बदनाम है।

आज हम आए दिन देखते हैं और समाचार पत्रो में पढते हैं कि विद्यार्थी रेल में बेटिकट यात्रा करते है और रोके जाने पर अधिकारियों को मारपीट भी देते हैं, कही वे कन्सेशन न देने पर सिनेमा घरो पर आक्रमण कर देते है, कहीं वे विभिन्न मागें प्रस्तुत करके शिक्षा संस्थाओ मे हडताल करा देते है, कही वे किसी छोटी सी बात पर क्रुद्ध होकर के नगर मे अनेक उत्पात

आरम्भ कर देते हैं कहीं वे किसी सम्मेलन या भाषण मे अव्यवस्था करके वक्ताओ को निराश कर देते है और कही मेहतरो या मजदूरो की हड़ताल में अगुवा बनकर के उनका नेतृत्व सभाल लेते है।

बाहर ही नहीं, कालेज मे भी कुछ छात्र अनुत्तरदायित्व की आग मे खेलते है। वे कक्षा में बहुत कम आते है, आते है तो उपस्थिति के बाद शीघ्र ही चले जाते हैं। साथ मे पुस्तकें नही लाते है। कुछ तो साल भर तक एक भी पुस्तक नही खरीदते है। कुछ छात्र साल भर 'आवारा' की तरह रहते है और केवल परीक्षा के दिनो मे ही पढते है, और कुछ तो फेल हो जाने मे अपनी शान समझते है।

'यह सब क्या है,' सोच-सोचकर बडा दुख और नैराश्य होता है। भारत के भावी कर्णधार आज स्वय मझधार मे है। पथ प्रदर्शक आज पथ-भ्रष्ट है और राष्ट्र के रक्षक आज भक्षक बनने के कुमार्ग पर है। यह एक बड़ा गम्भीर प्रश्न है जो देश के अनेक विचारको को चिंतित किए हुए है।

सर्वप्रथम विचारणीय बात यह है कि विद्यार्थी की अनुशासनहीनता के मुख्य कारण क्या है। सचमुच ऐसे कारण, जिन्हें यदि दूर कर दिया जाय, तो यह विकराल समस्या स्वयमेव समाप्त हो जाय, वस्तुत: अन्वेषणीय और दूरकरणीय हैं। मेरे विचार से इस दिशा मे अनेक कारण हो सकते है, जैसे

१. आज के विद्यार्थी की परिवार मे कोई देखभाल नही हो पाती है। उसके माता पिता उसको स्कूल मे भर्ती कराके निश्चिन्त हो जाते है और अपने को समस्त उत्तरदायित्व से मुक्त समझ लेते हैं। विद्यार्थी के कुछ शिकायत करने पर वे वर्तमान शिक्षा एवं शिक्षकों को ही कोस कर शान्त हो जाते है और कोई निजी प्रयत्न नही करते है।

२ आज के विद्यार्थी की कक्षा मे भी कोई देखभाल नही हो पाती है। साठ-सत्तर छात्रों के बीच अध्यापक को उसका स्मरण तक नही रहता है और न कभी व्यक्तिगत सम्पर्क ही हो पाता है।

३. अपर्याप्त वेतन के कारण अध्यापकवर्ग भी शिक्षा की ओर उतना ध्यान नहीं दे पाता है, जितना उसे देना चाहिए। वह ट्यूशन की टोह मे रहता है और ट्यूशन वाले छात्रो की ओर ही ध्यान देता है। इसी कारण वह अन्य विद्यार्थियो की उपेक्षा जान मे या अनजान में करता रहता है।

४. आज के समाज में बड़ा फैशन और वैषम्य है। विद्यार्थी पर

उसकी कुप्रभाव पडता है और उसके मन मे एक घुटन रहती है जो उमड कर उस अनुशासन भंग करने के लिए कभी कभी बहुत विवश कर देती है।

५. कालेज मे आने पर विद्यार्थी को और अधिक स्वच्छन्दता का साम्राज्य मिल जाता है। अब वह कुछ अधिक समझदार हो जाता है, इसलिए अपने अनुशासन भंग का शुभारम्भ वह अपने अध्यापकों के तिरस्कार मे करता है। स्कूल मे तो वह फिर भी कुछ दबा हुआ था। यहा वह अध्यापक को गुरु न मान कर एक वेतन भागी सेवक समझता है। वह इसका दुष्परिणाम भी भुगतता है, किन्तु उसका चिन्ता नही करता है और अत्यधिक विद्रोही बन जाता है।

६. सहशिक्षा का भी विद्यार्थी पर बहुत कुप्रभाव पडता है, क्योंकि समाज मे न तो इतना स्वच्छन्द मिलन हो पाता है और न ब्रह्मचर्य पालन पर ही विशेष ध्यान दिया जाता है। फलतः विद्यार्थी सस्ते रोमांस मे पड़ कर अपना भविष्य चौपट कर लेते हैं और इस प्रकार अपने पैरो में स्वयं कुल्हाडी मार लेते है।

७. कालेज मे निकलने के बाद भी विद्यार्थी का कोई सुरक्षित भविष्य नहीं रहता है। इसलिए वे तब तक पढ़ा करते हैं, जब कोई उचित नौकरी नहीं मिल जाती है। बहुत सी छात्राएं भी इसी प्रकार तब तक पढा करती हैं, जब तक उनके अभिभावक उनके विवाह का ठीक प्रबन्ध नही कर पाते हैं। ऐसे छात्र शुद्ध दृष्टि मे छात्र नहीं कहला सकते हैं।

८. अन्त मे यह कह देना भी यहा असंगत न होगा कि बहुत सी राजनैतिक संस्थाएं भी ऐसे असन्तुष्ट छात्रों का बेजा फायदा उठा कर के अनुशासनहीनता का प्रसार करती है। वे उन्हें नेता बन जाने का लोभ देकर ऐसा पथ भ्रष्ट कर देती है कि वे फिर जीवन भर के लिए निकम्मे हो जाते है। कालेज के बाद, वे समाज में भी नेता बनने का स्वप्न देखते तथा प्रयत्न करते हैं और अन्त मे धोखा खाते हैं। इन कारणों के अतिरिक्त अन्य बहुत से कारण है या हो सकते है। हमे इन सब की मीमांसा करनी चाहिए और उन्हे दूर करने के लिए यथा संभव प्रयत्न भी करने चाहिए। उदाहरण के तौर पर कुछ सुझाव यहां पर दिए जा रहे हैं, जैसे—

(१) शिक्षा मे अनुशासन का महत्व होना चाहिए। अतः घर पर माता-पिता भी अपने सुपुत्रो और सुपुत्रियो का विशेष ध्यान रखें और उन्हे अधिक

प्यार-दुलार से चौपट न कर। इसके साथ ही उनके सामने उनके अध्यापकों से मिल कर उनका अध्यापको का) उचित सम्मान करें ताकि बच्चों पर गुरु की गुरुता का एक मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ सके।

(२) स्कूल मे गुरु और छात्र-सख्या का आदर्श अनुपात रहे १ : १०। इससे निकट सपर्क रह सकेगा। इसके अतिरिक्त सभी छात्रो के लिए ए. सी. सी या एन सी सी, अनिवार्य होना चाहिए। हो सके तो अध्यापकों के लिए भी इसे अनिवार्य कर दिया जाय। इसका बहुत अच्छा प्रभाव पडेगा।

(३) अध्यापको को अच्छे वेतन मिलने चाहिए अथवा समाज मे इतना उचित सम्मान मिलना चाहिए कि वे अपनी त्याग वृत्ति के कारण ही शान के साथ रह सकें। प्रत्येक सामाजिक उत्सव में उन्हे उच्चासन देना चाहिए।

(४) प्राइवेट परीक्षाए बन्द कर देनी चाहिए और परीक्षा प्रणाली मे ऐसा सुधार हो कि परीक्षा का भय समाप्त हो जाय। एक निश्चित उपस्थिति और स्तर पर छात्रो को उन्नति दे दी जाय।

(५) सहशिक्षा तब तक के लिए बन्द कर दी जाय, जब तक समाज उसके लिए तैयार न हो जाय।

(६) विद्यालय नगर के वातावरण मे यथासंभव दूर होना चाहिए और वहा अधिकाधिक छात्रो को होस्टल मे रहने की सुविधा होनी चाहिए।

(७) अनुशासन प्रिय छात्रों को प्रशंसित एवं पुरस्कृत किया जावे। कालेज में समय-समय पर ऐसे आयोजन हो, जिनमे वहां के अध्यापक या बाहर के विद्वान् 'अनुशासन' के महत्व पर भाषण दे। पुस्तकालय मे भी इसी प्रकार का साहित्य सुलभ होना चाहिए।

(८) उन राजनैतिक पार्टियो की खुले आम भर्त्सना की जाय और उन पर रोक लगाई जाय, जो विद्यार्थियो को गुमराह करती है।

(९) अन्त मे शिक्षकों पर भी इसका बड़ा भारी उत्तरदायित्व है। उन्हे चाहिए कि वे सादे रहे, अध्ययनशील बनें और सद्गुणो की स्वयं स्थापना करे, ताकि विद्यार्थी उनसे प्रतिक्षण प्रभावित होते रहें और प्रेरणा प्राप्त करते रहे।

मेरे विचार से यदि इन सुझावो पर सहृदयता के साथ ध्यान दिया गया और इन्हें काम मे लाया गया, तो अनुशासनहीनता की समस्या बहुत कुछ अपने आप सुलझ जायेगी और थोड़े ही समय मे हम उसके अस्तित्व तक को

भूल जायेंगे दख इस समस्या का समाप्त करने के लिए पहले कौन बीड़ा उठाता है।

५. हिन्दी काव्य में प्रकृति-वर्णन

१—हिन्दी काव्य का आरम्भ।
२—जीवन में काव्य की उपयोगिता।
३—काव्य और प्रकृति का संबंध।
४—प्रकृति वर्णन के विभिन्न प्रकार।
५—प्रकृति वर्णन का काव्य पर प्रभाव।
६—उपसंहार।

हिन्दी साहित्य के इतिहास के अनुसार हिन्दी काव्य का आरंभ १० वी शताब्दी से मानना चाहिए। यद्यपि इसके पहले भी ७वीं और ८वीं शताब्दी में सिद्ध-साहित्य का उल्लेख मिलता है, किन्तु उस समय शुद्ध हिन्दी भाषा के काव्य की प्रतिष्ठा नहीं थी। आ० रामचन्द्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य को जिन चार कालो मे विभाजित किया है उनमे सर्वत्र हिन्दी काव्य का बड़ी प्रचुर मात्रा मे निर्माण हुआ है। बल्कि हम यह भी कह सकते है कि पहले के तीनो कालों मे काव्य का अखड साम्राज्य रहा है। वर्तमान काल अवश्य गद्य-काल है, फिर भी काव्य का अपना अलग महत्वपूर्ण स्थान है।

मानव जीवन के लिए काव्य बडा उपयोगी है। नीरस व्यक्तियो का तो वही एक मात्र इलाज है। हमारा प्राचीन साहित्य अधिकतर काव्यमय रहा है। सस्कृत म भी कुछ एक गद्य ग्रंथो को छोड़कर शेष ग्रंथ काव्य मे ही है। हमारा ज्योतिष शास्त्र, आयुर्वेद शास्त्र आदि सभी कुछ काव्यमय है। इसका एक ही कारण है कि काव्य में कठाग्र हो जाने की जो सुविधा है, वह उसे चिरस्थायी बना देती है। हमारे वेद इसी के पमाण है। वे हमें परम्परा मे इसी मौखिक प्रक्रिया के द्वारा प्राप्त हुए थे और आज मुद्रण कला की कृपा मे पूर्ण सुरक्षित हैं।

वस्तुत सत्काव्य मे हमे एक प्रेरणा मिलती है जो जीवन के सुचारु रूप मे निर्वाह करने में बड़ी सहायक सिद्ध होती है। हमारे विद्वान् पूर्वजो ने अपने अमूल्य अनुभवो को सत्काव्य के रूप मे ही हमारे लिए सुस्थिर कर दिया है। सत्काव्य, किसी भी समाज और देश की स्थायी संपत्ति के रूप मे ही

प्रतिष्ठित होते हैं। इस प्रकार काव्य और मानव जीवन का एक अटूट सम्बन्ध स्वत. सिद्ध हो जाता है ।

काव्य और प्रकृति का एक अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। प्रकृति वर्णन के अभाव मे काव्य मूक हो जाता है और काव्य के अभाव मे प्रकृति पगु हो जाती है। इस प्रकार दोनों मे एक प्रसिद्ध एकात्मता है। काव्य प्रकृति की व्याख्या करता है और प्रकृति उसके लिए अनेक प्रकार से वर्ण्य विषय जुटाती है। काव्य और प्रकृति के इस मधुर सम्बन्ध से ही तो मानव-जीवन का आकर्षक विवेचन एवं निरूपण होता है ।

काव्य और प्रकृति का यह उपर्युक्त सम्बन्ध अनेक प्रकार से होता है या हो सकता है, जैसे

(१) आलम्बन रूप मे,
(२) उद्दीपन रूप मे,
(३) अलंकार रूप में,
(४) उपदेशक रूप मे,
(५) लाक्षणिक रूप में,
(६) रहस्य रूप में,
(७) मानवीकृत रूप में,

आलम्बन रूप

जहा प्रकृति काव्य का वर्ण्य विषय बनकर आती है, वहा उसका 'आलम्बन' रूप होता है, क्योंकि उस समय वह हमारे भावों का आलम्बन बन जाती है। प्राचीन हिन्दी काव्य में इस प्रकार का शुद्ध वर्णन बहुत कम मिलता है। संस्कृत में भी ऐसी कोई प्रेरक परम्परा नहीं थी। आधुनिक काव्य मे प्रकृति को आलम्बन मानकर बहुत कुछ लिखा जा चुका है और लिखा जा रहा है। पं० सुमित्रानन्दन पन्त प्रकृति वर्णन के प्रसिद्ध कवि माने जाते हैं। उनका आरंभिक काव्य उसी से ओतप्रोत रहा है। 'प्रसाद'जी के काव्य में भी प्रकृति को महत्वपूर्ण स्थान मिला है। उनकी 'कामायनी' का आरम्भ प्रकृति वर्णन से ही होता है। हरिऔध, श्रीधरपाठक और महादेवी वर्मा आदि की कविताओ मे भी प्रकृति का शुद्ध वर्णन मिलता है। प्राचीन कवियों मे केवल सेनापति का ही प्रकृति वर्णन अति प्रसिद्ध है ।

आधुनिक कवियो के कुछ निम्नांकित उदाहरण इस दिशा मे पर्याप्त होगे।

(१) उषा सुनहले तीर बरसती जयलक्ष्मी सी उदित हुई
उधर पराजित काल रात्रि भी जल मे अन्तर्निहित हुई ।।
बा० जयशंकर प्रसाद (कामायनी)

(२) बासो का झुरमुट, सन्ध्या का झुटपुट ।
है चहक रही चिड़िया, टी-वी-टी-टुट्-टुट् ।।
श्री सुमित्रानन्दन पंत (कलरव)

(३) दिवस का अवसान समीप था ।
गगन था कुछ लोहित हो चला ।।
तरु-शिखा पर थी अब राजती ।
कमलिनी-कुल-वल्लभ की प्रभा ।।
श्री हरिऔधजी (प्रिय प्रवास)

(२) उद्दीपन रूप

इस रूप में प्रकृति मानवीय भावो को उद्दीप्त करती है। वह मानव को सुख मे सुखमयी और दुख मे दुखमयी जान पड़ती है। हिन्दी साहित्य मे इस प्रकार का वर्णन अत्यधिक मात्रा मे प्राप्त होता है। अधिकतर वियोग-वर्णन मे, कवियों ने प्रकृति के उद्दीपन रूप की विशेप प्रतिष्ठा की है। जायसी का 'नागमती-वियोग-वर्णन' इस दिशा मे अतीव प्रसिद्ध है। सूर ने गोपियो के विरह वर्णन मे और तुलसी ने राम के विरह वर्णन मे इस 'उद्दीपन रूप' को प्रधानता दी है। जैसे—

(१) 'बिनु गोपाल बैरिन भई कुंजै ।
तब ये लता लगति अति सीतल, अब भई विषम ज्वाल की पुंजैं ।
(सूरदास)

(२) नूतन किसलय मनहुँ कृसानू । कालनिसा समनिसि ससि भानू ।।
कुवलय विपिन कुंत बन सरिसा । बारिद तपत तेल जनु बरिसा ।।
(गो० तुलसीदास)

आधुनिक कवियो मे हरिऔध, प्रसाद, मैथिलीशरण गुप्त, महादेवी वर्मा और पन्तजी ने भी इसी प्रकार के अनेक वर्णन प्रस्तुत किए है, जैसे—

(१) छू देती है मृदु पवन जो पास आ गात मेरा ।
तो हो जाती परस-सुधि है श्याम प्यारे करों को ।।

ने पुष्पा की सुरभि वह जो कुंज में डोलती है ।
तो गन्धों से वलित मुख की वास है याद आती ।।

(श्री हरिऔधजी)

(२) ओ हो मरा यह पराक वसन्त कैसा ।
ऊंचा गला रुंध गया अब अन्त जैसा ।।

(श्री मैथिलीशरण गुप्त)

(३) धरि समीर पास मे पुलकित, विकल हो चला श्रान्त शरीर ।
आशा की उलझी अलकों से उठी लहर मधु गंध अधीर ।।

(प्रसाद जी)

अलंकार रूप

जब प्रकृति का वर्णन उपमा रूपक आदि किसी 'अलंकार' के समान किया जाता है, तब उसका अलंकार रूप वर्णित होता है । इस रूप मे भी प्रकृति का वर्णन बहुत अधिक किया गया है । क्या प्राचीन, क्या नवीन सभी व्यक्तियों ने इस दिशा में बड़े अनूठे प्रयोग किए है । कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं ।

१. बन्दौ चरन कमल हरि राई ।

(सूरदास)

२. लता-भवन ते प्रगट भए, तेहि अवसर दोऊ भाइ ।
निकसे जनु बिमल बिधु जलद पटल बिलगाइ ।।

(तुलसी)

३. सिंधु सेज पर धरा-वधू अब तनिक संकुचित बैठी सी ।
पुल मे निशा की हलचल स्मृति में, मान किए सी ऐंठी सी ।।

(प्रसाद)

(४) उपदेशक रूप में

मनुष्य ने प्रकृति से समय-समय पर अनेक शिक्षाएं ग्रहण की हैं । वह फूलों से हंसना सीखता है, भौरों से गुन-गुन गाना सीखता है और मोरो से नाचना सीखता है । इतना ही नही, वह जीवन के विभिन्न व्यापारो में भी प्रकृति से प्रेरणा प्राप्त करता है । हिन्दी के प्राचीन और नवीन सभी कवियो ने प्रकृति के इस रूप का भी पर्याप्त निरूपण किया है, जैसे—

(१) दामिनि दमक रह न धन माही ।
खल के प्रीति जथा थिर नांही ।।

बूँद अघात सहहिं गिरि कैसे।
खल के बचन संत सह जैसे ।।

(तुलसी)

(२) शोभावाले विटप विलसे पक्षियों के स्वरों से ।
विज्ञानी है परम प्रभु के प्रेम का पाठ पाता ।।

(हरिऔध)

(३) ज्यों ज्यों लगती है नाव पार ।
उर में आलोकित शत विचार ।।
इस धारा सा ही जग का क्रम, शाश्वत इस जीवन का उद्गम ।
शाश्वत है गति, शाश्वत संगम ।

(पंत)

(५) लाक्षणिक रूप

इस रूप मे प्रकृति के शाब्दिक अर्थ को स्वीकृत न करके उसके लाक्षणिक अर्थ को ही प्राथमिकता दी जाती है। प्रकृति के अंग, वहां विभिन्न मानवीय भावनाओं के संकेत तक हो जाते हैं। छायावादी और रहस्यवादी कविताओं में यह प्रवृत्ति अधिकतर अपनाई जाती है। कबीर और जायसी ने भी इस पद्धति को बड़ा प्रश्रय दिया था। कबीर जब कहते है कि इस तालाब में आग लग गई और मछलियां पेड़ो पर चढ गईं, तब उसका यही लाक्षणिक अर्थ लिया जाता है कि ज्ञान का प्रकाश हो जाने से सारी इन्द्रियां ऊर्ध्व मुखी हो गई। इसी प्रकार आधुनिक काव्य में भी प्रकृति का बड़ा सुन्दर लाक्षणिक वर्णन मिलता है, जैसे

१—देखूं सब के उर की डाली—
किसने रे क्या क्या चुने फूल ।
जग के छवि उपवन से अकूल ।
इसमे कलि, किसलय, कुसुम, शूल । (पंत)

यहां कलि किसलय कुसुम शूल क्रम से आशा, आकांक्षा, सुख और दुख के प्रतीक हैं ।

२—मैं नीर भरी दुख की बदली ।
स्पन्दन में चिर निस्पंद बसा ।
क्रन्दन मे आहत विश्व हंसा ।।

नयनो मे दीपक स जलते
पलको में निर्झरिणी मचली ॥

(महादेवी)

(६) रहस्य रूप में

विशेषकर छायावादी और रहस्यवादी कविताओ में प्रकृति के रहस्यात्मक रूप का विस्तार से वर्णन किया गया है। वहा कवि उत्सुक नेत्रो से प्रकृति के रहस्यात्मक भावों की खोज करता है और स्वयं से अनेक प्रश्न करता है। ऐसे काव्य में दार्शनिकता का विशेष पुट रहता है, जैसे

१—महानील इस परम व्योम मे, अन्तरिक्ष मे ज्योतिमान।
गृह नक्षत्र और विद्युत्कण, किसका करते से संधान॥

(प्रसाद)

(७) मानवीकृत रूप में

कवि अपनी भावनाओं को साकार करने के लिए अनेक बार अमूर्त पदार्थों को मूर्त और निष्प्राण पदार्थों को सप्राण प्रतिष्ठित कर लेता है। इसी सप्राण रूप में प्रकृति का चित्रण अनेक कवियो ने अनेक प्रकार से किया है, जैसे

१—सैकत शय्या पर दुग्ध धवल।
तन्वंगी गंगा ग्रीष्म विरल।
लेटी है शान्त क्लान्त निश्चल॥

(पंत)

२—धीरे धीरे हिम आच्छादन,
हटने लगा धरातल से।
जगी बनस्पतिया अलसाई,
मुख धोती शीतल जल से॥

(प्रसाद)

इस प्रकार काव्य में अनेक प्रकार से 'प्रकृति वर्णन' किया जाता है। वह वस्तुतः मानव-भावनाओं का एक विशिष्ट आधार है, ज्ञापक है और परिचायक है, अतः उसकी विविध रूपों मे प्रतिष्ठा की जा सकती है।

जहा तक काव्य के ऊपर पड़े हुए 'प्रकृति-वर्णन' के प्रभाव का प्रश्न है, वहां यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि उसने काव्य को अनेक

मार्गों से पुष्ट किया है। प्रकृति के बिना काव्य की कल्पना ही नही की जा सकती है। 'प्रकृति' से हमारा सम्बन्ध मानव की प्रकृति से भी हो सकता है। उस दशा में तो काव्य का सारा क्षेत्र ही मानवीय प्रकृति से ओतप्रोत है। कवि या तो चराचर जगत् का वर्णन करता है या अपनी (मानव की) प्रकृति का विवेचन या विश्लेषण। दोनों ही स्थितियों में वह 'प्रकृति' का मुखापेक्षी है। प्रकृति से दूर तो वह—कितना भी चाहे— जा नहीं सकता। वह तो उसका एकमात्र संबल है, प्राण है, तथा सर्वस्व है।

इस विवेचन से हिन्दी काव्य में प्रकृति वर्णन के महत्व का विशद रूप से पता चलता है और यह सिद्ध हो जाता है कि प्रकृति वर्णन वस्तुतः काव्य का एक अभिन्न अंग है और हिन्दी के सभी कवियो ने अपनी रचनाओ मे उसे बड़ी समर्थता के साथ प्रतिष्ठापित किया है।

६. सह-शिक्षा

१. सहशिक्षा की परिभाषा
२. सहशिक्षा का आरम्भ
३. सहशिक्षा से हानि
४. सहशिक्षा से लाभ
५. उपसंहार

'सहशिक्षा' का अभिप्राय है, बालक और बालिकाओं का एक साथ बैठ कर एक ही विद्यालय में एक ही अध्यापक से शिक्षा ग्रहण करना। अंग्रेजी मे इसके लिए 'को-एजुकेशन' शब्द है। यह वस्तुतः अंग्रेजों की ही देन है। अंग्रेजों के आने के पहिले यहां 'सहशिक्षा' का नाम भी नही था।

प्राचीनकाल मे भारतवर्ष में स्त्री-शिक्षा के लिए जो भी प्रबन्ध होते थे या किए जाते थे, उनका बहुत कम उल्लेख मिलता है। यह संभावना की जा सकती है कि जिस प्रकार लड़कों की शिक्षा का प्रबन्ध था, उसी प्रकार लडकियों की भी शिक्षा का प्रबन्ध रहा होगा, किन्तु 'सहशिक्षा' का तो कही स्वल्प भी संकेत नहीं मिलता है।

उस काल में विद्यार्थियों को आश्रम धर्म का पालन करना पड़ता था। वे २५ वर्ष तक ब्रह्मचारी रह कर गुरु के आश्रम मे ही उनकी देखरेख में विद्याध्ययन करते थे। इसीलिए उनको 'अन्तेवासी' कहा जाता था। वहा वे

( )

साहित्य, व्याकरण, वेद दर्शन ज्योतिष आयुर्वेद आदि की विशिष्ट शिक्षा प्राप्त करते थे और शिक्षा दीक्षा के उपरान्त वे अपने गुरु को दक्षिणा देकर क उनकी अनुमति से गृहस्थाश्रम मे प्रवेश करते थे .

गुरु के आश्रम मे रहते समय या तो वे गुरु के अन्न मे पलते थे, या फिर स्वयं भिक्षा माग करके गुरु का भी ध्यान रखते थे। उस समय के राजा लोग ऐसे गुरुकुलों का आर्थिक प्रबन्ध स्वयं करते थे। इसके साथ ही समाज भी इतना जागरूक था कि ब्रह्मचारियो को भिक्षा देने मे गौरव का अनुभव करता था। आज न तो वे आश्रम है, न वह समाज है और न वैसे ब्रह्मचारी ही।

मध्य-काल की शिक्षा पद्धति मे भी, यद्यपि राजाओ के हाथो में शिक्षा का प्रबन्ध था, तो भी 'सह-शिक्षा' का कही पता न था। उस समय कुछ धनिको ने भी अपने दान से बडे बडे महाविद्यालय स्थापित किए थे, किन्तु लडकों और लडकियो के लिए अलग अलग विद्याध्ययन का प्रबन्ध था।

'मुस्लिम काल' में अनेक परिस्थितियो के कारण 'पर्दा' प्रथा का आरम्भ हो गया था और उसका कडाई से पालन भी किया जाता था। छोटी आयु मे ही लड़कियों का विवाह कर दिया जाता था, जिससे उनकी शिक्षा आगे नही बढ़ पाती थी, फिर भी जो शिक्षा वे ग्रहण करती थीं, उसमे 'सह-शिक्षा' जैसी कोई बात नही थी।

भारतवर्ष मे अंग्रेजों के प्रभुत्वकाल मे सह-शिक्षा की आवश्यकता का अनुभव हुआ। छोटे बच्चे और बच्चियो से इसका शुभारम्भ हुआ। आरम्भिक काल में प्रायः १० वर्ष की आयु तक ही, यदि 'सह-शिक्षा' रहती, तो शायद आज वह समस्या न बन पाती, किन्तु इंगलैंड की देखादेखी जब उच्च कक्षाओ मे भी 'सह-शिक्षा' का सूत्रपात हुआ तो उसका बड़ा विरोध किया गया। उस समय प्रायः एंग्लोइन्डियन और ईसाइयों के स्कूलो तक ही यह सीमित रही। वहा भी छात्रों और छात्राओं के ऐच्छिक मिलन के अनेक कुपरिणाम सामने आए। उन्होने देश के विचारको, विशेषकर सह-शिक्षा के विरोधियों के कान खड़े कर दिए।

'क्रिश्चियन समाज' मे उस प्रकार का मिलन कोई बुरा नही माना जाता और वहां आज भी बड़ी स्वच्छन्दता है, बल्कि वे उसे अनेक दृष्टियों से बहुत अच्छा समझते है, किन्तु रूढिवादी भारतीय समाज ने उसे कभी भी

सुदृष्टि से नही देखा । उसका कहना था कि छात्रो और छात्राओ का मिलन आग और घी के मिलन के समान है जिससे परस्पर बड़ा आकर्षण बढ़ता है और वह आगे चलकर अन्तर्जातीय प्रेम विवाह के रूप मे परिणित हो जाता है ईसाइयो की बात और है उनके यहां ऐसा कोई सामाजिक प्रतिबन्ध नही है ।

'आर्य समाज' ने सहशिक्षा का विशेष विरोध किया । स्वामी दयानन्द का कहना था कि विद्या ग्रहणकाल मे छात्रो और छात्राओ मे परस्पर बातचीत तक न होनी चाहिए, क्योकि यदि आरम्भ में ही छात्रो का चरित्र बिगड़ गया, तो वे देश के किसी काम के नही रह जाते है । आज की बात जाने दीजिए, पहले डी. ए. वी. संस्थाओ मे कही भी सहशिक्षा का नामोनिशान नही था ।

अब यहा हमको विचार लेना चाहिए कि सहशिक्षा क्यो आवश्यक है और इसके क्या लाभ है । सबसे पहला कारण है अच्छे शिक्षको की कमी । यह आवश्यक है कि आज इस कमी को दूर करने का प्रयत्न किया जा रहा है, किन्तु अच्छे शिक्षक तो सदा कम रहे है और कम रहेगे । सख्या बढ़ सकती है, किन्तु गुण बढना असंभव है । अतः बड़े बड़े कालेजो और विश्वविद्यालयो मे अच्छे शिक्षकों से सभी छात्र और छात्राएं, समान लाभ उठा सकें, इसलिए 'सहशिक्षा' एक विवशता हो जाती है ।

दूसरे धन की कमी है, जिसके कारण न तो इतने शिक्षालयो के भवन बन सकते हैं और न इतने शिक्षक-अच्छे या बुरे ही नियुक्त किये जा सकते हैं । फिर यह तो धन का अपव्यय होगा और व्यर्थ के दुहरे काम से लाभ ही क्या है । आज देश मे धन की कितनी कमी है, इसीलिए योजनाओ में कभी कभी बडी कटापिटी हो जाती है । इसलिए भी सहशिक्षा के अतिरिक्त दूसरा मार्ग नही रह जाता है ।

इतना ही नही, सहशिक्षा के अपने लाभ भी हैं । उसके कारण छात्रो और छात्राओं में स्पर्धा और प्रतियोगिता की भावना बढती है । एक दूसरे को स्वच्छ देखकर उनमें रहन सहन के उच्च स्तर की स्वयं स्थापना हो जाती है । निरन्तर परिचय से वे परस्पर एक दूसरे की अच्छाइयो और बुराइयो को पहचान लेते है, जिससे फिर कोई आशंका नहीं रह जाती है—और यदि वे चाहे तो जाच परख कर किसी को जीवन साथी भी चुन सकते है । इससे 'दहेज' की समस्या भी स्वतः हल हो जाती है । कुछ मातापिता सोचते है कि वे

अपनी पुत्रियों से अधिक बुद्धिमान् है और वस्तुत: हैं भी; किन्तु बहुत से ऐसे विवाह देखे गए हैं जहां धोखा हो जाता है और फिर सभी प्रेम विवाह असफल होते हो, ऐसी भी कोई बात नहीं है। धोखा इसमे भी हो सकता है, इसीलिए सभी प्रकार की सावधानी की बड़ी आवश्यकता है। फिर अपने समाज मे ऐसे विवाहो का अधिक प्रचलन भी तो नही है, इसीलिए अटपटा लगता है और ऐसे अन्तर्जातीय विवाहो मे तो 'नाक कटना' जैसा हो जाता है। यह अवश्य है कि इसमे तलाक की समस्या भी बढती है। यही तो समाज की विविधता है. किन्तु यह सब 'सहशिक्षा' के ही कारण होता है, यह सोचना ठीक नही है।

'सहशिक्षा' के नाम पर अब स्त्रियो को बुर्के मे बन्द करके नही रखा जा सकता है और न ब्रह्मचर्य का झूठा ढोग ही रचा जा सकता है। आज समाज बहुत आगे बढ़ चुका है और पीछे लौटना न तो सभव है और न बुद्धिमानी। इतना हमे अवश्य चाहिए कि हम आखें पसार कर चारों ओर देखे, स्पुतनिक युग की विशेषताओ को पहचानें, बैलगाडियो वाले जमाने को भूल जाएं और विश्व के प्रगतिशील चरणों के साथ अपने चरण मिलाकर साव-धानी से आगे बढ़ें। किसी मे पीछे न रहे।

सहशिक्षा अब रोकी नही जा सकती है, क्योंकि यह समय की माग है, आवश्यकता है और अनिवार्यता है। उसका परीक्षण-काल समाप्त हो चुका है और अब वह समाज के लिए उपयोगी सिद्ध हो चुकी है, किन्तु हमारा यह पुनीत कर्तव्य है कि हम उसको भारतीय वातावरण के अनुसार भारतीय आदर्शों और सिद्धांतों के ढांचे मे ढाल लें और उसे भारत की सर्वांगीण उन्नति का एक अनिवार्य साधन बना लें।

७. सपनों की दुनियां

१—सपने क्यों आते हैं
२—क्या सपने सच्चे होते हैं
३—सपनों की संभावनाएं
४—एक अपना सपना
५—उपसंहार

विद्वानो का कहना है कि जो घोडा बेचकर सोते हैं उन्हें सपने नहीं आते। वे सपनो को अच्छा भी नही समझते हैं। उनके विचार से दुर्बल अथवा रोगियों को ही सपने आते है, और उनको सपनों की बीमारी नही होती, किन्तु बात ऐसी नहीं है।

सच तो यह है कि हमारा मस्तिष्क बडा क्रियाशील है वह दिनरात चला करता है। तरह तरह की कल्पनाएं उसी की देन है। हम रात मे ही नही दिन में भी सपने देखते है। जानते हुए, या लेट कर या बैठकर हम जो मन के लड्डू फोडा करते है, वे सपने नही तो और क्या हैं। बहुत संभव है कि हम उन्हें अपनी उच्चाकाक्षाए कहे, लेकिन वे हमारे सपने ही हैं, इससे कौन इन्कार कर सकता है। यह बात दूसरी है कि हम मिनिस्टर बनने के सपने देखे और न हो पाए तो वह सपना ही है और यदि हो गए तो वह एक महत्वाकाक्षा है जो समय पाकर पूरी हो गई।

तो हमारा मस्तिष्क रात मे भी सक्रिय रहता है। दिन भर की बाते उसके 'रिकार्ड' मे घूमा करती है और वे जाने अनजाने हमारे सामने चक्कर काटा करती है। अधिकतर जब हम चिन्तित होते है, तब उस चिन्ता से सम्बन्ध रखने वाली बातें सपनो मे दिखलाई पड़ती है। हम जैसी कल्पना करते है और अपने कार्य की सिद्धि के जो अनेक उपाय सोचा करते है, वे ही सपनों मे बदल जाते है और कभी कभी क्या, अधिकतर ऐसा होता है कि हम सपनो में बडी सफलता प्राप्त कर लेते है।

हां, सपने सच भी होते है। हमारे एक मित्र का कहना है कि वे बचपन में वार्षिक परीक्षा के प्रश्न-पत्रों को सपने मे देख लिया करते थे और प्रातः वे प्रश्न ज्यों के त्यों परीक्षा में आ जाते थे। किन्तु खेद है कि वे मित्र न तो उन सपनो से स्वय लाभ उठा सके और न किसी को लाभ पहुँचा सके। उन्ही का कहना है कि क्या करें, देर मे उठते थे इसलिए एक तो उनके अनुसार पढ भी नही पाते थे, दूसरे प्रातः ७ बजे से ही परीक्षा होती थी, इसलिए मित्रो को भी बताने का समय नहीं रहता था और तीसरे उन प्रश्नो-पर रोज रोज विश्वास भी नही होता था। जाने दीजिए, सुनते हैं कि राजा हरिश्चन्द्र ने सपने में ही अपना राज्य विश्वामित्र को दे डाला था, फिर प्रात ही उनके आने पर उन्होंने संकल्प पढ़ दिया। कुछ लोगों को सपनों मे आगामी घटनाओ
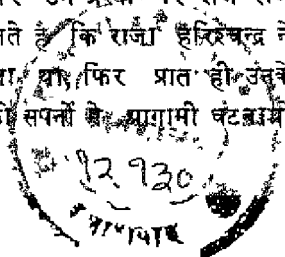
का पता चल जाता है। लेकिन सपने सपने ही होते हैं व कब किसी के अपने हुए हैं

हा तो, मैंने भी एक सपना देखा। उस दिन कालेज की पिकनिक थी, पहाड़ी पर चढ़े थे और खूब अनाप शनाप खाया था, इसलिए रात में बढ़िया नींद आई, लेकिन मच्छरो के कलख ने बेचैन कर दिया। पता नही मसहरी के किस छेद मे उनका 'क्यू' लगा हुआ था। थोड़ी देर मे ऐसा लगा कि तार वाला आया है और मैं अपने ही कालेज का प्रिंसिपल हो गया हूं। वह टूटा फूटा मकान गिर गया और देखते ही देखते एक आलीशान बंगला बन गया। घर वाले पता नही कहा चले गए। मैं बाहर निकला तो वही कालिया ड्राइवर प्रिंसिपल साहब वाला, खडा था, बोला हुजूर, गाडी तैयार खड़ी है। वही काली मोटर, वही नबर प्लेट, सामने वही पचरगा झडा। बड़ी शान से बैठ गया, कालेज पहुँचा। साथ के लड़के कुछ मुस्करा भी रहे, कुछ घबड़ा रहे थे और कुछ बडबड़ा रहे थे। वह रामलाल चपरासी जो पहले बहुत अकडता था, इस समय हाथ बाधे खडा था मैंने उसकी ओर देखा भी नही। अपने आफिस में बैठ गया। प्रो० शर्मा, प्रो० वर्मा और प्रो० माथुर क्रम मे आए और दूसरे प्रोफेसरो की चुगली करके चले गए। हैड क्लर्क ने मिलना चाहा तो कह दिया 'फिर आना'। कुछ लडके आना चाहते थे, उनको भी चपरासी से मना करवा दिया।

अब मैं निश्चित होकर भविष्य के प्रोग्राम बना रहा था कि शिक्षा-मत्री के यहां किसी बहाने से कुछ भेट करना है, शिक्षा सचिव को किसी प्रकार कालेज बुलाना है। डाइरेक्टर साहब का एक भाषण कराना है और कालेज के प्रोफेसरो और लड़कों को एकत्र करके दो घटे उपदेश दिलाना है। इसी समय टेलीफोन की घंटी घनघनाई। एक मधुर आवाज थी। 'मैं प्रिंसिपल साहब से बात करना चाहती हूं।' तभी रामलाल चपरासी भीतर आकर कुछ कहने लगा। मैं चिल्लाया 'भाग जाओ, अभी समय नही है।' टेलीफोन से आवाज आई 'इतना घमंड।' मैं घबडा गया। तुरन्त संभल कर टेलीफोन पर बोला 'माफ करना, कुछ लड़के भीतर घुस आये थे, मैं उन्हे डांट रहा था, आपके टेलीफोन का ध्यान नही रहा, हां कहिए, क्या आज्ञा है' किन्तु टेलीफोन बन्द हो चुका था।

उसी समय डायरेक्टर साहब भीतर आए जो बोले आपने चपरासी से

कहला दिया कि डाइरेक्टर से मिलने का समय नही है क्या बात है होश में तो हैं। मैं हकलाने लगा। बुरा हाल था। उसी समय उन्होने मुझे डिसमिस करने की धमकी दी। मैं माफी माग रहा था। साहब ! कान पकडता हूं, अब ऐसी गल्ती नही होगी, बडा कसूर हो गया, चपरासी ने आपका नाम तक नहीं लिया, आपको यों ही आ जाना चाहिए। आप तो अफसर हैं, माई बाप हैं। मैं रोने लगा 'माफ कर दीजिए आप तो माई बाप है, यह लीजिए मैं कान पकड़ता हू।' पता नही, कैसे मेरे दोनो हाथ कान पर पहुच गए। पिताजी जगा रहे थे, मां घबड़ा रही थी, छोटी बहिन हंसकर कह रही थी "भैया ! किससे माफी मांग रहे थे, किसको 'माई बाप' बना रहे थे, अरे ! अब तो कान छोड़ो, देखो, कितने लाल हो गए है।"

मैं हडबड़ा कर उठ बैठा। झेप गया। बोला 'कोई बात नही, कुछ था, होगा।' थोड़ी देर बाद सब लोग शान्त हो गए और फिर सोने चले गए। मैं सोचता रहा कि पिकनिक मे प्रिंसिपल साहब ने बड़ी शान दिखलाई थी और साथी रमेश ने कहा था कि यदि मै प्रिंसिपल होता......। शायद वे बाते मेरे दिमाग मे कहीं चक्कर काट रही थी। अस्तु

इस प्रकार सपनो की माया बडी विचित्र होती है। सपना वास्तव मे अज्ञान है। यह संसार भी तो सपना है, शायद मृत्यु जागरण है। यह जीवन मरण का चक्र शायद सोना और जागना ही तो है। तभी तो तुलसीदासजी ने कहा है कि ससार सपना है, जागो, ज्ञान प्राप्त करो और इस असत्य के फेर मे मत पडो:—

"जागु जागु जीव जड़ जो है जग-जामिनी।
देह गेह नेह जानि जैसे घन-दामिनी ॥
कहैं वेद बुध, तू तो बूझ मन माही रे।
दोष दुख सपने के जागे ही पै जाहि रे॥"

८. वर्तमान परीक्षा-प्रणाली

१. वर्तमान शिक्षा में परीक्षा का स्थान और महत्त्व।
२. परीक्षा का उद्देश्य।
३. परीक्षा प्रणाली के दोष।

(अ निरीक्षण व्यवस्था क दोष ।
(ब) अंक दान में स्वच्छा ।
(स) श्रेणी में वर्गीकरण का दोष ।
(द) मौखिक परीक्षा का अभाव ।
(च) प्रश्न पत्रों के दोष ।
(छ) पाठ्यक्रम का दोष ।

४. उपसंहार

वर्तमान शिक्षा में परोक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है। परीक्षा का अभिप्राय है किसी वस्तु को सब प्रकार से जाचना-परखना। एक विद्यार्थी पूरे वर्ष भर परिश्रम करता है और उसके साथ वाले अन्य विद्यार्थियो मे से कुछ अपेक्षाकृत कम परिश्रम करते है और बहुत से मौज उड़ाते रहते है। अब इन विद्यार्थियों में से योग्य और अयोग्य छाटने के लिए केवल परीक्षा का ही एक मार्ग रह जाता है। इसके अतिरिक्त कोई दूसरा रास्ता भी तो नही है।

आज से नही, जब से शिक्षा का आरम्भ हुआ है तभी से परीक्षा का भी आरम्भ है। जहां शिक्षा है, वही परीक्षा है और जैसी शिक्षा है वैसी ही परीक्षा है। परीक्षा का एक मात्र शुद्ध उद्देश्य यही है 'योग्यायोग्य का निर्वाचन'। इसके अभाव मे सभी अपने को अत्यधिक योग्य और दूसरो को अयोग्य कह सकते है। इसलिए परीक्षा की अपनी विशेषता और महत्ता होती है।

आज की परीक्षा प्रणाली, आज की शिक्षा प्रणाली पर आधारित है, जो स्वयं दोषपूर्ण है, इसलिए परीक्षा प्रणाली पर भी उसका कुप्रभाव पड़ता है। एक ओर आज का छात्र कुछ भी पढ़ना नही चाहता है, किन्तु परीक्षा उत्तीर्ण करना ही चाहता है, क्योकि परीक्षाओं की डिग्रियो के अभाव मे वह जीवन मे कुछ भी उन्नति नही कर सकता है। दूसरी ओर अध्यापक वर्ग भी कुछ अधिक पढ़ा नही पाता है, क्योकि एक तो विद्यार्थी अनिच्छा रखते है और विशेष उत्सुकता नही दिखलाते हैं, दूसरे पर्याप्त वेतन और सम्मान के अभाव मे चिन्ताग्रस्त रहने के कारण वह स्वयं निरुत्साहित रहता है और तीसरे अधिक परिश्रम करने पर भी, किसी पुरस्कार के मिलने की आशा के न होने के कारण वह उस ओर प्रेरित भी नही होता है। यह सब होने पर भी वह अधिक से अधिक विद्यार्थियों को परीक्षा मे उत्तीर्ण करा देना चाहता है,

क्योंकि एक तो वह बदनाम नही होना चाहता है और दूसरे उसे अधिकारियो का कुछ भय भी रहता है इन्ही दृष्टिकोणों का कुपरिणाम है कि आज परीक्षा प्रणाली अधिक दूषित हो गई है।

छोटी कक्षाओ मे विद्यार्थियों को उत्तीर्ण कराना जहा स्वयं शिक्षक के हाथ में होता है, वह स्वच्छन्द रहता है और जहां वह दूसरे शिक्षकों पर निर्भर होता है, वहा परस्पर व्यवहार चलता है। इस हाथ दे, उस हाथ ले। किन्तु इसका विवेचन हमारा लक्ष्य नही है। इसकी तो हम उपेक्षा भी कर सकते है। हमें तो आगे वाली बडी परीक्षाओं, हायर सेकेंडरी, बी० ए० और एम० ए० आदि की परिस्थितियो पर विचार करना है।

इन बड़ी परीक्षाओं के लिए आज एक मुहावरा बन गया है कि 'परीक्षा तो एक संयोग-मात्र है।' लग गया तो तीर, नहीं तो तुक्का। वह इसीलिए कि इन परीक्षाओं मे योग्यता की वास्तविक परख नही हो पाती है।

सबसे पहले निरीक्षण व्यवस्था के ऊपर विचार करें। एक कमरे मे बहुत से छात्र बैठे लिख रहे हैं। एक या दो निरीक्षक उनकी चौकीदारी कर रहे हैं, फिर भी कुछ छात्र नकल करने में सफल हो जाते हैं। कुछ कागजो और कपड़ों मे लिखकर ले जाते है तो कुछ किताबो के पन्ने ही फाड़ कर ले जाते हैं। निरीक्षक के द्वारा पकड़े जाने पर वे लोभ और धमकी का प्रयोग करते हैं, और कहीं कहीं सचमुच आक्रमण भी कर देते है।

इसके बाद 'अंक-दान' की दुर्दशा देखिए। जो नए परीक्षक है, वे चोख चोख कर अंक देते हैं और जो पुराने है, वे पेशेवर है। उनके पास कई संस्थाओं मे हजारो कापियां आ जाती है और एक ही निश्चित समय मे (अधिक से अधिक १ महीने में) उन्हें सारा काम निपटाना पड़ता है। इसीलिए बेगार जैसी हो जाती है। कभी कभी वे अपने होनहार छात्रों या सुपुत्रों मे भी काम बांट देते हैं और कभी यदि घर मे किसी से अप्रसन्न हो गए तो सारा क्रोध छात्रो पर निकाल देते हैं। तबेले की बला बन्दर के सिर पर या धोबी यदि धोबिन से न जीते, तो गधे के कान उमेठे। और फिर उनके पास कोई 'तराजू' तो होती नही, स्वेच्छा से ही सारा काम चल जाता है। इन सब का परिणाम भुगतना पड़ता है बेचारे छात्र को।

यही दशा श्रेणी के वर्गीकरण की होती है। आधा अंक अधिक तो प्रथम श्रेणी और यदि आधा अंक कम हो गया, तो द्वितीय श्रेणी। यही

स्थिति तृतीय श्रेणी और अनुत्तीर्ण होने मे समझी जा सकती है इसमे परीक्षक कर भी तो क्या सारी व्यवस्था ही दोषपूर्ण है आखिर कही तो सीमा बनानी ही पडती है उसको। अब जो तृतीय श्रेणी के हैं, उन्हें अनुत्तीर्ण ही समझिए। न कही नौकरी मिल सकती है और न आगे इच्छानुसार पढ ही सकते है। जीवन भर 'थर्ड क्लास' का कलंक लिए हुए वे बेचारे भाग्य को और परीक्षा-प्रणाली को एक साथ कोसा करते है।

कुछ विषयो मे मौखिक परीक्षा या अभ्यास-परीक्षा भी होती हैं। वहा भी बड़ी गडबड़ी चलती है। पक्षपात और परस्पर व्यवहार वाली बात वहा भी देखी जा सकती है। परीक्षक अपने आपको 'भाग्य-विधाता' समझता है और स्वागत मे थोडी भी इधर उधर हो जाने पर वह अध्यापको पर मन ही मन क्रोध निकालता है, लेकिन बीतती है, केवल छात्रो पर। अपना अपना भाग्य।

अन्त में थोडा प्रश्न-पत्रों पर भी विचार कर लेना ठीक होगा। एक तो कुछ प्रश्न गलत छपे होते है और उनमे कोई संशोधन भी नही करा सकता, दूसरे कभी कभी पाठ्यक्रम और स्तर के बाहर से भी प्रश्न पूछ लिए जाते है और तीसरे उसमे इतने अधिक विकल्प होते है कि चतुर छात्र कुछ थोड़ा सा ही पढ़कर उत्तीर्ण हो जाते है और अधिक पढ़ने वाले योग्य छात्र चक्कर मे पड जाते हैं ✓

इसके अतिरिक्त हमारा पाठ्यक्रम भी परीक्षा की दृष्टि से दोषपूर्ण है। उसमे प्रत्येक प्रश्न पत्र के टुकड़े टुकड़े करके सब भागो के लिए अलग अलग अंक निश्चित कर दिए जाते है। इसका कुपरिणाम होता है कि बहुत से परीक्षार्थी कम अंकों वाले भाग को तो बिल्कुल छूते नहीं है और अधिक अंकों वाले भाग मे उत्तीर्ण हो जाने की गुंजाइश खोजा करते है।

परीक्षा प्रणाली के उपर्युक्त दोषो के कारण एक ओर सच्चे और योग्यतम छात्र कभी कभी अनुत्तीर्ण हो जाते है, और लज्जावश आत्म हत्या तक कर लेते हैं, दूसरी ओर मौज करने वाले छात्र बड़े मजे से उत्तीर्ण हो जाते हैं और योग्य छात्रों तथा परीक्षा-प्रणाली का एक ही स्वर मे मजाक उडाते है। इसलिए अधिकारियों को चाहिए कि वे इस दिशा मे कुछ आवश्यक सुधार करें, जिससे परीक्षा सचमुच 'परीक्षा' कहलाने लगे और उसके द्वारा योग्यायोग्य छात्रों का वास्तविक निर्वाचन हो सके।

६ दीपावली

(१) त्योहारों की उपयोगिता
(२) दीपावली क्यों ?
(३) दीपावली का महत्व
(४) दीपावली और जुआ
(५) आदर्श दीपावली कैसे ?
(६) उपसंहार

भारतवर्ष त्योहारों का देश है। यहां प्रतिदिन त्योहार मनाए जाते है, किसी दिन तो दो या तीन तक त्योहार पड जाते है। त्योहारों का अपना महत्व है। ये भारतीय संस्कृति के आधार है, ये हमारे प्राचीन गौरव के स्मारक हैं और ये वर्तमानकाल में हमारे प्रेरणा-स्त्रोत है। प्रत्येक त्योहार के पीछे कोई न कोई कथा जुड़ी हुई है जो हमको हमारे स्वर्णिम अतीत का स्मरण कराती है। ये त्योहार हमारे जीवन मे आशा और उल्लास का सचार करते हैं।

भारतवर्ष में बहुत मे वर्ग तथा संप्रदाय के लोग रहते है। सबके अलग अलग त्योहार हैं और वे बड़े प्रेम तथा उत्साह मे मनाए जाते है। हिन्दुओं के ४ प्रमुख त्योहार हैं (१) रक्षा बन्धन (२) विजय दशमी (३) दीपावली और (४) होली। प्राचीन लोग, इन त्योहारो को क्रमशः ब्राह्मण आदि चारो वर्णों के साथ सम्बन्धित बतलाते है। एक उक्ति है—

"रक्षा बन्धन विप्र वंश का और दशहरा क्षत्रिन का।
बनियो का त्योहार दिवाली, होली केवल शूद्रन का॥"

यह सच है इन त्योहारों की जो प्रवृत्ति है और इनमें जो विशेष क्रिया-कलाप होता है, उसी के कारण उनको वर्ण-विशेष मे सम्बद्ध मान लिया गया हो। प्राचीन काल मे रक्षा बन्धन मे ब्राह्मण लोग राजाओ के हाथों में रक्षा-सूत्र इसलिए बांधते थे कि उन राजाओं की ईश्वर रक्षा करे और वे राजा लोग प्रजा की रक्षा करें। आगे चलकर इसने केवल रक्षा की भावना रह गई और धीरे धीरे यह भाई-बहिनों का त्योहार बन गया। विजय दशमी या दशहरा का त्योहार, रावण पर राम की विजय के उपलक्ष मे मनाया जाता है। अनेक स्थानों पर इस दिन नकली युद्ध, शस्त्र प्रदर्शन आदि का आयोजन होता

है और पशुओं का बलिदान भी किया जाता है दीवाली में व्यापारियों का नया वर्ष आरम्भ होता है उस दिन बही पूजन होता है। नये बस्ते बदले जाते हैं और नये खाते खुलते हैं। जन-साधारण तो इसको समान रूप से मनाता है। होली में तो ऐसा लगता है कि मानो हम सब शूद्र हो गए हों। गन्दे रंग कीचड़ आदि उछालना और नशा करना या गाली गलौज देना ही तो शूद्रता है। जाति की शूद्रता तो व्यर्थ की बात है। इस प्रकार उपर्युक्त त्योहारों की प्रवृत्तियों को देखकर यदि उन्हें कोई ब्राह्मण आदि वर्णों से जोड़ दे तो क्या आश्चर्य है ? अस्तु

दीपावली तो हम इसलिए मनाते हैं कि इस दिन भगवान रामचन्द्र, रावण के वध के पश्चात् अयोध्या पधारे थे और वहां की जनता ने दीपक जलाकर नगर में उनका स्वागत किया था। एक आख्यान के अनुसार भगवान् कृष्ण ने नरकासुर राक्षस को मार करके उसके बन्दीगृह से अनेक राज कन्याओं को मुक्त किया था। इसी प्रसन्नता में सारे देश में एक आनन्द मनाया गया था और जनता ने इतने दीपक जलाए कि अमावस्या पूर्णमासी बन गई थी।

दीपावली में साधारणतया सभी मकान लीपे पोते जाते हैं। कूड़ा-करकट बाहर निकाल दिया जाता है। नया सामान, नई वस्तुएं और नये उपकरण लेकर सब लोग अपने अपने घर को खूब सजाते हैं। एक प्रकार से प्रति वर्ष यह होना अत्यन्त आवश्यक है। यह एक अवसर है जब हम प्राचीनता से विदा लेकर नवीनता की ओर सहर्ष प्रयाण करते हैं।

रात्रि में पहले गणेश-लक्ष्मी पूजन होता है। बच्चे बड़े उत्साह से आनन्द मनाते हैं और खूब मिठाई खाते हैं। वे घर में सभी स्थानों पर अनेकानेक दीपक जलाते हैं और आतिशबाजी से प्रकाश को और बढ़ाना चाहते हैं। बाजारों में खूब चहलपहल होती है। तरह तरह के खिलौने—मिट्टी के और मिठाई के—मिलते हैं। एक दिन पहले नए बरतनों की खरीद की जाती है। क्या धनी और क्या निर्धन, सभी अपनी अपनी सामर्थ्य के अनुसार और कभी कभी उससे भी बढ़कर—दिल खोलकर के व्यय करते हैं।

इस त्योहार में व्यापारी वर्ग विशेष सक्रिय रहता है। बहुत दिन पहले से ही, हिसाब किताब साफ करने के तकाजे चलने लगते हैं। उस दिन बड़ी धूमधाम से गणेश लक्ष्मी-पूजन होता है। दुकानों का एक तरह से काया पलट हो जाता है, सब चीजें नई नई दिखलाई पड़ती हैं। बही-पूजन होता है और

जैसा कहा जा चुका है कि नए खाते खुलते हैं नए सिरे से सारा काम होता है और नए वर्ष का आरम्भ माना जाता है।

उस दिन देहातो में किसान लोग 'नये अन्न' की प्रसन्नता मनाते है और पहले पूजन करके फिर उसे काम में लाते है। पजाब मे इसी दिन गुरु गोविन्द का मुक्ति दिवस मनाया जाता है। आर्य समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती का यही निर्वाण-दिवस भी है। इस प्रकार अनेक महत्वपूर्ण बातें इस त्योहार के साथ जुड़ गई है।

४ (इस त्योहार मे जहां सब अच्छी अच्छी बाते है। वहा एक दोष भी पता नही कब से घुस गया है। इस दिन बहुत से लोग लक्ष्मी पूजन के बाद रात मे जुआ खेलते है। कुछ मूर्खो का यह अन्ध विश्वास है कि यदि इस दिन जीत गए तो साल भर जीत रहेगी और इसीलिए वे जीतने की आशा मे दाव पर दाव लगाते चले जाते है और अपनी सम्पत्ति का बहुत बडा भाग गवा बैठते हैं) इस अपराध को रोकने के लिए सरकार प्रयत्नशील है। बहुत से पुलिस कर्मचारी चारो ओर खोज खोजकर जुवारियो को गिरफ्तार करते फिरते है। उन कर्मचारियो मे कुछ बेईमान भी होते है जो अपने कर्तव्य ठीक से पालन नही करते है और जुवारियो से घूस खाकर के उनको प्रोत्साहन देते रहते है। फिर भी इस दिन बहुत से अन्ध-विश्वासी पकडे जाते है। अब उनकी सख्या प्रति वर्ष अवश्य कम होती जा रही है।

दिवाली की धूम-धाम को देखकर सभी लोग कहने लगते है कि बस यह त्योहार तो पैसे वालो का है, क्योकि गरीब लोग इसमे अधिक उत्साह नही दिखला पाते है। उनका तो एक प्रकार से दिवाला हो जाता है। मरनी एक कविता की कुछ पक्तियां इसी भाव को व्यक्त करती है—

"पैसे का त्योहार दिवाली, वरना खरा दिवाला है।
पैसे की सब रिश्तेदारी, पैसे का साली साला है॥
यदि पैसा है पास तो चाहे जितने दिए जला लो तुम।
चाहे जितनी फुलझड़िया लो और पटाखे डालो तुम॥
यदि पैसा है तो मिष्ठानों के भंडार तुम्हारे हैं।
चाहे जितने मित्र बुला लो, खालो और खिला लो तुम॥
पैसे की सारी माया है, वरना गडबड़ घोटाला है।
पैसे का त्योहार दिवाली, वरना खरा दिवाला है॥"

उपयुक्त दृष्टिकोण को ध्यान में रख कर हमें चाहिए कि हम दीपावली पर होने वाली फिजूल खर्ची और दिखावट की आदत को छोड़ दें। जुवा वाले अंध विश्वास से बिल्कुल दूर रहे और सच्चे आन्तरिक सद्भाव और उत्साह से दीपावली का आदर्श त्योहार मनावें।

जैसा कि कहा जा चुका है, वस्तुत. यह त्योहार हमारे लिए प्रेरणा का बड़ा स्रोत है, क्योंकि रावण पर राम की विजय का अर्थ है असत् पर सत् की विजय और सत् के 'स्वधाम' मे शुभागमन की प्रसन्नता में ही हम इस त्योहार को मनाते हैं, तो फिर आज के दिन हमें चाहिए कि हम प्रतिज्ञा करें कि हम असत् का सर्वथा परित्याग करेंगे और सत् को अपनाएंगे। तभी हमारा दिवाली मनाना सचमुच सार्थक होगा।

२०. मानव जीवन और सहकारिता

१. सहकारिता की परिभाषा
२. सहकारिता का उद्देश्य
३. सहकारिता की विशेषताएं
४. सहकारी संगठन
५. सहकारिता के लाभ
६. उपसंहार

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज मे रह कर वह एक दूसरे के सहयोग से ही अपना काम चलाता है। यही सहकारिता है। कभी कभी वह यह भी चाहता है और प्रयत्न भी करता है कि वह आत्म निर्भर बने, किन्तु यह नितान्त असभव है। अकेला मनुष्य कुछ नही कर सकता है। एक हाथ से ताली भी नही बजती है। मनुष्य क्या, आज की परिस्थितियों में तो कोई समाज या देश तक, आत्म निर्भर नहीं रह सकता है। बहुत सी ऐसी वस्तुएं हैं जिनके लिए हमे दूसरों का मुंह ताकना पड़ता है और ताकना पड़ेगा किन्तु इसका यह अर्थ कदापि नही है कि हम अपने आत्म निर्भरता के प्रयत्नो को छोड़ दें।

सहकारिता का उद्देश्य है कि मनुष्य परस्पर सहयोग से अपने समाज की उन्नति करे। मेल जोल से और सहयोग से बड़े से बड़े काम बड़ी सरलता

से हो जाते है एक सयुक्त परिवार मे सभी लाग छोटे से बूढे तक रहने हैं और न सभी कुछ न कुछ यथाशक्ति सहयोग करते है जिससे परिवार का काम बड़े सुचारु रूप से चलता है। यदि उनमे से कोई असहयोग कर दे तो सारा काम एकदम ठप्प हो जाय। शरीर को ही देखिए, उसका सारा काम इन्द्रियो के परस्पर सहयोग से चलता है। यदि एक भी इन्द्रिय अस्वस्थ हो जाय या असहयोग करे, तो मनुष्य बीमार कहलाने लगता है। इसलिए यह स्पष्ट हो जाता है कि सहकारिता का जीवन मे बहुत बडा महत्त्व और उपयोगिता है।

सहकारिता के कारण ही आज चारो ओर देश मे इतनी उन्नति दिखलाई पड रही है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे आज सहकारिता की विशेषताएं व्याप्त ह और उन्ही का बोलबाला है। सहकारिता का मूल लक्ष्य ही यही है 'एक सब के लिए और सब एक के लिए।' इसी आदर्श को सामने रख कर जब समाज जन कल्याण के लिए आगे बढता है तब उसके सभी अंग पुष्ट हो जाते है और फिर कोई भी अंग पिछडा हुआ नही रह सकता है। जैसे परिवार मे हम किसी को भूखा, नंगा या दु.खी नही देख सकते है, उसी प्रकार समाज के प्रति भी हमारा दृष्टिकोण बदल जाता है और हम किसी को असहाय, निराश या निराश्रित नही देख सकते हैं। उस समय हमारा यह पुनीत कर्त्तव्य हो जाता है कि हम प्रत्येक व्यक्ति की सुरक्षा का पूरा पूरा ध्यान रक्खे।

सहकारिता के लक्ष्य का प्रसार करते हुए जब हम अपने समाज मे अधिकाधिक सक्रिय हो जाते हैं तब अनेक सहकारी संगठनों का सूत्रपात हो जाता है। हम प्रत्येक दिशा मे एक योग्य संगठन का निर्माण करते है। क्या ग्राम मे, क्या नगर मे अपनी अपनी आवश्यकता के अनुसार अनेक ऐसी समितियो का निर्माण कर लिया जाता है जो सहकारिता पर आधारित होती है। गावो मे खेती की उन्नति के लिए अच्छे बीज, अच्छे यंत्र तथा अन्य अच्छे साधनो की आवश्यकता होती है और इन सबके अतिरिक्त अन्य कामो के लिए पूंजी की भी आवश्यकता होती है, इसलिए गाव वाले मिलजुल कर वैसी व्यवस्था कर लेते है। सहकारी बीज भंडार और सहकारी बैंक इन्ही के परिणाम हैं।

आज की सरकार भी जन-तन्त्र पर आधारित है। वह जनता के ही सहयोग से बनी है और प्रति ५ वर्ष के बाद नये चुनावों के द्वारा उसका नया संगठन हो जाता है। इसलिए सरकार भी सहकारिता मे बडी सहायता पहुचाती है। गाव की उपर्युक्त संस्थाओं मे सरकार का बड़ा हाथ रहता है। नगर म

भी उपभोक्ता-सामग्री के संग्रह और गृह निर्माण की समस्याओं के समाधान के लिए सहकारी संगठन बना लिए जाते हैं जिनमें जन-साधारण की अनेक आवश्यकताएं बड़ी सरलता से दूर हो जाती हैं।

इन सहकारी संगठनों से अनेक लाभ होते हैं, जैसे—

(१) इनमें सभी आवश्यकता वाले लोग एकत्र होकर सदस्य बनते हैं और वे सब पारस्परिक सद्भावना के साथ एक दूसरे की सहायता के लिये प्रयत्न करते हैं जिसके फलस्वरूप सभी लोग समान रूप से लाभान्वित होते हैं।

(२) इनमें सभी लोग मिल-जुलकर काम करते हैं, इसलिए किसी एक व्यक्ति का गर्व अथवा अधिकार नहीं चल पाता है। इसके अतिरिक्त इनके सभी सदस्य स्वेच्छा से ही वहां काम करते हैं। उसमें भी किसी का कोई दबाव या बल प्रयोग नहीं होता है। समानता के आधार पर ही सभी लोग सम्मिलित होते हैं और अपने अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह करते हैं। अत. किसी के साथ पक्षपात नहीं हो पाता है और सभी सदस्य समान लाभ प्राप्त करते हैं।

(३) सहकारी बैंकों में सभी सदस्यों को, नाममात्र के एक निश्चित ब्याज पर आवश्यक पूंजी मिल जाती है, जिसमें उन्हें धनिक वर्ग का मुंह नहीं देखना पड़ता है और न उनका मनमाना अत्याचार सहना पड़ता है।

(४) इन संगठन में मुनाफा कमाने की प्रवृत्ति नहीं होती है और 'न लाभ न हानि' के सिद्धान्त पर ही इनमें व्यवहार किया जाता है। फिर भी यदि कोई अतिरिक्त लाभ होता है, तो उसको सदस्यों में समान रूप से वितरित कर दिया जाता है।

(५) इन से पूंजीपति वर्ग की स्वेच्छाचारिता का निराकरण हो जाता है और उनके द्वारा होने वाले समाज के शोषण का सदा के लिए खात्मा कर दिया जाता है।

(६) इनके द्वारा समाज में भ्रातृत्व और स्वावलंबन की एक भावना का विकास होता है जिसमें परस्पर सहानुभूति और सहायता करने की प्रवृत्ति भी बढ़ती है।

आज तो समाज में ही नहीं, विभिन्न देशों में भी परस्पर सहकारी संगठन के आधार पर अनेक बड़े बड़े उद्योग चलाए जाते हैं। अपने देश में ही इंगलैंड, अमेरिका, जर्मनी और रूस के सहयोग से बड़े बड़े कारखाने स्थापित किए गये हैं और उनसे पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत निर्धारित विभिन्न लक्ष्यों की

प्रांत में बड़ी सहायता मिल रही है। कहीं पूंजी का सहयोग है, कहीं इंजीनियरों का सहयोग है और कहीं विभिन्न यन्त्रों का सहयोग है। इस सहयोग के द्वारा ही भारतवर्ष की उन देशों से अच्छी मित्रता है।

वस्तुतः 'सहकारिता' आज के युग की सबसे बड़ी देन है। सारे विश्व विश्व में इसकी महत्ता एवं उपयोगिता है। यू. एन. ओ. का विशाल संगठन इसी सहकारिता पर आधारित है, जिससे विश्व के सुख और शान्ति का प्रसार हो रहा है। हमें चाहिए कि हम भी इस सहकारिता आन्दोलन को सफल बनाने के लिए अपने तन-मन-धन से पूर्ण सहयोग प्रदान करें।

१२. हिन्दी कहानी की कहानी

१—हिन्दी कहानी का जन्म
२—हिन्दी कहानी का विकास
३—हिन्दी कहानी का भविष्य
४—उपसंहार

यों तो कहानी की कहानी बहुत पुरानी है। वेदों और पुराणों में, पालि भाषा के जातकों में और संस्कृत के पंचतंत्र, कथा सरीत्सागर आदि ग्रन्थों में कहानी के विशिष्ट रूपों के दर्शन किये जा सकते थे, किन्तु वर्तमान हिन्दी कहानी का प्रादुर्भाव हिन्दी गद्य के साथ ही 'भारतेन्दु काल' से हुआ है। आज की कहानी 'तकनीक' की दृष्टि से भले ही पश्चिम से प्रभावित हो, किन्तु उसके कहने की प्रथा और परम्परा विशुद्ध भारतीय है।

हिन्दी की सर्वप्रथम कहानी 'रानी केतकी की कहानी' है जिसके लेखक इंशाउल्लाखां है। इसमें भाषा की प्रौढ़ता तथा कहानी के सर्वमान्य तत्वों के दर्शन नहीं होते है। 'भारतेन्दु-युग' में कहानियों पर विशेष ध्यान दिया गया, फिर भी इस काल की कहानियों में 'कहानी' कम और निबंध अधिक है।

आगे चलकर द्विवेदी युग में कहानियों का विकास बड़ी द्रुतवेग से हुआ। सन् १९०० से ही 'सरस्वती' में अनेक मौलिक और अनूदित कहानियां प्रकाशित होने लगी थीं, जिनमें सर्वप्रथम प्रकाशित किशोरीलाल गोस्वामी की 'इन्दुमती' कहानी है, किन्तु इस पर 'टेम्पेस्ट' (अंग्रेजी नाटक) का प्रभाव स्पष्टतया दृष्टिगोचर होता है, अतः इसकी मौलिकता निर्विवाद नहीं है। इन्हीं दिनों 'बंग महिला' द्वारा लिखित एक मौलिक कहानी 'दुलाईवाली' प्रकाशित हुई, जो

हिन्दी ससार मे बहुत प्रसिद्ध रही

सन् १६११ ई० में प्रसादजी की सवप्रथम कहानी 'ग्राम' प्रकाश में आई। फिर तो कहानियो का एक ताता सा लग गया। कहानी के क्षेत्र मे प्रेमचन्दजी के अवतार से एक नया युग आगया। भारतेन्दु-युग की कहानियो मे घटना और चमत्कार की प्रधानता थी। द्विवेदी-युग में उनमें विभिन्न आदर्शो तथा सुधारो का समावेश हुआ। प्रेमचन्दजी ने उनमे आदर्श और यथार्थ का पर्याप्त समन्वय किया। उनकी कहानियो को इसीलिए आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की ओर अग्रसर बतलाया जाता है।

प्रेमचन्दजी की कहानिया इतनी प्रसिद्ध और प्रचलित हुई और आज भी है कि वे इस क्षेत्र मे अद्वितीय माने जाते है। गोस्वामी तुलसीदास की रामायण का, जिस तरह घर घर मे बहुत प्रथा है, उसी प्रकार प्रेमचन्द की कहानिया भी समाज के विभिन्न वर्गो मे बडी सरलता से पहुँच गई और सम्मानित हुई। 'मानसरोवर' के नाम से उनकी कहानियो के अनेक संकलन प्राप्त होते है।

भाषा, पात्र, घटना आदि सभी तत्वो से प्रेमचन्दजी की कहानिया अत्यधिक लोकप्रिय हुई। उनकी भाषा जन साधारण की बोलचाल की भाषा है। उनमे पर्याप्त मुहावरे और कहावते है। उनके पात्र भी साधारण जीवन के पात्र है। प्रेमचन्दजी ने उन पात्रों के चरित्र-चित्रण मे इतनी यथार्थता का निरूपण किया है कि सारी बाते संभव सत्य जान पडती है, फिर भी यथार्थता के नाम पर उन्होने 'नग्नता' का कही चित्रण नही किया है जो वर्तमान काल की कुछ कहानियो मे मिलता है। आज तो कही कही 'अतियथार्थ' के भी दर्शन हो जाते हैं। प्रेमचन्दजी ने पर्व यथार्थ का दर्शन कराके फिर उसे आदर्श की ओर मोड दिया है जिसमे उनकी कहानिया सोद्देश्य और सबल हो गई है। घटनाओ की दृष्टि से भी उनकी कहानियो में पर्याप्त स्वाभाविकता है। इसीलिए उनमे कोई अटपटापन नहीं लगता है और अधिक आकर्षण प्रतीत होता है।

प्रेमचन्दजी की इन विशेषताओ का इस युग पर विशेष प्रभाव पडा, जिसके फलस्वरूप अन्य कहानी लेखक भी इस दिशा मे प्रेरित एव उत्साहित हुए। श्री विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक' ने लगभग ४०० कहानियां लिखी जिनमे समाज के विभिन्न अंगो का दर्शन है। श्री चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' ने यद्यपि ३ ही कहानिया लिखी किन्तु उनकी कहानी 'उसने कहा था' अत्यन्त प्रसिद्ध हुई और आज भी सर्वश्रेष्ठ कहानी कही जाती है। अन्य कहानीकारो मे चण्डीप्रसाद

हृदयेश शर्मा गोपालराम गहमरी और राजाराधिकारमण प्रसादसिंह आदि बहुत प्रसिद्ध हुए।

आज का युग 'कहानी युग' है। आज कहानियो का साहित्य प्रतिदिन बडा उन्नत होता जा रहा है। उसमे उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। दैनिक पत्रो के रविवारीय संस्करणो मे, साप्ताहिक पत्रों तथा मासिक पत्रो मे कहानी की उपस्थिति अनिवार्य मानी जाती है। कहानी, तुंगश्रृंग, आधुनिक कहानिया आदि कुछ मासिक पत्र केवल कहानिया ही प्रकाशित करते हैं। रेलवे के बुक-स्टालो में 'माया', 'मनोहर कहानिया' आदि भी ऐसी अनेक पत्रिकाएं मिल जाती है जिनकी रेल यात्रा मे बडी उपयोगिता समझी जाती है।

आज की कहानियो मे तो यथार्थवाद की भरमार है जैसा कहा जा चुका है, कही कही 'अतियथार्थ' है। आज ही नही, सदैव से मानव-रुचि बड़ी विभिन्न रही है और साहित्यकार सदैव सुन्दरता का ही साक्षात्कार और दर्शन करता रहा है, किन्तु आज कुछ कहानीकार कृष्ण पक्ष की ओर भी आकर्षित हो गए है, जिससे उन्हे तो बडी सरलता से यश मिल जाता है, किन्तु समाज का वाछनीय हित नहीं हो पाता है। इन कहानियों को शुद्ध साहित्य की दृष्टि से भी कोई महत्व नही दिया जाता है और सिनेमा की कहानियो के समान ही उनका उल्लेख कर दिया जाता है।

आज के प्रसिद्ध कहानीकारो की सूची बहुत बडी है, जिनमे से कुछ प्रमुख लोग इस प्रकार हैं.—चतुरसेन शास्त्री, सुदर्शन, जैनेन्द्र, वृन्दावनलाल वर्मा, अज्ञेय, यशपाल अश्क, विष्णु प्रभाकर उग्र, अमृतराय, इलाचन्द्र जोशी, पहाडी, भगवतीचरण वर्मा, मन्मन्थनाथ गुप्त, भगवतीप्रसाद वाजपेयी, रामवृक्ष बेनीपुरी, विनोदशंकर व्यास आदि। इनमें मे एव चतुरसेन शास्त्री, उग्र और इलाचन्द्र जोशी की कहानियो मे काम-विवेचन और उत्तेजक चित्रण अधिक मिलता है। जैनेन्द्र और अज्ञेय की कहानियों मे मनोवैज्ञानिक गूढ विश्लेषण तथा बौद्धिकता के दर्शन होते है, जिसके कारण कही कही अस्पष्टता तथा दुर्बोधता भी रहती है। अश्क, सुदर्शन, विष्णु प्रभाकर, भगवतीचरण वर्मा और भगवतीप्रसाद वाजपेयी की कहानियो मे राजनैतिक तथा सामाजिक विषयो की अधिक चर्चा रहती है। मन्मन्थनाथ गुप्त, यशपाल, अमृतराय और रामवृक्ष बेनीपुरी की कहानियो में पाश्चात्य प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। वृन्दावनलाल वर्मा की कहानियो मे ऐतिहासिकता विशेष रहती है।

अन्नपूर्णानन्द आदि बहुत प्रसिद्ध हैं स्त्री-कहानीकारों में शिवरानी देवी उषा देवी मित्रा एवं सुभद्राजी का विशेष स्थान है।

आधुनिक युग में कहानी-लेखकों की संख्या सबसे अधिक है। इससे स्पष्टतया सिद्ध हो जाता है कि कहानी का भविष्य बहुत उज्वल है। वस्तुत: संक्षिप्तता की दृष्टि से जैसे नाटकों के स्थान पर एकाकी नाटकों को बड़ी लोकप्रियता मिल गई है, उसी प्रकार आज उपन्यासों के स्थान पर कहानियों की सर्वत्र प्रमुखता है। इसलिए यह बल देकर कहा जा सकता है कि कहानी साहित्य के विशाल परिमाण में होते हुए भी उसमे अभी बहुत बड़ी गुंजाइश है और रहेगी।

१२. साहित्य और संस्कृति

१—साहित्य की परिभाषा
२—संस्कृति की परिभाषा
३—साहित्य और संस्कृति का परस्पर सम्बन्ध और प्रभाव
४—उपसंहार

'साहित्य शब्द का शाब्दिक अर्थ है 'सहित का भाव'। जो हित-सहित है वही 'सहित' है अर्थात् जिसमें हित की भावना हो। इस प्रकार साहित्य की मूल भावना 'जनहित' अथवा 'जन कल्याण' है। जिस साहित्य में 'जन कल्याण' नही होता, वह साहित्य 'साहित्य' नही कहला सकता है, जैसे फिल्मी साहित्य।

पता नही कब से, हमारे पूर्वज 'जनहित' की दृष्टि से अपने अनुभव हमको बतलाते आ रहे है। उन्होंने अपने जीवन मे जो कुछ 'सारभूत' पाया और जो कुछ महत्वपूर्ण समझा, उसे लेखबद्ध करके हमारे लिए सुरक्षित कर दिया। आज हम उनके अनुभवो से असीम लाभ उठाते है और उठा रहे हैं। यदि हमे नए सिरे से कोई अनुभव करना पड़ता तो कितना कठिन हो जाता ?

वस्तुत: जीवन एक प्रयोग है, एक कला है। यों जीने को तो सब जी लेते हैं, किन्तु जिनका 'जीना' दूसरों के 'जीने' को प्रभावित करे और जिनका 'न जीना' दूसरो को भी 'न जीने' की सी व्यथा पहुंचावे, उन्ही महापुरुषो का जीना 'जीना' है, शेष लोग तो सांस ले रहे है, समय काट रहे है या मृत्यु की

प्रतीक्षा कर रहे हैं। तो वे महापुरुष 'जीवन की कला' के सम्बन्ध में नये विश्वास और नई मान्यताएं प्रतिष्ठापित करते हैं। बाद के लोग उनका अनुकरण करते है और यदि उनमे से कोई उस दिशा मे कुछ परिवर्तन या परिवर्धन करता है, तो वह भी 'महापुरुष' पद का अधिकारी हो जाता है। इस प्रकार एक क्रम चलता है और उन महापुरुषो के विशिष्ट अनुभवो एव विश्वासो का एक बृहत् संग्रह स्वयमेव प्रस्तुत हो जाता है। यही तो साहित्य है।

ऐसे महापुरुष, समाज के विचारक, कवि या लेखक होते है। वे अपने युग के प्रतिनिधि होते है। वे अपने चतुर्दिक् वातावरण से यथेच्छ प्रभावित होने वाले और प्रभावित करने वाले होते है। वे अपने साहित्य मे तत्कालीन समाज का चित्रण करते है और उसमे आदर्श जीवन का एक विश्लेषण करते है। साहित्य वस्तुतः मानव जीवन की एक व्याख्या है। चाहे कविता हो, चाहे निबन्ध, उपन्यास, नाटक या कहानी कुछ भी हो, वह मानव जीवन की विभिन्न भावनाओं मे ओतप्रोत रहता है। इतनी ही नही कि वह केवल यथार्थ जीवन को प्रस्तुत करता है, वह आदर्श जीवन की रूपरेखा भी खीचता है और अपने श्रोता या पाठक को तदनुकूल आचरण करने की एक प्रेरणा भी देता है।

एक ओर साहित्य का यह रूप है, तो दूसरी ओर संस्कृति भी हमारे जीवन को प्रेरित और प्रभावित करने वाली है। 'संस्कृति' का शाब्दिक अर्थ है 'संस्कार' किन्तु उसका भाव क्षेत्र इतना असीम और व्यापक है कि उसकी ठीक ठीक परिभाषा देना बड़ा कठिन हो जाता है। एक प्रकार मे, श्रेष्ठ जीवन बिताने के लिए, हमारे सामने जो भी निश्चित आदर्श है, वे सब मिलकर हमारी संस्कृति का निर्माण करते है। इसके अन्तर्गत हमारे आचार-विचार, रहन-सहन, रीति-रिवाज, रुचि अरुचि और धर्म, नीति, कला आदि का समस्त विस्तार आ जाता है।

प्रत्येक देश अथवा जाति की एक पृथक् सस्कृति होती है, क्योंकि उसके उपर्युक्त आचार-विचार आदि सभी दूसरो से भिन्न दिखलाई पड़ते है। एक सस्कृति का,जितना ही अधिक स्वेच्छा से प्रसार होता है, वह उतनी ही अच्छी समझी जाती है। इसके मूल मे हम एक छोटी इकाई 'परिवार' को लें। एक सुसंस्कृत परिवार, जिस आदर्श ढग मे रहता है और व्यवहार करता है, वह उसकी संस्कृति है। उसका प्रभाव समाज पर पड़ता है और वह उसे स्वेच्छा से

ग्रहण करता है तब वह समाज की संस्कृति बन जाती है फिर बढ़ते बढ़ते जब सारा वर्ग, सम्प्रदाय या जाति उस संस्कृति को स्वेच्छा से अपना लेती है, तब वह उसकी संस्कृति कहलाने लगती है और विभिन्न कारणों से जब वह देश-व्यापी बन जाती है, तब देश की संस्कृति का पद उसे मिल जाता है। इस क्रम मे देश के विभिन्न महापुरुषो का अमूल्य सहयोग रहता है। इसी प्रकार विभिन्न देशो और जातियों मे संस्कृति का पृथक पृथक् विकास हुआ है।

'संस्कृति' का सीधा सम्बन्ध हमारे विचारो से है। एक सुदीर्घ परम्परा से, हमारे जो विचार आज सुस्थिर हो गए हैं, वे हमारी संस्कृति के प्रतिबिम्ब है। इन विचारों का संरक्षक साहित्य है। आरम्भ से ही वे विचार हमें प्रेरणा देते रहे है और हमारा पथ प्रशस्त करते रहे है। हमने उन्हे साहित्य के द्वारा ही सुरक्षित रूप मे पाया है और आगे भी वे साहित्य के माध्यम से ही सुरक्षित रह सकेंगे। दूसरा कोई मार्ग नही है।

इस प्रकार साहित्य संस्कृति का वाहक है। वह परिचायक भी है। दूसरे देश अथवा जाति के लोग हमारे साहित्य के द्वारा, हमारी संस्कृति का परिचय प्राप्त कर सकते हैं। हम भी, इसी प्रकार दूसरे देशों और जातियो के साहित्य से उनकी संस्कृति को समझ सकते हैं। इस दिशा मे साहित्य की अधिक उपयोगिता है, क्योकि उसके अभाव मे हम अन्य संस्कृति के सम्बन्ध मे तो कुछ भी नही जान सकते है और उसके इतने अभ्यस्त हो गए हैं कि बार-बार तत्सम्बन्धी साहित्य की अपेक्षा नही होती है। फिर भी तुलनात्मक ज्ञान और परिचय के लिए उसकी अनिवार्यता है।

मानव एक अनन्त पथ का पथिक है। सभी देशो के मानव अपने अपने साधनो की सहायता से उस अज्ञात पथ की ओर प्रगति कर रहे हैं। सब ही दिशाएं भी भिन्न हैं, किन्तु गन्तव्य सभी का एक है। वह गन्तव्य स्थान है 'मानवता'। उसी तक पहुचने के लिए जो सबके पृथक पृथक मार्ग हैं, उन्हे 'संस्कृति' कहा जा सकता है। इसीलिए सभी संस्कृतियो के मूलतत्व लगभग एक ही हैं, किन्तु ऊपरी ढाचा बहुत कुछ बदला जाता है। सत्य, अहिंसा, परोपकार, क्षमा, दया, सहानुभूति आदि के सिद्धान्त लगभग सभी संस्कृतियो में समान है, किन्तु उनके क्षेत्र और प्रयोग भिन्न है। अनेकता मे इस एकता का पता भी, हमे साहित्य के माध्यम से ही प्राप्त हुआ है। इसके लिए हम साहित्य के बहुत ऋणी है। इसी के फलस्वरूप आज हमे विश्वास हो जाता है कि यदि बाह्य आवरणों

को हम हटा सके तो सारे विश्व की संस्कृति एक हो सकती है।

यह दिन वस्तुतः कितना महान् होगा, जब हम 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के महान् आदर्श को प्राप्त कर सकेंगे, किन्तु यह कार्य कितना कठिन है, इसका कुछ अनुमान वर्तमान पृथक्तावादी प्रवृत्तियों से ही सकता है। आज हम भाषा, संप्रदाय, सीमा आदि के अनेक प्रश्नों को लेकर झगड़ रहे हैं और ऐसा लगता है कि इनको सुलझाने में ही हमारा अस्तित्व समाप्त हो जायगा। इतना ही नहीं, इन्हीं बातों को लेकर हम अपने छोटे छोटे टुकड़े करने जा रहे हैं। विभिन्न राजनैतिक स्वार्थ, हमारे सामने सुरसा की तरह मुंह फैलाए हुए खड़े हैं, और यदि हमने जीवन के आध्यात्मिक मूल्यों को भुला दिया, तो हमारा अस्तित्व समाप्त हो जायगा। ये आध्यात्मिक मूल्य संस्कृति पर ही आधारित हैं और इन सबका विकास और प्रसार, पारस्परिक सहयोग एवं सद्भावना से ही हो सकता है। अनैतिक प्रलोभन अथवा बल-प्रयोग से नहीं।

वर्तमान युग मे कवियों साहित्यकारों अथवा दार्शनिकों का यह विशेष उत्तरदायित्व हो जाता है कि वे अपने साहित्य के माध्यम से विश्व के इस पतनशील स्वार्थी प्रवाह को एकदम बदल दे और उसे उन नये सांस्कृतिक मूल्यों का वरदान दे जिससे जीवन का सारा क्रम ही विकासशील हो जावे।

यह कार्य केवल सत्साहित्य से ही हो सकता है। अन्य किसी दूसरे उपाय से संस्कृति का प्रसार अथवा प्रचार हो ही नहीं सकता है। साथ ही संस्कृति के प्रभाव से वह साहित्य भी स्थायी, सार्वजनिक एवं सर्वकालीन हो जायगा।

इस प्रकार साहित्य और संस्कृति का यह अमर और अन्योन्याश्रय संबंध स्पष्ट करता है कि वे दोनों परस्पर कितने ओत-प्रोत हैं और एक दूसरे को कितने प्रभावित करने वाले हैं। वस्तुतः सुसंस्कृत देश ही सुसाहित्य सम्पन्न हो सकता है और सुसाहित्य-सम्पन्न देश ही सुसंस्कृत कहला सकता है।

* २३ *

'सूर सूर तुलसी ससी, उडुगन केसव दास।
अब के कवि खद्योत सम, जहं तहं करत प्रकास॥

१—उक्ति का अभिप्राय
२—हिन्दी का भक्ति साहित्य

३—भक्ति साहित्य को सूर की देन
४—भक्ति साहित्य को तुलसी की देन
५—सूर और तुलसी के साहित्य का तुलनात्मक महत्व
६—सूर और तुलसी का हिन्दी साहित्य पर प्रभाव
७—उपसंहार

'सूर सूर तुलसी ससी' की उक्ति बहुत प्रसिद्ध है। इसका अभिप्राय यह है कि हिन्दी साहित्य के आकाश मे महाकवि सूरदास का स्थान सूर्य के समान है और तुलसी का स्थान चन्द्रमा के समान है। इसी में आगे आ० केशवदास को नक्षत्र और अन्य सभी कवियों को जुगनू जैसा बतलाया गया है। प्रसिद्धि की दृष्टि से ही यह बात कही गई है और अन्य कवियों के विषय में सही भी हो सकती है, किन्तु सूर्य और चन्द्रमा के सम्बन्ध मे ऐसी कोई कल्पना करना ठीक नही है। सूर्य और चन्द्रमा मे सूर्य को बड़ा और चन्द्रमा को छोटा मान कर, उसी अनुपात से सूरदास और तुलसीदास की तुलना करना सर्वथा अनुचित है।

सूर, तुलसी और केशव सभी हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल के विशिष्ट कवि हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार भक्तिकाल का विस्तार सं० १३७५ से लेकर स० १७०० तक माना जाता है। इस काल के ४ प्रमुख कवि हैं (१) कबीर (स० १४००-१५१६), (२) जायसी (स० १४९२-१५४२), (३) सूर सं० (१५४०-१६२०) और (४) तुलसी (स० १५५४-१६८०)। ये चारो भिन्न भिन्न धाराओं के प्रवर्तक है। भक्ति के दो भेद किए जाते हैं (१) निर्गुण भक्ति और (२) सगुण भक्ति। निर्गुण भक्ति भी दो प्रकार की होती है (१) ज्ञान पर आधारित और (२) प्रेम पर आधारित। कबीर और जायसी क्रमशः ज्ञाना-श्रयी और प्रेमाश्रयी भक्ति के प्रवर्तक हैं। सगुण भक्ति भी दो प्रकार की होती है। (१) कृष्ण पर आधारित (२) राम पर आधारित। इस क्षेत्र मे सूर और तुलसी क्रमशः कृष्ण भक्ति एवं राम भक्ति के प्रवर्तक है। आचार्य केशवदास (सं० १६१२-१६७४) भी इसी काल के कवि हैं किन्तु अपने रीति प्रधान ग्रंथो के कारण वे रीति काल के प्रवर्तक माने जाते है। उपर्युक्त उक्ति मे केशव को 'नक्षत्र' कह कर सूर और तुलसी से निश्चित छोटा बतलाया गया है, अतः उनकी आगे चर्चा करना यहां व्यर्थ है। मुख्य तुलना का विषय तो सूर और तुलसी का साहित्य है, वही यहां उल्लेखनीय है।

सूरदासजी के द्वारा लिखित ३ ग्रंथ हैं (१) सूर सागर (२) सूर सारावली और (३) साहित्य लहरी। इनमें सूर सागर ही बहुत प्रसिद्ध है। इसके श्रीमद्भागवत के १०वें स्कंध की कथा ही अधिकतर वर्णित है। भगवान् कृष्ण के जन्म से लेकर उनके मथुरा-प्रयाण तक की घटनाओं का ही उसमे वर्णन किया गया है। कृष्ण के शेष जीवन का चित्रण वहाँ नही है। कहा जाता है कि श्री वल्लभाचार्य की आज्ञा से ही सूरदास ने इसका निर्माण किया था। इसमें मधुर पदो मे कृष्ण की विभिन्न लीलाओ के प्रसंगो को गेय रूप मे प्रस्तुत किया गया है। इसके 'भ्रमर गीत' भाग मे जहा गोपियों के विरह का विशद वर्णन मिलता है, वहाँ सूर के द्वारा, निर्गुण के स्थान पर सगुण की स्थापना का वर्णन विशेष महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय है।

कबीर और जायसी के द्वारा प्रचलित निर्गुण मार्ग में, निराश हिन्दू जनता को कोई सच्चा आलम्बन प्राप्त नही हुआ था। जो कुछ था वह अनुमान और कल्पना पर ही आधारित था। सूर ने उन्हे कम से कम एक साकार आधार दिया, जिसमें हृदय रमाने का पर्याप्त अवकाश था। सूर के कृष्ण एक प्रकार से 'खिलौना' थे, जिनसे मन बहल सकता था, जिन्हें प्यार किया जा सकता था, और जिनकी अद्भुत लीलाओ को ईश्वरीय रूप देकर गाया जा सकता था, किन्तु उनसे न तो कोई चारित्रिक प्रेरणा मिल सकती थी और न रक्षा का ही कोई आश्वासन मिल सकता था। एक प्रकार से वहा लोकपक्ष अथवा व्यावहारिकता का सर्वथा अभाव था।

फिर भी 'सूर सागर' बहुत प्रसिद्ध हुआ, अपनी मधुरता के कारण और अपनी भक्ति प्रेरणा के कारण। उसका आकार भी अति विशाल था, कहते हैं कि उसमे सवा लाख पद थे। सूर के कारण ही कृष्ण भक्ति की इतनी प्रमुखता हुई कि इसी काल मे सात अन्य प्रसिद्ध कवियो ने भी कृष्ण भक्ति को ही अपने काव्य का विषय चुना। सूर को मिलाकर ये कवि 'अष्टछाप' कहे जाते है।

इसी काल मे गोस्वामी तुलसीदास का आविर्भाव हुआ। उन्होने अपने 'रामचरितमानस' महाकाव्य में राम के वीर चरित्र की प्रतिष्ठापना की। राम के लोकनायक रूप ने तत्कालीन जनता को बहुत कुछ आश्वस्त किया। रावण और उसकी राक्षसी सेना का विध्वंस करने वाले राम ने हिन्दू जनता को अनुप्राणित किया। उसे विश्वास हो गया कि वर्तमान अत्याचारियो का भी

उसी प्रकार विनाश हो जायगा जनता में एक आत्म शक्ति और की भावना का स्फुरण हुआ 'रामराज्य' के रूप में तुलसी ने जिस सुराज्य का चित्र प्रस्तुत किया था, वह लोगों का आदर्श बन गया। (आदर्श तो आज भी है)। 'मानस' को जो लोकप्रियता इन विशेषताओं के कारण प्राप्त हुई थी वह आज भी अद्वितीय है। 'रामचरित मानस' के बिना हम किसी आदर्श हिन्दू घर की कल्पना तक नहीं कर सकते है।

इस प्रकार सूर और तुलसी दोनो ने अपने अपने सत्काव्य से तत्कालीन जनता को आकर्षित और प्रभावित किया। आज भी दोनो का प्रभाव समान रूप से अपने अपने क्षेत्र मे विद्यमान है। अतः सूर को 'सूर' कहकर बडा मानना और तुलसी को 'ससी' कहकर छोटा समझना ठीक नही है। वहां 'सूर सूर' मे जो वर्ण साम्य अथवा 'यमक' है, वही विशेष है। वहां दीर्घ या लघु की कोई भावना नहीं है।

हा, अर्थ की दृष्टि मे, यदि हम विचार करें कि 'सूर्य' पोषक है, विकासक है, शीत के आतंक मे मुक्त करता है और स्वतः प्रकाशवान होकर दूसरे ग्रहो को भी प्रकाश देता है तो हम निस्संकोच कह सकते हैं कि सूरदास जी 'सूर्य' है, क्योंकि उन्होंने भक्ति भावना का पोषण किया, जनता की आध्यात्मिक शक्ति का विकास किया, उसको अत्याचारियो के आतंक से स्वस्थ किया और उन्होने अपने समान ही अन्य अनेक कवियों को आकृष्ट करके 'अष्टछाप' की प्रसिद्धि की।

इसी प्रकार यदि तुलसी को 'शशि' कहकर हम उसके गुणो पर ध्यान दे, कि वह शान्ति और शीतलता प्रदान करता है, अंधकार मे एक बहुत बडा अवलम्ब होता है, किसी को तनिक भी ताप नहीं पहुँचता है और अमृत वर्षा तो हम निस्सन्देह कर सकते है। तुलसी के काव्य से हृदय को अद्वितीय शान्ति और शीतलता मिलती है, अज्ञानावस्था अथवा किंकर्तव्य विमूढावस्था मे वह एक निश्चय ज्ञान एवं उत्साह प्रदान करता है, कोई भी कैसा भी पाठक अथवा श्रोता हो, उससे वह कभी भी वितृष्ण नही हो सकता है और उससे आनन्दामृत की की सतत वर्षा भी होती है।

यदि यह भी मानलें कि सूर्य के पश्चात् चन्द्रमा का उदय होता है और वह सूर्य से प्रकाश पाकर ही प्रकाश देता है, तो भी यह विचार ठीक माना जा सकता है कि कालक्रम के अनुसार सूरदास के पश्चात् तुलसीदासजी का प्रादुर्भाव हुआ और तुलसीदास ने सूरदास के काव्य मे प्रेरणा प्राप्त करके भक्ति का महत्व

सुस्थिर कर दिया।

यहाँ तक तो ठीक है, किन्तु यदि कोई सूर्य को शोषक, तापप्रद और कष्ट कर कहे तो उसका सूर के काव्य से कोई सम्बन्ध नहीं होगा। इसी प्रकार यदि कोई चन्द्रमा को सकलंक, घटता बढ़ता और कई प्रकार के प्राणियों को दुखदायी कहे तो उसका भी तुलसी के काव्य से किसी प्रकार का कोई सम्बन्ध नहीं माना जा सकता।

हम यदि यह मानलें कि सूर्य और चन्द्र दोनो ही हमें क्रमशः दिन और रात मे प्रकाश देते है, हमारा मार्ग-निर्देशन करते हैं और हमारे जीवन को सफल और सक्रिय बनाने मे पूर्ण सहयोग देते है, तो निश्चय ही सूरदास और तुलसी दास दोनों ही हमारे आदर्श और पूज्य कवि है। दोनों के क्षेत्र भिन्न भिन्न हैं, किन्तु उनका लक्ष्य एक ही है। वे हमें भक्ति का वरदान देते हैं, एक कृष्ण भक्ति का और दूसरा राम भक्ति का, अतः दोनों ही समान है और उन्हे समान ही समझना चाहिए।

१४—हिन्दी कविता के प्रमुखवाद

१—हिन्दी कविता में वादों का आरम्भ।
२—हिन्दी कविता में रहस्यवाद।
३—हिन्दी कविता में छायावाद।
४—हिन्दी कविता में प्रगतिवाद।
५—हिन्दी कविता में प्रयोगवाद।
६—उपसंहार।

हिन्दी काव्य मे ४ प्रमुख वादों की अधिकतर चर्चा होती है (१) रहस्य-वाद, (२) छायावाद (३) प्रगतिवाद (४) प्रयोगवाद। रहस्यवाद का तात्पर्य है ईश्वर जीव और जगत् के सम्बन्धों का साहित्यिक विवेचन। वैसे यह दर्शन का विषय है, किन्तु साहित्य में भी एक सरसता के साथ इसका निर्वाह दृष्टि-गोचर होता है। भारतीय साहित्य में रहस्यवाद के दर्शन ऋग्वेद और उपनिषद् आदि मे किए जा सकते हैं। आगे चलकर वह हिन्दी में सिद्ध और नाथ पंथियों के साहित्य मे भी प्रमुखता के साथ वर्णित हुआ। निर्गुण कवियों मे से कबीर और जायसी ने उसका अपूर्व प्रतिपादन किया। कबीरदासजी कहते हैः—

जल में कुंभ कुंभ में जल है बाहर भीतर पानी।
फूटा कुंभ जल जलहिं समाना, यह तत कथौ गियानी ॥"

अर्थात् जीव और ईश्वर में, जो कुछ भी भेद है, वह माया के ही कारण है। माया के दूर हो जाने पर जीव और ईश्वर एकाकार हो जाते हैं। कबीर की उलट बासियों मे यह रहस्य अधिक उलझ गया है। वहां ज्ञानतत्व की ही प्रधानता है।

जायसी के काव्य मे जो रहस्यवाद है, वह प्रेम प्रधान हैं-वे कहते है—

"पिउ हृदय यह, भेंट न होई।
कोई मिलाप, कहौं केहि रोई ॥"

अर्थात् वह प्रिय परमात्मा अन्तर मे ही है, किन्तु माया के बंधनो के कारण उससे मिलन नही हो पाता है। केवल ज्ञानी गुरु ही उसमे भेंट करा सकता है। 'पद्मावत' के रूपक में उन्होने अपनी विचारधारा को और अधिक स्पष्ट कर दिया है।

सगुण कवियो—सूर और तुलसी आदि में रहस्यवाद की इस विशेषता के दर्शन नही हैं। यहा तो वर्णन की प्रधानता है सब कुछ स्पष्ट है, कोई रहस्य नहीं है। आगे चलकर रीतिकाल के कवियो ने अधिकतर लौकिक साहित्य का ही निर्माण किया, जिसमें रहस्यवाद की गुंजाइश न थी। वहां राधा और कृष्ण साधारण नायक नायिका रूप ही वर्णित हुआ।

वर्तमान काल का हिन्दी काव्य अंग्रेजी साहित्य से बहुत कुछ प्रभावित हुआ। कवीन्द्र रवीन्द्र के 'गीतांजलि' आदि का कुछ प्रभाव पड़ा। प्राचीन रहस्यवादी कवियों मे जहां अध्यात्मक की प्रधानता थी वहा वर्तमान कवियों ने कविता के कलापक्ष को अधिक संवारा। इसके फलस्वरूप प्राचीन और नवीन रहस्यवाद में वर्णन की एकता होने पर भी एक मौलिक अन्तर सा दिखलाई पडता है। वस्तुत: आज के रहस्यवाद मे कोई धार्मिक भावना नहीं है, वह विशुद्ध कल्पना प्रधान है। इसलिए व्यर्थ वस्तु न होकर वह एक शैली सा प्रतीत होता है। कुछ विद्वानो के मत मे रहस्यवाद, जब काव्य का विषय बन जाता है, तब वह 'छायावाद' कहलाने लगता है। इसीलिए आज रहस्यवाद और छायावाद के सम्बन्ध में कभी कभी बड़ा भ्रम कल्पित हो जाता है।

वर्तमान काल में कवियों मे प्रसाद, निराला, पंत और महादेवी वर्मा प्रमुखत: रहस्यवादी कवि हैं। इनमे महादेवी वर्मा का पथ अधिक स्वतंत्र और

सरस है । उनके रहस्यवाद मे आत्मीयता की झलक अधिक है जबकि प्रसाद पंत और निराला के काव्य मे गूढता और गहनता के कारण कही कहीं दुर्बोधता भी है ।

छायावाद का अर्थ, उसके नाम से ही बहुत कुछ स्पष्ट है । छायावाद मे एक छाया है, एक आभास है । उस असीम का प्रच्छन्न चित्रण है प्राकृतिक पदार्थों मे, जीवन की अन्यान्य भावनाओं मे । उसमें एक स्वतन्त्र दर्शन है और नवीन सांस्कृतिक चेतना का बोध भी है । प्रसादजी के अनुसार छायावाद, अद्वैत रहस्यवाद का स्वाभाविक विकास है । वस्तु और शैली की दृष्टि से छायावाद मे अनेक विशेषताएं देखने को मिलती है, जैसे—

१—उसमे कवि के 'अह्म' का समन्वय होता है ।

२—प्रकृति का सर्वश्रेष्ठ चित्रण होता है ।

३—श्रृंगार वर्णन होते हुए भी वासना का उद्रेक नही रहता है ।

४—शब्द माधुर्यवाद सौन्दर्य तथा वर्णन वैचित्र्य पर विशेष बल दिया जाता है ।

५—नवीन उपमाएं वर्णन की नवीन दिशाएं और विशेषताएं उद्घाहित की जाती हैं ।

६—लाक्षणिक प्रयोग और प्रतीकात्मक अभिव्यजना की बहुलता रहती है ।

एक बात और है कि छायावादी काव्य में पलायनवादी और एकान्तवादी प्रवृत्ति अधिक पाई जाती है, जो युग-भावना की प्रतिछाया कही जा सकती है । प्रसाद, पत, निराला और महादेवी वर्मा आदि श्रेष्ठ छायावादी कवि माने जाते है ।

प्रगतिवाद का जन्म, छायावाद की पलायनवादी प्रवृत्तियों के प्रतिक्रिया स्वरूप हुआ । प्रगतिवादी संसार मे रस लेता है, भागता नही । वह जीवन के रूक्ष, शुष्क, दलित, शोषित, नीरस और कुठाग्रस्त पक्ष का वर्णन करता है और उसे ऊंचा उठाने की चेष्टा करता है । इसीलिए प्रगतिवादी कविताओं मे किसान, मजदूर, अछूत, विधवा आदि शोषित वर्ग पर मुख्य रूप मे विचार किया जाता है । यह भी युग की पुकार के फलस्वरूप हुआ । कवि, जोकि अपने युग का प्रतिनिधि होता है, अपने युग की पुकार पर आगे बढ़ता है और तदनुसार विषयो को अपने काव्य मे स्थान देता है ।

प्रगतिवादी कवि आत्मा, परमात्मा आदि के दार्शनिक अथवा प्रेम प्रधान सम्बन्धों पर विचार नहीं करता। वह तो जीवन को बहुत समीप से देखता है और यथार्थ वर्णन के द्वारा हमें एक सामाजिक विद्रोह की प्रेरणा भी देता है। वह प्राचीन और पुरातन को नष्ट भ्रष्ट करके उसके स्थान पर नवीन का सुकोमल सृजन करना चाहता है। वह वस्तुतः क्रान्ति का अग्रदूत है। उसका झुकाव बहुत कुछ साम्यवाद की ओर है। दिनकर, नरेन्द्र आदि कवि इस कोटि में रखे जा सकते हैं। कुछ कवि ऐसे भी हैं जो भारतीयता के ही पुनरुत्थान की कामना करते हैं। वे किसी बाहरी दृष्टिकोण से प्रभावित नहीं हैं। ऐसे कवियों में निराला, नवीन और पंतजी का उल्लेख किया जा सकता है।

यथार्थ वर्णन के फेर में पड़कर कुछ प्रगतिवादी कवि 'अति' की ओर चले जाते हैं। अनुभव-शून्यता के कारण उनके वर्णन केवल रंगमंचीय ही रह जाते हैं। उनका वास्तविक प्रभाव नहीं पड़ता है, क्योंकि प्रगतिवादी कवि होने के लिए केवल कवि होना ही आवश्यक नहीं है, किन्तु प्रगतिवादी होना भी अनिवार्य है। इसलिए सिद्धान्तरूप से अच्छा होने पर भी प्रगतिवाद काव्य उतना नहीं पनप सका।

आज का युग प्रयोगवादी है। आज कविता में वस्तु और शैली सभी दृष्टियों से नवीन प्रयोग किए जा रहे हैं। यह कोई नई बात नहीं है। प्रयोग निरन्तर होते आए हैं, होते रहेंगे। प्रत्येक युग में नवीन परिस्थितियों के अनुसार नए प्रयोगों का जन्म होता है, या प्रचलित प्रयोगों का ही विकास होता है।

आज चारों ओर कवि सम्मेलनों में, पत्र पत्रिकाओं में और रेडियो पर प्रयोगवादी कविता खूब सुनने को मिलती हैं। अभी यह वाद एक रूप ग्रहण करने की चेष्टा कर रहा है। अज्ञेयजी इसके प्रवर्तक माने जाते हैं। तार सप्तक के नाम से ३ ग्रन्थ निकल चुके हैं, जिनमें २१ प्रयोगवादी कवियों के नवीन काव्य का आनन्द प्राप्त किया जा सकता है। इनमें कुछ कवि तो वास्तव में श्रेष्ठ हैं और उनके काव्य में नए तत्वों के मधुर वर्णन भी हो जाते हैं। कुछ कवि पहले श्रेष्ठ थे, किन्तु प्रयोगवाद के फेर में पड़ कर अब उनकी बुद्धि का दुरुपयोग भी हो रहा है।

पहले 'प्रयोगवाद' की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया था, किन्तु उसमें विशाल परिणाम में साहित्य का निर्माण देख कर अब विद्वानों को उसकी चिन्ता हो चली है। प्रयोगवादी कविता में निम्नलिखित बातें दृष्टिगोचर होती हैं :—

१ इस कविता में अस्पष्टता दुर्बोधता एव असमंजसता के दर्शन होते हैं

२ इसमें कवि की अपरिपक्व बुद्धि और अपरिस्थित एव अननुभूत भावना का परिचय मिलता है ।

इसमे कवि की कुण्ठा, निराशा, उद्दाम वासना और प्रतिकात्मक अति यथार्थता आदि का भी चित्रण दृष्टिगोचर होता है ।

४—शब्दाडम्बर, शैली का विशेषीकरण, अप्रसिद्ध उपमान आदि की भरमार रहती है ।

फिर भी इतना अवश्य कहा जा सकता है कि ये दोष अधिकतर नए और अहम्मानी कवियो मे ही मिलते है । अभी इसके बारे मे कुछ अधिक नही कहा जा सकता है । भविष्य ही इसका भविष्य बतलाएगा ।

२५. आज के छात्र की समस्याएं

१—आज के छात्र की परिस्थितियां
२—छात्र की आर्थिक कठिनाइया
३—परिवार का उत्तरदायित्व
४—उच्च शिक्षा प्राप्ति में बाधाएं
५—अनिश्चित भविष्य
६—उपसंहार

वर्तमान युग मे छात्रो के सामने वे आकर्षक और सुविधाजनक परिस्थितिया नही हैं, जो प्राचीन युग मे थी । उस समय छात्रों को अपने निर्वाह और भविष्य के बारे मे उतना चिन्तित नही होना पडता था । वे अपने गुरु के आश्रम में रहते थे, और वही नि शुल्क पढते और भोजन करते थे । ब्रह्मचर्य आश्रम की पूरी अवस्था २५ वर्ष तक, वे इसी प्रकार जीवन व्यतीत करते थे । फिर आगे गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने पर, वे सुयोग्य नागरिक बनकर अपने वर्ण-धर्म का पालन करते थे ।

आज वे पुरानी बातें नही है । आज के छात्रों के सामने तो बडी विषम परिस्थितिया है । अब वे आश्रम इतिहास बन गए है । आज तो उनके स्थान पर स्कूल और कालेज है, जिनमें पहले तो प्रवेश पाना ही कठिन हो जाता है और

बहुत से छात्र विवश हो जाते हैं। आज कई प्रान्तों में प्रारम्भिक शिक्षा को अनिवार्य कर दिया गया है, फिर भी उसमें अभीष्ट सफलता नही मिल रही है। एक तो छात्रों के अनुपात से शिक्षकों का अभाव है और दूसरे धन एवं भवन आदि की भी कमी अखर जाती है। इसके अतिरिक्त यह अनिवार्यता केवल सीमित क्षेत्र मे ही है। गरीबो, मजदूरो, भिक्षुको आदि के बालको पर इस दृष्टि से कोई ध्यान नही दिया जाता है।

माध्यमिक शिक्षा भी आज बहुत कष्टप्राप्य हो रही है। वही बात है कि अच्छे स्कूलों एव शिक्षको का देशव्यापी अभाव है। फिर आज की शिक्षा बहुत महगी भी हो गई है। अनेक तो विषय हैं और उनकी अनेक पाठ्य पुस्तकें तथ सहायक पुस्तके (इनमे नोट्स और कु जिया शामिल नही है) खरीदनी पडती है। कागज, कापियां आदि का भी खर्च बहुत हो गया है। स्कूलो को फीस प्रति-वर्ष बढ जाती है, फिर प्रतिमास अनेक चन्दे भी जबरदस्ती देने पडते है। प्रति-वर्ष 'कोर्स' बदला जाता है, जिसमे वे पुस्तकें एकदम बेकार हो जाती है और छात्र अथवा उसके संरक्षकों को यह भार उठाना पड़ता है।

यह अवश्य है कि इन दोषो को दूर करने के उपाय किए जा रहे है। पाठ्य पुस्तको का राष्ट्रीयकरण हो रहा है और स्कूलो पर सरकार का आवश्यक नियत्रण भी बढ रहा है, जिसमे बहुत सी अनियमिततायें कम हो रही हे, अनेक छात्रवृत्तिया दी जा रही है और छात्रो को अनेक ढंग से आर्थिक •सहायता भी सुलभ हो रही है, किन्तु वह सब 'ऊंट के मुंह मे जीरे' के समान है।

कालेज में शिक्षाग्रहण तो और भी अधिक समस्या हुआ जा रहा है। एक तो देश की आर्थिक स्थिति इतनी खराब है कि हाई स्कूल पास करने वालो मे से बहुत कम छात्र कालेज की बात सोच पाते है और जो साहस करके कुछ आगे बढते है, उनके सामने 'प्रवेश' की विकट समस्या है। सहस्त्रो छात्रो को निराश होकर अपनी वर्तमान स्थिति पर ही सतोष करना पड़ता है। जो भाग्यशाली छात्र प्रवेश पा जाते हैं, वे या तो छात्रवृत्ति का मुह ताकते है या ट्यूशनों की तलाश करते है। छात्रवृत्तियो मे बडा अंधेर होता है। 'अन्धा बांटे रेवड़ी, फिर फिर अपने देव' वाली बात होती है। केवल पहुँच वाले ही पाते है। अछूतो को दी जाने वाली वृत्तियो से असन्तोष एव वर्ग-भेद पनपता है। धन का अपव्यय भी होता है और योग्य छात्रो का उत्साह मारा जाता है।

व्यसनों में समय नष्ट होता है और उस छात्र की प्रतिभा का विकास नहीं हो पाता है ।

इसके बाद कालेज मे पुस्तको का कोई ठिकाना नहीं है । कितना भी खरीदो, किन्तु अपर्याप्त । पुस्तकालयो के सहारे ही अधिकतर रहना पड़ता है । उनकी दुर्दशा भी सर्वविदित है । अत योग्य छात्रो को अपना अध्ययन सुचारू रूप से चलाना असम्भव हो जाता है, जिसका परिणाम होता है 'थर्ड क्लास' । 'थर्ड क्लास' अनुत्तीर्ण होने के ही बराबर है, क्योंकि 'थर्ड क्लास' वालो का कोई आंसू पोछने वाला भी नहीं है । न तो आगे पढने की सुविधा है और न कहीं अच्छी नौकरी ही मिल पाती है । घिस पिट कर जीवन भर क्लर्की करते हुए मौत की प्रतीक्षा करनी पड़ती है ।

विज्ञान की पढाई मे तो और भी मुसीबते हैं । स्थान कम, फीस अधिक और परिश्रम तो अत्यधिक । आज विज्ञान की शिक्षा से भविष्य अच्छा माना जाता है, क्योंकि उसके बाद छात्र डाक्टरी, इंजीनियरिंग और अनेक विशिष्ट क्षेत्रो में प्रवीणता प्राप्त करके खूब धन कमा सकते है और अपना जीवन सुखपूर्वक बिता सकते है । लेकिन जो इधर आते है, वे ही जानते है कि विद्यार्थी जीवन मे उन्हे कौन कौन से कष्ट झेलने पड़ते है । एक नहीं, अनेक समस्याएं है, जिनका वर्णन करना असंभव हैं और शायद अवाछनीय भी होगा ।

विज्ञान के छात्रो का भविष्य फिर भी कुछ निश्चित हो जाता है कि अन्ततोगत्वा वे डाक्टर, इंजीनियर या कुछ वैसे ही टेक्नीकल अफसर बन जायेगे, किन्तु कला और वाणिज्य के छात्रो का भविष्य तो सदैव अनिश्चित रहता है । उनमे से कुछ तो कानून की शिक्षा प्राप्त करके वकील बन जाते हैं और कुछ कालेज में प्राध्यापक बन जाते है, किन्तु उनमे असन्तोष बराबर बना रहता है । वे उचित अवस्था रहते तो, विभिन्न प्रतियोगिताओ मे भाग लेते रहते हैं । कुछ सफल भी होते है किन्तु शेष लोग निराशा के अवतार बने हुए, जीवन के समस्त व्यवहारों में निराशा का ही दृष्टिकोण अपना लेते है । भारतीय प्रवृत्ति के अनुसार वे शीघ्र ही पलायनवादी, अकर्मण्य और अनिष्ट दार्शनिक बन जाते है और अपने चतुर्दिक वातावरण को दूषित करते फिरते है ।

उपर्युक्त स्थिति तो प्रथम और द्वितीय श्रेणी वालों की ही अधिकतर होती हैं तृतीय श्रेणी का तो वहां भी कोई पुरसाहाल नहीं है शिक्षा का

व्यय उनकी कमर तोड देता है अत्यधिक परिश्रम उन्हें अन्धा और पशु बना देता है तथा अनिश्चित भविष्य उन्हें असमय में ही बूढ़ा और काल कवलित कर देता है। वर्तमान पीढ़ी अधिकतर इन्ही वृद्ध-नवयुवकों से निर्मित हुई है। ये अधकचरे, असफल और असंयमी नौजवान सब प्रकार से निरुपाय, निरुत्साह और निराश होते है। न तो ये परिवार का ही बोझा ठीक से संभाल पाते है और न देश के ही किसी काम आ सकते हैं।

इस प्रकार आज के छात्रों के सामने अनेक भीषण समस्याएं है, जिनके फलस्वरूप वे अपने छात्र जीवन में सर्वदा असन्तुष्ट और अनुशासन-हीन रहते है। आज के विभिन्न प्रकार के बेबात वाले आन्दोलन उनके उसी असन्तोष के परिणाम है। अनेक राजनैतिक पार्टियां उन्हें बहका कर उनका दुरुपयोग करती है और उनकी सक्रियता का बेजा फायदा उठाती है। छात्र-जीवन के पश्चात् बेकारी की समस्या, प्रत्येक औसत छात्र के सामने सुरसा की तरह मुंह फैलाकर उसके अस्तित्व को ही समाप्त कर देना चाहती है। इन सब समस्याओं में अपने को किसी प्रकार बचाता हुआ वह बस लडखड़ाकर अपनी जिन्दगी बिताता है और शिक्षा-प्रणाली को भरपेट कोसने के सिवा कुछ भी नही कर पाता है। अतः आज के विद्वान् सुधारकों का यह प्रथम कर्तव्य है कि वे छात्रों की इन समस्याओं को सुलझाकर उन्हें सच्चे देशभक्त नागरिक बनने का अवसर प्रदान करें।

२६. हिन्दी-प्रचार के उपाय

१. हिंदी का महत्व
२. हिंदी प्रचार की आवश्यकता
३. हिंदी प्रचार के उपाय
 (क) हिंदी शिक्षकों का सहयोग
 (ख) जनता का सहयोग
 (ग) सरकार का सहयोग
४. मार्ग के विघ्नों पर विजय पाने के लिए कुछ सुझाव
५. उपसंहार

वर्तमान युग में हिन्दी केवल एक भाषा ही नहीं, अपितु राष्ट्रभाषा है। सारे राष्ट्र का उत्तरदायित्व उस पर है। उसे विश्व में भी भारत का प्रतिनिधित्व करना है। ऐसी दशा में उसका महत्व अब बहुत बढ गया है और उसे उसके योग्य सिद्ध होना है।

हिन्दी का इतिहास बहुत पुराना है। लगभग एक हजार या बारह सौ वर्षों से वह देश के बहुत बड़े भूभाग की जनता की भाषा रही है। आज भी उत्तर भारत व मध्य भारत के ५, ६ प्रान्तो की वह मुख्य भाषा है। बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, पंजाब (आधा भाग) आदि में उसे प्रान्तीय भाषा के रूप में मान्यता प्राप्त है। भारत के स्वतन्त्र होने पर वह सर्व सम्मति से वैधानिक रूप मे आज केन्द्र की भाषा के रूप में भी प्रतिष्ठापित है, अतः उसका उत्तरदायित्व आज दुगुना चौगुना बढ गया है, क्योंकि उसे सारे देश मे छा जाना है और जनता के सुख दुख की भाषा बनना है।

आज हिन्दी के प्रचार की जितनी आवश्यकता है, उतनी पहले कभी नही रही और आज जितनी ढिलाई उतनी भी पहले कभी देखने मे नही आई। कुछ विद्वान तो यह मान कर सन्तोष कर लेते हैं कि हिन्दी के राष्ट्रभाषा हो जाने के बाद अब उसे न तो कुछ प्राप्तव्य रह गया है और न उन्हे कुछ कर्तव्य रह गया है। ऐसे वर्ग के लोग पहले भी अकर्मण्य थे और आज भी है और वे वैसे ही रहेंगे, किन्तु समय की गति ने दिखा दिया है कि सन्तोष का क्या दुखद परिणाम हुआ है। सन् १९५० मे विधान के लागू होते ही हिन्दी राष्ट्रभाषा घोषित हो गई थी, और उसे १९६५ तक सम्पूर्ण रूप में देश का कार्य भार संभाल लेना था, किन्तु हम देखते है कि घड़ी की सुई वहीं पर ठप्प है। आज १३ वर्षो में नगण्य प्रगति हुई है। हिन्दी का विरोध करने वाले इस बीच में काफी संभल गए है और हमारी टालू नीति का अनुचित लाभ उठाने मे कुछ सफल भी हो गए हैं।

आज देश के सामने वस्तुतः बडी गंभीर परिस्थिति है। एकता स्थापन करने के मुख्य आधार एक एक करके समाप्त हो रहे है, इसीलिए आज 'राष्ट्रीय एकीकरण समिति' का निर्माण करना पड रहा है और देश का विचारक एवं नेता वर्ग बहुत चिन्तित है कि क्या किया जावे।

देश की एकता का प्रथम मूल मंत्र था 'एक धर्मता', किन्तु आज के

सेकुलर राज्य में धर्म का कोई स्थान नहीं है। पाकिस्तान का निर्माण त धर्म के ही प्रश्न पर हुआ था, किन्तु भारत मे उस ओर कोई—अच्छी या बुरी प्रगति नही हुई। धर्म को व्यक्तिगत कह कर उसके प्रति निरपेक्षता का व्यवहार किया गया, जिसका परिणाम आज प्रत्यक्ष है।

एकता का दूसरा मन्त्र था 'भाषा'। यही सोच कर देश की एक राष्ट्रभाषा का निश्चय हुआ था, किन्तु एक तो भाषावार प्रान्तो के निर्माण मे राष्ट्रभाषा की आवश्यकता ही प्रतीत नही हुई और दूसरे पुराने अंग्रेजी भक्त राज्याधिकारियों ने सर्वत्र अंग्रेजी को ही चालू रखा। न हिन्दी को बढने दिया और न अन्य प्रान्तीय भाषाओ को ही। हिन्दी के साथ उनका मूल जन्म-जात वैर था क्योकि हिन्दी के प्रभुत्व मे उनका प्रभुत्व समाप्त हो जाता, अत. वे भीतर ही भीतर एक षड्यन्त्र करते रहे। देश के बहुमत ने जब उनका साथ नही दिया, तब उन्होंने देश और विदेश के हिन्दी विरोधियो और भारत विरोधियों को मिलाकर एक ऐसा संगठन बना लिया और गुलामी मनोवृत्ति का परिचायक ऐसा आन्दोलन किया कि आज अंग्रेजी को पूर्ववत स्थान देने के लिऐ हमे विवश होना पड रहा है। देशभक्त जनता की अवहेलना करके, आज सरकार फिर हमारे ऊपर अंग्रेजी लादने जा रही है, अनिश्चित काल के लिए। इसमें दोष सरकार का नही है, हमारा है। यदि हम अब भी नही चेते, तो पता नही भविष्य मे कितना अन्धकार भरा हुआ है। इसलिए हमे स्वस्थ मस्तिष्क से, स्वतन्त्र बुद्धि से और स्वावलम्बनपूर्ण सिद्धान्तो से हिन्दी प्रचार एवं प्रसार के ठोस उपाय सोचना चाहिए।

मेरे विचार से इस दिशा में आवश्यकता है सर्वप्रथम लगन वाले, जीवनदानी हिन्दी शिक्षको की। वे हिन्दी प्रचार का व्रत लें और देश के कोने कोने में छा जावें। वहा निस्वार्थ भाव से हिन्दी का अध्ययन और प्रसारण करे। समाज को चाहिए कि वह उनका पूर्ण उत्तरदायित्व ले। इस प्रकार की 'मिशन स्पिरिट' के बिना कोई काम नहीं चल सकता है। मेरा विश्वास है कि हिन्दी के इस सकटकाल को देखकर हिन्दी माता की पुकार पर बहुत से शिक्षक अपना सर्वस्व बलिदान करने को प्रस्तुत हो जावेगे।

इसके अतिरिक्त हिन्दी शिक्षको को चाहिए कि वे विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं मे श्रेष्ठ हिन्दी साहित्य का अनुवाद करे। हिन्दी प्रेमी अन्य शिक्षको का भी फिर यह कर्तव्य हो जाता है कि वे विभिन्न विषयो की पुस्तके हिन्दी

म ही लिखे। इस प्रकार जब हिन्दी का साहित्य विपुल और विशाल हो जायगा तो हिन्दी विरोधी लोग हिन्दी पर अक्षमता का आरोप नही लगा सकेंगे। यह सारा कार्य एक विशेष उत्साह के साथ होना चाहिए और समाज के सभी वर्गों का सहयोग इसमे लेना चाहिए।

हिन्दी प्रान्तो पर हिन्दी के प्रचार का विशेष उत्तरदायित्व आ जाता है। मेरा विश्वास है कि यदि वे चाहते तो आज यह दिन दिखलाई नही पडता। अभी तो हिन्दी प्रान्तो का ही पूर्ण हिन्दीकरण नही हुआ है। वहा सारा कार्य पूर्ववत् अंग्रेजी में चल रहा है। दिखावे के लिए थोड़ा तमाशा कभी कभी कर दिया जाता है। हिन्दी का दुर्भाग्य है कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन, नागरी प्रचारिणी के सभा आदि संस्थाएं भी पूर्णक्षमता के साथ कार्य नही कर पा रही है। राष्ट्रभाषा प्रचार समिति केवल परीक्षण संस्था का कार्य कर रही है, बिहार राष्ट्र भाषा परिषद् तो केवल प्रकाशन सस्था है और हिन्दी अध्यापक संघ भी राजनीति और गुटबन्दी का शिकार हो रहा है। हमे चाहिए कि हम अपनी इन कमजोरियो को जहा पहचान लेते है, वहा अपनी ताकत को भी पहचानें और अपने सभी मत-भेद भुलाकर प्राणपण से राष्ट्र भाषा हिन्दी के विकास मे जुट जावे।

आज की सरकार हमारी है और वह हिन्दी के प्रचार मे हमारी सहायता भी कर रही है, किन्तु हमे यह न भूलना चाहिए कि एक प्रजातन्त्र की सरकार जितनी हमारी है उतनी ही दूसरों की भी है, क्योंकि वह सभी की है, इसीलिए किसी एक वर्ग की नही है और न हो सकती है। यदि अतीत मे वह किसी कारण से हिन्दी की पक्षपातिनी बनी तो भविष्य मे पूर्ण विरोधिनी भी हो सकती है और होती जा रही है। आज उसकी नीति बहुत स्पष्ट जान पडती है। रेडियो की भाषा बदल गई है, अंग्रेजी की सुरक्षा के लिए संविधान मे सुधार हो रहा है और अंग्रेजी को अंधाधुंध सहायता दी जा रही है। इसके फलस्वरूप आज अंग्रेजी की इतनी माग है कि थर्ड क्लास वाले भी अफसर हो जाते है और हिन्दी के प्रथम श्रेणी के विद्वान् बस टापते रह जाते हैं।

इस विषमता को मिटाने के लिए हिन्दी वालो को इतना संगठित होना पड़ेगा कि सरकार उनकी बात मानने के लिए विवश रहे। आज कुछ हिन्दी वाले, जो रेडियो या अन्य सरकारी विभागों में उच्च पद पर कार्य कर

रहे है, इस बात पर विचार करें कि वे हिन्दी का साथ कहां तक दे रहे हैं मुझे विश्वास है कि वे हिन्दी के सच्चे सेवक हैं और उन्हें उन क्षुद्र पदों के प्रति कोई मोह नहीं है।

इस प्रकार यह निश्चित है कि यदि हम संगठित होकर और देश की जनता को साथ लेकर आगे बढ़े, तो सरकार अवश्य हमारे इंगितो पर चलेगी, क्योंकि सरकार तो हमारी ही है, जनता की है फिर हम अपनी निम्न योजनाओं को पूरा कर सकेंगे, जैसे

(१) १९६५ के बाद अंग्रेजी को दृढतापूर्वक हटा दिया जाय।

(२) केन्द्रीय परीक्षाओ मे हिन्दी को अनिवार्य कर दिया जाए।

(३) हिन्दी को उच्च शिक्षा का माध्यम बना दिया जाए।

(४) हिन्दी न जानने वाले और उपेक्षा करने वाले अधिकारियो की उन्नति रोक दी जाय।

(५) हिन्दी के विद्वानो को ही भविष्य मे राजदूत बनाया जावे, ताकि विदेश में उचित वातावरण का निर्माण हो।

(६) राज्य का सारा कामकाज एकदम हिन्दी मे आरम्भ कर दिया जाय। जहां जहा कुछ कठिनाइयां होंगी, वे स्वयं सुलझ जायंगी क्योंकि आवश्यकता आविष्कार की जननी है।

(७) एक हिन्दी की 'केन्द्रीय शिक्षा सेवा' का निर्माण हो और उसके प्राध्यापक देश के सभी स्थानो मे हिन्दी को लोकप्रिय और सर्वसुबोध बना दें।

(८) हिन्दी साहित्य की सभी प्रकार से अभिवृद्धि हो। उसका कोई भी अंग दुर्बल न रहे।

(९) समय समय पर विभिन्न योजनाओं के द्वारा हिन्दी के प्रसार को खूब प्रोत्साहित किया जावे।

(१०) 'हिन्दी सेवा ही सच्ची राष्ट्र सेवा है' यह मूल मंत्र प्रत्येक भारतीय को अभ्यस्त करा दिया जावे।

इस प्रकार हम देखेंगे कि निश्चित अवधि मे ही १९६५ तक ही सही, हिन्दी अपने राष्ट्रभाषा के गौरवपूर्ण पद पर साधिकार प्रतिष्ठित हो जावेगी और मार्ग की सभी विघ्न बाधाएं स्वतः दूर हो जावेंगी। वस्तुतः जब राष्ट्र के विरोधी यह जान लेंगे कि सर उठाते ही उनका सर कुचल दिया जायगा तब वे न तो राष्ट्र का विरोध करेंगे और न राष्ट्रभाषा हिन्दी का।

इस अद्भुत शक्ति और क्षमता के भजन के लिए हमे अपना निजी पौरुष और उत्साह चाहिए। किसी के—भले ही सरकार के—मुखापेक्षी बनने से काम नही चलेगा। काम चलेगा तो, केवल लगन से, 'मिशन स्पिरिट' से, जनता के सहयोग और बल मे तथा दृढ आत्म-विश्वास से।

हम बढ़ेंगे अवश्य, और बढते रहेंगे, यदि हमने भारतेन्दुजी के इस मूल मंत्र को भली भाति समझ लिया—

"निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।"

पत्र-निबन्ध

निबन्ध के सम्बन्ध मे यह कहा जा चुका है कि उसके लिए कोई रूप-रेखा बनाने की आवश्यकता नही पड़ती है। पिछले १५ निबन्धो में जो रूप-रेखाएं दी गई है, वे केवल सहायता अथवा अभ्यास के लिए ही है, जिससे नए लेखक एक दिशा प्राप्त कर सकें। आगे चल कर अभ्यास हो जाने पर फिर तो एक स्वाभाविक प्रभाव के साथ ही निबन्ध लिखा जाता है। यह बात पत्र-निबन्ध से और स्पष्ट हो जाती है। बहुधा हम अपने सम्बन्धियो अथवा मित्रों को जो पत्र लिखते है, उनमे हाल-चाल के अतिरिक्त बहुत सी समस्याओं पर गम्भीर विचार भी व्यक्त करते है। कुछ परामर्श देते है और कुछ परा-मर्श भी प्राप्त करते हैं। इस प्रकार के पत्र अधिकतर निबन्धात्मक होते है। उन्हें हम पत्र-निबन्ध भी कह सकते हैं। नीचे कुछ ऐसे उपयोगी पत्र-निबन्ध दिए जा रहे है, जो छात्रों के जीवन मे विशेष रूप से सम्बन्धित होते हैं।

१—पत्र,

पुत्री की ओर से माता को,

विषय—

पब्लिक स्कूलों से लाभ

मेन होस्टल, रूम नं० १२
लवली स्कूल, लखनऊ

आदरणीया माताजी!

प्रणाम।

आपका पत्र मिला। बीना की वर्षगांठ पर बहुत सी मेरी सहेलिया आईं थीं, यह जान कर बड़ी प्रसन्नता हुई। मुझे सचमुच अरुणा, आशा, कमला,

रानी पूर्णिमा निर्मला बडी बेबी आदि बहुत-बहुत याद आती हैं मेरी भी उस दिन इच्छा हुई थी कि मैं भी उड़कर पहुँच जाऊ क्या करू, लाचार हू बीना के लिए मैंने जो पार्सल भेजा था, वह अब मिल गया होगा। मैं एक दिन 'लेट' हो गई थी, इसलिए वह शायद समय पर नहीं पहुँच सका।

आपने उस समय शायद कुछ अप्रसन्नता दिखलाई थी, जब मामाजी ने मुझे यहा 'एडमिशन' दिलाया था। पिछले पत्रो मे भी ऐसा लगता था कि आपका क्षोभ अभी शात नही हुआ है, लेकिन मां, यह पब्लिक स्कूल वैसा नही है कि यहां केवल बेकार फिजूलखर्ची होती हो। यहा रहकर मैंने जो कुछ इसके बारे में जान पाया है, वह सब आप मे लिख रही हू, ताकि आपको यह जान कर सन्तोष हो, कि आपकी बेटी पर जो इतना खर्चा हो रहा है, वह कहा तक ठीक है।

यह ठीक है कि यहां फीस बहुत ज्यादा है। १००) महीना तो केवल कहने की बात है, और भी ऐसे अनेक खर्चे हर महीने करने पड़ते है, जो अपने सम्मान के लिए जरूरी हो जाते है, सब मिलाकर १५०) तो पड़ता ही होगा। छोटी कक्षाओ मे भी करीब-करीब इतना ही खर्च करना पडता है। १०), २०) कम हो गए तो उसमे क्या। एक प्रकार मे देखा जाय तो यह खर्चा अधिक नही है। यहां की व्यवस्था ही इतनी खर्चीली है।

मां, यह कोई २ या ४ कमरे वाला मामूली सरकारी स्कूल नही है जहा एक-एक कक्षा मे १००-६०० लड़कियां घुसी रहती है और शोर मचाया करती हैं, जहां मास्टरनीजी या तो सूटर बुनती है या फिर अपने बच्चों की देखभाल करती है और जहा न तो लड़कियो की पढ़ाई या सफाई पर ध्यान दिया जाता है और न उनके चाल-ढाल या खेल-कूद की ही कोई चिन्ता की जाती है।

इस स्कूल की बहुत बडी, बहुत बड़ी बिल्डिग है, कई होस्टल हैं, लायब्रेरी और दफ्तर की बिल्डिग अलग से हैं। साइंस का ब्लाक बिल्कुल नया और बडा भारी बना है। कैंटीन अलग, स्पोर्टस् का प्रबन्ध अलग और क्लब की बिल्डिग अलग। इसके अलावा हमारा स्वीमिंग पूल, डेरी और नर्सरी फार्म भी बहुत अच्छा है। एक ओर प्रिंसिपल का बंगला और कुछ स्टाफ के बंगले हैं

तथा दूसरी ओर चपरासियो के २ दजन क्वाटर है एक ओर खेल का बडा सा मदान है और दूसरी ओर एक छोटी सी चच और इस स्कूल के सस्थापक की समाधि भी है।

यहा हम लोगो का सारा दिन बड़ा व्यस्त रहता है। प्रातःकाल हाथ मुंह धोकर ठीक ६ बजे हम एक मैदान मे एकत्र हो जाते हैं, वहां प्रार्थना के पश्चात् सामूहिक व्यायाम होता है। फिर हम लोग होस्टल मे नाश्ता करते ह और ठीक ७ बजे से स्कूल आरम्भ हो जाता है। यहा अध्यापिका और छात्राओ के बीच मे १ और १० का अनुपात है। स्टाफ के लोग बहुत 'एजुकेटेड' और 'क्वालीफाइड' है। वे हम लोगो की बहुत 'केयर' करते है। एक-एक बात को कई बार समझाते हैं और 'करेक्शन वर्क' हमारे सामने ही हमे समझा कर करते हैं। यहाँ पर 'ट्यूटोरियल क्लास' का बहुत अच्छा प्रबन्ध है। पढ़ाई इतनी अच्छी है कि अधिकतर लड़किया प्रथम श्रेणी में ही पास होती हैं और उन्हें कई 'सब्जेक्टों' मे 'डिस्टिंक्शन' भी मिल जाता है।

इसी तरह १२ बजे तक बराबर 'क्लासेज' चला करती हैं। फिर हम लोगों का 'लंच टाइम' होता है जिसके बाद हम लोग कुछ देर आराम करते है, फिर 'होम वर्क' के लिए बैठ जाते है। शाम को कुछ नाश्ते के बाद हम लोग खेल के मैदान मे चले जाते हैं। यहां खेल खेलना 'कम्पलसरी' है। हमारे 'गाइड' बहुत अच्छे है, वे खूब प्रैक्टिस करवाते है। खेल के बाद कुछ लोग बगीचे में टहलने चले जाते हैं। कुछ लोग डेरी फार्म और नर्सरी की देखभाल करते है और कुछ लोग 'स्विमिंग पूल' में मौज करते है। सारी थकावट दूर हो जाती है और हम लोग 'फ्रेश' हो जाते है। फिर डिनर' के बाद रात के ६ बजे तक कोई पढ़ता लिखता है, कोई सगीत का अभ्यास करता है और कोई अध्यापिकाओ से मिलने चला जाता है। यही रोज का कार्य-क्रम है।

इसमें देखो, मा, कितना 'परसनल अटेन्शन' है और कितना 'क्लोज कन्टैक्ट' है। इसी का नतीजा है कि क्या खेल, क्या संगीत, क्या पढाई, क्या डिबेट, क्या ड्रामा और क्या कोई 'कम्पिटीशन', हमारा स्कूल हमेशा फर्स्ट रहता है, क्योकि हमारे स्कूल की लडकिया हर जगह से ढेर सारे 'प्राइज' जीत कर ले आती हैं। होस्टल मे सबके कमरों मे बहुत से 'कप्स' रखे हुए है और प्रिंसिपल के बगल वाला कमरा तो दर्जनो 'शील्ड्स' से भरा हुआ है।

यहा की लड़किया 'स्कूल' के बाद कालिज और यूनिवर्सिटी मे भी

बहुत नाम करती है हर जगह उनकी बडी प्रशंसा होती है। सच मा यदि हम किसी से कह द कि हम लवली स्कूल के स्टूडेण्ट हैं तो वह एक प्रकार से घबड़ा जाता है, उस पर एक दम रोब छा जाता है। इसीलिए मां, यह स्कूल मुझे बहुत अच्छा लगता है। खर्च कुछ भी हो, लेकिन जिन्दगी एक बार संभल जाती है हमेशा, हमेशा के लिए।

अब तो मुझे विश्वास है कि मेरी मा बहुत खुशी होंगी और मामा की 'च्वाइस' को पसन्द करेंगी।

सच मा, बीना जब बडी हो जायगी, तब मैं उसे यही भर्ती करा दूंगी, मेरी बीना, अच्छी बीना।

बस मां, अब सगीत की क्लास लगने वाली है। शेष दूसरे पत्र मे लिखूंगी; बीना को ढेर सारा प्यार।

तुम्हारी प्यारी बेटी,
मीना

२—पत्र

पिता को पुत्र की ओर से

विषय—

एन० सी० सी० से लाभ

गवर्नमेंट कालेज होस्टल,
ब्यावर (राजस्थान)

पूज्य पिताजी !

सादर चरणस्पर्श।

आपका पत्र मिला। मैं आपकी अप्रसन्नता का कारण समझ नहीं सका। आपने मेरे विषय मे लिखा 'तू कालेज मे पढ़ता है कि मिलेटरी मे भर्ती हो गया है।' ऐसा लगता है आपका सकेत 'एन. सी. सी.' की तरफ है। उस दिन जब ठा० युद्धवीरसिंह होस्टल आए थे, तब मै एन. सी. सी. की परेड से लौटा ही था। उनसे कोई ऐसी बात तो नही हुई थी, लेकिन मेरी वर्दी देखकर वे चकित अवश्य थे, शायद उन्होने ही आप से कुछ का कुछ कह दिया है।

बात यह है कि पिताजी ! मैंने एन. सी. सी. 'ज्वाइन' कर लिया है

अपने कालेज के प्रो० मिश्राजी उसके इन्चार्ज है और हमारे कालेज के ही २० लडके उसमे शिक्षा ग्रहण करते हैं इस कालेज मे एन सी सी ट्रेनिंग का यह दूसरा वर्ष है। इसीलिए सख्या बहुत कम है, आगे चलकर अधिक से अधिक छात्र इसमे ले लिए जाएगे।

पुराने समय मे, जिस तरह स्कूलों में स्काउटिंग चलती थी (आज भी चलती है), उसी तरह कालेजो में एन. सी सी. की ट्रेनिंग दी जाती है। इसका सारा प्रबन्ध मिलेटरी की ओर से ही होता है। मिलेटरी के अफसर ही हमको परेड कराने आते है और 'रायफल' की ट्रेनिंग भी देते है।

इस एन. सी. सी. ट्रेनिंग की अनेक विशेषताए हैं। सर्वप्रथम इससे छात्रो में अनुसरण का गुण बढ जाता है। वे अधिक नम्र और आज्ञाकारी बन जाते है। उनमें उत्तरदायित्व की एक भावना उग जाती है, यह दूसरा गुण है। वे अपने को दूसरे सामान्य छात्रो की तरह 'साधारण' नही समझते है, किन्तु यह समझते हैं कि उन्होने एक व्रत लिया है, उनके सामने एक महान् लक्ष्य है, जिसकी पूर्ति उन्हें करना है। इसका सबसे बड़ा और तीसरा गुण है देशभक्ति का आदर्श। आज हमारा भारत देश स्वतन्त्र है। हमारे देश की अपनी सेना है। हमारे सामने पाकिस्तान और चीन की तरफ से हर समय खतरा है। हमें सावधान रहना है। हमारी सेना मोर्चे पर सतर्क है। उसे केवल सिपाही ही नही चाहिए, किन्तु दक्ष निर्देशक भी चाहिए, जो उसका न्यायोचित संचालन कर सकें।

आखिर ये निर्देशक कहा से आयेगे। विशाल देश की आवश्यकता की पूर्ति के लिए थोडे से आदमियों से तो काम नही चल सकता है। वैसे कुछ नए सैनिक स्कूल भी है। पुराने स्कूल देहरादून और खडकवासला आदि मे हैं, जहां केवल सैनिक शिक्षा ही दी जाती है। लेकिन फिर भी मिलेटरी के लिए बहुत से अफसर चाहिए। इसके अलावा बहुत से शिक्षित आदमी 'रिजर्व फोर्स' मे भी चाहिए कि समय पडने पर उन्हे शीघ्रातिशीघ्र बुला लिया जा सके।

कालेज के नौजवान ही इन आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकते है। यहा पढाई के साथ साथ हमको सप्ताह में तीन दिन एन. सी. सी. मे परेड करनी पडती है और भी बहुत सी आवश्यक बातें वहां सिखाई जाती हैं। दशहरे की छुट्टियो मे १५ दिन तक एक बड़ा सा कैम्प कही लगेगा। पिछले वर्ष इस

प्रांत का कैंप जोधपुर में लगा था जहां सभी कालेजों के एन सी सी कैडेट आए थे। प्रांतों के चुने हुए अच्छे कैडेटस का एक केन्द्रीय कैंप भी लगता है जैसा गत वर्ष हैदराबाद में हुआ था, वहां सारे देश के अच्छे अच्छे कैडेट्स एकत्र होते हैं। कैंप के बाद अन्तिम दिन प्रतिरक्षामंत्री ने उन्हें पदक व पुरस्कार भी बांटे थे। मुझे इन सब बातों में बड़ा उत्साह मालूम पड़ता है। इस बार मैं भी कैंप में जाऊंगा, इसलिए दशहरे की छुट्टियों में फिर जरूर जरूर आऊंगा।

इस एन. सी. सी. ट्रेनिंग का आगे चलकर जीवन में भी बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है। सेना में अफसरों की भर्ती करते समय एन सी. सी. वालों को प्राथमिकता मिलती है। यदि मुझे कहीं भगवान् ने अवसर दिया, तो बहुत जल्दी लेफ्टनेंट और कैप्टन बन कर देश की सेवा कर सकूंगा। घर की आर्थिक सहायता भी ठीक से हो जायगी और छोटे भाइयों की पढ़ाई और भविष्य का भी अच्छा प्रबन्ध हो जायगा। फिर वास्तव में एक सच्चा क्षत्रिय होने का गौरव भी मुझे प्राप्त हो सकेगा।

मुझे विश्वास है कि मेरे इस पत्र से आपकी गलतफहमी दूर हो जायगी कि मैं मिलेटरी में भर्ती नहीं हुआ हूं बल्कि कालेज एन. सी. सी. विभाग में सैनिक शिक्षा प्राप्त कर रहा हूं। पढ़ाई तो पूर्ववत् ठीक चल रही है, उसमें इससे कोई अन्तर नहीं पड़ सकता है।

पिताजी! आपको गर्व होना चाहिए कि आपका पुत्र अपनी वंश परम्परा के सच्चे आदर्शों का शान से निर्वाह कर रहा है। इतनी गलती मेरी अवश्य है कि आपको पहले इसके बारे में सूचना नहीं दे सका। लेकिन, सच पूछो तो मैं यह सब विस्तार से जानता भी नहीं था। मैं सोच ही रहा था कि अब आपको खबर कर दूं और दशहरे के केम्प वाली बात भी लिख दूं लेकिन आपका यह पत्र पहले ही आगया। अस्तु

अब मैं आशा करता हूं कि आप मुझे क्षमा करेंगे क्योंकि दशहरे में गांव आने में मैं असमर्थ हूं। दूसरा पत्र मैं कैम्प से लिखूंगा, जिसमें वहां का सारा विवरण आपके पास भेजूंगा।

कृपया माताजी से मेरा चरणस्पर्श कहें और उन्हें भी ये सारी बातें समझादें, ताकि वे भी शान्त हो जावें। मुन्नू, चुन्नू को प्यार।

आपका बेटा,
दलपतिसिंह
बी. ए. (फाइनल)

३. पत्र

मित्र की ओर से मित्र को,

विषय—

कालेज कवि सम्मेलन

गवर्नमेंट कालेज, डीडवाना।
१५–९–६२.

प्रिय मित्र चन्द्रधर जी !

सप्रेम नमस्ते

बहुत दिनों से आपका कोई समाचार नहीं मिला। लगता है कि आजकल पढ़ाई में बहुत व्यस्त हो। ऐसा भी क्या जान-लेवा परिश्रम, कि न अपनी याद रहे और न दूसरों की याद आवे। अभी तो सितम्बर है, दिसम्बर तक तो मौज कर ले मेरे दोस्त, फिर जनवरी में तो जानमारी है ही और फरवरी में फारवर्ड होकर, मार्च में वहां से मार्च कर देना। अप्रेल में तो बस अप+रेल दिखलाई पड़ना। अभी से क्या घोटमघोट लगा रखी है।

तुम्हारे कालेज में क्या कोई 'फंक्शन' नहीं होते, कैसा कालेज है 'आल टीचिंग, बट नो चीटिंग।' यहां तो ठाट हैं प्यारे। लड़के भी मस्त और प्रोफेसर भी मस्त। पिछले महीने तो लगभग हर 'सन्डे' को ही पिकनिक का प्रोग्राम रहा। कभी कहीं गए, कभी कहीं गए। खाया पिया, मौज उड़ाया। यहां जयन्तियां भी इस बार खूब मनाई गईं तुलसी जयन्ती, तिलक जयन्ती आदि। अभी कल हिन्दी दिवस मनाया गया था। बड़ा जोरदार प्रोग्राम था। रात को बहुत अच्छा कवि सम्मेलन जमा। दो चार शहर के कवि थे, कुछ प्रान्त के थे और दो कवि दिल्ली से भी आ गए। रात के २ बजे तक कविता पाठ चलता रहा। फिर प्रातः ४ बजे तक गोष्ठी चली। समय तो कुछ जान ही नहीं पड़ा। वैसे तुम्हारे जैसे नीरस आदमी को क्या लिखूं, किन्तु शायद तुम भी किसी तरह सरस बन जाओ। सच बात तो यह है कि कहीं मुझे ही अपच न हो जावे।

तो भाई सुन, 'हिन्दी दिवस' तो मैं भी पहले नहीं समझ पाया था,

फिर मालूम हुआ कि इसी दिन हिन्दी को राष्ट्रभाषा घोषित किया था और निश्चय किया गया था कि १५ वर्ष में १९६५ ई० तक हिन्दी पूरे देश में व्यापक हो जायगी। इसी उपलक्ष में प्रति वर्ष १४ सितम्बर को यह 'हिन्दी दिवस' मनाया जाता है। पहले तो शाम को ४ बजे कालेज में सभा हुई, जिसमें प्रिंसिपल साहब और बहुत से प्रोफेसरों ने हिन्दी के महत्व पर भाषण दिए और सरकार के आज परिवर्तित रुख पर क्षोभ प्रगट किया, फिर रात को ८ बजे से कवि सम्मेलन का कार्यक्रम था।

हम लोगों ने 'हाल' को खूब सजाया था। कुर्सियां, शामियाना और लाउड स्पीकर आदि का अच्छा प्रबन्ध किया गया था। ६ बजे की गाड़ी से जो बाहर के कवि आने वाले थे, उन्हें स्टेशन से सम्मान सहित लाकर होस्टल में टिका दिया था। वे सब चाय और भोजन में मस्त थे। एकाध मदिरा महारानी के भी भक्त थे, बड़ा दुख लग रहा था उन्हें देखकर, किन्तु उनकी फरमाइश बंद नहीं होती थी। ठीक ८ बजे हाल खचाखच भर गया। नगर के अधिकांश प्रतिष्ठित लोग आ चुके थे। विद्यार्थियों का तो कहना ही क्या, उन्हें सचमुच बहुत बड़ा उत्साह था। रंगमंच पर कोई भी कवि नहीं था उनके सभापति भी नहीं थे। कुछ लोग खाने पीने और शहर घूमने में व्यस्त थे और कुछ को 'मूड' नहीं आ रहा था। जनता परेशान थी और प्रिंसिपल साहब तो बिचारे पानी-पानी मांग रहे थे। वे भागदौड़ लगा रहे थे, कभी इसे डाटते, कभी उसे। तभी सामने से सभापतिजी दिखलाई पड़े। प्रिंसिपल साहब ने बड़े प्रेम (और भीतरी क्रोध) से उनका स्वागत किया और रंगमंच पर बिठाया, फिर देर के लिए जनता से स्वयं ही क्षमा माँगी।

उस दिन कालेज के कुछ उत्साही छात्र भी कविता बना लाए थे और सुनाना चाहते थे। इसलिए उनके भी नाम लिख लिए गए। सर्वप्रथम 'सरस्वती वन्दना' हुई। कुछ श्वेत-वस्त्रा छात्राएं, जो सरस्वती सी लग रही थी, गा रही थी 'सारदे ! शरदे !' एक वातावरण बन गया। तत्पश्चात् छात्र-कवियों ने अपनी तुकबन्दियां सुनाईं। समझे, उस रमेश ने तो कमाल ही कर दिया, जिसे तुम बुद्धू कहते थे। उसकी कविता पर तड़ातड़ तालियां बज रही थीं और 'वन्स मोर' पुनः पुनः के नारे लग रहे थे। फिर कवियों की पुकार हुई, कुछ लोग आ गए थे और कुछ लोग हाथी चाल से आ रहे थे।

सबसे पहले नगर की 'रमाजी' ने अपनी प्रसिद्ध कविता सुनाई "लाख-

लाख दीप जल रहे एक दीप से। उनकी खूब प्रशंसा हुइ। इसके बाद दिल्ली के एक कवि ने 'कवि सम्मेलन' शीर्षक पर ही कविता सुनाई। बीच बीच मे वे लडखडा रहे थे। कविता अच्छी थी, लेकिन वे पूरी नहीं सुना सके, शायद अधिक पी ली थी। इसके बाद प्रान्त के प्रसिद्ध कवि व्यासजी ने सुनाया 'मैं कालेज का प्रोफेसर हूं, मै तो आफिस का अफसर हूं'। कविता मे प्रोफेसरों का अच्छा खाका खींचा गया था। मैं देख रहा था प्रो० शर्मा कुछ बड़बडा भी रहे थे और कुछ लोग उन्हें उकसा रहे थे। इसके बाद एक नए कवि ने बड़ी जोशीली कविता सुनाई 'मैं सैनिक हूं, मै तुम्हे बुलाने आया हूं।' इस कविता की बार-बार बड़ी मांग हुई, खूब तालियां बजी। इसके बाद फिर प्रान्त के ही एक हास्यरसावतार कविराज आए और गरजने लगे—

"सब चीजों के भाव बढ गए,
दुनियां की हालत खस्ता है।
सभी मनोरंजन महगे हैं,
कवि सम्मेलन ही सस्ता है।

फिर उन्होंने जो जो व्यंग किया, खूब मजा आया। लोग उनका बार बार नाम लेकर सभापति से 'रिक्वेस्ट' कर रहे थे। इसके बाद दिल्ली के एक कवि 'पत्नीवाद' पर कविता सुनाने लगे। कविता अच्छी थी, खूब पसंद आई, लड़के आवाजें कस रहे थे, लडकियां शर्मा रही थी। फिर प्रान्त के शृंगारी कवि बलदेवजी आए, लम्बे लम्बे बाल, कुरता, ढीला पाजामा, जनानी आवाज।

कुछ खासकर बोले—'रात आई है कि कहीं जाने का नाम नही।
दोस्त बैठे हैं कि कही उठने का काम नहीं।।'

क्या गजल थी, मगर लड़कों ने जो छेड़ा, तो बिचारे बीच में ही झेंप कर बैठ गए। इसके बाद हास्य रस के एक और कवि 'ससुराल' शीर्षक कविता सुनाने आए। कविता मे कोई खास रस नहीं था। फिर तो ३,४ कवि ऐसे उखड़े कि लगता था सम्मेलन अब गया, अब गया लेकिन वाह! सभापतिजी ने क्या खूब संभाला। एक मीठी सी डांट पिलाकर फिर वे कहने लगे कि कविता यदि पसन्द न भी आए तो भी सबकी पूरी बात सुन लेना चाहिए। आपके इस व्यवहार से आपके नगर की ही बदनामी है और कवियों की ओर लक्ष्य करके वे फिर बोले कि उनको समय के अनुसार बढ़ना चाहिए और वैसी

डा कविता सुनाना चाहिए न कि सस्ती प्रसिद्धि के लिए सस्ता कविताए।
इसके बाद 'हिन्दी दिवस का महत्व बतलात हुए उन्होने हिंदी पर ही यह कविता सुनाई—

आज हिन्दी हंस रही है, भाग्य पर अपने।
विश्व भाषा कब बनेगी, देखती सपने॥

(१)

राष्ट्र भाषा राष्ट्र भर की हो चुकी घोषित।
हो चुका हिन्दी-सपूतों का अहं तोषित॥
एक युग बीता, जहां थे है वही फिर भी।
धाय स आकृष्ट हैं हम, मा पडो शोषित॥
आज हिन्दी तप रही है, ताप मे अपने।
आज हिन्दी हस रही है.........................॥

(२)

प्रान्त भाषाएं कोई हों, सब हमारी है।
क्योकि संस्कृत के कसे से सब संवारी है॥
और हिन्दी एक उनमे, है बहिन सब की।
स्वार्थियो ने फूट की माया प्रसारी है॥
आज हिन्दी जल रही है दाह मे अपने।
आज हिन्दी हंस रही है.........................॥

(३)

मध्य प्रान्त विहार, उत्तर प्रान्त से लेकर।
दिल्ली, राजस्थान औ पजाब कुछ बंटकर॥
क्षेत्र हिन्दी का बडा है, देखने भर को।
क्योकि उस गौरागना का, है नशा हम पर॥
आज हिन्दी हाय ! बेघर, भवन मे अपने।
आज हिन्दी हंस रही है......................॥

(४)

तो उठो साहित्यकारो ! जागरण-क्षण में।
फूंक दो इस राष्ट्र मे नव प्राण कण-कण मे॥

हिन्दी-सेवा राष्ट्र सेवा एक है दोनों ।
इसलिए आगे बढो अब प्राण—अपरण में ।।
आज हिन्दी मांगती अधिकार सब अपने ।
आज हिन्दी हम रही है . . ..।।

इसके बाद आचार्य महोदय का संक्षिप्त भाषण हुआ और सारा कार्य-क्रम समाप्त हो गया। फिर होस्टल मे उन सभी कवियो का चाय-नाश्ता और भोजन आदि हुआ। उसके साथ मे कविता-पाठ भी २ बजे रात तक चलता रहा। फिर ३ बजे की एक्सप्रेस से उन कवियों को सम्मान और दक्षिणा सहित बिदा कर दिया गया।

रात में जागने के कारण बहुत देर तक सोया, फिर कुछ ऐसा तुम्हारा प्रेम उमडा कि सोचा तुमको इस कवि सम्मेलन का सारा विवरण लिख दू ।

शेष कुशल है, उत्तर तो दोगे ही। उसका क्या हुआ, तुम्हारी शादी शादी के चक्कर का ?

—तुम्हारा प्रिय मित्र
गंगाधर भट्ट

हास्य निबन्ध

जिन निबधो के पढन से विशष मनारजन हो और जिनम कुछ तत्वो को लेकर मधुर व्यग किया गया हो, उन्हे हास्य निबन्ध कहते है। ऐसे निबन्ध अधिकतर निबन्धकार की शैली पर निर्भर करते है। इसके अतिरिक्त कुछ विषय भी ऐसे होते है जिनके नाम से ही हंसी छूटती है। अब यहा इसी प्रकार के दो निबन्ध दिए जा रहे है।

१. आप महान हैं

जी हां! मैं सच कहता हू कि आप महान है। इस पर आपको छोडकर कोई दूसरा शक भी तो नही कर सकता है कि आप महान हैं, क्योंकि आप वाकई महान हैं। आप कहेंगे कि यह क्या तमाशा! मार मार कर हकीम बनाए जा रहे हो। कहा मै मामूली सा ३॥ हाथ का आदमी और कहा 'महान' के गुण! कोई चन्दा वन्दा तो नही मागना चाहते हो, जो यो जबरदस्ती 'बटरिंग' किए जा रहे हो। मेरे खानदान मे आज तक न तो कोई 'महान' हुआ है और ऐसी ही रफ्तार रही तो पूरी-पूरी उम्मीद है कि आगे भी कोई महान नही होगा। यह बात दूसरी है कि शरीर जरा भारी भरकम सा दिखलाई पडता है हलवाइयो की तरह, कपड़े धोबियों से ज्यादा साफ रहते हैं और डाढ़ी मैं खुद 'शेव' कर लेता हूं, क्योंकि 'स्वयं शेवक' हूं इसी से आप जो चाहे समझे, वैसे मैं वाकई कोई महान वहान नही हूं।

लेकिन भाई साहब! बात यह नहीं है। बात दूसरी है कि आप इतने अ+मूल्य हैं जितनी कांग्रेस की प्रेसीडेण्टी या इतने बे+कार है जैसे साइकिल वाला या इतने बे+गम है, जैसे राजे महाराजे और इतने जबरनर है जैसे गवर्नर। इसीलिए आप महान हैं, आपकी पूंछ है जिसमे लोग घबड़ाते है कि दुबारा कही लंकाकाण्ड न हो जावे। असल्नियत यही है कि आप महान हैं, कुछ धोबी नाई की किरपा से नही, बल्कि इसलिए कि आप 'महा' नही हैं। अगर आप 'महा' होते तो यह मामला आपके दिमाग के यू० एन० ओ० मे पेश हो

गया होता और आप चोटी वाले नेता या अभिनेता के रूप में उछल कूद करते होते।

अभी समझ में नहीं आया तो खैरियत है आप खुशी मनावें कि आप जिन्दा है, वरना कहावत तो यह है कि समझदार की मौत। यह 'महा' का प्रताप ही ऐसा है। शायद आप ब्राह्मण है, अच्छा तो मुझे 'महा' लगा करके आपको 'महा ......' कह लेने दीजिए। अरे! अरे! आप तो श्रीमतीजी की तरह लाल-पीले हो रहे है। क्षमा कीजिए महाराज! (कहीं पंकज की तरह महाराज का अर्थ न निकालने लगिएगा नहीं तो बिना मेहनत के ही 'शिड्यूल-कास्ट' के सारे फायदे आपको मिल जाएंगे। वैसे बुरा तो नहीं है, गांधीजी तो जिन्दगी भर स्वप्न देखते रहे कि कोई हरिजन कन्या भारत के सिंहासन पर विराजमान हो। जरा सा 'सेक्स' बदल लेने के बाद तो फिर आप के अच्छे 'चान्स' हो सकते है, महाशय जी!)।

यह 'महा' की महिमा ही कुछ ऐसी है जिसके आगे लग गया, उसे लावारिस मिनिस्टरो की तरह लुढ़का देता है। अभी आप 'वर' बने हुए खुशी में गीत गा रहे हैं ....। 'हम आप अपनी मौत का सामान ले चले', बस 'महा' लगा नहीं कि आप 'महान' होकर श्रीमतियो के चप्पल-चर्चित चरणों में ही लिपटे हुए दिखलाई पड़ेगे और पायलो या पायजेबो की महारगड़ से एकदम लहूलुहान हो जायेंगे। 'सु' लगने से तो फिर भी अच्छा है। लोग कहते है कि दो 'नहीं' से एक 'हां' बनता है, मैं कहता हूं कि दो 'हां' से एक 'नहीं' भी बनता है। 'सु' भी अच्छा, 'वर' भी अच्छा मगर मिल गए तो 'महाबुरा'।

और देखिए अभी आप 'प्रसाद' झाड रहे हैं, बस 'महा' लगा नहीं कि एक झटका सा लगेगा और 'झटके' का मजा भी आ जायगा और एक ही मिनट में आप 'घासभक्षक' (वेजीटेरियन) के कलंक से भी मुक्त हो जायेंगे।

इसी 'महा' की कृपा से अपने प्यारे देश भारत में जब 'महा ... .' हो जाता है तो कलियुग में ही 'द्वापर' के नजारे हैं महा, महा'। कौरो-पडों की लडाई शुरू हो जाती है। कही दादा भीष्म 'शिखण्डी' से झेपते हैं, कही गुरू द्रोण अभिमन्यु की लाश पर खड़े अकड रहे हैं, कही दुःशासन का खून पीकर भीमसेनजी बत्तीसी चमका रहे हैं पुनर्जन्म के सिद्धान्त के अनुसार यह 'महा-भारत' आज भी चल रहा है। कल हिन्दू और मुसलमानों में था, अभी सुबेरे खून चूसक और खून चूसित में था। और भी देखो, कही कानग्रेस, सोशलिस्ट,

मनसिब और कोमनष्ट अपनी अपनी अक्षौहिणी लिए डटे हुए है। अपने राम तो यह जानते है कि जो कोइ जीतेगा उसे भी हिमालय मे गलना पड़ेगा, चाहे गलवा लडे चाहे 'चुपचाप' लड़े। बाद मे वही पिल्ला बचेगा, जिसे आजकल की नकली गौरांगियो ने पहले से ही खूब महत्व दे रखा है—

'कुल खाय के गाद, खिलावे बीबी पिल्ला।'

इस 'महा' का 'महातम' कहां तक कहूं ? अभी आप निद्रा का आनन्द ले रहे है, बस 'महा' लगते ही 'महानिद्रा' का 'महानन्द' मिल गया। भौतिक परपंच से छूटे, डाक्टरों के बिल से बचे, बाल बच्चों को बीमा की मोटी रकम मिल गयी और चलते फिरते लोगों को उपदेश भी प्राप्त हो गया कि राम नाम सत्य है। लेकिन एक बात है कि 'महानन्द' होते ही जहां मगध की सुन्दरियां आपका मद्यासव से स्वागत करेंगी, वहां जरा उस 'नाऊ के पूत' (चन्द्रगुप्त) से बचे रहना। वैसे मरना जीना तो लगा ही रहता है, वरना एल आई. सी. के दफ्तर में कल से ही 'इम्प्लायमेंट इक्सचेंज' खुल जावे।

सच तो यह है कि आजकल की दुनिया इन्हीं 'महा' के भक्तों मे बट चुकी है। कोई महाकालेश्वर महादेव का चेला बन कर दूसरों पर राख मलता है, कोई महालक्ष्मी का महाव्रत बन कर 'महायान' के 'पंच मकार' अपने लिए सुरक्षित करना चाहता है, कोई मा (हिन्दी) की हत्या करके महान परशुराम बनना चाहता है और कोई महापंचमांगी जिस डाल पर बैठा है, उसी को काट कर महान कालिदास बनना चाहता है।

वास्तव में, महान बनने के बहुत से रास्ते हैं, बड़े बड़े कालेज है (शायद युनीवर्सिटी नही है) आप महान नेता बन सकते हैं, बशर्ते आप घर के रईस या रईस हों। आप महा व्यापारी बन सकते हैं, ब्लैक से नहीं, खुले आम, असल दिखा कर और नकल बेड़ कर। आप महा विद्वान् बन सकते हैं, नाम के आगे पीछे डिगरियो की फौज लगाकर, भले ही आपको अंगूठा लगाना न आवे। आप महा डाक्टर बन सकते हैं, चाहे लिटरेचर में कीचड़ या चीर-फाड़ में फटीचड़ हों। आप महाजन बन सकते हैं सच्चरित्र से नहीं, रुपयों के थोड़े हेर-फेर से। फिर दुनिया आपके चप्पलों के निशानों पर चलेगी क्योंकि 'महाजनो येन गतः स पन्था।'

अब तो आप वाकई महान हैं, समझे।

२. एकाक्ष

'अन्धों में काने राजा' यह कहावत कब बनी और कब से चल रही है, इसका पता नहीं चलता। वेदों के बारे में भी कोई पक्की राय नहीं है। लोग ईश्वर को वेद कर्ता इसीलिए मानते है कि ईश्वर की भी कोई जीवनी नहीं मिलती। वेद भी पुराना और ईश्वर भी पुराना, इसलिए जरूर उनमें बाप-बेटे का सम्बन्ध होगा। उपर्युक्त कहावत भी उतनी ही पुरानी है, इसलिए मानना पड़ता है वह भी ईश्वर के ही जन्मकाल मे बनी होगी। ईश्वर को हम बापों का बाप और राजों का राजा मानते है, और यह भी कहते हैं कि वह ईश्वर सबको एक दृष्टि से देखता है, तो लीजिए प्रमाण मिल गया कि यह कहावत भी ईश्वर के लिए ही बनी है।

हो सकता है कि आप मेरी 'थ्योरी' से सहमत न हो, जैसे 'डार्विन' की थ्योरी से या फलाहार के निमन्त्रण मे 'मा फलेषु कदाचन' की थ्योरी से या पराया माल हड़पते समय 'पर द्रव्येषु लोष्ठवत्' की 'थ्योरी' से। हो सकता है कि आपको मेरी अक्ल-मन्दता पर शक हो रहा हो जैसे चन्दा मांगने वाले की नीयत पर, या 'फ्री पालिश' का बोर्ड लगा कर जूते वाले की तबियत पर या 'नहीं नहीं' का तार भेज कर भी एक दर्जन 'इल्ल किल्ल' के साथ पधारने वाले मेहमान की अहमियत पर। मगर बात सच्ची है कि ईश्वर एकाक्ष है। सभी भक्त गवाह हैं और भक्ति ने गंगाजल लिए खड़ी हैं। अगर उसके दो आखें होतीं, तो सबको दो नजरों से देखता। क्यों साहब अब तो आप कायल हो गए ना!

अब देवों के देव महादेव को देखिए, एक आख है माथे के बीचों बीच, जिसके खुलते ही 'सेक्सनाथ' भस्म हो गए थे। राक्षसों के गुरुदेव शुक्राचार्य को देखिए। सारे खान-दान की एक लालटेन गायब। दो-दो गड्ढे कौड़ियो जैसे, मगर आख एक पकौड़ी जैसी।

दुनिया में देखिए। कौवा सबसे पुराना पक्षी है, बेचारा 'एकाक्ष' है। कहावत है कि 'पक्षियों मे कौवा, आदमियों मे नौवा'। इससे प्रमाणित होता है कि नाई या नाऊ सबसे पहला आदमी होगा, पहले कोई जाति भी न थी। ये तो बाद मे बामन ठाकुर बने हैं। किसी नाई से आप पूछिए वह हमेशा आख दबाकर इसका समर्थन करेगा। इस आख दबाने से पता चलता है कि पहले

आदमी को एक ही आख होती थी, आखिर विकास होते-होते, दो हाथ, दो पैर, दो कान आदि की तरह दो आखे भी हो गई। 'दो खोपडी' के लिए भगवान से लिखा-पढी चल रही है। सुनते हैं कहीं-कहीं डबल खोपडी के आदमी पैदा भी होने लगे हैं। 'दो नाक' के लिए भी एक 'डेपुटेशन' ब्रह्माजी के पास गया है कि आजकल नाक जरा जल्दी कट जाती है, इसलिए 'डबल' होनी चाहिए, जिससे नकटे लोग भी इज्जत से रह सकें। फैसले का इन्तजार कीजिए।

एक और कहावत है कि "क्वचित् काणो भवेत् साधु." अर्थात् कोई बिरला ही काना आपको साधु या भिखमगा मिलेगा वरना सब तरमाल मिलेंगे, पाचो अंगुली घी मे और सर कढाई में।

अरे भाई कानो का राज्य तो अनादि काल से चला आ रहा है। देखिए घोर कलियुग मे भी पंजाब केसरी के सामने बड़े बड़े लाट लपटन 'पेंडलम' की तरह कांपते थे। मुलाकात के बाद किसी से उनका हुलिया पूंछा गया तो सिट्टी पिट्टी गुम। देखा आपने एक आख का तेज।

अब अपने हिन्दी के साहित्यकारों को ही लीजिए। पहला महाकवि जायसी काना था (माफ कीजिए उससे पहले के तुलहों तुक्कड़ो को मैं कवि नही मानता) उसने एक आख से 'पद्मावत' जैसा सुन्दर महाकाव्य लिख मारा। शाही दरबार में उसे देख कर लोग हसे तो वह बोला 'मोहि का हंसेसि कि कोहरहि' (मुझे हसते हो कि बनाने वाले कुम्हार को)। जैसा बनाने वाला होता है, वैसा ही बनाता है। ईश्वर की एकाक्षता का यह प्रत्यक्षदर्शी प्रमाण है।

अब उसके बाद के महाकवि सूरदास दोनों आखो से काने थे, वरना इतना बड़ा 'सूर सागर' कैसे लिख पाते। आज तो दो आख वाले 'सागर' तो क्या 'नाली नाला' भी नही बना पाते हैं। इसके बाद तुलसीदास को लीजिए। कहा जाता है कि उनकी आखें उनकी वाइफ रत्नावली ने खोल दी। इसके पहले वे बन्द जरूर होगी। अब एक बन्द थी या दोनों, इस पर कोई भी हिन्दी वाला रिसर्च कर सकता है।

फिर एक बात और है कि रामायण के असली लेखक कौन है तुलसीदास या कागभुसुण्डि। दोनो मे जरूर कोई न कोई पक्षसाम्य या अक्षि-साम्य होगा ही। कवियो की तो यह पुरानी परम्परा है, आज भी दो आख वाले कवि और शायर लोग कविता सुनाते समय आंख बन्द कर या दबा कर या सिकोड़ कर उसी पवित्र नियम को याद दिलाते है।

आज के राजनीतिज्ञो को देखिए। रंग बिरंगा मोटा, काला सा चश्मा लगाते हैं। आप उनकी असलियत देख ही नहीं सकते है। मेरा यह मतलब नहीं कि सभी ऐसे चश्मे वाले काने होते हैं, लेकिन बेवक्त चश्मा लगाने वालों पर शक हो ही जाता है। वे लोग 'पानी पीजे छान के' के स्थान पर 'दर्शन कीजे छान के' के काबिल है, या फिर अपनी किसी खास कमजोरी की वजह से आपसे आंखें चुराते है।

अब तो कानो के भी अनेक गोत्र बन गए हैं। एंचे, ढेरे, उकट्ठ, चकट्ठ, दायग्व, बायख आदि। आप इनके जगह जगह दर्शन कर सकते हैं, देश मे, विदेश मे, घर में, नगर में, गलियो में, महफिलों मे। सभी जगह इनका रुवाब है, दाब है, शोर है, जोर है, ऐंठ है, पैठ है और मान है, शान है।

लोग इनकी व्याजस्तुति करते हैं, अप्रस्तुत प्रशसा करते हैं और दर्शन होने पर—खास कर सुबह सुबह—या शुभ कार्य के अवसर पर—कैसे घबड़ा कर, कतरा कर बच निकलते हैं कि आंख मिलाने का साहस ही नही होता, और खुदा न खास्ता, अगर आख मिल गई, तो हनुमान चालीसा या विष्णु सहस्रनाम, पता नही क्या क्या पाठ करते हैं, मन ही मन बड़बडाते, कुड़बुड़ाते और घडबडाते हुए चले जाते है।

ऐसे महापुरुष के दर्शन होने पर—खुशी से या ना खुशी से—प्रणाम करके कहना ही पड़ता है 'तुम धन्य हो।'

अन्य विषयों पर विभिन्न शैली के निबन्ध

१. परीक्षा

परीक्षा का नाम सुनते ही बड़े बड़े दहल जाते है। यों बातें बनाने के लिए कोई भले ही कहदे कि परीक्षा में क्या रखा है, लेकिन जिस पर बीतती है, वही जानता है कि परीक्षा क्या बला है।

परीक्षा का शाब्दिक अर्थ है सभी प्रकार से देखना, (परि=सभी प्रकार से और ईक्षा=देखना)। इसी को 'ठोंक बजा कर देखना या परखना' भी कहते हैं। अब सोचने की बात यह है कि सभी प्रकार से देखने या परखने पर जो खरा या बेदाग निकले उसे ही परीक्षा में उत्तीर्ण समझा जाता है और कही यदि जरा सी भी चूक हो गई तो बस डिब्बा गोल है। आज के जमाने मे एक गनीमत है कि खरेपन और खोटेपन का औसत निकालकर बहुत सी श्रेणियां

बना दी गई हैं। जो एक दम खरा हो वह प्रथम श्रेणी में, जो न बहुत खरा हो, न बहुत खोटा हो वह द्वितीय श्रेणी मे और जो न खरा हो और न खोटा हो वह तृतीय श्रेणी में वर्गीकृत कर दिया जाता है। जो खोटे है, वे ही अनुत्तीर्ण माने जाते है अतः उनकी चर्चा व्यर्थ है।

वास्तव मे जो प्रथम श्रेणी का है, वही खरा है। शेष में तो खोटापन है ही, कही कुछ कम और कही कुछ अधिक। लेकिन किया क्या जाय, आज एक दम खरा तो मिलता ही नही इसलिए कुछ खोटे पर भी सन्तोष कर लिया जाता है। लेकिन खरा खरा है और खोटा खोटा। और यह सारा उलट फेर 'आधे' अंक से हो जाता है। एक सौ में तेतीस अंक तो उत्तीर्ण होने के लिए आने ही चाहिए। यदि ३२ है तो अनुत्तीर्ण और यदि ३२।। है तो नियमानुसार ३३ तो हो ही जायेंगे और आप उत्तीर्ण समझे जायेंगे। एक सौ में ५६ है तो द्वितीय श्रेणी मे और यदि ५६।। या ६० हैं तो आप प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण माने जावेंगे। देखी आपने आधे अंक की करामात।

अब बताइये, आधे अंक तक तौलने की क्या कोई पक्की तराजू है? लेकिन नियम तो नियम है। आखिर कही तो सीमा बाधनी पडेगी, अन्यथा काम कैसे चलेगा। लेकिन वाह! किसी का काम बना और किसी का काम तमाम हो गया। इसी का नाम परीक्षा है।

इसी के साथ एक और मजा है कि २, ३ साल पढे, खूब घोटमघोट किए और बस ३ घंटे मे ही परीक्षा हो गई। जो रट्टूखोर थे वे तो बाजी मार ले गए और जो बड़े अक्लमन्द बनते थे, वे प्लेटफार्म पर खड़े हुए छूटती हुई ट्रेन को देख रहे हैं। आये थे हरि भजन को ओटन लगे कपास। सोचते थे यह हाथ मारेंगे वह हाथ मारेंगे, मगर वाह री तकदीर। इसी को अंग्रेजी मे ओठ-प्याले का अन्तर कहते है। खैर अब पछताए होत का, जब चिड़ियां चुग गई खेत। अब तो फिर साल भर जोतो बोओ।

अरे ये ३ घटे तो बहुत होते हैं, अन्तर्व्यूह (इन्टरव्यू) को देखिए, बस ५ मिनट मे ही धराशायी। क्या क्या आशाएं लेकर नौकरी के 'आशिक' बने थे मगर यहा तो 'दो गज जमी भी मिल न सकी कूचे यार मे।' वह तो वास्तव में ऐसा अन्तर्व्यूह है जिसका पाला अभिमन्यु को भी न पड़ा होगा और न गुरु द्रोण ही जानते होंगे। लेकिन आज के गुरु लोग, कमाल है। 'इन्टरव्यू' मे ऐसा घेर कर बैठते हैं और विचारे 'आशावर' या उम्मीदवार पर ऐसे अचूक

प्रश्न-बाण चलाते हैं कि सारी मोर थैंक्यू कहते कहते उसका गला सूख जाता है। और 'लिना उने जो तय करि राखा, को करि तरक बढावइ साखा।' इन्टरव्यू तो एक बन्दर तमाशा है। मदारी का डमरू बज रहा है। ठीक भी है, बाहरी गामा से तो अपना मुख ही भला, कभी तो 'नमक' की याद करेगा। जिन्दगी भर वह एहसान मानेगा और जिम जिसने, सिफारिश की उनकी खोपडियो पर भी एक गट्ठर लदा रहेगा। दूसरे उम्मीदवारो को क्या, वे तो भिखमगे हैं, यहां दाना नही मिला तो दूसरा दरवाजा खटखटायेंगे।

और अब तो इन्टरव्यू भी नही होते। योग्यता—कैसी भी हो—के अनुसार उलटबासी बजती है कि आप आ जाइये, इतना देंगे, यह सेवा करेंगे, वह सिंहासन देंगे, मगर वाह रे शेर! फिर भी पिंजडे में नही फंसता। सच है इतनी तपस्या से अप्सरा लोक मिल रहा है और तपस्या करेंगे तो विष्णुलोक तो मिलेगा ही।

अब बोलिए, ऐसे जमाने में क्या महत्व रहा आपकी परीक्षाओ और इन्टरव्यू के लिए सजोई हुई बडी बडी आशाओ का। आप खुशी से गा सकते हैं 'तेरी दुनिया मे मन लगता नही..........'। लेकिन यह बात नही है कि सभी जगह 'साला-भतीजा वाद' चलता है। आखिर कलियुग मे कही तो एक पैर पर 'धरम' टिका है, नही तो यह दुनियां रसातल मे चली जाती, फिर यह निबन्ध कौन लिखता और कौन सुनता।

मैं तो कहता हूं कि आप कहां कहां भागेंगे, चारो तरफ परीक्षा है। यह जीवन ही एक परीक्षा है। यहां वही टिकता है जो सर्वशक्तिमान् होता है। जिसकी लाठी उसकी भैंस, वरना गरीब की स्त्री, सब की भाभी कहलाती है। अपने मुहल्ले में तो कुत्ता भी भौंकता है, मगर जरा बाहर कदम रखिए, सब ऐसे दिखलाई पडेंगे कि हडप जाने को तैयार बैठे हैं। कोई प्यार से कोई मार से, कोई बात से कोई लात से और कोई दावत से कोई अदावत से मानता है। नही तो एक दिन क्या, एक मिनट भी टिकना मुश्किल है। पडोसी हर वक्त परखते है। आपके भोले स्वभाव का जा-बेजा फायदा उठाते हैं। जिन्दगी भर उन पर एहसान करिए, लेकिन एक घडी 'नही' कर दिया कि बस आप उनकी परीक्षा में फेल हो गये हैं। इसी को कहते हैं कि 'खिलाए पिलाए का नाम नही, दे मारे का नाम।'

आप कोई नौकरी करते हैं, वहां भी हर समय अफसर लोग आपकी

परीक्षा लेते रहते हैं जहां 'स्वारथ' नहीं फसा वहीं आपको निकम्मे होने का प्रमाण-पत्र मिल गया आप व्यापार करते हैं तो थोक वाले और ग्राहक लोग दोनों आपकी बराबर परीक्षा लेते है, जहां जरा बिगड़ी कि 'जै रामजी की।'

कदम कदम पर मुश्किल है। लोग तो कह गए है कि जैसे सोने की तरह से परीक्षा होती है, कसने, खींचने, कूटने और तपाने से, उसी प्रकार आदमी की भी चतुर्धापरीक्षा की जाती है शील, त्याग, नीति और कर्म से। कहीं भी जरा दोष हुआ कि बना बनाया यश का महल ताश के पत्तों की तरह ढेर हो जाता है।

यह बात नही कि ये सारी मुसीबतें 'नर' के लिए ही हो। बाबा तुलसीदास कह गए है कि नारी की परीक्षा केवल आपत्तिकाल मे करनी चाहिए :—

'आपत काल परखिए चारी।
धीरज धरम मित्र अरु नारी॥'

२. छुआछूत

कहावत है कि 'आठ बामन, नौ चूल्हे'। एक चूल्हा फालतू जिसमे आग बने और सभी लोग उससे आग लेकर अपने चूल्हे जलावे, क्योंकि वे एक दूसरे की आग भी नही छू सकते। हद हो गई, बढ़ते बढ़ते बात कहां तक पहुँच गई। कल मालूम पड़ा कि पं० तुन्दिलाप्रसादजी का 'सरगबास' हो गया निमोनिया से, किसी ने कहा वे शहीद हो गए उन्हें किसी हरिजन अफसर से हाथ मिलाना पड़ा और उन्होंने फिर घोर जाड़े पाले मे स्नान किया, क्या करते 'धर्मभीरू' थे। घर वालों की 'सांप छछूंदर, की गति थी, न भला कहते थे न बुरा। लेकिन उनके मर जाने का अफसोस सभी को है, हमको भी, आपको भी।

हमारे यहा तो पूरी एक जात की जात अछूत है, एक ही नहीं, जात जात में जात। अरे भाई! हिन्दुओं का क्या कहना है—

'ज्यों केले के पात में, पात पात में पात।
ज्यों गदहे की लात में, लात लात में लात॥
ज्यो बुड्ढन की बात में, बात बात में बात।
त्यो हिन्दुन की जात मे, जात जात मे जात॥'

यही नहीं कि केवल छूत लोग ही अछूतो से कतराते हो, बहुत से अछूत भी आपस मे एक दूसरे को छूना पसंद नही करते है।

किसी जमाने मे ४ वर्ण थे, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र। यह तय है कि सब लोग सब काम नहीं कर सकते है, इसलिए एक ही समुदाय मे कुछ लोगो को काम बांट दिए गए थे—ब्राह्मणो को पढना, पढ़ाना, क्षत्रियो को रक्षा करना, वैश्यो को खेती और व्यापार करना तथा शूद्रो को शेष सारे काम करना। आगे चलकर ये काम वंश-परम्परा के आधार पर ही चलने लगे। फिर तो जातिया बन गई, वर्ग बट गए और उस विष का बीजारोपण हुआ जो आज इतने विशाल परिमाण मे छाया हुआ है।

प्राचीन काल मे शायद उतनी घृणा या विषमता नही पनपी थी, जितनी मध्य काल में हुई। आज भी गावो में उसका उग्र रूप देखा जा सकता है। दक्षिण भारत मे तो लगता है कि वह अब भी उसी मौलिक रूप मे है। वहां तो स्पष्टतः दो वर्ग है। हमारी इस दुर्बलता का बहुतो ने फायदा उठाया। मुट्ठी भर मुसलमान आए थे और आज एक पाकिस्तान बन जाने पर भी दूसरे की गुपचुप तैयारी कर रहे है। ईसाई और एंग्लो इंडियन तो इसी मिट्टी की उपज है। यह नही कि यह सब धर्म परिवर्तन बलात् हुआ हो या केवल अछूतों के ही माथे सेहरा बंधा हो। बहुत से 'पंच मकार' के प्रेमी भी थे और कुछ उच्च (?) आदर्श वाले भी थे। अपनी बरबादी होनी थी, सो हुई।

अब तो कुछ सुधारको की कृपा से भेदभाव बहुत कम हो गया है। कुछ जमाने की रफ्तार भी ऐसी ही थी। अंग्रेजी शिक्षा ने भी बड़ी सहायता पहुँचाई। होटलों का एहसान तो कभी भुलाया नही जा सकता। सबसे बड़ा काम किया गाधीजी ने एक दम 'प्रैक्टिकल काम'। उन्होने 'नाम' ही बदल दिया। अछूत से 'हरिजन' और उन्ही के बीच में रहना शुरू किया। उनके बहुत से साथी और सेवक भी 'शरमाई सौदा' उन्ही के साथ रहने को मजबूर हो गए थे और ऐसा लग रहा था कि अब हरिजनो का सचमुच उद्धार हो जायगा। गांधीजी का बस चलता तो किसी हरिजन कन्या को 'प्रेसीडेंट' भी बना जाते, लेकिन तब शायद कोई योग्य न थी और अब वह 'प्रेसीडेंटी' पसन्द भी न करे।

कहते हैं हमारी सरकार वाकई इन्सानों की सरकार है। इसीलिए वह

बारबार गलती करती है कि कहीं देवता बन जाने का खतरा सिर पर न आ जाय। उसने भाषावार राज्य बनाए और अब शायद बोलीवार जिले बनाने पड़ेंगे। उसने हिन्दी—राम को १५ वर्ष का बनवास दिया और अब लगता है कि 'अयोध्या' दूर है। इसी तरह उसने अछूतो की लिस्ट बनाई 'शिड्यूल्ड कास्ट' और उन्हें सुविधाएं दी कि वे पिछड़े न बने रहें लेकिन अब वे लगातार सुविधा पाने के लालच मे पिछड़े बने रहना ही पसन्द करते है।

मेरा एक दोस्त ४ सालों से बी० ए० मे फेल हो रहा है। वह पास ही नही होना चाहता क्योंकि उसकी 'स्कालरशिप' छिन जायगी। और भी सुनिए, कुछ छात्र 'हरिजन बन कर 'स्कालरशिप' लेने के अपराध मे अभी अभी 'रेस्टी' किए जा चुके है। इस 'स्कालरशिप' के लिए कोई योग्यता की जरूरत नही, बस भगवान् मे प्रार्थना कीजिए कि आपके मा बाप 'सर्टीफाइड' हरिजन हो। 'गीता' में जहां यह कहा गया है कि 'योगभ्रष्ट' लोग रईसो के घर मे पैदा होते है, वहां, खेद है कि हरिजनो के घर मे पैदा होने के लिए किसी 'भ्रष्टता' का उल्लेख नहीं किया गया है।

इस सारे तमाशे का नतीजा यह है कि अब हरिजन जैसे हैं, वैसे ही रहना चाहते है। बाबा अम्बेदकर ने चाहा था कि बौद्ध धर्म मे कोई छुआछूत नही है और हिन्दुत्व भी रहता है, इसीलिए सब बौद्ध बन जावे, तो बहुत अच्छा। खुद बने और बहुतो को बनाया, लेकिन जब 'शिड्यूल कास्ट' वाली सुविधाएं छिनने लगी तो बहुत से लोग 'पुनमूर्बको मंत्र' का पाठ करने लगे।

असली बात यह है कि जड़ का इलाज नहीं किया जाता है। ऊपर ऊपर से पत्तो पर पच्चीकारी की जा रही है। किसी बात को भुलाने के लिए यह आवश्यक है कि उसका ध्यान ही न किया जावे। लेकिन यदि आप रोज रोज प्रतिज्ञा करेंगे कि मैं इस बात को भूल जाना चाहता हूं तो आप मरने के बाद भी उसे भूल न सकेंगे।

बच्चे को अनाथालय मे रख कर आप चाहें कि उसमे स्वावलम्बन हो, तो धोखा है। वेश्याओं को एक आश्रम मे रख कर और उद्योग की शिक्षा देकर, उन्हें आप कर्मठ बनाना चाहें तो बेवकूफी है। हरिजनो को छात्रवृत्ति देकर उन्हें आप सिर पर बिठा लें और चाहें कि उनके संस्कार मिट जाय, यह मोह है। यह सही रास्ता नहीं है। यह तो भेदभाव वाली वही पुरानी बात है, आपने केवल दिखावे की पालिश कर दी है। यदि आप सचमुच यह चाहते हैं

कि छुआछूत न रहे तो उसकी बात भी न सोचिए उधर ध्यान भी न दीजिए और उसको कोई लिफ्ट भी न दीजिए।

तीन वर्ष से मेरे पड़ौस में एक 'मोहनलालजी' रहते हैं। सभ्य हैं, सुशील हैं, घर आते हैं, चाय पीते हैं, एक तरह से घर के सदस्य बन गए हैं। 'संघ वाले' सवेरे सवेरे जब उन्हें पुकारते हैं, तब मैं भी पढ़ने बैठ जाता हूं इतना मुझे भी उनसे फायदा है। कल कुछ प्रमाण पत्रों की प्रतिलिपियां प्रमाणित कराने आए थे, जान पड़ा कि आप 'शिड्यूल्ड कास्ट' हैं। कुसंस्कारवश माथा ठनका, थोड़ी देर में पूर्ववत्—लेकिन अगर श्रीमतीजी जान जाएं तो....। बच्चों पर तो कोई असर नहीं है, लेकिन उनकी शिकायत है कि कुछ अछूत लड़के, उन्हें नहीं छूते।

इन सब बातों में मेरे कहने का अभिप्राय यही है कि यदि सभी कामों में जाति का नाम उड़ा दिया जाय, जातिवाची पुछल्ले शर्मा, वर्मा आदि भी खतम कर दिए जाएं और किसी को जाति के आधार पर कोई सुविधा न दी जाय, तो छुआछूत एकदम मिट सकती है। यह काम कानून से उतना नहीं होगा, जितना प्रेम और समझदारी से। कानून तो आत्म हत्या के लिए भी बना है, लेकिन क्या होता है।

'हरिजन' बनाने में गांधीजी का शायद यही पवित्र उद्देश्य था कि सभी लोग हरि या भगवान के जन (भक्त) हैं और हो जावें फिर तो जाति पांति का कोई झगड़ा नहीं रहेगा, लेकिन स्वार्थियों ने 'हरिजन' को अछूतों का 'पर्याय' बना दिया। लेकिन, अब भी समय है कि हम चेतें, वरना यह 'जन रोग' हमारे अस्तित्व को ही ले डूबेगा।

३. देखा जायगा

देखा जायगा, अभी क्या जल्दी है। वह पुरानी दकियानूसी बात अब नहीं है—

'काल करै सो आज कर, आज करै सो अब्ब।
पल में परलै होयगी, बहुरि करोगे कब्ब॥'

लेकिन 'परलै' न कल हुई न आज। केवल डराने, धमकाने वाली बात थी पुरखों की। अब तो नया सिद्धान्त चल रहा है—

आज करै सो काल कर, काल करै सो परसों।
जल्दी जल्दी क्यों करें, अभी तो जीना बरसों॥

हा साहब ! बरसो जीना है, कोई एक दिन का तमाशा तो है नही। फिर भी कैसे मूर्ख लोग हैं जो कहते हैं सामान सौ बरस का कल की खबर नही।' अरे खबर के लिए तो, आज कितने अखबार बिक रहे है, रेडियो हैं, और क्या भला सा नाम—टेलीविजन है, आपकी जहां श्रद्धा हो और फिर यह भी तो कहा गया है—

'सबसे भले वे मूढ़, जिन्हें न व्यापे जगत गति।'

इसलिए दुनियां भर की खबर से क्या ? काजी क्यो दुबले शहर की फिराक़ मे। अरे देखा जायगा, जो होगा सो निपट लेंगे, अभी से माथापच्ची करके अपना 'वजन' क्यो कम करें। और देखिए जो माथापच्ची करते हैं, वे क्या सुखी हं, गंजे हो जाते हैं जरा से दिमाग पर दुनिया भर का गट्ठर लादे 'आ बैल मुझे मार' का निमन्त्रण देते फिरते हैं।

मैं कहता हू, देखा जायगा। अभी कोई ज्यादा नही बिगड़ा है कि बार-बार परेशान हुआ जाय। वह भी क्या मर्द, जो जरा सी बात पर बहक जाय।

'गिरते हैं शह सवार ही मैदाने जंग मे।'
वे तिफ्ल क्या गिरें, जो घुटनो के बल चलें॥'

और फिर कुछ साहब यह भी फरमाते है—

'लोग कहते है बदलता है जमाना अक्सर।
मर्द वो हैं, जो जमाने को बदल देते हैं॥

इसलिए क्या जल्दी पड़ी है, देखा जायगा। जब मर्दानगी दिखलाने की जरूरत होगी, तब दिखा देंगे, अभी से क्यों 'बादर' करें।

यह जरूर है कि 'देखा जायगा' वाली आदत से कुछ लोग नुकसान उठा जाते हैं, लेकिन वे नौसिखिए होगे। कछुवा से खरगोश हार गया, तो क्या, इसलिए नही कि वह 'देखा जायगा' करता रहा, बल्कि इसलिए कि उसने मर्द होकर एक नाचीज से मुकाबिला करना ठीक नही समझा। पता नहीं क्यो कुछ लोग 'देखा जायगा' से चिढ़ते हैं, इसे पूर्व सस्कार ही कह सकते हैं। कौवे उल्लू मे बैर है, बिल्ली चूहे मे बैर है, हिन्दू सभा और मुस्लिम लीग मे बैर है, शिक्षक और छात्र में बैर है, बाप और बेटे मे बैर है तो इसमे किसी का क्या दोष। देखा जायगा, इतना ज्यादा सोचना भी अच्छा नही है।

'देखा जायगा' के भी दो पक्ष हैं एक हमे जहा आलसी (All see नहीं) बनाता है वहां दूसरा पक्ष कर्मठ भी बनाता है। और आलस से हमेशा

परेशानी ही होती हो ऐसी भी कोई बात नहीं सबेर सबेरे अलार्म घड़ी आपको जगा रही है, लेकिन आप देखा जायगा का महामन्त्र जप रहे हैं, तो कितना आराम मिलता है, भले ही गाड़ी छूट जाय, लेकिन वह मधुर 'सोनानन्द' सर्वत्र दुर्लभ है। इसी प्रकार आप पढ़ाई के मामले में भी साल भर 'देखा जायगा' करते रहे और परीक्षा के दिनों में मान लीजिए फेल भी हो गए, तो क्या, घड़ी दो घड़ी का सोच है, फिर तो सालभर का आराम है, वही पुराना कोर्स, वही पुरानी किताबे और वही पुराना वातावरण। इसी तरह अगर जरा सी बीमारी मे परेशान न होकर आप 'देखा जायगा' की शरण मे चले गए तो मौज से बिस्तर पर आराम करिए, दस आदमी आपकी सेवा मे हैं और जो चाहे, नखरे कीजिए।

जाने दीजिए, यदि यह पक्ष आपको अच्छा नही लग रहा है तो 'देखा जायगा'। उसका दूसरा पक्ष भी है 'बिना सोचे बिचारे कोई काम कर डालना।' प्राय: यही होता है कि कोई आदमी जब बहुत सोचने लगता है, तब कोई काम नही कर पाता है। ऐसे लोगों को 'नीच' कहा जाता है जो किसी विघ्न-भय से कोई काम नहीं कर पाते हैं, लेकिन जो उत्तम पुरुष होते है, वे विघ्नों की चिन्ता नही करते हैं और किसी कार्य को एक बार आरम्भ करके फिर उसे सफलतापूर्वक समाप्त ही कर डालते है संस्कृत मे एक ऐसी उक्ति भी है, जैसे

'प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचै:,
प्रारभ्य विघ्नविहता विरमन्ति मध्या:।
विघ्नै: पुन: पुनरपि प्रति हन्यमाना:,
प्रारभ्य चोत्तमजना न परित्यजन्ति ॥'

इसीलिए मैं कहता हूं, देखा जायगा, क्या चिन्ता है, जो करना है सो कर डालो, नही तो फिर हाथ मल के रह जाओगे। देखा जायगा, जो भी परिणाम होगा। प्रत्येक परिस्थिति में देखा जायगा कि सफलता कैसे दूर रह पाती है। हां, यह बात दूसरी है कि आप घबड़ा गए, तो रह गए। क्योंकि

'जिसने लगाई ऐंड, वह खन्दक के पार था।
जो हिचकिचाया कि रह गया, वह रह गया इधर॥'

इसलिए, आगे बढ़िए, देखा जायगा, जो कुछ होगा।

तो 'देखा जायगा' की इस दुधारी तलवार को संभाल कर चलाइए। इसका एक सिरा जहा दुश्मन की तरफ है, वहां दूसरा सिरा आपकी गर्दन भी

देख रहा है। यदि आप 'देखा जायगा' कह कर आगे बढ़े, तो दुश्मन धराशायी, और यदि आप पीछे हटे तो ईश्वर भला करे, वरना खैर नहीं है।

आज हमें 'देखा जायगा' कि इस 'पिछवा नीति' के कुपरिणाम देख भी रहे हैं। सोचते थे कि पाकिस्तान जब बनेगा, तब देखा जायगा, और आज वह हमे आंखें दिखा कर देख रहा है। सोचते थे १५ वर्ष तक अंग्रेजी चलने दो, देखा जायगा, लेकिन आज तो नौकरानी रानी बनी जा रही है। सोचते थे एकता के नाम पर सबकी सहते चलो देखा जायगा, लेकिन आज 'राष्ट्रीय एकीकरण समिति' की नौबत आ पहुँची है। सोचते थे, चीन ने कुछ ऊसर-मूसर जमीन ले ली तो क्या, देखा जायगा, मगर आज लद्दाख और 'नेफा' के लोहे के चने चबाने पड़ रहे हे। सोचते थे, काश्मीर का मामला 'यू० एन० ओ०' मे चल रहा है, देखा जायगा, दुरंगी नीति चलने दो, लेकिन 'शेरे काश्मीर' को बन्द करना पड़ा और अब भी चैन नही है।

लेकिन जब हम 'देखा जायगा' की 'अगुवा नीति' पर बढ जाते है तो सफलता हमारे चरण चूमने लगती है। हैदराबाद और गोवा इसके प्रमाण हैं। चीन भी इसीलिए चुप है। इसलिए जब हम दृढता से कदम बढाते है और अपने साहस का परिचय देते हुए 'देखा जायगा' का जय-घोष करते है, तब हम अपने को सचमुच सबसे आगे पाते है। आप भी 'देखा जायगा' कह कर आगे बढे' और आजमाएं !

४. महाकवि कालिदास

प्रस्तुत विक्रम संवत् के प्रवर्तक सम्राट् विक्रमादित्य की राज सभा के नवरत्नो मे महाकवि कालिदास का विशेष महत्व था। संस्कृत-साहित्य के रचयिताओं में इनका प्रमुख स्थान है। महाकवि कालिदास ने संस्कृत साहित्य को दो महाकाव्य (रघुवंश और कुमार संभव), दो गीत काव्य (मेघदूत और ऋतुसंहार तथा तीन नाटक) अभिज्ञान शाकुन्तल, विक्रमोर्वशीय और मालविकाग्नि मित्र) भेंट किए। इस समस्त साहित्य के द्वारा महाकवि ने मानव जीवन के भिन्न भिन्न पक्षों की अनुभूति, अन्तश्चेतना में जागरूक अनेकानेक अन्तर्द्वन्द्वों की विच्छित्ति तथा दृश्यमान नानारूपात्मक जगत में अनुभूयमान लौकिक एवं अलौकिक तात्पर्यवृत्ति की मनोहारिणी अभिव्यक्ति है।

महाकवि के काव्य का क्रमिक परिशीलन करने से हमे ज्ञात होता है कि कथावस्तु के लिए उनको अधिक चिन्तित नही होना पड़ा। यो तो पुराण और इतिहास सहायता करते ही हैं, किन्तु सच्चा कवि इन्ही पर निर्भर नही करता। उसकी उर्वर कल्पना शक्ति और सूक्ष्मतत्त्वदर्शिणी दृष्टि भी आसपास के वातावरण से आवश्यक सामग्री संजो लेती है। कालिदास मे भी उसी सुन्दर भावव्यंजना और कोमल कल्पना के समन्वय के दर्शन हमे होते हैं। कल्पना शक्ति के द्वारा कवि विशृंखल वृत्तो का सामंजस्य, पुराण तथा विस्मृत-प्राय चरित्रों मे प्राण-प्रतिष्ठा और प्रसंगानुसार नवीन मार्मिक तथ्यो की योजना का सम्पादन करता है। महाकवि कालिदास ने इसे सविशेष निभाया है।

'रघुवश' संस्कृत साहित्य का एक उत्कृष्ट महाकाव्य है। इसमे रघुवंशी राजाओं का क्रमिक वर्णन प्रस्तुत करके कवि ने उनके आदर्श चरित्र, अनुकरणीय साहस और अनुपम प्रजा-वात्सल्य के भव्य चित्र उपस्थित किए हैं। मनोरम प्रकृति वैभव स्निग्ध आलाप-संलाप और सद्यः पर निवृत्तिकारिणी रसोत्पत्ति की दृष्टि से अकेला रघुवंश ही महाकवि के महाकवित्व-साधन मे सक्षम है।

'कुमार संभव' मे भगवान शंकर और देवी पार्वती के पवित्र परिणाम तथा कुमार कार्तिकेय के जन्म का बड़ा ही सरस वर्णन है। पार्वती कठोर तपस्या के द्वारा अपना शरीर सुखा करके मनोभव-भ्राति को समूल निर्मूल करके तथा काम जन्म दुर्वासनाओं को भस्मसात् करके ही शिव (कल्याण) को प्राप्त करती है। धर्म का विरोधी काम अवाछनीय है तो शंकर ने अपने तृतीय नेत्र (ज्ञान नेत्र) से उसे नाम शेष कर दिया। इस महाकाव्य में कवि ने अपने सजीव काव्य कौशल, कलित कल्पना तथा ललित पद-विन्यास की सहायता से उपर्युक्त तथ्य का मनोरम प्रतिपादन करते हुए त्रस्त मानवता को एक अमर सन्देश दिया है।

'मेघदूत' 'मन्दाक्रान्ता' छन्द मे लिखित संस्कृत के गीत काव्य का एक सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। इसमें महाकवि ने एक राष्ट्रीय कवि के रूप में मेघमार्ग वर्णन के काज से जननी जन्म भूमि के दिव्य स्वरूप की एक झाकी प्रस्तुत की है। विस्मृत जनपदो और राजधानियों, काल के गाल पर थप्पड की तरह चुनौती देने वाले महाकार पर्वतो तथा प्राचीन वैभव की छल-छलाती स्मृति-स्वरूपा नदियों की एक बार पुन. संस्मृति से किस राष्ट्र प्रेमी का हृदय पुलकित न

हो उठेगा। यक्ष और पक्ष का वृत तो केवल कल्पना है कल्पना वह एक प्रयोग है एक साधन है। कवि के लिए तो वस्तुत वर्ण्य और अभीष्ट विषय है मातृभू का यशोगान।

ऋतु संहार में क्रम से षट् ऋतुओं का वर्णन है। उद्दीपन की दृष्टि से मानव की समस्त भावनाओं का स्पर्श इसमे अनुभूत होता है। यह कालिदास की प्रथम रचना मानी जाती है, इसलिए काव्यगत उस वैभव के दर्शन नही होते, जो अन्यत्र सहज है। फिर भी प्रसाद-गुण-सम्पन्नता, भाव-सबलता तथा उक्तिसरसता तो सर्वत्र मिलती ही है। संस्कृत साहित्य में ऋतु वर्णन को स्वतन्त्र और समग्र रूप में प्रस्तुत करने वाला यह एकमात्र काव्य है, यही इसकी अपनी विशेषता है।

कालिदास के नाटको मे रचना की दृष्टि से सर्वप्रथम स्थान 'मालविकाग्नि मित्र' का है। इसमे राजा अग्निमित्र और राजमहिषी की परिचारिका मालविका के प्रणय पुरस्सर परिणय का मर्मस्पर्शी वर्णन है। कथानक की जटिलता होते हुए भी लेखक का ध्यान पात्रो के मनोवैज्ञानिक चरित्र-विश्लेषण की ओर प्रवृत्त नही जान पडता है, हां, स्वभावानुसार वह क्लिष्टता और कृत्रिमता का अपसरण करके प्रासादिकता की ओर अधिक उन्मुख है।

'विक्रमोर्वशीय' महाकवि कालिदास का दूसरा नाटक है। इसमें पुरूरवा और देवागना उर्वशी के प्रणय, परिणाम, शाप-विमोचन आदि का बड़ा हृदय-ग्राही वर्णन है।

संगीत शास्त्रों की रहस्यमय विवृत्ति के साथ साथ प्रौढ प्राजल तथा विप्रलंभ शृंगार-प्रधान और सर्वथा सुरुचि सम्पन्न परिष्कृत भाषा के दर्शन भी हमें इस नाटक मे होते हैं। श्रुतियों मे आई हुई एक साधारण लघु कथा महाकवि की समर्थ लेखनी के स्पर्श से सप्राण होकर निखर उठी है।

कालिदास का तीसरा विश्व विश्रुत नाटक है 'अभिज्ञान शाकुन्तल'। 'शकुन्तला' का उच्चारण करते ही सहृदयों के समक्ष दुष्यन्त और कण्व का ध्यान तो बाद में आता है, पहले उसके निर्माता कविकुल कुमुद कलाकार महाकवि कालिदास का एकदम ध्यान आ जाता है। समर्थ कवि तुलसी की वरद लेखनी ने राजा राम को भगवान राम बना दिया, समर्थ कवि सूर की प्रभावशालिनी वाणी ने कृष्ण भक्ति का आबालवृद्धवनिता प्रचार कर दिया। उसी प्रकार महाकवि कालिदास की अमर लेखनी की वरदान स्वरूपा-शकुन्तला-

एक पौराणिक इतिवृत्त मात्र न रह कर समस्त ससार में प्रेम और सौन्दर्य की देवी के रूप में प्रतिष्ठित है।

महाकवि कालिदास की इस लोकप्रियता के अनेक रहस्य हैं। उनमें सर्वप्रथम उनकी 'मौलिकता' है। यों तो कथावस्तु की दृष्टि से कुछ भी मौलिक नही होता है। प्रत्येक वस्तु कहीं न कहीं अपनी वाक्य भगिमा से, अपनी कल्पना जल्पना से और अपनी सशक्त प्रेषणीयता एवं प्रासादिकता के बल से उस नीरस अथवा सरस, विश्रृंखल अथवा सुश्रृंखल और विस्मरणीय अथवा सस्मरणीय इति-वृत्त को सुरुचिसपन्न, हृदयग्राही और मर्मस्पर्शी सम्पादित करके अमरता प्रदान कर देते है।

'क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयताया.।'

(जो क्षण क्षण मे नवीन जान पड़े, वही वस्तु वस्तुतः रमणीय है) यह सूक्ति कालिदास के चिरनवीन, चिरयौवन सपन्न और चिरमाधुर्यमय काव्य के लिए पूर्णतया उपयुक्त है।

महाकवि कालिदास की लोकप्रियता का दूसरा रहस्य है—'वर्णन की सपूर्णता'। महाकवि ने मानव-जीवन के विभिन्न सभी पक्षों के रहस्यो को उठा उठाकर देखा है और परखा है। मनुष्य की अन्त: प्रकृति के अनेकानेक द्वन्द्वो का यथावत् चित्रण प्रस्तुत किया है। कालिदास के 'महाकवि' ने ही नही, किन्तु गीतिकार तथा नाट्यकार ने भी समान भाव मे मनुष्यता की समस्त भाव-भूमियो की नाप जोख की है और उसकी अन्तर्वर्तिनी समस्त नानाविध चेष्टाओं से हमे अवगत कराया है। सारांश यह है कि जो भाव कालिदास के साहित्य में नही है, उसकी उपस्थिति की संभावना भी मानव-जीवन मे नही पाई जाती है।

कालिदास की लोकप्रियता का तीसरा और अन्तिम रहस्य है, इनकी 'शैली की प्रासादिकता'। ठीक वही जैसी महाकवि तुलसी की शैली-बाल वृद्ध कविता सभी के द्वारा सादर समझने के योग्य। क्लिष्टता, कृत्रिमता और कर्कशता से कोसो दूर, कोमल कांत पदावली के एक मात्र पक्षपाती, सरल, सुबोध और स्वाभाविक शब्द-योजना के चतुर शिल्पी, 'कहना कम और समझना अधिक' के व्यवसायी, कोमल, मधुर और सुकुमार भाव व्यंजना के अनन्य धनी तथा सूक्ष्म, समर्थ और मार्मिक उद्घाटन के अद्वितीय यशस्वी और पारखी महाकवि कालिदास के सरस पदों से भला फिर कौन सहृदय आत्म-

विभोर न होगा

तभी तो आज दो सहस्राब्दियों के बीत जाने पर भी, महाकवि कालिदास का काव्य-गौरव पूर्ववत् दीप्त, सुषमामय और प्रभावोत्पादक है। धन्य है महाकवि कालिदास।

नीचे कुछ निबन्धों की केवल रूपरेखाएं दी जा रही हैं, जिनसे उनको भली प्रकार लिखा जा सकता है।

१. विज्ञान के चमत्कार

१—वर्तमान युग की वैज्ञानिकता।
२—जीवन में विज्ञान की उपयोगिता और उपादेयता।
३—दैनंदिन व्यवहार में विज्ञान की देन।
४—विज्ञान के द्वारा हमारी घर बैठे सेवा।
५—बिजली के विभिन्न प्रयोग, प्रकाश, पंखा, हीटर, कुकर आदि।
६—मनोरंजन में विज्ञान की देन,—ग्रामोफोन, रेडियो, टेली-विजन, आदि।
७—यात्रा में विज्ञान की देन—साइकिल, मोटर, स्कूटर, रेल, जलपोत वायुयान—राकेट आदि।
८—लेख और संवाद में विज्ञान की देन—टाइप राइटर, प्रेस, टेलीप्रिंटर, टेलीफोन, तार, रेडियो आदि।
९—चिकित्सा में विज्ञान की देन—अनेक इंजेक्शन, औषधियाँ, एक्सरे, प्लास्टिक, सर्जरी आदि।
१०—अन्य क्षेत्रों में विज्ञान की देन—शान्ति स्थापना, आदि।
११—विज्ञान हमारा दास है और दास ही रहे, यदि स्वामी बना तो सर्वनाश है।
१२—उपसंहार।

२. महात्मा गांधी

१—गांधीजी के पूर्व का भारत।
२—गांधीजी की संक्षिप्त जीवनी।
३—गांधीजी की विदेश यात्रा।
४—गांधीजी जनसेवा के क्षेत्र मे।
५—गांधीजी का अफ्रीका मे प्रभाव और सेवा कार्य।
६—गांधीजी और कांग्रेस।
७—कांग्रेस से पृथक् रह कर भी गांधीजी द्वारा उसका संचालन।
८—गांधीजी के चारित्रिक गुण और विशेषताएं।
९—गांधीजी की निर्वाण प्राप्ति।
१०—गांधीजी के विचारो का प्रभाव।
११—गांधीजी के विभिन्न स्मारक।
१२—उपसंहार।

३. पंचायत राज्य

१—पंचायत की परिभाषा और उसकी व्यापकता।
२—भारत जैसे ग्रामबहुल देश में पंचायत की आवश्यकता।
३—हमारे अतीत काल की पंचायतें और उनका सुप्रबंध।
४—देश की स्वतन्त्रता के पूर्व पंचायतों का अस्तित्व।
५—स्वतंत्रता के पश्चात् 'पंचायत राज्य कानून' का निर्माण और क्षेत्र।
६—पंचायत राज्य निर्माण में अग्रणी—राजस्थान।
७—पंचायत राज्य की विशेषताएं।
८—पंचायतो के निर्वाचन और अधिकार।
९—पंचायतों के आय के साधन और व्यय की दिशाएं।
१०—पंचायतों से लाभ।
११—पंचायतों के कुछ दोष (साम्प्रदायिकता, वर्गविकार, आदि। और उनके निवारण के उपाय।
१२—उपसंहार।

४, वर्तमान सभ्यता और रेडियो

१—वर्तमान सभ्यता और उसकी विशेषताएं ।
२—वर्तमान सभ्यता के विकास मे रेडियो की देन ।
३—मनोरंजन के क्षेत्र मे रेडियो का महत्व ।
४—शिक्षा के प्रसार मे रेडियो का महत्व ।
५—देश के एकीकरण में रेडियो का योग ।
६—रेडियो के विभिन्न कार्यक्रमों का सभ्यता पर प्रभाव ।
७—वर्तमान सभ्य समाज मे रेडियो की अनिवार्यता ।
८—उपसंहार ।

५. वर्तमान समाज में नारी का स्थान

१—वैदिककालीन हिन्दू समाज में नारी का महत्व ।
२—प्राचीन काल मे नारी का स्थान ।
३—मध्यकालीन समाज मे नारी ।
४—नारी जीवन की समस्याएं ।
५—नर और नारी मे स्पर्धा ।
६—वर्तमान समाज मे नारी की विशेषताएं, प्रगति, देन आदि ।
७—पाश्चात्य नारी का दृष्टिकोण ।
८—वर्तमान समाज पर पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव और नारी सम्बन्धी विचारो मे प्रतिक्रिया ।
९—आज की प्रगतिशील नारियां ।
१०—आज के विभिन्न क्षेत्रो मे नारी का सहयोग ।
११—नारी का उज्वल भविष्य ।
१२—उपसंहार ।

६. वर्तमान हिन्दी साहित्य की विशेषताएं

१—हिन्दी साहित्य का जन्म और विकास ।
२—पिछले १ हजार वर्षों मे हिन्दी साहित्य के विभिन्न रूप ।
३—आदि काल, भक्तिकाल और रीति काल में हिन्दी साहित्य की स्थिति ।

४—वर्तमान काल में हिन्दी गद्य का जन्म और विकास ।

५—भारतेन्दु युग और द्विवेदी युग की देन ।

६—वर्तमान युग मे कविता की विभिन्न धाराएं ।

७—वर्तमान युग में गद्य की विभिन्न विधाओ—नाटक, एकाकी, कहानी, उपन्यास, निबन्ध, प्रबन्ध, शोध प्रबन्ध, आलोचना, आदि का विकास ।

८—वर्तमान हिन्दी साहित्य के अभाव और उनके निवारण के उपाय ।

९—वर्तमान हिन्दी साहित्य का भविष्य ।

१०—उपसंहार ।

७. हिन्दी को मुसलमानों की देन

१—हिन्दी को जन्म से ही मुसलमानो का महत्वपूर्ण सहयोग ।

२—भक्ति धारा के विशेष कवि, कबीर, जायसी, कुतबन, मंझन, नूर, मुहम्मद आदि ।

३—अन्य भक्त कवि, रसखान, ताज रसलीन ।

४—दूसरी धाराओ के कवि, रहीम, खुसरो शेख, आलम आदि ।

५—गद्य लेखक मुसलमान साहित्यकार इंशाउल्लाखां आदि ।

६—वर्तमान समय के लेखक—सैयद अमीर जहूर बखश ।

७—वर्तमान समय मे मुसलमानों से अधिक सहयोग न मिलने के कारण, उन्हें दूर करने के सुझाव ।

८—उपसंहार ।

८. स्वस्थ जीवन

१—जीवन मे स्वास्थ्य का महत्व ।

२—शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक स्वास्थ्य का सम्बन्ध ।

३—शारीरिक स्वास्थ्य के साधन, स्वच्छ भोजन, स्वच्छ जलवायु, स्वच्छ वस्त्र और व्यायाम आदि ।

४—मानसिक स्वास्थ्य के साधन—शुद्ध वातावरण, ब्रह्मचर्य का अभ्यास, शुद्ध अध्ययन, शुद्ध मनोरंजन आदि ।

५. स्वास्थ्य का मूल मंत्र–सदा प्रसन्न रहना अर्थात् हास्य का महत्व ।

६—व्यक्तिगत स्वास्थ्य का समाज और देश के स्वास्थ्य पर प्रभाव ।

७—स्वास्थ्य और सामर्थ्य की एकता—'समर्थ ही टिकता है ।'

८—'धर्मार्थ काम मोक्ष' सभी के लिए स्वास्थ्य की उपादेयता ।

९—स्वास्थ्य सुधार के वर्तमान साधन ।

१०—उपसंहार ।

१९. भूदान-आन्दोलन

१—भूदान की परिभाषा ।

२—भूदान का महत्व ।

३—भूदान आन्दोलन के प्रवर्तक विनोबाजी ।

४—भूदान आन्दोलन की आरम्भिक सफलताएं ।

५—भूदान आन्दोलन और सरकार का सहयोग ।

६—भूदान के साथ ही अन्य सा समान आन्दोलन–सम्पत्तिदान, बुद्धि-दान, जीवनदान आदि ।

७—भूदान आन्दोलन की वर्तमान स्थिति ।

८—भूदान आन्दोलन की उपयोगिता ।

९—भूदान आन्दोलन का भविष्य ।

१०—उपसंहार ।

२०. हिंदी नाटकों का विकास

१—हिन्दी नाटक का जन्म–प्रथम नाटक 'आनंद रघुनन्दन' ।

२—हिन्दी नाटकों के विकास का क्रम :

(क) भारतेन्दु युग के नाटक ।

(ख) प्रसाद युग के नाटक ।

(ग) वर्तमान युग के नाटक ।

३—संस्कृत से अनूदित नाटक ।

४ विदेशी भाषाओं से अनूदित नाटक ।

५ हिन्दी नाटको की वस्तु और शैली का विकास ।

६—हिन्दी नाटकों के विकास में बाधाएं :

(अ) वर्तमान समाज का व्यस्त जीवन ।

(ब) सुरुचि का अभाव ।

(स) रंग मंच का अभाव ।

(द) नाटकीय शिक्षा और अभ्यास आदि का अभाव ।

(य) सिनेमा के आकर्षण ।

७—उपर्युक्त बाधाओं के दूर करने के सुझाव :

(अ) रंग मचो का निर्माण हो ।

(ब) उचित शिक्षा दी जाए ।

(स) भाषा सरल और सुबोध हो ।

(द) सभ्य समाज में अधिकाधिक प्रचार किया जावे ।

(य) शिक्षा सस्थाओं मे छात्र नाटक आदि मे अधिक भाग लें ।

८—नाटको की जीवन मे उपयोगिता और महत्व ।

९—हिन्दी नाटकों का भविष्य ।

१०—उपसंहार ।

२१. विद्यालय का वार्षिकोत्सव

१—वार्षिकोत्सव मनाने का निर्णय और आवश्यक तैयारियां करना ।

२—विद्यालय की कायापलट, सफाई, सजावट, शामियाना, कुर्सियां, बिजली, लाउडस्पीकर का प्रबन्ध आदि ।

३—मुख्य अतिथि का स्वागत ; विद्यालय के आचार्य के द्वारा उनका परिचय ।

४—वार्षिकोत्सव के कार्यक्रमों का आरंभ :

(क) सरस्वती वन्दना ।

(ख) सांस्कृतिक कार्यक्रम ।

(ग) छात्रों की कुछ प्रतियोगिताएं ।

(घ) पारितोषिक वितरण ।

(ङ) मुख्य अतिथि का भाषण ।

(च) आचार्य द्वारा धन्यवाद प्रदान ।

(छ) राष्ट्रीय गान ।

५—वार्षिकोत्सव की सफलता :

(क) शान्तिपूर्ण निर्वाह ।

(ख) सभी को सन्तोष और उत्साह ।

६—वार्षिकोत्सव का प्रभाव, विद्यालय की प्रगति में योगदान ।

७—वार्षिकोत्सवों की उपयोगिता ।

८—उपसंहार ।

१२. पुस्तकालय का महत्व

१—पुस्तकालय की परिभाषा और कार्य क्षेत्र ।

२—पुस्तकालय की उपादेयता :

(क) ज्ञान प्राप्ति मे सहयोग ।

(ख) शिक्षा प्रसार में देन ।

(ग) मानसिक मनोरंजन ।

(घ) समय का सदुपयोग ।

(ङ) समाज कल्याण की भावना का विकास ।

(च) परस्पर सहयोग और स्पर्धा की भावना का विकास ।

(छ) सुसंस्कारों के प्रति प्रेरणा-प्राप्ति ।

३—पुस्तकालय व्यवस्था ।

४—अच्छे पुस्तकालयों का स्वरूप ।

५—पुस्तकालयो की कमिया, उसके कुपरिणाम और उन्हें दूर करने के लिए कुछ सुझाव ।

६—पुस्तकालय की अनिवार्यता ।

७—पुस्तकालयो के विकास मे सरकार का सहयोग ।

८—उपसंहार ।
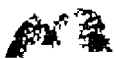
२३ साहित्य में यथार्थ और आदर्श

१—यथार्थ की परिभाषा।
२—साहित्य मे यथार्थ का वर्णन और उसका महत्व।
३—आदर्श की परिभाषा।
४—आदर्श और यथार्थ का सम्बन्ध।
५—साहित्य में आदर्श और यथार्थ की उपयोगिता।
६—अति यथार्थ और अति आदर्श के चित्रण के दोष और कुप्रभाव।
७—आदर्श और यथार्थ का आवश्यक समन्वय।
८—प्राचीन और वर्तमान साहित्य में आदर्श का स्थान।
९—प्राचीन और वर्तमान साहित्य में यथार्थ का स्थान।
१०—वर्तमान साहित्य मे अति यथार्थता का जन्म, विकास और उसके कुप्रभाव।
११—साहित्य का लक्ष्य क्या हो, आदर्श या यथार्थ ?
१२—उपसंहार।

१४. आलस्य

१—आलस्य, मनुष्य का स्वभाव है।
२—आलस्य के दोष :
 (क) ढीलापन।
 (ख) असावधानी।
 (ग) अस्वास्थ्य।
 (घ) भविष्य का ध्यान न रहना।
 (ङ) निन्दा, अपमान, घृणा आदि का जन्म।
 (च) प्रगति मे विघ्न-बाधाएं।
३—आलस्य कहां उचित है ?
 (अ) किसी को दण्ड देने में।
 (ब) किसी का अपकार करने मे।
 (स) किसी का विरोध करने मे।
 (द) पाप या अधर्म करने मे।

४—आलसियों के सपने (मन के लड्डू)

५—आलस्य का कुप्रभाव।

६—उपसंहार।

२५. भिक्षावृत्ति

१—भिक्षावृत्ति क्यों ?

२—भिक्षावृत्ति का आरम्भ।

३—दान और भिक्षा का सम्बन्ध।

४—भिक्षा वृत्ति का अवाञ्छनीय प्रभाव।

५—भिक्षा के अनेक ढंग।

६—सभ्य भिक्षा—चन्दा।

७—भिक्षावृत्ति और सरकारी दृष्टिकोण।

८—भिक्षावृत्ति के निवारण के कुछ उपाय।

९—उपसंहार।

२६. विद्यार्थी जीवन और राजनीति

१—विद्यार्थी की परिभाषा।

२—विद्यार्थी का प्रधान लक्ष्य।

३—विद्यार्थी जीवन की कठिनाइयां।

४—विद्यार्थी जीवन में राजनीति का प्रवेश कैसे ?

५—विद्यार्थियों के साथ राजनैतिक नेताओं के गठबंधन।

६—विद्यार्थी पर राजनीति का अनुचित प्रभाव।

७—विद्यार्थी और राजनीति का उचित संबंध।

८—विद्याध्ययन के साथ साथ राजनीति का निर्वाह।

९—विद्यार्थी के भविष्य पर राजनीति का प्रभाव।

१०—उपसंहार।

१७ आधुनिक शिक्षा की विशेषताएं

१—आधुनिक शिक्षा का अर्थ, आरम्भ और दृष्टिकोण।
२—आधुनिक शिक्षा का समाज पर प्रभाव।
३—आधुनिक शिक्षा का छात्रों पर प्रभाव।
४—आधुनिक शिक्षा के विभिन्न उपकरण।
५—आधुनिक शिक्षा की उपयोगिता।
६—आधुनिक शिक्षा की कमियां और उनके दूर करने के उपाय।
७—आधुनिक शिक्षा और देश की प्रगति का सम्बन्ध।
८—आधुनिक शिक्षा का भविष्य।
९—उपसंहार।

१८. श्रमदान

१—श्रमदान की परिभाषा।
२—श्रमदान का दृष्टिकोण और उसका महत्व।
३—श्रमदान की उपयोगिता।
४—श्रमदान से देश की उन्नति।
५—श्रमदान में कुछ दोष :
    (अ) दिखावट की भावना।
    (ब) प्रचार की भावना।
    (स) लगन का अभाव।
    (द) अविश्वास।
६—सच्चे श्रमदानी की योग्यताएं।
७—श्रमदान का भविष्य में विस्तार।
८—उपसंहार।

१९. पंचशील

१—पंचशील की परिभाषा, वास्तविक सिद्धांत।
२—पंचशील का जन्म, विकास और प्रचार।

३—पंचशील का शुद्ध प्रयोग और व्यवहार ।

४—पंचशील की प्रामाणिकता और उपादेयता ।

५—पंचशील और राजनीति ।

६—पंचशील में कुछ दोष ।

(क) अतिविश्वास ।

(ख) अकर्मण्यता ।

(ग) आडम्बर ।

७—शुद्ध पंचशील और विश्व शान्ति ।

८—पंचशील का भावी स्वरूप ।

९—उपसंहार ।

२०. राष्ट्रीय बचत योजना

१—योजना की परिभाषा, अर्थ और आवश्यकता ।

२—योजना के पीछे मूल भावना ।

३—बचत के उपाय और क्षेत्र ।

४—सरकारी नीति और साधन :

(क) सहयोग ।

(ख) देश भक्ति ।

(ग) स्वावलम्बन ।

५—सरकारी नीति में कुछ अक्षमताएं :

(क) दबाव ।

(ख) दिखावट ।

(ग) फिजूल खर्ची ।

(घ) कार्यकर्ताओं में अफसरी की बू ।

(ङ) लगन की कमी ।

६—बचत योजना के विभिन्न प्रकार और उनका उद्देश्य ।

७—बचत योजना का महत्व और भविष्य ।

८—उपसंहार ।

२ प्रेमचंदजी की कहानियों की विशेषताएं

१—प्रेमचंदजी की सर्वोपरिता।

२—प्रेमचंदजी की कहानियों में राष्ट्रीयता की भावना।

३—समाज सुधार, संस्कृति स्थापना, मनोवैज्ञानिक चित्रण आदि की विशेषताएं।

४—आदर्श और यथार्थ का उचित सामंजस्य।

५—कहानियों का शिल्प वैभव।

६—भाषा की दृष्टि से सरल, सुबोध और सप्राण।

७—कहावतों और मुहावरों का प्रयोग।

८—महान् उद्देश्य, मार्मिक संगठन।

९—उपसंहार।

२२. भारत की राष्ट्र भाषा 'हिन्दी'

१—राष्ट्रभाषा की परिभाषा।

२—हिन्दी में राष्ट्रभाषा बनने की योग्यता।

३—भारतीय संविधान के अनुसार राष्ट्र भाषा-हिन्दी।

४—राष्ट्रभाषा के विकास के उपाय।

५—राष्ट्रभाषा के प्रति हमारा उत्तरदायित्व।

६—राष्ट्रभाषा हिन्दी और अंग्रेजी के सम्बन्ध।

७—अंग्रेजी के पुनः स्थापन से राष्ट्रभाषा को क्षति।

८—अंग्रेजी के पुनः स्थापन में कुछ गुलाम और राष्ट्र विरोधी तत्व।

९—राष्ट्र भाषा के दृढ़ीकरण के कुछ उपाय :—

(क) लेखकों की प्राणपण से चेष्टा।

(ख) जनता से सहयोग की आकांक्षा।

(ग) अहिन्दी प्रदेशों में 'मिशनस्प्रिट' से कार्य।

(घ) विरोधी तत्वों को प्रेम से मिलाना।

(ङ) अधिकाधिक श्रेष्ठ साहित्य का निर्माण।

(च) सरकार पर अधिक निर्भर न रहना।

१०—उपसंहार।

२३. वन महोत्सव

१—वन महोत्सव का अभिप्राय ।
२—वन महोत्सव का आरम्भ ।
३—वन महोत्सव के प्रवर्तन के साधन ।
४—वन महोत्सव का महत्व और उससे लाभ ।
५—वन महोत्सव और सरकारी प्रयत्न ।
६—सरकारी प्रणाली मे कुछ दोष ।

(क) दिखावट ।
(ख) फिजूल खर्ची ।
(ग) विज्ञापन अधिक ।
(घ) उत्साह की कमी ।

७—उपर्युक्त दोषों के निवारण के उपाय ।
८—भारतवर्ष की वन-सम्पत्ति ।
९—भारतवर्ष के रेगिस्तानो पर 'वन महोत्सव' का प्रभाव ।
१०—वन महोत्सव से देश की प्रगति ।
११—वन महोत्सव का भविष्य ।
१२—उपसंहार ।

२४. दाशमिक सिक्का प्रणाली

१—सिक्कों का आरम्भ-पुराने सिक्के ।
२—अंग्रेजों के आने के बाद से सिक्का प्रणाली का रूप ।
३—विभिन्न सिक्को से कार्य संचालन मे कठिनाइया ।
४—सिक्कों के एकीकरण और सरलीकरण मे दाशमिक प्रणाली का सहयोग ।
५—दाशमिक प्रणाली का महत्व और उसकी विशेषताएं ।
६—दाशमिक प्रणाली की उपयोगिता ।
७—दाशमिक प्रणाली की उपयोगिता ।

८ दाशमिक प्रणाली का सिक्कों के अतिरिक्त, नाप बाट और तौल आदि में व्यवहार

९—दाशमिक प्रणाली का भविष्य ।

१०—उपसंहार ।

२५. महाकवि तुलसीदास

१—हिन्दी का भक्ति-साहित्य ।

२—भक्त कवियो मे तुलसीदास का स्थान ।

३—तुलसीदासजी का युग और विभिन्न साहित्य ।

४—उनका रामचरितमान-विश्व का सर्व श्रेष्ठ और सर्वाधिक प्रचलित ग्रंथ ।

५—तुलसीदास की काव्य कला ।

६—तुलसीदास के सिद्धात (भक्ति, दर्शन, नीति, राजनीतिक, काव्य आदि मे सम्बन्धित)

७—विश्व के साहित्यकारों में तुलसी का सर्वोच्च स्थान ।

८—उपसंहार ।

अनुवाद

अनुवाद का शाब्दिक अर्थ है पीछे-पीछे (ज्यो का त्यों) बोलना या अनुकरण करना। एक भाषा के भावार्थ को, जब हम दूसरी भाषा मे ज्यों का त्यो प्रस्तुत करते हैं, तब वह भी अनुवाद कहलाता है। अनुवाद करते समय हमे कुछ बाते ध्यान मे रखनी चाहिए—

(१) हम एक भाषा से दूसरी भाषा मे अनुवाद करते हैं, अतः उस भाषा की प्रवृत्तियो को भी यथा सभव दूसरी भाषा मे उतारना चाहिए।

(२) भाषा का निर्माण वाक्यो से और वाक्यो का निर्माण सार्थक शब्दो से होता है, इसलिए हमे शब्द, अर्थ और वाक्य तीनो का ध्यान रखना चाहिए।

(३) अनुवाद मे शब्दो पर पहले विचार करना चाहिए और जहा तक हो सके, शब्दशः अनुवाद करना चाहिए। यह ठीक है कि शब्द अनेकार्थक होते हैं या हो सकते है, इसलिए प्रयोग के अनुसार उस भाषा मे उस शब्द का जो अर्थ होता है, दूसरी भाषा मे उसी अर्थ के निकटतम द्योतक शब्द का प्रयोग करना चाहिए।

(४) जहां शब्दशः अनुवाद संभव न हो सके, वहा भावार्थ का ग्रहण करना चाहिए, किन्तु यह ध्यान रहे कि किसी प्रकार की गडबड या बिगाड न हो। अर्थ स्पष्ट हो जाय और कम से कम शब्दो का प्रयोग हो। भाव की व्याख्या के फेर मे न पड़ना चाहिए। अत्यधिक आवश्यकता हो, तभी कोष्ठक मे वाक्याश या वाक्य का प्रयोग करना चाहिए।

(५) यदि उस भाषा में किसी मुहावरा या कहावत का प्रयोग हो, तो भी दूसरी भाषा मे यथासभव शब्दशः अनुवाद करना चाहिए, लेकिन जहा उचित शब्द या उचित अर्थ न प्रतीत हो, वहा स्वेच्छाचार थोडा सा परिवर्तन कर लेना चाहिए और दूसरी भाषा के मुहावरे या कहावत का भी उल्लेख कर देना चाहिए।

(६) वैज्ञानिक या टेक्नीकल 'शब्दो' के लिए यह करना चाहिए कि या

तो उनको ज्यों का त्यों रख के ( ) कोष्ठक वाले चिन्ह का प्रयोग किया जाय या उनके लिए प्रचलित भाषायी शब्द का स्वतन्त्र अथवा कोष्ठक मे उल्लेख कर दिया जाय।

अब नीचे कुछ गद्यांशो के अनुवाद सहायता के लिए प्रस्तुत किए जा रहे हैं:—

(१)

During these years, the theatre movement in India has made some progress. Even then it has not reached perfection in any direction. Folk traditions were not regarded with sympathy. Undoubtedly, they nourished a superior sensibility, the creative spirit and a homely warmth Our drama was divorced from this living stream, hence it suffered. The gulf which was once created widened further due to certain barriers created by the linguistic medium. Class consciousness and social factors impeded the development of dramatic conventions. Until recently, the folk theatre was regarded as a crude and unworthy institution.

अनुवाद— इन वर्षों मे, नाट्य आन्दोलन ने, भारतवर्ष मे कुछ उन्नति की है, फिर भी वह किसी भी दशा मे पूर्णता को प्राप्त नही कर पाया है। लोक-नाट्य-परम्पराओ पर सहानुभूति के साथ विचार नही किया गया है। निस्सन्देह, उन्होंने एक उच्चतर अनुभूति, एक रचनात्मक भावना और एक निजी स्फूर्ति को उद्दीप्त किया है। हमारे नाटक इस सप्राण धारा से दूर रहे अत. उन्हें हानिया पहुची। इस प्रकार जो एक खाई बनी, वह भाषाओ के माध्यम के द्वारा प्रस्तुत अनेक बन्धनों के कारण और चौडी हो गई। वर्ग-भावना और सामाजिक स्थितियों ने नाटकीय परम्परा के विकास को रोका। अभी हाल तक, लोक-नाट्य को अपरिपक्व और अयोग्य सस्था समझा जाता था।

(२)

Throughout history, man has dreamed of going to the Moon. The phrase 'Reaching for the moon' has come to symbolize the unattainable the unalized dream. Now through science, the unattainable is with in reach; dream promises to become reality and menned lunar exploration is a national objective. Why? Why does man want to go to the moon? Why should he go? What can he expect to find, when he gets there? What kind of man should be first to go to the moon? Judging

from the letters to government offic al from young and old would be lunar pioneers go ng to the moon for most is a chance to escape from the nexing restrictions and tyrannies, imagined and real life of life on earth.

अनुवाद— इतिहास के आरम्भ से लेकर आज तक, मनुष्य ने चन्द्र-यात्रा का स्वप्न देखा है। 'चन्द्रमा को पकड़ना' यह मुहावरा अप्राप्य और असिद्ध स्वप्न का संकेतक बन गया है। अब विज्ञान की सहायता से, वह अप्राप्य हमारी पहुँच के भीतर है, वह स्वप्न सत्य सिद्ध हो रहा है और चन्द्रमा की मानवकृत छानबीन अब राष्ट्रीय उद्योग हो गई है। क्यों ? मनुष्य चन्द्रमा तक क्यों जाना चाहता है ? उसे क्यों जाना चाहिए ? वह क्या पाने की आशा करता है, जब वह वहाँ पहुँच जायगा ? चन्द्रमा का प्रथम यात्री मानव कैसा होना चाहिए ? सरकारी अधिकारियों के पास पहुंचने वाले उन पत्रों से, जो अनेक युवक और वृद्ध भावी चन्द्र-यात्रियों के द्वारा भेजे गए हैं, यह निर्णय प्राप्त किया जा सकता है कि बहुतो के लिए चन्द्र-यात्रा का अर्थ, पार्थिव (लौकिक) जीवन के कल्पित और वास्तविक दुःखद बन्धनों एवं अत्याचारो से मुक्ति का सुअवसर है।

(३)

We sometimes think it would be very nice to have no work to do. How we envy rich people who have not to work for their living, but can do just what they please all the year round. Yet when we feal like this, we make a mistake. Sometimes rich people are not as happy, as we think they are, because they are tired of having nothing to do. Most of us are happy, when we have regular work to do for our living, especially if the work is what we like to do. The first thing work does for us is to give us happiness. Then work gives us self-respect. The idler, however rich he is, live on the work of others. He is like the beggar in the streets, who takes the money of others, who have had to toil for it. Such people do not live independently and ought to feel ashamed of themselves.

अनुवाद— हम कभी कभी यह सोचते है कि यदि कुछ भी काम न करना पड़ता, तो बहुत अच्छा होता। हम उन धनिको से कैसी ईर्ष्या करते है जो अपने जीविकोपार्जन के लिए कुछ काम नही करते और वर्ष भर केवल वही काम करते है जो उन्हें अच्छा लगता है। तो भी जब हम ऐसा अनुभव करते हैं,

हम गलती करते है। कभी कभी वनिक लोग उतने प्रसन्न नहीं रहते हैं, जितना हम सोचते है कि न होगे, क्योंकि वे कुछ काम न करने के कारण परेशान रहते है। हम में से बहुत से लोग उस समय प्रसन्न रहते है जब उन्हें अपने जीविकोपार्जन के लिए नियमित काम करना पडता है, विशेषकर यदि वह काम भी वैसा हो, जैसा हम करना चाहते हैं। काम करते रहने से, पहली बात यह होती है कि वह हमें प्रसन्नता देता है, फिर उससे आत्म सम्मान भी मिलता है। एक आलसी— चाहे कितना ही धनी क्यों न हो— दूसरो के काम पर निर्भर होता है। वह गली के उस भिखारी के समान है, जो उन लोगों से धन प्राप्त कर लेता है, जिन्हें उसके लिए परिश्रम करना पडता है। ऐसे मनुष्य स्वतन्त्रता मे नहीं रह सकते हैं और उन्हें अपने प्रति लज्जित होना चाहिए।

(४)

The world is now ripe for the recognition of the greater community beyond the state. This recognition must take the form of a real international system, adequate to and co-extensive with the common interests which it protects and furthers. It is, as we have seen, an elementary social principle that wherever a common interest extends a corresponding association ought to exist. This principle has led to the establishment of international associations of trade of science, of art, of capital, of labour But justice and order are the most universal of interests, and yet their guardian, the state, with its conservative tradition of an absolute sovereignty, has with stood the necessary process of community, thus greatly impeding all other associations, which have taken the wider view.

अनुवाद—आज का विश्व, राष्ट्र के बाहर भी, बृहत्तर समाज को मान्यता देने के लिए प्रस्तुत है। इस मान्यता को एक वास्तविक अन्तर्राष्ट्रीय पद्धति का ऐसा रूप ग्रहण करना चाहिए, जो जन साधारण के उन हितों के लिए पर्याप्त और समान लाभप्रद हो, जिनकी सुरक्षा और उन्नति, उसका उद्देश्य है। जैसा कि हम जानते हैं, यह एक आरम्भिक सामाजिक सिद्धान्त है कि जहा समान हित आगे बढते हैं, वहां उनके अनुकूल एक संस्था बन जाती है। इस सिद्धान्त के फलस्वरूप ही, व्यापार, विज्ञान, कला, अर्थ और श्रम की अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं

का निर्माण हुआ लेकिन उस न्याय और व्यवस्था का जो समाज के हितो मे सर्वप्रिय है संरक्षक राष्ट्र एक सम्पूर्ण प्रभुत्व की अनुदार परम्परा के कारण, समाज की आवश्यक उन्नति में बाधक रहा है, और इस प्रकार उन सब संस्थाओ को, जो उदार दृष्टिकोण रखती हैं, बहुत विघ्न पहुँचाता रहा है।

(५)

Of all the books, I have studied so far, there are two, I have found most interesting and appealing They are the Ramayana and the Mahabharat These two books are the great epic in Indian literature. The another of the Ramayana was the great poet Valmiki and that of the Mahabharat was Vyas. The Ramayana is the story of Great Ram, son of Dasarath, the king of Ayodhya. The Mahabharat describes the war between Kauravas and Pandavas at the famous battle field of Kurukshettra. The Ramayana consists of about a dozen of wonderful characters, which are neither too high nor too low. They have fine qualities They are living characters of flesh and blood having individual personality.

अनुवाद—उन सब पुस्तको मे, जिन्हें मैंने अब तक पढा है, दो ऐसी हैं, जो मुझे बहुत प्रिय हैं और प्रभावित करती हैं। वे रामायण और महाभारत है। ये दोनो ग्रथ भारतीय साहित्य के प्रसिद्ध महाकाव्य है। रामायण के रचयिता महाकवि बाल्मीकि थे और महाभारत के, व्यास। रामायण, अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र, महान् राम की कथा है और महाभारत मे कौरवो तथा पाण्डवों के बीच कुरुक्षेत्र में हुए प्रसिद्ध युद्ध का वर्णन है। रामायण मे लगभग एक दर्जन अद्भुत पात्र है जो न बहुत उच्च है और न बहुत नीच। उनमे पाचो गुण है। वे स्वतन्त्र व्यक्तित्व वाले लौकिक और सजीव पात्र हैं।

नीचे अभ्यास के लिए कुछ खण्ड दिए जा रहे है—

(१)

The study of humanities trains our insticts and emotions and helps the formation of sentiments. It appeals to the heart rather than to the head. In order to fine concrete shape to our ideas, we require detailed study of humanities. It creates sympathy and produces the spirit of service and self-sacrifice It exercises great effect on men's faith and belief and sreves him from narrow mindedness. It aims at bringing happiness and balance in life and developes the power to create, the power to enjoy and the power to criticise.

२

In order that trance may be of educational value, it must be overtaken slowly. A whirl wind tour does not cover any real benefit We get only superficial knowledge and impressions of the countries and people, which are very soon obliterated. American globe-trotters trance with great speed Such a tour can hardly be of any value from the point of view of education In this respect slow travel of farmer days was latter than the swift travel of today. Moreover, travelling must be done under and experienced guide who may be able to tell what things are worthy to be seen in the country.

(३)

The great advances in socialization up to the present time has been the establishment of the nation as a real community. To transcend the locality and region, to break down the mental isolation of the smaller groups, their sense of alienation from one another, their jends and prejudices and their fierce spritual pride, in such a way that they attached themselves to one another in the unity of the nation, was the work of ages. Conquest and empire could not do it. These brought domination and order over great areas, but not the sense of nationality.

(४)

Man does this mean that society is more developed. We must not think that primitive communities are more socialised, because they are more subject to the simple common rule. Their society is shallow as their individualitve is weak. The child is not more socialized because it is more imitation and receptive. The man is more socialized who understands his own relation to societe and achieves is effort and trial and often with conflict.

(५)

Newspapers also serve a means of communications between the government and the governed. The rulers and the ruled publish their view points in papers and aim at mutual understanding. Newspapers voice popular grievances, advocate popular rights suggest measures of reforms and serve as a check on mis-government. They organise relief measures in time of famine or floods, earth quakes and epidenics.

६

Systematic search for manuscripts in the various parts of India, particularly in the south, has revealed the existance of a number of important works on almost every branch of Sanskrit learning Most of these had been given up as lost beyond hope and their fortunate discovery gave a fresh impetus to Ancient India scholarship and resulted in a great outburst of activity in the field of oriental researches. It would be no exaggeration to say that in certain respects at least, these newly discovered texts have changed the outlook of oriental scholars almost beyond recognition.

इसी प्रकार सस्कृत से हिन्दी मे अनुवाद करते समय भी पूर्वोक्त सिद्धातो को ध्यान मे रखना चाहिए। कुछ उदाहरण प्रस्तुत है।

(१)

स पुरुषस्तं विहगम शुकमादाय पंजरगतमेव किंचिदुपसृत्य राज्ञे न्यवेदयत्। अब्रवीच्च—देव! विदित सकलशास्त्रार्थः, राजनीति प्रयोगकुशलः, पुराणेतिहासकथालापनिपुणः, वेदिता गीतश्रुतीनां, काव्यनाटकाख्यायिकाख्यानक प्रभृतीनामपरिमितानां सुभाषितानामध्येता स्वयं च कर्ता, परिहासालाप पेशल., वीणावेणुमुरजादीनामसमः श्रोता, नृत्त प्रयोगदर्शन निपुण', चित्रकर्मणि प्रवीण, द्यूतव्यापारे प्रगल्भः, प्रणयकलह कुपित कामिनी प्रसादनोपायचतुरः, गजतुरग पुरुष स्त्री लक्षणा भिज्ञ· सकल भूतलरत्नभूतोऽयं वैशम्पायनो नाम शुकः सर्वरत्नानां मुदधिरिव देवो भाजनमितिकृत्वैनमादायास्मत्स्वामि दुहिता देव पाद मूल मायाता। 'तदयमात्मीयः क्रियताम्' इत्युक्त्वा नरपते पुरो निधाय पंजरमसावपससार।

अनुवाद—उस पुरुष ने उस पक्षी तोते को, पिंजड़े सहित लेकर और कुछ आगे बढकर राजा से निवेदन किया। वह बोला हे देव ! यह वैशंम्पायन नाम का तोता सब शास्त्रो के अर्थ का ज्ञाता, राजनीति के प्रयोग में कुशल, पुराण और इतिहास की कथाओं के कहने में निपुण, गान-विद्या और स्वर-विद्या का पंडित, काव्य, नाटक आख्यायिका और आख्यान आदि अपरिमिति सुभाषितो का पढ़ने वाला और स्वयं निर्माण करने वाला, हंसी-मजाक में चतुर, वीणा, वेणुमुरज आदि वाद्यों का अद्वितीय श्रोता, नृत्य के विभिन्न प्रयोगों के विवेचन में कुशल, चित्र-

कारी मे प्रवीण द्यूत क्रीडा मे दक्ष प्रणय कलह से कुपित स्त्रियो को मना लेने मे चतुर, हाथी, घोड़ा, पुरुष स्त्री आदि के लक्षणो का पारखी और समस्त पृथ्वी मे यह रत्न है। 'आप सभी रत्नों के आगार हैं इसलिए यह आप ही के योग्य है' ऐसा सोचकर मेरे स्वामी की पुत्री इस तोते को लेकर आप के समीप आई है, 'तो फिर आप इसे अपनावें' ऐसा कह कर और राजा के सामने पिंजड़ा रख कर वह पुरुष पीछे हट गया।

(२)

प्रत्यूषे चोत्थाय तेनैव क्रमेणानवरतप्रयाणकैः प्रतिप्रयाणक-मुपचीयमानेन सेना समुदायेन जर्जरयन्वसुंधराम्, आकम्पयन्गिरीन्, उत्सिचन्सरित, रिक्ती कुर्वन्सरासि, चूर्णयन्काननानि, समीकुर्वन्विषमाणि, दलयन्दुर्गाणि, पूरयन्निम्नानि, निम्नयन्स्थलानि प्रतिष्ठता शनैः शनैश्च स्वेच्छया परिभ्रमन्, नम्नयन्नुन्नतान, उन्नमयन्नवनतान्, आश्वासयन्भीतान् रक्षञ्शरणागतान्, उन्मूलयन्विटपकान्, उत्सादयन्कंटकान्, अभिषिचन्स्थानस्थानेषु राज पुत्रकान्, समर्जयन्रत्नानि, प्रतीच्छन्नुपायनानि, गृह्णन्करान्, आदिशन्देशव्यवस्थाम्, स्थापन् स्वचिह्नानि, कुर्वन्कीर्तनानि, लेखयञ्शासनानि, पूजयन्नग्र जन्मन, प्रणमन्मुनीन्, पालयन्नाश्रमान्, आरोपयन्प्रतापम्, उपचिन्वन्यशः, विस्तारयन्गुणान् प्रख्यापयन्सच्चरितम्, आमृन्दंश्च वेलावनानि, बलरेणुभिराधूसरीकृतसकलसागरसलिल, पृथिवी विचचार।

अनुवाद—प्रात काल उठकर (उसने) उसी क्रम से अनवरत अभियान करते हुए और प्रत्येक अभियान में सेना समुदाय को बढ़ाकर पृथ्वी को जर्जर करते हुए, पर्वतों को कंपाते हुए, नदियों को उलीचते हुए, सरोवरों को सुखाते हुए, वनों को चूर्ण-चूर्ण करते हुए, विषम स्थलो को सम करते हुए, दुर्गों को दलते हुए, खड्डों को पूरते हुए, ऊंचे स्थानो को नीचा करते हुए और स्वेच्छा से धीरे धीरे घूमते हुए, ऊंचे सिर वालो को झुकाते हुए, झुके हुए लोगो को उठाते हुए, भयभीतों को आश्वस्त करते हुए, शरणागतों की रक्षा करते हुए, विटों (चुगल खोरों) को मिटाते हुए, शत्रुओं को नष्ट करते हुए, स्थान स्थान पर राज पुत्रो का अभिषेक करते हुए, रत्नों का सग्रह करते हुए, भेंट लेते हुए, कर ग्रहण करते हुए, देश व्यवस्था के लिए आदेश देते हुए, अपने चिन्हो के स्थापित करते हुए, कीर्तन करते कराते हुए, अपनी आज्ञा लिखाते (खुदवाते) हुए, ब्राह्मणो को पूजते हुए, मुनियों को प्रणाम करते हुए, आश्रमों को पालते

हुए, प्रताप को आरोपित करते हुए, यश को पुष्ट करते हुए गुणों का विस्तार करते हुए सच्चरित्र को प्रतिष्ठित करते हुए और समुद्र तट की भूमि को रगड़ते हुए, अपनी सेना के सचालन से उड़ी हुई धूल से सभी समुद्रों के जल को मटमैला करते हुए सारी पृथ्वी का भ्रमण किया ।

(२)

नह्येव विधमपरिचितमिह जगति किंचिदस्ति यथेयमनार्या । लब्धापि खलु दु.खेन परिपाल्यते । दृढगुणसन्दान निस्पन्दीकृतापि नश्यति । न परिचयं रक्षति । नाभिजनमीक्षते । न रूपमालोकयते । न कुलक्रममनुवर्तते । न शीलं पश्यति । न वैदग्ध्यं गणयति । नश्रुतमाकर्णयति । न धर्ममनुरुध्यते । न त्यागनाद्रियते । न विशेषज्ञता विचारयति । नाचारं पालयति । न सत्य मनुबुध्यते । न लक्षण प्रमाणीकरोति । गधर्वनगर लेखेव पश्यत एव नश्यति । सरस्वती परिगृहीत मीर्ष्ययेव न लिंगति । जनं गुणवन्तम पवित्रमिव न स्पृशति । उदार मावाममंगलमिव न बहु मन्यते । सुजनमनि मित्त मित्र न पश्यति । अभिजातमहिमिव लघयति । शूरं कंटक मिव परिहरति, दातारं दु.स्वप्नमिव न स्मरति । विनीतं पातकिन मिव नोपसर्पति । मनस्विन मुन्मत्तमिवोपहसति । परस्पर विरुद्धं चेन्द्रजालमिव दर्शयन्ती प्रगटयति जगति निज चरितम् ।

अनुवाद—संसार में इतना अधिक अपरिचित और कोई नहीं, जितनी यह लक्ष्मी है । मिल भी जावे, तो बड़े दुःख से इसकी रक्षा होती है । गुणों के दृढ़ बंधनों से बांधकर निस्पन्द कर देने पर भी चली जाती है । न परिचय की रक्षा करती है । न कुल देखती है । न रूप परखती है । न कुल-क्रम का पालन करती है । न शील समझती है । न विदग्धता का सम्मान करती है । न शास्त्र सुनती है । न धर्म का अनुरोध मानती है । न त्याग का आदर करती है । न विशेषता का विचार करती है । न आचार का पालन करती है । न सत्य का ध्यान रखती है । न लक्षणों को ही प्रमाण मानती है । जादू की लकीर की तरह देखते देखते मिट जाती है । सरस्वती के उपासकों का, मानो ईर्ष्या के कारण आलिंगन नहीं करती है । गुणी व्यक्ति को अछूत की तरह नहीं छूती है । उदार मनुष्य को अमंगल की तरह कुछ नहीं समझती है । सज्जन को अशकुन की तरह नहीं देखती है । कुलीन को सांप की तरह लांघ जाती है । शूर को कांटे की तरह छोड़ देती है । दाता को दुःख की तरह भूल जाती है । नम्र को पापी की तरह समझ कर उसके पास नहीं जाती है । मनस्वी को

उन्मत्त मान कर उसकी हँसी उड़ाती है। इस प्रकार परस्पर विरुद्ध तमाशे दिखलाती हुई अपने विचित्र चरित्र को ससार मे प्रगट करती है।

(४)

विद्यावतां भागवते परीक्षेति प्रसिद्धचैव भागवतस्य विषयगाम्भीर्यमनुमीयते, उपलभ्यन्ते चास्योपरि नाना भाषासु निबद्धाः बहुविधाः व्याख्याः। देव भाषायां तु भागवतोपरि बहुशष्टीकाष्टिकिताः सन्ति। एतेन श्री मद्भागवतस्य लोके समादरणीयता सूच्यते। महत्ता च। सत्यमेवैतद् यद् भागवत धर्माणां चेद् विश्वस्मिन्नस्मिन् सर्वत. प्रचारो भवेत्तर्हि न दन्दह्येत दुःखदावानल ज्वालायामिदानीमिव कोऽपि जागति को जन। अतो जगति यथा यावानपि प्रसारः संभवेच्छ्रीमद्भागवतस्य तदर्थमुद्योगो विधातव्य एवास्माभिर्निः श्रेयसपथ पान्थैः।

अनुवाद—'विद्वानो की भागवत मे परीक्षा होती है' इस प्रसिद्धि से ही भागवत की विषम गंभीरता का अनुमान किया जा सकता है। इसके ऊपर अनेक भाषाओं मे बहुत सी व्याख्याए लिखी हुई मिलती है। देव भाषा संस्कृत मे ही भागवत के ऊपर बहुत सी टीकाए दिखलाई पडती है। इससे संसार में श्रीमद्भागवत के आदर और महत्व का पता लग जाता है। यह सत्य है कि यदि इस समस्त संसार में भागवत् धर्म का सभी ओर प्रचार हो, तो संसार का कोई भी आदमी, दु:खदाग्नि से जैसा इस समय जल रहा है, फिर नहीं जले। इसलिए संसार मे श्रीमद्भागवत का जितना भी, जैसा भी प्रचार हो सके, उसके लिए धर्म पथ के पथिक हम लोगों को पूर्ण उद्योग करना चाहिए।

(५)

मानवस्तु बुद्धिजीवी प्राणी। यथायं क्षुधा पीडितो भवति, तथैव जिज्ञासयापि। अन्नक्षुत्तु भौतिकी, तत्क्षणमेव भोजन दर्शनेन शाम्यति, परंतु जिज्ञासा तु आध्यात्मिकी वर्तते, तस्या प्रभावोऽपि बहुकालमपेक्षते। सृष्टेरादितः अद्यावधि मानवो नवीन पदार्थाना माविष्करणाय नितरां व्यस्तः। ज्ञानस्य सीमा नैव, तस्य विभागा अपि असख्येयाः। सर्वाण्यपि शास्त्राणीमानि जिज्ञासा परिणामानि, तदर्थमेव निर्मितानि च, किन्तु घृतेनाग्निरिव तैर्जिज्ञासा सुतरां वर्धते। अयमेव मानवस्याध्यवसायः ज्ञानसरणि प्रति। कोटिसंख्याकाः ग्रंथा लिखिताः प्रकाशिताश्च सन्ति, तथैव कोटि संख्याकाः अप्रकाशिताः वर्तन्ते, अन्ये बहवो ग्रंथा अर्धलिखिता लेखकानां परिश्रमपेक्षन्ते। किं बहुना, अनन्तोऽयं क्रमः अपारोऽयं ज्ञान सागरः। नैक जीवनेऽत्र साफल्यं लभ्यते, विद्यार्णवे।

अनुवाद मनुष्य बुद्धिजीवी प्राणी है। जैसे यह क्षुधा से पीड़ित होता है वैसे ही जिज्ञासा से भी अन्न की भूख तो भौतिकी है, उसी तरह भोजन दर्शन से शान्त हो जाती है किन्तु जिज्ञासा (ज्ञान की भूख) तो आध्यात्मिकी है और उसका प्रभाव भी बहुत समय की अपेक्षा रखता है। सृष्टि के आदि से आज तक मानव नये पदार्थों के आविष्कार मे बहुत व्यस्त है। ज्ञान की सीमा नहीं है, उसके विभाग भी असंख्य हैं। ये सभी शास्त्र जिज्ञासा के परिणाम हैं और उसी के लिए बने हुए है, किन्तु घी से आग की तरह, उनसे जिज्ञासा अधिक बढती ही है। यही ज्ञान परम्परा के प्रति मनुष्य का अध्यवसाय है। करोड़ों ग्रंथ लिखित और प्रकाशित है, करोड़ो अप्रकाशित हैं और दूसरे बहुत से ग्रंथ—आधे लिखे हुए हैं और लेखकों के परिश्रम की अपेक्षा करते है। अधिक कहने से क्या, यह क्रम अनन्त है, ज्ञानसागर अपार है। एक जीवन में ही इस विद्या-सागर मे सफलता नही प्राप्त होती है।

अब अभ्यास के लिए कुछ खण्ड दिए जा रहे हैं:—

(१)

भारत भूमिरियं विश्वस्मिन्नस्मिन प्राचीनतमा। अत्र अस्यांशस्यश्यामलाके प्रथमो मानवः समुत्पन्नः। पश्यतिस्म समन्ततो विस्तृता प्रकृति, वर्णयतिस्मतन्नाना विधैः छन्दोभिः रूप सौन्दर्य, तथा च गायति स्म मिलित स्वरेण तारस्वरेण विश्वप्रबोधनाय। ज्ञानराशिर्वेदोऽनेनैव पथा लब्धोऽस्माभिः। अस्माकं पावनमस्कृतेर्धारा सततं प्रवहमाना अद्यापि भारतीयान् गौरवान्वितान् विदधाति। भारतीय शब्दस्योच्चारणमात्रेण या स्फूर्तिरनुभूयते, यो नवसाहसो जागर्ति या वानुत्साहो वरीवर्ति, तत्तु कुत्रापि केनाऽपि प्रकारेण नोपलभ्यते। विदेशिनामाक्रमणेऽपि संस्कृतिरस्माकं सुरक्षिता, सुतुष्टा सुदृढा वर्ततेऽद्यापि। कामये तस्याः सर्वतः समुन्नतिम्।

(२)

ऋतुराजोऽयं वसन्तः साम्प्रत प्रतिभाति सर्वत्र। अमृतस्य वर्षा अत्रान्तरे एव भवति। वायुमंडलं च पवित्रं भवति। नवसृष्टेरुल्लासो दरीदृश्यते सर्वास्वाशासु। अभिनवकोमल किसलयानां समुद्गमः। पुष्प पावनपरागवाही मन्दानिलः। कुसुमकलिकावक्षःसु परस्हारमविरतं कुर्वाणाभ्रमरपंक्तयः। आम्रमंजरीणामुपरि सततं कूजयन् कोकिलकुलालापः। नानावर्णा पुष्पै विरचिता स्वागत पट्टिका। आरामेषु मनोरमणाय बहवो विलासा। सर्वे सूचयन्ति ऋतु राजस्य आगमनम्। उद्यताः सन्ति सर्वे प्रणमनाय।

३

क्रमेण कृत चूडा करणादिक्रियाकलापस्य शैशवमतिचक्राम चन्द्रापीडस्य। तारापीडो व्यासंगविघातार्थं बहिर्नगराद् अनुसिप्रमर्धकोशमात्रायामम् अतिमहता तुहिनगिरिशिखरमालानुकारिणा सुधाधवलितेन प्राकारमंडलेन परिवृतम्, अनुप्राकारमाहितेन महता परिखावलयेन परिवेष्टितम्, अतिदृढकपाट संपुटम्, उद्घाटितैकद्वारप्रवेशम्, एकान्तोपरचित तुरग बाह्याली विभागम् अध.कल्पित व्यायाम शालम् अमरागाराकारं विद्यामन्दिरमकारयत्। सर्वविद्याचार्याणां च संग्रहे यत्नमति महान्तमन्वतिष्ठत्।

(४)

सखे पुण्डरीक ! नैतदनुरूपं भवत.। क्षुद्रजनक्षुण्ण एष मार्गः। धैर्यधना हि साधवं.। कुतस्तवापूर्वोऽयमाद्येन्द्रियोपप्लव.। क्व ते तद्धैर्यम्। क्वासाविन्द्रियजयः। क्व तद् वशित्वम्, चेतसः क्वसा प्रशान्तिः, क्व तत्कुल क्रमागतं ब्रह्मचर्यम्। क्वसा सर्व विषय निरुत्सुकता। क्वते गुरूपदेशाः क्व तानि श्रुतानि। क्वता वैराग्य बुद्धय। क्व तदुपभोग विद्वेषित्वम्। क्व सा सुख पराङ्मुखता। क्वासौ तपस्याभिनिवेशः। क्व सो भोगानामुपर्यरुचिः। क्व तद् यौवनानुशासनम्। सर्वथा निष्फला प्रज्ञा, निर्गुणो धर्मशास्त्राभ्यासः, निरर्थकाः संस्काराः। किमेतत्।

(५)

मन्ये मरणं क्षणविश्रामम्।

इदं जीवनं महती यात्रा।
पाथेयः श्वासाना मात्रा॥
तस्मिन् क्षीणे नवे शरीरे,
पुनराकेलनं क्रियते यात्रा॥

एवं पथिको यात्पविरामम्।
मन्ये मरण क्षणविश्रामम्॥

प्रातर्भानुरुदेति सदाऽयम्।
दिनं चरित्वास्तमितः सायम्॥
पुनः परेद्युः प्रत्यूषसि किं,
पूर्णप्रभया गच्छति नायम्॥

एष नव नव प्रतियामम् ।
मन्ये मरणं क्षणविश्रामम् ॥

पश्य गगनतो वर्षति बिन्दुः ।
पुनस्तमप्याकर्षति सिन्धुः ॥
करमाश्रित्य नभस्तद् गत्वा,
भूयो भवति मृत्तिकाबन्धुः ॥

एवं चक्रं चलति निकामम् ।
मन्ये मरणं क्षणविश्रामम् ॥

अरे, वटाद् बीजस्योत्पत्तिः ।
बीजेनैव तस्य सम्पत्तिः ॥
वटबीजयोः किमासीत्पूर्वम् ,
विदुषमित्र नैव प्रतिपत्तिः ॥

उभयं मन्य उभयपरिणामम् ।
मन्ये मरणं क्षणविश्रामम् ॥

(६)

माता शत्रु पिता वैरी येन बालो न पाठितः ।
न शोभते सभामध्ये हंस मध्ये बको यथा ॥
कामं क्रोधं तथा लोभं स्वादुं शृंगार कौतुके ।
अतिनिद्राति सेवा च विद्यार्थी ह्यष्ट वर्जयेत ॥
सत्य माता पिता ज्ञानं धर्मो भ्राता दया सखा ।
शान्ति पत्नी क्षमाः पुत्रः षडेते मम बान्धवाः ॥
काव्य शास्त्र विनोदेन कालो गच्छति धीमताम् ।
मूर्खाणांतु प्रमादेन निद्रया कलहेन वा ।
यद्यपि बहुनाधीये तथापिपठपुत्र व्याकरणम् ।
स्वजनः स्वजनो माभूत् सकलः शकलः सकृच्छकृत् ॥

कालेज प्रेस, जयपुर ।

भाषा

शाब्दिक अर्थ

भाषा का शाब्दिक अर्थ है जो कुछ बोला जाये[1] अथवा जिसके द्वारा बोला जाये[2]। इस प्रकार मनुष्य जो कुछ बोलता है अथवा जिसके द्वारा बोलता है, वह सब उसकी भाषा है।

वास्तविक अर्थ

भाषा का वास्तविक अर्थ उपर्युक्त परिभाषा से भिन्न है, क्योंकि हम जो कुछ बोलते है, वह हमारी बोली है। इसी प्रकार पशु-पक्षी भी जो कुछ बोलते है, वह उनकी बोली है। बोलियां सभी समान होती हैं, क्योंकि एक तो वे सदैव मौखिक रहती हैं और दूसरे उनमे अनेकरूपता होती है। इन दोनों दोषों के दूर हो जाने पर ही, किसी बोली का ऐसा विकास सम्भव हो सकता है कि वह भाषा का पद ग्रहण कर सके। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि किसी भी बोली का साहित्य, जब तक लिखित अथवा प्रकाशित और एक नियमित रूप में सुस्थिर नहीं हो जाता है, तब तक उसको 'भाषा' कहलाने का गौरव प्राप्त नहीं हो सकता है।

इस विश्लेषण से, जहां यह निश्चित होता है कि कोई भी बोली, विकसित होने पर भाषा के सिंहासन पर आरूढ हो सकती है, वहां यह भी ध्वनित होता है कि कोई भी भाषा, विकास रुक जाने पर 'बोली' के रूप में अवशिष्ट रह जाती है।

इस प्रसंग में ब्रज भाषा और खड़ी बोली के उदाहरण उल्लेखनीय है। १०वी शताब्दी से लेकर १९वी शताब्दी तक हिन्दी साहित्य पर ब्रज भाषा का

---

1. 'भाष्यते' इति सा भाषा।
2. भाष्यते ऽनया सा भाषा।

लगभग एकछत्र साम्राज्य रहा है किन्तु पिछले ५० वर्षों से उसमें इतने साहित्य का निर्माण नहीं हुआ है कि उसका भाषा-पद सुरक्षित रह सकता। यही दशा रही तो निकट भविष्य मे वह केवल एक बोली के रूप मे ही जीवित रह सकेगी। दूसरी ओर, खड़ी बोली ने पिछले शतक मे इतनी आशातीत उन्नति की है कि वह आज राष्ट्रभाषा के पद पर सुशोभित है और हिन्दी के सभी मूर्धन्य साहित्यकार उसकी निरन्तर अभिवृद्धि के लिए प्राणपण से सदैव सचेष्ट है।

इस प्रकार बोली और भाषा के विवेचन से यह सिद्ध हो जाता है कि भाषा के प्रारम्भिक एवं अविकसित रूप को ही बोली कहते हैं और जब उसमे इतना विकास हो जाता है कि उसमे व्याकरण तथा वैज्ञानिक वर्गीकरण के साथ साथ प्रकाशित स्थायी साहित्य प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध हो सके, तब वही बोली अपने वास्तविक अर्थ मे भाषा कहलाने लगती है।

भाषा और विचार

मनुष्य एक विचारशील प्राणी है वह अपने चारों ओर के वातावरण से प्रभावित होता है और उस पर विचार करता रहता है। उन विचारो के व्यक्त करने एव परस्पर आदान-प्रदान के लिए उसको भाषा की आवश्यकता होती है। भाषा के विकास के पहले वह कुछ ऐसे संकेतों एव ध्वनियों से काम चलाता था, जो प्राय: सर्वसम्मत होते थे। सकेतो का प्रयोग तो, हम आज भी करते है। अपनी बात को स्पष्ट करने के लिए अथवा उस पर बल देने के लिए हमे हाथ, पैर, मुंह, आख आदि का संचालन करना ही पड़ता है। गूंगो के लिए तो यही अकेला सहारा है, किन्तु जिन्हे वाणी का वरदान मिला हुआ है, वे विशिष्ट ध्वनियो का भी इच्छानुसार व्यवहार करते है। जिस प्रकार सकेतो के कुछ अर्थ स्थायी एवं सुस्थिर हो गए हैं, उसी प्रकार उन ध्वनियों के भी अपने निश्चित अर्थ होते हैं। इन्ही सार्थक ध्वनियो के समूह का अध्ययन भाषा के रूप मे किया जाता है।

यह अभी कहा जा चुका है कि भाषा विचारो की वाहिका है हम जो भी कुछ विचार— गुप्त या प्रगट रूप से—करते है, वह भाषा के माध्यम से ही करते है। हम जब बोलते है, तब हम मानो जोर-जोर से विचार व्यक्त करते है और जब हम मन ही मन विचार करते है, तब हम धीरे धीरे बोलते है। बात एक ही है। वस्तुतः भाषा के जन्म का आदि कारण विचार ही है हमारे

मन में सर्वप्रथम जब कोई विचार उठता है और हम उसे व्यक्त करने के लिए अत्यन्त व्याकुल हो जाते हैं, तब उचित माध्यम का आविष्कार कर लेते हैं। यहा यह स्मरणीय है कि जिस भाषा मे, हमारे मन मे विचार उत्पन्न होता है, हम प्राय: अनुकूल परिस्थितियों मे उसी भाषा मे, उसे व्यक्त भी कर देते हैं किन्तु प्रतिकूल परिस्थितियो मे और अन्य भाषा के ज्ञान मे समर्थ होने पर, हम उसका भी प्रयोग कर सकते हैं।

भाषा के अङ्ग

भाषा का निर्माण वाक्यो से होता है और वाक्यो का शब्दो से। रचना के क्रम मे यद्यपि 'शब्द' पहले होते हैं और उनमे ही बाद मे वाक्य बनते हैं, तो भी विचार के क्रम में हम सदैव वाक्यों मे ही सोचते हैं, न कि शब्दो में, भले ही वह एक ही शब्द का वाक्य हो। छोटा बच्चा भी जब केवल 'पानी' का उच्चारण करता है, तब वह भले एक ही शब्द लगे, किन्तु उसी मे पूरा-पूरा वाक्य छिपा रहता है। उस 'पानी' के अनेक अर्थ हो सकते हैं। यथा पानी लाओ, पानी फैला है, पानी बरस रहा है आदि आदि।

वाक्य-निर्माण के लिए जिस प्रकार शब्द उत्तरदायी होते हैं, उसी प्रकार शब्द-निर्माण के लिए कुछ ध्वनियों की अपेक्षा होती है। 'ध्वनि' के लिए जिस प्रकार वर्ण अथवा अक्षर शब्द का व्यवहार किया जाता है, उसी प्रकार ध्वनि समूह के लिए 'वर्णमाला' शब्द का प्रयोग होता है। इस प्रकार भाषा के ३ प्रमुख अंग माने जाते है, (१) वर्ण, (२) शब्द और (३) वाक्य। इनका सम्यक् विवेचन कर लेने पर भाषा का विवेचन स्वयमेव सम्पन्न हो जाता है।

वर्ण-विचार

प्रत्येक भाषा में दो प्रकार के वर्ण होते है, (१) स्वर तथा (२) व्यंजन। जिन वर्णों का स्वतन्त्र उच्चारण किया जा सके, उन्हें स्वर कहते हैं और जिनके उच्चारण मे किसी न किसी स्वर का सहारा लेना पडे, वे व्यजन कहलाते हैं।

स्वर

हिन्दी के स्वर निम्नलिखित हैं:—

'अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, और औ।'

स्वरों के भेद—ह्रस्व दीर्घ और प्लुत

उच्चारण-काल की दृष्टि से स्वरो के ३ भेद किए जाते है, (१) ह्रस्व (२) दीर्घ (३) प्लुत। ह्रस्व स्वर के उच्चारण मे यदि एक मात्रा का समय

मान लें तो दीर्घ स्वर के उच्चारण में दो मात्रा का समय लगता है और प्लुत स्वर के उच्चारण मे तीन मात्राओं का समय चाहिए। इसी आधार पर छन्द-शास्त्र मे ह्रस्व स्वर को एक मात्रिक, और दीर्घ स्वर को द्विमात्रिक भी कहते हैं। उपर्युक्त स्वरो मे अ, इ, उ तथा ऋ ह्रस्व स्वर है और शेष दीर्घ स्वर है।

प्लुत स्वर का प्रयोग संगीत में, मंत्रोच्चार मे और किसी के आवाहन करने मे इच्छानुसार किया जा सकता है। इसको व्यक्त करने के लिए '३' के अंक का प्रयोग भी कहीं कहीं किया जाता है। 'ओ३म्' शब्द में 'ओ' और 'म्' के बीच मे '३' का प्रयोग 'ओ' के प्लुत होने की सूचना देता है, इसीलिए वहां 'ओ' का उच्चारण काफी देर तक किया जाता है। इसी प्रकार 'गोपाल' का आवाहन करते समय हम 'गो' से अधिक 'पा' पर बल देते है और 'ल' का उच्चारण बहुत धीरे से करते है, अतः 'गोपाल' मे 'गो' जहा दीर्घ है, वहां 'पा' प्लुत है और 'ल' तो ह्रस्व है ही। 'पिताजी' को बुलाने मे हम 'जी' का उच्चारण प्लुत स्वर मे करते है, वहा 'पि' ह्रस्व है और 'ता' दीर्घ है। 'जीजी' को पुकारने में पहला 'जी' दीर्घ है, किन्तु दूसरा 'जी' प्लुत है। व्यवहार करते करते इस स्वर की अच्छी पहिचान हो जाती है। वैसे भाषा में साधारणतया इसका प्रयोग नही होता है।

मूल स्वर तथा संयुक्त स्वर

रचना की दृष्टि से उपरिलिखित स्वरो के २ भेद होते है, (१) मूल स्वर और (२) संयुक्त स्वर। उन स्वरों मे अ, इ, उ और ऋ 'मूल स्वर' है तथा अन्य सभी स्वर 'संयुक्त स्वर' कहलाते है क्योकि वे कुछ स्वरों के संयोग से ही बने हैं। यथा

आ = अ + अ
ई = इ + इ
ऊ = उ + उ
ए = अ + इ
ऐ = अ + ए
ओ = अ + उ
औ = अ + ओ

इसी नियम के आधार पर सस्वर शब्दो के संयोग मे स्वर-सन्धि के दर्शन होते है। 'सन्धिप्रकरण' मे इस विषय पर सविस्तार विचार किया जायगा।

अन्य स्वर

उपर्युक्त स्वरो के अतिरिक्त हिन्दी की वर्णमाला मे अं और अः दो अन्य स्वर भी है। ये दोनो दीर्घ स्वर है और क्रमश. अनुस्वार तथा विसर्ग कहलाते हैं। इनमे अनुस्वार में ङ, ञ, ण, न और म की ध्वनि तथा विसर्ग मे 'ह' की ध्वनि सुनाई पड़ती है, इसलिए इनको 'अर्ध व्यंजन' भी कह दिया जाता है।

अनुस्वार

अनुस्वार को व्यक्त करने के लिए उस वर्ण के ऊपर हम '‒ं' इस चिन्ह का प्रयोग करते है, यथा पंक, चंचल, घंटा, संत, चंपा आदि। यहां ध्यान रखना चाहिए कि अनुस्वार के लिए हम उसके मूल व्यंजन 'ङ, ञ, ण, न और म' का भी प्रयोग कर सकते है और वही शुद्ध है, किन्तु प्रेस एवं लेख की सुविधा के लिए ही हम उस चिन्ह का सर्वत्र प्रयोग करते हैं।

किसी शब्द मे प्रयुक्त अनुस्वार के मूल व्यंजन को पहिचानने के लिए यह आवश्यक है कि हम अनुस्वार के ठीक बाद वाले व्यंजन का सवर्गीय अन्तिम व्यंजन याद रखें। वह अनुस्वार बस उसी व्यंजन का प्रतीक है। उपर्युक्त 'पंक' आदि उदाहरणों के विश्लेषण से यह बात और स्पष्ट हो जायगी।

'पंक' मे अनुस्वार के पश्चात् 'क' व्यंजन है और 'क' के वर्ग का अंतिम व्यंजन 'ङ' है, अतः वह अनुस्वार यहा 'ङ' का प्रतीक है और उसके बदले मे प्रयुक्त हुआ है। इसलिए हम 'पंक' को 'पङ्क' के रूप मे भी लिख सकते हैं और यही रूप वस्तुत. शुद्ध है, किन्तु इस सम्बन्ध मे 'सुविधा' का उल्लेख अभी किया जा चुका है। चंचल आदि शेष उदाहरणों मे भी यही बात समझनी चाहिए। नीचे प्रत्येक वर्ग के कुछ उदाहरण और उनके दूसरे लिखित रूप भी दिए जा रहे है—

(क) कवर्ग (क, ख, ग, घ और ङ)

अनुस्वार युक्त रूप	व्यंजन युक्त रूप
१. शंका	शङ्का
२. शंख	शङ्ख
३. गंगा	गङ्गा
४. संघ	सङ्घ

(ख) चवर्ग (च, छ, ज, झ और ञ)

५. चंचल	चञ्चल
६. वांछा (इच्छा)	वाञ्छा
७. कुंज	कुञ्ज
८. झंझा	झञ्झा

(ग) टवर्ग (ट, ठ, ड, ढ और ण)

९. घंटा	घण्टा
१०. कंठ	कण्ठ
११. दंड	दण्ड
१२. ठंडा	ठण्डा

(घ) तवर्ग (त, थ, द, ध और न)

१३. संत	सन्त
१४. ग्रंथ	ग्रन्थ
१५. छंद	छन्द
१६. अंधा	अन्धा
१७. किंनर	किन्नर

(ङ) पवर्ग (प, फ, ब, भ और म)

१८. चंपा	चम्पा
१९. गुंफ	गुम्फ
२०. अंबर	अम्बर
२१. दंभ	दम्भ
२२. संमति	सम्मति

यहां यह याद रखना चाहिए कि पूर्वोक्त व्यंजनो के अतिरिक्त अन्य व्यंजनो के पहले प्रयुक्त होने वाला अनुस्वार, सदैव अनुस्वार ही रहता है और वहां उसका दूसरा व्यंजनयुक्त रूप नहीं होता है। यथा संयोग, संरक्षण, संलग्न, संवाद, संशय, ससार, संहार आदि।

इन उपर्युक्त उदाहरणो से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि व्यंजन-युक्त रूपों की अपेक्षा अनुस्वार युक्त रूप लिखने मे बहुत सरल है। क्योंकि उनमे सर्वत्र एक ऊर्ध्व विन्दु (–ं) से काम चल जाता है जब कि दूसरे रूपों में अनेकानेक व्यंजनो का ध्यान रखना पड़ता है।

विसर्ग

यह अभी कहा जा चुका है कि विसर्ग में 'ह्' ध्वनि सुनाई पड़ती है, यथा अतः, स्वतः, प्रातः, क्रमशः, शनैः आदि में क्रम से अतह्, स्वतह्, प्रातह्, क्रमशह्, शनैह् आदि सा जान पड़ता है। यह स्थिति शब्द के केवल अन्त में विसर्ग के प्रयोग करने पर होती है, किन्तु जब यह विसर्ग किसी शब्द के अन्त मे न होकर उसके बीच मे प्रयुक्त होता है, तब वहा 'ह्' ध्वनि नही सुनाई पड़ती है। यथा 'दुःख' के उच्चारण मे 'दुक्ख' जैसा लगता है। वहा विसर्ग के स्थान पर 'ह्' नही, किन्तु 'क' ध्वनि प्रतीत होती है।

अनुनासिक

अनुस्वार और विसर्ग के अतिरिक्त हिन्दी में अनुनासिक ध्वनि का भी अधिक प्रयोग होता है। जब किसी व्यजन को, आवश्यकतानुसार नाक के स्वर से बोलते है, तब यह ध्वनि सुनाई पड़ती है। 'अनुनासिक' शब्द का शाब्दिक अर्थ भी यही है। यथा फांक, आख, स्वाग, मूंघना, आच, पूंछ, गूंज, बांझ, बाट, गाठ, डाड, आत, गूंथना, तोंद, बाधना, सांप, सौंफ, बाबी, सांभर, सांय सांय, दांव, फांस, यहां, वहां, कहा आदि।

इस ध्वनि को व्यक्त करने के लिए पहले चन्द्र विन्दु (ँ) का प्रयोग किया जाता था, किन्तु अब उसके लिए सुविधानुसार, अनुस्वार की देखादेखी सर्वत्र केवल ऊर्ध्व विन्दु (ं) का ही प्रयोग होता है और वह मान्य भी हो गया है। इस एकीकरण से कभी कभी बड़ा भ्रम भी हो जाता है, किन्तु पाठक की सतर्क बुद्धि, उचित उच्चारण का शीघ्र निश्चय कर लिया करती है। यथा—

(१) वह हंस गा रहा है।

(२) वह हंस गा रहा है।

इन दोनों वाक्यों में 'हंस' का रूप एक ही है क्योकि वहां अनुस्वार अथवा अनुनासिक के स्थान पर एक ही चिन्ह (ं) का प्रयोग किया गया है। इनमें से एक वाक्य का अर्थ हो सकता है कि वह हंस (पक्षी) गा रहा है और दूसरे का अर्थ हो सकता है कि वह (लड़का अथवा आदमी) हँस रहा है और गा रहा है। यहा यदि अनुनासिक के लिए चन्द्र विन्दु (ँ) का प्रयोग किया जाता, तो यह गड़बड़ी न होती, किन्तु भाषा मे सरलता की सुविधा के लिए सब कुछ किया जा सकता है और किया जाना चाहिए।

व्यंजन

हिन्दी में निम्नलिखित ३३ व्यंजन हैं उच्चारण की दृष्टि से उनके ३ भेद होते हैं (१) स्पर्श (२) अन्तःस्थ और (३) ऊष्म ।

१. स्पर्श व्यंजन

इन व्यंजनो का उच्चारण जीभ के कही पर स्पर्श मात्र से होता है। इनके अन्तर्गत ५ वर्ग है और प्रत्येक मे ५ व्यंजन है, यथा

(१) कवर्ग—क, ख, ग, घ, ङ ।
(२) चवर्ग—च, छ, ज, झ, ञ ।
(३) टवर्ग—ट, ठ, ड, ढ, ण ।
(४) तवर्ग—त, थ, द, ध, न ।
(५) पवर्ग—प, फ, ब, भ, म । = २५

प्रत्येक वर्ग के प्रथम व्यंजनो से, इन वर्गों का उपर्युक्त नामकरण कर लिया गया है ।

२. अन्तःस्थ व्यंजन—य, र, ल, व । = ४

ये चारो व्यजन स्वरों और व्यंजनों के मध्य मे स्थित माने जाते है। इनमे स्वर की प्रवृत्ति अधिक है, अतः इनको 'अर्धस्वर' भी कहा जाता है। ये वास्तव मे विभिन्न स्वरो के संयोग से ही निर्मित हुए हैं, यथा

य = इ + अ
व = उ + अ
र = ऋ + अ
ल = लृ + अ

यहां यह ध्यान रखना चाहिए कि 'लृ' स्वर का प्रयोग केवल संस्कृत में होता है, हिन्दी मे नही होता। स्वर-सन्धि-प्रकरण मे इन व्यजनो पर विस्तार से विचार किया जायगा ।

३. ऊष्म व्यजन—श, ष, स, ह । = ४

इन व्यजनो के उच्चारण मे प्राण-वायु का अधिक वेग से प्रयोग होता है। इनमे 'ह' तो शुद्ध प्राण-ध्वनि है और शेष तीनो व्यंजन एक ही ध्वनि के विभिन्न ३ रूप हैं, जो इनके विभिन्न स्थानो मे उच्चरित होने के कारण इस प्रकार बन गए है।

अन्य व्यंजन

इन व्यंजनों के अतिरिक्त 'ड़ और ढ़' दो अन्य व्यंजन भी हिन्दी में स्वतन्त्र रूप से प्रयुक्त होते हैं, वैसे वे क्रमशः ड और ढ के नीचे बिन्दु के योग से बने हैं और उन्हीं दोनों वर्णों की समस्त विशेषताओं से सम्पन्न हैं। कुछ विदेशी ध्वनियों के सही उच्चारण के लिए हिन्दी में कुछ व्यंजनों के नीचे बिन्दु के प्रयोग की पद्धति चल पड़ी थी, जैसे क़, ख़, ग़, ज़, फ़ आदि, किन्तु अब वह समाप्त हो गई है, इसलिए व्यंजनों में आवश्यक वृद्धि न हो सकी।

संयुक्त व्यंजन

हिन्दी की वर्णमाला में क्ष, त्र, ज्ञ तीन अन्य व्यंजन भी मिलते हैं। वस्तुतः ये संयुक्त व्यंजन हैं। इनमें से 'क्ष' क और ष के योग से, 'त्र' त् और र के योग से तथा 'ज्ञ' ज और ञ के योग से निर्मित हुआ है, किन्तु क्ष, त्र और ज्ञ लिखने की अपेक्षा, इन्हें उपर्युक्त ढंग से क्रमशः क्ष, त्र और ज्ञ लिखा जाता है। इसी प्रकार द् और य के संयोग को 'द्य' न लिखकर 'द्य' के द्वारा प्रगट किया जाता है तथा द् और ध के संयोग को द्ध' न लिखकर 'द्ध' लिखा जाता है। वर्धाप्रणाली के अनुसार प्रचलित लिपि में, सभी संयुक्त वर्णों को अलग-अलग लिखकर स्वरहीन व्यंजनों में हलन्त का चिन्ह (्) लगा दिया जाता है। वहां उपर्युक्त विशेष वर्णों का प्रयोग नहीं होता है, जिसके परिणाम-स्वरूप वहां परीक्षा का 'परीक्षा' और आज्ञा का 'आज्ञा' हो जाने से उनके उच्चारण में बहुत बड़ा भेद हो जाता है किन्तु 'द्य' औ द्ध को वहां भले ही 'द्य' और 'द्ध' लिखा जाय, उनके उच्चारण में कोई भेद नहीं होता है। उच्चारण के इसी अन्तर को ध्यान में रख कर के यहां क्ष, त्र, ज्ञ को विशिष्ट संयुक्त व्यंजन के रूप में स्वीकृत किया गया है।

अल्पप्राण और महाप्राण

प्राणध्वनि के रूप में 'ह' का संकेत अभी किया जा चुका है। समस्त व्यंजनों में इसका योगदान उल्लेखनीय है, किन्तु कुछ व्यंजनों में इसका योग अधिक रहता है। अतः इस दृष्टिकोण से अल्प प्राण और महाप्राण के नाम से सभी व्यंजनों के २ भेद और किए जाते हैं।

अल्पप्राण व्यंजन

प्रत्येक वर्ग के पहले, तीसरे और पांचवें व्यंजन तथा अन्तःस्थ वर्ण अल्पप्राण कहलाते हैं। यथा

कवर्ग मे क ग ङ
चवग मे च ज, ञ ।
टवग मे—ट, ड, ण ।
तवर्ग मे—त, द, न ।
पवर्ग मे—प, ब, म ।
और अन्तस्थ वर्ण—य, र, ल, व ।

महाप्राण व्यंजन

अल्पप्राण व्यंजनों के अतिरिक्त शेष व्यंजन अर्थात् वर्गों के दूसरे और चौथे तथा ऊष्म वर्ण महाप्राण कहलाते हैं । यथा

कवर्ग में—ख, घ ।
चवर्ग में—छ, झ ।
टवर्ग मे—ठ, ढ (ढ़ भी) ।
तवर्ग मे—थ, ध ।
पवर्ग मे—फ, भ ।
और ऊष्म वर्ण—श, ष, स, ह ।

अंग्रेजी की वर्णमाला मे महाप्राण वर्ण नही है इसलिए वहा अल्पप्राण वर्णो मे ही प्राणध्वनि 'ह' (H) को मिला कर महाप्राण वर्णो का निर्माण कर लिया जाता है । यथा

अल्पप्राण	महाप्राण
क के लिए K	ख के लिए KH
ग के लिए G	घ के लिए GH
च के लिए CH	छ के लिए CHH
ज के लिए J	झ के लिए JH
ट के लिए T	ठ के लिए TH
ड के लिए D	ढ के लिए DH
त के लिए T	थ के लिए TH
द के लिए D	ध के लिए DH
प के लिए P	फ के लिए PH (F भी)
ब के लिए B	भ के लिए BH
स के लिए S	श के लिए SH

इस प्रकार अंग्रेजी लिपि (रोमन) की अपूर्णता तथा हिंदी लिपि (नागरी) की परिपूर्णता स्वतः स्पष्ट हो जाती है और हिन्दी के व्यंजनों की अल्पप्राणता और महाप्राणता भी अच्छी तरह से समझ में आ जाती है।

व्यंजनों का वर्गीकरण

स्थान और प्रयत्न के आधार पर व्यंजनों का दो प्रकार से वर्गीकरण किया जाता है। यह स्पष्ट है कि इन व्यंजनो के उच्चारण मे हमारी जीभ को बडा परिश्रम करना पडता है। कभी वह कण्ठ का स्पर्श करती है, कभी तालु का और कभी ओठ का, तो कभी वह मूर्धा मे संघर्ष करती है और कभी तालु से स्पर्श और संघर्ष दोनो करती है। कभी वह बेलन की तरह से चलती हुई सी तालु का स्पर्श करती है और कभी वह कहीं से टकरा कर झटके के साथ लौट आती है। उन विभिन्न स्थानो से सम्बन्धित जीभ के प्रयत्नों को ध्यान में रख करके ही व्यजनो का निम्नलिखित वर्गीकरण किया जाता है—

स्थान-सम्बन्धी वर्गीकरण

(१) कण्ठ से उच्चरित व्यंजन—क, ख, ग, घ और ङ (कवर्ग)।
(२) तालु से ,, ,, —च, छ, ज, झ, ञ (चवर्ग।
य और ष।
(३) मूर्धा से ,, ,, —ट, ठ, ड, ड़, ढ, ढ़, ण (टवर्ग)
और ष।
(४) दन्त से ,, ,, —त, थ, द, ध, (तवर्ग)।
(५) वर्त्स (मसूढ़ों से) ,, ,, —न, र, ल और स।
(६) ओष्ठ से ,, ,, —प, फ, ब, भ और म (पवर्ग)।
(७) दन्त और ओष्ठ से ,, ,,—व।
(८) काकल (कौवे) से ,, ,,—ह।

इसी प्रकार स्वरो का भी स्थान भेद से वर्गीकरण किया जाता है।

यथा (१) कण्ठ से उच्चरित स्वर—अ, आ।
२ तालु से ,, ,, —इ, ई।
(३) ओष्ठ से ,, ,, —उ, ऊ।
४) मूर्धा से ,, ,, —ऋ।
(५) कण्ठ-तालु से ,, ,, —ए, ऐ।
(६) कण्ठ और ओष्ठ से उच्चरित स्वर—ओ, औ।

कण्ठ से उच्चरित स्वर अथवा व्यजन के लिए एक शब्द है कण्ठ्य इसी प्रकार तालु के लिए 'तालव्य', मूर्धा के लिए 'मूर्धन्य', दन्त के लिए 'दन्त्य', वर्त्स के लिए 'वर्त्स्य', ओष्ठ के लिए 'ओष्ठ्य', दन्त और ओष्ठ के लिए 'दन्तौष्ठ्य' और काकल के लिए 'काकल्य' शब्द है।

प्रयत्न-सम्बन्धी वर्गीकरण

प्रयत्नो के अनुसार भी व्यंजनो का आठ प्रकार से वर्गीकरण किया जाता है। यथा

(१) **स्पर्श व्यजन**— जिन व्यंजनो के उच्चारण करने में जीभ केवल विभिन्न स्थानो का स्पर्श करती है, उन्हे 'स्पर्श व्यजन' कहते है। यथा कवर्ग, टवर्ग, तवर्ग और पवर्ग के प्रथम, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ व्यजन।

(२) **संघर्ष व्यंजन**—जिनके उच्चारण करने मे वायु को कुछ संघर्ष करना पडता है और सीटी की सी ध्वनि निकलती है वे संघर्ष व्यजन कहलाते है। यथा श, ष, स और ह।

(३) **स्पर्श संघर्ष**—जिनके उच्चारण करने मे उपर्युक्त स्पर्श और सघष दोनो होते है, उन्हें 'स्पर्श-सघर्ष' व्यंजन कहते है, जैसे च, छ, ज और झ।

(४) **अनुनासिक**—नाक के स्वर से बोले जाने व्यंजन अनुनासिक व्यजन कहलाते है। यथा ङ, ञ, ण, न और म।

(५) **अर्धस्वर**—जिन व्यंजनो के उच्चारण करने मे स्वर जैसा अधिक जान पडता है, उन्हे 'अर्ध स्वर' व्यजन कहते है। यथा य और व। इनका उद्गम क्रमशः 'इ', और 'उ' के साथ 'अ' के संयोग से हुआ है।

(६) **लुण्ठित**—पहले 'र' को भी अर्धस्वर मानते थे क्योकि उसका उद्गम 'ऋ' और 'अ' के मेल से होता है, किन्तु उसके उच्चारण मे जीभ को बेलन की तरह कुछ चक्कर सा खाना पडता है, इसलिए उसे 'लुण्ठित' कहते है।

(७) **पार्श्विक**—'र' की तरह 'ल' को भी संस्कृत के विद्वान् 'अर्धस्वर' मानते थे क्योकि उसका जन्म 'लृ' और 'अ' के संयोग से हुआ था, किन्तु हिन्दी में एक तो 'लृ' स्वर नही है और दूसरे 'ल' के उच्चारण मे वायु जीभ के अगल बगल मे निकल जाती है, इसलिए उसे 'पार्श्विक' व्यंजन कहते हैं।

(८) **उत्क्षिप्त**—केवल ड और ढ ही ऐसे व्यंजन हैं, क्योकि उनके उच्चारण करने मे जीभ, मूर्धा को जोर से टक्कर मार कर एक दम वापस लौट आती है।

व्यजनो का उपयु क्त वर्गीकरण बहुत ही वैज्ञानिक है जो विद्वानो क द्वारा इस दिशा मे किए गए उनके अनवरत परिश्रम का सूचक है

शब्द–विचार

यह पहले ही कहा जा चुका है कि वर्णों (स्वरो एव व्यंजनो) से ही शब्दो का निर्माण होता है। शब्द ही किसी भाषा की अमूल्य और सबसे बडी सम्पत्ति माने जाते है। जिस भाषा का शब्द भण्डार, जितना बडा होगा, वह भाषा उतनी बड़ी मानी जायगी। किसी भी भाषा के शब्दकोश के दर्शन से, हमे उसके महत्व का कुछ परिचय मिल जाता है, किन्तु वास्तविक परिचय तो उस भाषा के अध्ययन से ही होता है। शब्द-कोष मे तो जीवित (प्रयोग मे लगातार आने वाले) और मृत (प्रयोग मे अब न आने वाले) सभी शब्दो का सग्रह होता है, इसलिए वास्तविकता नही जान पडती है, क्योंकि भाषा जीवित शब्दो से ही शक्तिशाली बनती है। मृत शब्दों का, उसमे कोई महत्व नही होता।

सस्कृत के विद्वान प्रत्येक शब्द के मूल में किसी न किसी धातु को मानते है। वे उसी धातु में अनेकानेक उपसर्गों एव प्रत्ययो के सयोग से, एक ही वर्ग के विभिन्न शब्दो का निर्माण कर लिया करते हैं। जैसे 'भू' धातु से भव, भाव, भव्य, भावी, भवन, भावना, संभव, असंभव, उद्भव, पराभव, वैभव, अनुभव, संभाव्य, सभावना, भूत, प्रभूत आदि शब्द बना लिए जाते है। हिन्दी भाषा मे भी अनेक उपसर्ग एव प्रत्यय है और उनसे शब्द निर्माण मे, बडी सहायता मिलती है। हिन्दी मे उन धातुओं के लिए 'मूल शब्द' का व्यवहार होता है। जैसे 'मिलन' मूल शब्द से मिलना, मिलाना, मिलवाना, मेल, मिलाप, मेला आदि अनेक शब्द बन जाते है।

वस्तुत हिन्दी के विकास में संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाषाओ का महत्वपूर्ण योग रहा है, और शौरसेनी अपभ्रंश की तो वह उत्तराधिकारिणी ही है। इसलिए हिन्दी मे, उपर्युक्त सभी भाषाओं के शब्द बहुत अधिक मात्रा मे मिल जाते है। सस्कृत भाषा के अनेक शब्द तो हिन्दी में ज्यो के त्यो स्वीकृत कर लिए गए है, किन्तु कुछ शब्द, प्राकृत और अपभ्रंश मे उनकी व्याकरण के अनुसार जिस प्रकार बदल गए है, उसी प्रकार हिन्दी मे भी उनमे बहुत कुछ परिवर्तन हो गया है। इनके अतिरिक्त हिन्दी में अनेक शब्द अपने निजी एवं स्थानीय है, जिनका संस्कृत आदि से कहीं भी कोई भी सम्बन्ध नही है। वर्तमान काल मे मुसलमानो एवं अंग्रेजो आदि के सम्पर्क

से हिन्दी में अरबी फारसी और यूरोपीय भाषाओं के भी अनेक शब्द स्वत घुल मिल गए हैं।

हिन्दी शब्दों का वर्गीकरण

इस प्रकार वर्गीकरण करने से हिन्दी भाषा में ४ प्रकार के शब्द प्राप्त होते हैं, (१) तत्सम (सस्कृत के समान), (२) तद्भव (संस्कृत से परिवर्तित), (३) देशज अथवा स्थानीय और (४) विदेशी। नीचे ऐसे शब्दों के कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं:—

तत्सम—धर्म, अर्थ, मोक्ष, प्राण, विद्यालय, हिमालय, जल, आकाश, वायु, उत्साह, सूर्य, चन्द्र, विद्वान, महात्मा आदि हजारो शब्द संस्कृत के समान ही हिन्दी मे प्रयुक्त होते है।

तद्भव—ऐसे शब्दों के सही ज्ञान के लिए साथ में वे तत्सम शब्द भी दिए जा रहे हैं, जिनसे उनका सम्बन्ध है। इस प्रकार तुलनात्मक परिचय से यह बात अधिक स्पष्ट हो जायगी।

तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम
आज	अद्य	इलायची	एला
आग	अग्नि	इतवार	आदित्यवार
आख	अक्षि	ईख	इक्षु
आत	अन्त्र	ऊपर	उपरि
गांव	ग्राम	ऊन	ऊर्णा
आम	आम्र	ऊंट	उष्ट्र
आंसू	अश्रु	उल्लू	उलूक
आठ	अष्ट	उछाह	उत्साह
आंक	अंक	उलाहना	उपालम्भ
अंगूठा	अंगुष्ठ	ऊंचा	उच्च
अदरख	आर्द्रक	ओठ	ओष्ठ
असवार	अश्ववार	कान	कर्ण
अम्मा	अम्बा	कछुआ	कच्छप
आंवला	आमलक	कोयल	कोकिल
आगे	अग्र	कपूत	कुपुत्र
अंधेरा	अंधकार	काम	कर्म

तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम
काज	कार्य	गला (कंठ)	गल
कौआ	काक	गला (क्रिया)	गलित
कांटा	कंटक	गरमी	ग्रीष्म
काला	काल	गेहूं	गोधूम
किशन	कृष्ण	गांव	ग्राम
कौडी	कपर्दिका	गांठ	ग्रन्थि
कातिक	कार्तिक	गोठ	गोष्ठी
कबूतर	कपोत	गवैया	गायक
कोख	कुक्षि	गेह	गृह
काठ	काष्ठ	गीध	गृद्ध
कंगन	कंकण	घडा	घट
कोढ	कुष्ठ	घोड़ा	घोटक
काजल	कज्जल	घर	गृह
कसैला	कषाय	घरणी	गृहिणी
कडुआ	कटु	घी	घृत
किवाड़	कपाट	घडी (समय)	घटिका
कपडा	कर्पट	घाम	घर्म
खेत	क्षेत्र	चना	चणक
खाट	खट्वा	चबेना	चर्वण
खटमल	खट्वामल	चूना	चूर्ण
खीर	क्षीर	चांद	चन्द्र
खिन्नी	क्षीरिणी	चोर	चौर
खार	क्षार	चाम	चर्म
खन	क्षण	चमार	चर्मकार
खंभा	स्तम्भ	चितेरा	चित्रकार
गधा	गर्दभ	चौपाया	चतुष्पाद
गाय	गौ	चूमना	चुम्बन
गोरा	गौर	चार	चतुर
गाहक	ग्राहक	चौथा	चतुर्थ

तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम
चौदह	चतुर्दश	जौ	यव
चौबीस	चतुर्विंशति	जांघ	जंघा
चौगुना	चतुर्गुण	जमाई	जामाता
चौकोर	चतुष्कोण	जुग-जुग	युग-युग
चोंच	चञ्चु	जोबन	यौवन
चैत	चैत्र	जम	यम
छाता	छत्र	जवान	युवा
छार	क्षार	जस	यश
छमा	क्षमा	ठांव	स्थान
छीन	क्षीण	डांस	दंश
छोह	क्षोभ	तेल	तैल
छन, छिन	क्षण	तिन	तृण
छह	षट्	तोंद	तुन्द
छप्पय	षट्पद	तीखा	तीक्ष्ण
छठी	षष्ठी	तेरह	त्रयोदश
छेद	छिद्र	तेरस	त्रयोदशी
छेम	क्षेम	तीन	त्रि
छिति	क्षिति	तिगुण	त्रिगुण
छत्री	क्षत्रिय	तिकोना	त्रिकोण
छुधा	क्षुधा	तिबारा	त्रिवार
जहां	यत्र	तिरसूल	त्रिशूल
जतन	यत्न	तरक	तर्क
जती	यति	थन	स्तन
जीभ	जिह्वा	थाली	स्थाली
जमुना	यमुना	थल	स्थल
जामुन	जम्बु	थलचर	स्थलचर
जेठ	ज्येष्ठ	थान, थाना	स्थान
जजमान	यजमान	थोड़ा	स्तोक
जुआ	द्यूत	थिर	स्थिर

तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम
थावर	स्थावर	नया	नव
थुलथुल	स्थूल स्थून	नाई	नापित
थूक	थुक्का	नीम	निम्ब
दान	दन्त	नीबू	निम्बुक
दिया	दीपक	नाच	नृत्य
दिवाली	दीपावली	नाक	नासिका
दठि	दृष्टि	नंगा	नग्न
दही	दधि	निठुर	निष्ठुर
दूध	दुग्ध	नोन	लवण
दक्खिन, दाहिना	दक्षिण	नौ	नव
दस	दश	नौका	नाव
दातुन	दन्तधावन	नवां	नवम
दामाद	जामाता	नेह	स्नेह
दैया, दई	दैव	न्योता	निमन्त्रण
दूब	दूर्वा	नेवला	नकुल
दाभ	दर्भ	नई	नवीन
दरवाजा	द्वार	नवासी	नवाशीति
दलिद्दर	दरिद्र	नरम	नम्र
दो	द्वि	नींद	निद्रा
दुबारा	द्विवार	नीचे	नीचै
दुबे	द्विवेदी	निसि	निशा
दुभाषिया	द्विभाषी	पांच	पंच
दलिया	दलित	पांचवां	पंचम
धीरज	धैर्य	पन्द्रह	पंचदश
धाय	धात्री	पूत	पुत्र
धान	धान्य	पोता	पौत्र
धूल	धूलि	परपोता	प्रपौत्र
धेवता	दौहित्र	पलग	पर्यंक
धुआं	धूम्र	पसीना	प्रस्वेद

तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम
पत्ता	पत्र	फरसा	परशु
पंख	पक्ष	फोड़ा, फूट	स्फोट
पच्छिम	पश्चिम	फावड़ा	स्फालक
पीला	पीत	फन्दा	पाश, स्पन्द
पूस	पौष	फूल	पुष्प
परवा	प्रतिपदा	बंसी, बांसुरी	वंशी
पतोहू	पुत्रवधू	बंस, बांस	वंश
पाव	पाद	बचन	वचन
पत्थर	प्रस्तर	बीस	विंशति
पोथी	पुस्तक	बहू	बधू
पाहन	पाषाण	बनिया	वणिक्
पूंछ	पुच्छ	बात	वार्ता
पछतावा	पश्चाताप	बड़	वट
पूनो	पूर्णिमा	बुड्ढा	वृद्ध
पंछी	पक्षी	बूंद	बिन्दु
पिंजड़ा	पिंजर	बच्चा	वत्स
पीठ	पृष्ठ	बादल	वारिद
पुहुप	पुष्प	बिजली	विद्युत
पारा	पारद	बहरा	बधिर
पान	पर्ण	बकला	वल्कल
पांख	पक्ष	बिल्ली	बिडाली
पांति	पंक्ति	बगुला	बक
पदम	पद्म	बरात	वरयात्रा
पक्का	पक्व	बरसात	वर्षा
पकवान	पक्कवान्न	बान	वाण
पुरखा	पूर्वज	बेंत	वेत्र
फन	फण	बस	वश
फुर्ती	स्फूर्ति	बहिन	भगिनी
फागुन	फाल्गुन	भीख	भिक्षा

तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम
भिखारी	भिक्षुक	रतजगा	रात्रि जागरण
भौंह	भ्रू	रतन	रत्न
भगत	भक्त	रोना	रोदन
भाई	भ्राता	रीछ	ऋक्ष
भौजाई	भ्रातृजाया	रीता	रिक्त
भानजा	भागिनेय	राजपूत	राजपुत्र
भौंर, भौंरा	भ्रमर	रानी	राज्ञी
भीतर	अभ्यन्तर	रूखा	रूक्ष
भैंस	महिषी	रूठा	रुष्ट
भूख	बुभुक्षा	रिस	रोष
भालू	भल्लूक	लगन	लग्न
मेह	मेघ	लम्बा	लम्ब
महारानी	महाराज्ञी	लच्छन	लक्षण
मोर	मयूर	लाज	लज्जा
मछली	मत्स्य	लजीला	लज्जालु
मूँछ	श्मश्रु	लौंग	लवंग
मक्खी	मक्षिका	लोन, लून	लवण
मुट्ठी	मुष्टि	लाख	लक्ष
मच्छर	मशक	लोहा	लौह
मग, मारग	मार्ग	लुहार	लौहकार
मूँड	मुण्ड	लहसुन	लशुन
मुँह	मुख	शक्कर	शर्करा
माथा	मस्तक	श्राप	शाप
मौत	मृत्यु	सौ	शत
मिट्टी	मृत्तिका	सदी	शती
मौसी	मातृष्वसा	सात	सप्त
मगन	मग्न	सत्रह	सप्तदश
मीठा	मिष्ट	सैंकड़ा	शतैक
रात	रात्रि	सेठ	श्रेष्ठ

तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम
सोठ	शुण्ठी	साग	शाक
सूई	सूची	सब	सर्व
सपूत	सुपुत्र	सूत	सूत्र
सपना	स्वप्न	सास	श्वास
सफेद	श्वेत	सूखा	शुष्क
सियार	शृगाल	सांवला	श्यामल
साप	सर्प	साझ	सन्ध्या
सेज	शय्या	सिल	शिला
साईं	स्वामी	साकल	शृंखला
साला	श्याल	सूरज	सूर्य
साली	श्याली	संकरा	संकीर्ण
सास	श्वश्रू	सूर	शूर
ससुर	श्वसुर	सूल	शूल
ससुराल	श्वसुरालय	सुमिरन	स्मरण
सौत	सपत्नी	हाथ	हस्त
समधी	सम्बन्धी	होठ	ओष्ठ
सोना	स्वर्ण	हड्डी	अस्थि
सुनार	स्वर्णकार	हल्दी	हरिद्रा
सींग	शृंग	हाथी	हस्ती
सिंगार	शृंगार	हफ्ता	सप्ताह
सुअर	शूकर	हिरन	हरिण
सूना	शून्य	हिरनी	हरिणी
सिर	शिर		

देशज--शब्द

तत्सम और तद्भव शब्दो के अतिरिक्त शेष सभी शब्द हिन्दी के अपने है। वे स्थान विशेष अथवा प्रान्त विशेष की विभिन्न विशेषताओ तथा अनेक आवश्यकताओ के कारण व्यवहार मे आने लगे है, इसीलिए उन्हें स्थानीय भी कहा जाता है।

हिन्दी भाषी अनेक प्रान्तो मे हिन्दी भाषा की अनेक बोलिया हैं जैसे

राजस्थान मे जयपुरी मारवाडी मेवाडी मालवी मेवाती आदि उत्तरप्रदेश मे व्रज अवधि बुन्देली खडी बोली आदि बिहार मे मैथिली मगही भोजपुरी आदि पहाडी प्रदेशो मे कमायुनी, गढ़वाली, नेपाली आदि, मध्यप्रदेश मे बघेली और छत्तीसगढी आदि। इन बोलियो मे हजारो शब्द ऐसे है जो स्थानीय अथवा देशज हैं और उनका हिन्दी भाषा के साहित्य मे बडा महत्वपूर्ण स्थान है।

विदेशी शब्द

हिन्दी भाषा पर अरबी, फारसी और तुर्की आदि मुसलमानी भाषाओ का तथा अंग्रेजी और पुर्तगाली आदि यूरोपीय भाषाओ का बहुत प्रभाव पडा है, जिसके फलस्वरूप उनके बहुत से शब्द, हिन्दी भाषा मे तत्सम या तद्भव रूप मे सम्मिलित हो गए है। एक ओर तो यह स्थिति है कि हिन्दी ने उन्हे अपना कर, अपनी विशाल हृदयता का अच्छा परिचय दिया है, किन्तु दूसरी ओर वे ही शब्द, अलगाव पर बल देते हुए, उर्दू और अंग्रेजी के रूप मे हिन्दी को हानि पहुँचाने की चेष्टा कर रहे है। आज हिन्दी के राष्ट्रभाषा घोषित हो जाने पर भी, ये भाषाए उसके प्रसार एवं प्रचार मे बडी बाधाए प्रस्तुत कर रही है। यहा हम उपर्युक्त विदेशी भाषाओ के उन शब्दो के कुछ उदाहरण दे रहे है, जो हिन्दी भाषा मे बडी आत्मीयता के साथ प्रयुक्त होते हैं।

(१) **अरबी शब्द**—अमीर, अजायबघर, अक्ल, आदमी, आदत, इनाम, इलाज, ईमान, उम्र, एहसान, औरत, किस्मत, किला, कुर्सी, किताब, खबर, खतम, खराब, ख्याल, जवाब, जलूस, जहाज, तारीख, तकिया, तमाशा, दावा, दाखिल, दावत, दुकान, दुनियां, दीवान, दौलत, नकल, नहर, फैसला, आदि।

(२) **फारसी शब्द**—आराम, आमदनी, आवाज, उम्मीद, कबूतर, कुश्ती, खुश, गल्ला, गवाह, गिरफ्तार, चादर, चश्मा, जिंदगी, जादू, जुरमाना, तालाब, तनख्वाह, दिमाग, देहात, दवा, नशा, नौजवान, पैजामा, पर्दा, पलग, परहेज, बीमार, मुर्दा, मुफ्त, शराब, शादी, सरदार, सरकार, आदि।

(३) **तुर्की शब्द**—उर्दू, कालीन, कैंची, चाकू, कुली, खजाची, चेचक, तोप, दरोगा, बहादुर, बीबी आदि।

(४) **अंग्रेजी शब्द**—अफसर, अस्पताल, आर्डर, इंजन, इन्स्पेक्टर, इन्कमटैक्स, एजेंट, कमीशन, एजेन्शन, कलेंडर, कन्वक्टर, कापी, कटपीस, कैमरा, कालेज, क्लब, कोट, गिलास, चेक, जज, टिकट, ट्यूब, टाइम, टैक्स,

टलीफोन टीचर ट्रन डाक्टर ड्रामा ड्यूटी डिग्री दर्जन नर्स नम्बर नोट परेड पवर पट पप पाक पसिल पेट्रोल प्रोफसर प्रेस पुलिस फार्म फैक्टरी, फीस, फुट, फोटो, बटन, ब्रुश, बुक्सेलर, बिल, बोर्ड, मैनेजर, माचिस, मेंबर, मोटर, रबड़, रजिस्टर, रसीद, रेल, लालटेन, लायब्रेरी, वालीबाल, वाइसराय, सम्मन, स्लेट, सिविल, सर्जन, साइंस, सेक्रेटरी, सर्विस, हाई स्कूल, हाकी, हैड मास्टर, होटल, हारमोनियम आदि ।

(५) पुर्तगाली शब्द—अलमारी, कमीज, कमरा, काजू, गोदाम, तौलिया, पिस्तौल, बाल्टी, बोतल, मेज आदि ।

उपर्युक्त सभी स्त्रोतों से उपलब्ध हिन्दी की शब्द-सम्पत्ति पर ध्यान देने से एक बात और स्पष्ट हो जाती है कि कुछ शब्द तो स्वतन्त्र है, कुछ मिश्रित है और कुछ मिश्रित होते हुए भी अपनी स्वतन्त्र सत्ता रखते हैं। ऐसे शब्दो को क्रमश. रूढ, योगिक और योगरूढ़ कह दिया जाता है । यथा

(१) रूढ़ शब्द—धर्म, अर्थ, मोक्ष, ग्रंथ, पुण्य, दर्शन, पुस्तक, धन, देव, मनुष्य, जीव आदि बहुतेरे शब्द रूढ़ अर्थात् अपने स्वतन्त्र अर्थ में प्रसिद्ध हैं। उनके निर्माण मे किसी दूसरे शब्द का कोई सहयोग नही है ।

(२) योगिक शब्द—जो शब्द अनेक शब्दो के सयोग से बनते हैं और अपने अर्थ को सुरक्षित रखते हैं, वे योगिक शब्द कहलाते हैं। जैसे राजपुत्र (राज+पुत्र) अर्थात् राजा का पुत्र, विद्यालय (विद्या+आलय) अर्थात् विद्या का आलय (स्थान) आदि । निम्नलिखित उदाहरण इस दिशा में पर्याप्त हैं—धर्मशाला, पाठशाला, आयकर, धर्मराज, वंशमर्यादा, राजदूत, सूर्यकिरण, धर्मपुत्र, प्रधानाचार्य, बुकसेलर, रेडियोहाउस आदि ।

(३) योग रूढ़—अनेक शब्दो के संयोग से बनने पर भी जो शब्द, उन अर्थों को छोडकर, नवीन अर्थ बतलाते हैं, वे ही योग रूढ शब्द कहे जाते है, जैसे हिमालय (हिम+आलय) अर्थात् बर्फ का स्थान, किन्तु हम एक पर्वत विशेष को ही हिमालय कहते है; गजानन (गजा+आनन) अर्थात् हाथी का मुंह, किन्तु हम केवल गणेशजी को गजानन कहते है आदि। कुछ और उदाहरण भी इसी प्रकार दिए जा सकते है। यथा, लम्बोदर (गणेश), पंकज (कमल), दशानन (रावण), त्रिनेत्र (शिव), चतुरानन (ब्रह्मा), पीताम्बर (कृष्ण), सहस्त्राक्ष (इन्द्र), षडानन (गणेश) आदि ।

शब्द–निर्माण

अभी तक हमने प्राप्त शब्दों के रूप पर ही विचार किया है। अब देखना यह है कि इन शब्दों को यह रूप किस प्रकार प्राप्त होता है। इसी अध्याय के आरम्भ में यह कहा गया था कि हिन्दी में अनेक 'मूल शब्द' हैं जिनके साथ अनेक उपसर्गों अथवा प्रत्ययों को मिलाकर बहुतेरे शब्द बना लिए जाते हैं। उपसर्ग सदैव शब्द के आदि में प्रयुक्त होते हैं और प्रत्यय अन्त में। इनमें से बहुत से उपसर्ग और प्रत्यय संस्कृत की देन हैं। शेष हिन्दी के अपने निजी हैं। उर्दू और अंग्रेजी शब्दों में अधिकतर उनके अपने उपसर्गों एवं प्रत्ययों का व्यवहार किया जाता है, किंतु कुछ शब्दों में 'सांकर' के भी दर्शन हो जाते हैं। यहां यह स्मरणीय है कि इन उपसर्गों एवं प्रत्ययों से केवल 'रूढ' शब्दों का ही निर्माण होता है।

संस्कृत के उपसर्ग—प्र, परा, अप, सम, अनु, अव, निस्, निर्, दुस्, दुर, वि, आ, नि, अधि, अति, सु, उन्, अभि, प्रति, परि और उप आदि संस्कृत के उपसर्ग हैं। इनके अपने निश्चित अर्थ हैं, अतः इनके प्रयोग से अर्थ-भेद भी हो जाता है। जैसे प्रहार (मारना), अपहार (हटाना) संहार (नष्ट करना), अनुहार (नकल करना), विहार (घूमना), आहार (खाना), उद्धार (पार करना), परिहार (छोड़ना), उपहार (भेंट), प्रचार (विस्तार करना), संचार (चलाना), विचार (सोचना), आचार (व्यवहार), समाचार (खबर), अत्याचार (दुर्व्यवहार), उच्चार (बोलना), उपचार (सेवा करना), आदि। नीचे विभिन्न उपसर्गों के क्रमशः अर्थ और उदाहरण दिए जा रहे हैं—

उपसर्ग	अर्थ	प्रयोग
प्र	(अधिक)	प्रकार, प्रचार, प्रसार, प्रसाद, प्रमाण, प्रदर्शन, प्रसंग, प्रवेश आदि।
परा	(विपरीत)	पराजय, पराभव, पला (रा) यन आदि।
अप	(बुरा)	अपेक्षा, अपराध, अपकार, अपवाद आदि।
सम्	(अच्छा)	संस्कार, संचार, संसार, संभव, संयोग, समाचार, संदेश आदि।
अनु	(पीछे)	अनुकरण, अनुवाद, अनुसार, अनुकूल आदि।
अव	(नीचे)	अवशेष, अवरोध, अवगुण, अवतार आदि।
निस्	(नहीं)	निस्सन्देह, निस्संकोच, निस्सार आदि।

निर नहीं) निर्जल निमल निरर्थक निर्जन निर्बाध निरपराध आदि।

दुस् (बुरा) दुस्तर, दुष्कर, आदि।

दुर् (बुरा) दुर्जन, दुरात्मा, दुर्लभ, दुर्दिन, दुर्बल आदि।

वि (विशेष) विचार, विहार, विशेष, आदि।

वि (विना) विकल, वियोग, व्यर्थ आदि।

आ (विपरीत) आगमन, आयात, आदि।

आ (पूर्ण) आहार, आदर, आश्वासन आदि।

नि (निश्चय) निगम, नियोग, आदि।

अधि (अन्तर्गत) अधिष्ठाता, अध्यक्ष, अधीश्वर, अधीन, अधिकार आदि।

अति (अधिक) अतिक्रमण, अत्याचार आदि।

सु (अच्छा) सुकर, सुगम, सुलभ, सुपठ आदि।

उत् (ऊपर) उत्तार, उद्गम, उद्धार, उद्भव, उत्तीर्ण आदि।

अभि (पूर्ण) अभियोग, अभीष्ट, अभिभूत आदि।

प्रति (विपरीत) प्रतिकूल, प्रत्युत्तर, प्रतीक्षा, प्रत्युपकार आदि।

परि (सबप्रकार) परिचय, परिष्कार, परिवर्तन, परिमाण, परीक्षा आदि।

उप (पास) उपयोग, उपकार, उपहार, उपचार, उपेक्षा, उपासना आदि।

कभी कभी दो या दो से अधिक उपसर्गों के प्रयोग से भी विभिन्न शब्दों का निर्माण कर लिया जाता है।

हिन्दी के उपसर्ग

हिन्दी में अधिकतर संस्कृत के उपसर्गों का ही तत्सम रूप में व्यवहार होता है। कहीं कहीं पर उनके तद्भव रूप भी प्रयुक्त होते हैं। यथा अव का औ, निर् का नि, दुर् का दु, सु का स आदि। इनके उदाहरण निम्नांकित हैं—

औ—औतार, औगुन, औसर आदि।

नि—निडर, निठल्ला, निकम्मा, निबल आदि।

दु—दुख, दुलहा, दुबला आदि।

स—सपूत आदि।

उर्दू के उपसर्ग

उर्दू शब्दो के साथ ही प्राय: इनका प्रयोग किया जाता है। नीचे कुछ उदाहरण दिए जा रहे है—

उपसर्ग अर्थ प्रयोग

बा (साथ) बाअदब, बाकायदा, बाहोश-हवास आदि।

बे (नहीं) बेअदब, बेकायदा, बेहोश, बेलगाम, बेचैन आदि।

बद (बुरा) बदमाश, बदमिजाज, बदफेल, बदतमीज आदि।

दर (में) दरअसल, दरम्याद आदि।

हर (प्रत्येक) हररोज, हरदम आदि।

ला (विना) लाजवाब, लापरवाह, लासानी आदि।

सर (अच्छा) सरताज, सरदार आदि।

कभी कभी हिन्दी शब्दों के साथ भी इनका मेल दिखलाई पड़ जाता है। यथा

बे—बेडर, बेधड़क, बेडौल, बेढ़ब, बेरंग, बेस्वाद आदि।

बद—बदनाम, बदरंग आदि।

हर—हर दिन, हर समय आदि।

प्रत्यय

शब्द-निर्माण मे उपसर्गों की अपेक्षा प्रत्ययो का योगदान बहुत अधिक होता है। उपसर्गो की तरह ये प्रत्यय भी ३ प्रकार के पाये जाते हैं, जैसे संस्कृत के प्रत्यय, हिन्दी के प्रत्यय और विदेशी प्रत्यय। इनमे से कुछ प्रत्यय सज्ञा के अन्त में जुड़ जाते हैं और कुछ क्रिया के अन्त में। अतः उन्हें क्रम से तद्धित और कृदन्त के नाम से अभिहित किया जाता है।

संस्कृत तद्धित प्रत्यय

सस्कृत साहित्य मे प्रत्ययो का विशाल भन्डार है। एक ही अर्थ को व्यक्त करने के लिए, वहां कभी कभी अनेक प्रत्यय मिल जाते हैं। साधारणतया ये प्रत्यय ५ प्रकार के होते हैं, १. भाववाचक २. सम्बन्ध वाचक ३. पुत्र वाचक ४. पूर्णता वाचक ५. तारतम्य वाचक।

भाववाचक प्रत्यय

त्व— मनुष्यत्व, देवत्व, ईश्वरत्व, गुरुत्व, लघुत्व, महत्व आदि।

ता— मनुष्यता, गुरुता, लघुता, महत्ता, बन्धुता, अश्लीलता आदि।

अव गौरव लाघव पाटव आदि ।

य माधुर्य चातुर्य लावण्य आदि

इमा—लघिमा, गरिमा, महिमा, अणिमा आदि ।

सम्बन्ध वाचक प्रत्यय

अ — शैव (शिव का), वैष्णव (विष्णु का), पार्थिव (पृथ्वी का), हैम (हिम का), आर्ष (ऋषि का), तैल (तिल का) आदि ।

इक —सांसारिक (संसार का) इसी प्रकार धार्मिक, लौकिक, पैत्रिक, व्यावहारिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, दैनिक,वार्षिक आदि ।

इन् (ई)—माली, पापी, व्यवसायी, धर्मी, विद्यार्थी, धनी, गुणी, गृहस्थी, ब्रह्मचारी, सन्यासी, शास्त्री आदि ।

ईन — कुलीन, धुरीण, सार्वजनीन आदि ।

इत — फलित, सुखित, दुःखित, पीड़ित. मोहित क्षुधित, तृषित, विचारित, प्रचारित, लज्जित, सम्मिलित आदि ।

वत् (वान्)—धनवान्, विद्वान्, फलवान्, गुणवान् आदि ।

मत् (मान्)—बुद्धिमान्, श्रीमान्, धीमान्, आयुष्मान् गतिमान्, शक्तिमान्, भ्रान्तिमान्, मतिमान् आदि ।

विन् (वी)—यशस्वी, मनस्वी, तेजस्वी आदि ।

आलु — कृपालु, दयालु, लज्जालु आदि ।

इल — स्वप्निल, धूमिल आदि ।

इम — स्वर्णिम, अन्तिम आदि ।

त्य — पाश्चात्य, दाक्षिणात्य आदि ।

य — ग्राम्य, काव्य, हास्य, बाल्य, धर्म्य आदि ।

इय — राष्ट्रिय आदि ।

ईय — मालवीय, वंगीय, प्रान्तीय, राजकीय आदि ।

पुत्रवाचक प्रत्यय

अ— वासुदेव (वसुदेव का पुत्र), वासिष्ठ (वसिष्ठ का पुत्र) । इसी प्रकार भारद्वाज, कौशिक, पार्थ, पाडव आदि ।

इ— दाशरथि (दशरथ का पुत्र,) ऐन्द्रि (इन्द्र का पुत्र) इसी प्रकार द्रौणि, वाल्मीकि, सौमित्रि आदि ।

य— पौलस्त्य, (पुलस्ति का पुत्र) इसी प्रकार माण्डव्य, आण्डुक्य, गालव्य आदि ।

एवं वाष्णेय (वलि का पुत्र गांगेय (गंगा का पुत्र)। इसी प्रकार भागिनेय (भांजा) वैनतेय (गरुड़) आदि।

पूर्णतावाचक प्रत्यय

म— प्रथम, पंचम, सप्तम, अष्टम, नवम, दशम आदि।

तीय— द्वितीय, तृतीय आदि,

थ— चतुर्थ, षष्ठ आदि।

तारतम्यवाचक प्रत्यय

दो में तुलना करने के लिए तर और ईय तथा दो से अधिक में, तम और इष्ठ प्रत्ययों का प्रयोग होता है। तर और तम प्रत्ययो के कारण ही इनको 'तारतम्यवाचक' कहा जाता है। यथा

मूलशब्द	तर	तम
लघु	लघुतर	लघुतम
गुरु	गुरुतर	गुरुतम
महान्	महत्तर	महत्तम
अधिक	अधिकतर	अधिकतम
सुन्दर	सुन्दरतर	सुन्दरतम
मूलशब्द	**ईय**	**इष्ठ**
लघु	लघीय	लघिष्ठ
गुरु	गरीय	ग.रिष्ठ
वर	वरीय	वरिष्ठ

हिन्दी के तद्धित प्रत्यय

संस्कृत के प्रत्ययो के अतिरिक्त हिन्दी के भी अपने अनेक प्रत्यय हैं, जिनमे असंख्य शब्दो का निर्माण होता है। इन प्रत्ययो को ५ वर्गों में विभक्त किया जा सकता है। (१) भाववाचक (२) सबन्धवाचक (३) गुणवाचक (४) पूर्णतावाचक (५) हीनतावाचक।

१. भाववाचक प्रत्यय

पन—बचपन, लड़कपन, मूर्खपन आदि।

पा—बुढ़ापा, रंड़ापा आदि।

आई—भलाई, बुराई, चिकनाई, सफाई, रंगाई, मिठाई आदि।

आहट—कड़वाहट, घबड़ाहट, चिकनाहट आदि।

आध—सड़ाध, बसाध आदि।

आस—मिठास, खटास, लिखास, छपास आदि।

ईन—नमकीन आदि।

ई—गर्मी, सर्दी, चोरी, मजदूरी, किसानी आदि।

भस—बुढभस आदि।

२. सम्बन्धवाचक प्रत्यय

वाला—गाड़ी वाला, दुकान वाला, पानवाला, छड़ी वाला, कोट वाला, पानी वाला आदि।

आर—गंवार, सुनार, लुहार, चमार, कुम्हार आदि।

वार—कलवार, पनवार आदि।

ई—तेली, धोबी, गन्धी, माली, पंसारी, दरबारी, शिकारी, सरकारी, पंजाबी, बगाली, उत्तरी, दक्षिणी, हिन्दुस्तानी आदि।

हारा—लकड़हारा, मछलिहारा आदि।

एरा—संपेरा, लुटेरा आदि।

एड़ी—भंगेड़ी, गंजेड़ी, तसेडी आदि।

आडी—जुंवाडी, खिलाडी आदि।

इया—पनिया, दूधिया

या—रसोइया

आरी—दुखारी, सुखारी, पुजारी

एरा—चचेरा, ममेरा, फुफेरा

गुणवाचक प्रत्यय

ला—रसीला, रंगीला, हठीला, छबीला, चमकीला, चटकीला, खर्चीला

ऐला—कसैला, विषैला, मटमैला, बनैला आदि।

ऊ—पेटू, बाजारू

हा—छुंतहा

हला—सुनहला, रूपहला

आ—दुलारा, प्यारा, मैला, गोरा, काला, भूखा, प्यासा

पूर्णतावाचक प्रत्यय

ला—पहला

रा—दूसरा, तीसरा

था चौथा।

वा—पांचवा, सातवा, नवां, दसवा आदि।

ठा—छठा।

हीनतावाचक प्रत्यय

ई—टोकरा से टोकरी, रस्सा से रस्सी, सुआ से सूई, पहाड़ से पहाड़ी, घटा से घटी, डंडा से डंडी, कटोरा से कटोरी।

इया—खाट से खटिया, लोटा से लुटिया, डिब्बा से डिबिया, बेटा से बिटिया।

ली—टीका से टिकली, मच्छ से मछली, पूंछ से पुंछल्ली।

ओला—खाट से खटोला, मांझ से मझोला, सांप से संपोला।

उर्दू के तद्धित प्रत्यय

इनका प्रयोग अधिकतर उर्दू शब्दों के साथ होता है, किन्तु कभी कभी अन्य शब्दों के साथ भी इनके दर्शन हो जाते है। हिन्दी के प्रत्ययों की तरह इनका सरलता से वर्गीकरण किया जा सकता है। कुछ प्रत्ययों के उदाहरण नीचे दिए जा रहे है—

ची—तबलची, नकलची, अफीमची आदि।

मन्द—अक्लमंद, जरूरतमंद, एहसानमंद।

नाक—खतरनाक, दर्दनाक, शर्मनाक।

दार—दुकानदार, दिलदार, जिलेदार, मालदार।

गर—कारगर, जादूगर।

गी—अलहदगी, पेंचीदगी।

गुजार—कार-गुजार, मालगुजार।

सार—खाकसार।

कृदन्त प्रत्यय

यह पहले ही कहा जा चुका है कि क्रिया-शब्दों में जो प्रत्यय जुड़ जाते है, उन्हें 'कृदन्त' प्रत्यय कहा जाता है। हिन्दी भाषा मे, संस्कृत के अनेक कृदन्त शब्द व्यवहृत होते है और साथ ही उसके पास भी ऐसे अनेक प्रत्यय है, जिनसे अगणित शब्द बनाए जा सकते हैं।

संस्कृत के कृदन्त प्रत्यय

इन प्रत्ययों को ३ वर्गों में विभक्त किया जा सकता है। (१) कर्तृत्व-

वाचक २) भाववाचक ३) विशेषणवाचक

(१) कर्तृत्ववाचक प्रत्यय

तृ (ता)—कर्ता, धर्ता, पिता, भ्राता, माता, दुहिता, विधाता, नेता, अभिनेता, संहर्ता, रचयिता, निर्माता, वक्ता, श्रोता आदि ।

अक—पाठक, लेखक, विचारक, कारक, विधायक, पालक, पोषक, गायक, नायक आदि ।

(२) भाववाचक प्रत्यय

अ—पाठ, लेख, विचार, ज्ञान, शोक, मोह, लोभ, लाभ, जय, धर्म, अर्थ, मोक्ष, काम, मान, विधान आदि ।

अन—पठन, लेखन, संपादन, प्रलोभन, सम्मोहन, गमन, शयन, भोजन, स्मरण, हवन, भ्रमण, रोदन आदि ।

ति—गति, मति, रति, क्षति, शान्ति, कान्ति, भ्रान्ति, विश्रान्ति, रीति, नीति, स्तुति, बुद्धि, सिद्धि, वृद्धि आदि ।

यहा स्मरणीय है कि 'अ' और 'अन' प्रत्ययों से बने हुए शब्द सदैव पुल्लिग मे रहते है, जबकि 'ति' प्रत्यय वाले शब्द स्त्रीलिंगवाची है ।

(३) विशेषणवाचक प्रत्यय

त—गत, आगत, पठित, लिखित, विहित, कृत, उपकृत, शान्त, क्रान्त, विदित, ज्ञात, विख्यात, प्रसिद्ध आदि ।

य—गम्य, पाठ्य, लभ्य, प्राप्य, योग्य, पूज्य, वंद्य, भोग्य, खाद्य, प्रेष्य, स्तुत्य, हव्य, लेख्य, त्याज्य आदि ।

तव्य—कर्तव्य, गन्तव्य, पठितव्य, भोक्तव्य, ज्ञातव्य आदि ।

अनीय—करणीय, गमनीय, पठनीय, स्मरणीय, पूजनीय, उल्लेखनीय, रमणीय आदि ।

यहां भी यह स्मरणीय है कि 'त' प्रत्यय से सदैव भूतकालिक विशेषण बनते हैं, किन्तु 'य तव्य और अनीय' प्रत्ययो से भविष्यत्कालिक विशेषण संपन्न होते हैं ।

हिन्दी के कृदन्त प्रत्यय

हिन्दी मे भी संस्कृत के समान तीनो प्रकार के प्रत्यय प्राप्त हो जाते है । यथा

कर्तृत्ववाचक प्रत्यय

वाला—पढ़ने वाला, जाने वाला, लिखने वाला, हँसने वाला, रोने वाला, गाने वाला आदि।

ऐया—गवैया, पढ़ैया, लिखैया, लड़ैय्या आदि।

अक्कड़—पियक्कड़, घुमक्कड़ आदि।

इयल—मरियल, मड़ियल, अड़ियल आदि।

ऊ—उड़ाऊ, कमाऊ, खाऊ।

ओड़—हँसोड़, भगोड़।

कू—लड़ाकू

आलू—झगड़ालू, बिगड़ालू।

क—तैराक

एरा—कमेरा, बसेरा।

भाववाचक प्रत्यय

अ—भाग, दौड़, सोच, नोच, लूट, पाट, खसोट, बिगाड़, तोल, मोल, मार, पीट आदि।

आ—पूजा, सेवा आदि।

आई—सिलाई, कटाई, कढ़ाई, बुनाई, लड़ाई, पढ़ाई, लिखाई आदि।

आव—बहाव, तनाव, कटाव, घुमाव, चढ़ाव आदि।

आन—पहचान, उठान, उड़ान, नहान, मिलान आदि।

आहट—घबड़ाहट, हड़बड़ाहट, चिल्लाहट, बुलाहट आदि।

आवट—बनावट, लिखावट, मिलावट, सजावट आदि।

ई—करनी, घुमनी, कथनी, मिलनी घुड़की, झिड़की आदि।

त—लिखत, पढ़त, बचत, खपत आदि।

न—फिसलन, सिकुड़न, एंठन आदि।

ना—पढ़ना, करना, जाना, देखना आदि।

विशेषणवाचक प्रत्यय

आऊ—धराऊ, दिखाऊ, बनाऊ, टिकाऊ, फसाऊ, चलताऊ आदि।

आवना—लुभावना, सुहावना, डरावना आदि।

हिन्दी मे शब्द निर्माण की प्रक्रिया को अत्यधिक लचीली और प्रगतिशील बनाने मे इन उपसर्गों तथा प्रत्ययों का योगदान वास्तव मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इनका भडार अक्षय है और उससे आवश्यकतानुसार सहस्रों शब्द, जब जी चाहे, बनाए जा सकते है।

सन्धि

शब्द-निर्माण के प्रारम्भ मे कहा जा चुका है कि उपसर्गों एवं प्रत्ययों के मेल मे केवल 'रूढ' शब्दो का निर्माण होता है । इन्ही निष्पन्न रूढ शब्दो के परस्पर सयोग मे अनेक यौगिक शब्द बनते है । उन्ही मे से कुछ शब्द, जब अपने संयुक्त अर्थ को छोड कर किसी अन्य अर्थ मे रूढ हो जाते है, तब वे 'योगरूढ' कहलाने लगते है । इस प्रकार इन 'योगरूढ' शब्दो में भी 'योग' को ही प्राथमिकता मिली हुई है, अतः यौगिक शब्द-निर्माण के अन्तर्गत उनका भी अध्ययन यहां प्रस्तुत किया जा रहा है ।

दो या दो से अधिक शब्दो का परस्पर योग केवल दो प्रकार से संभव है (१) सन्धि द्वारा और (२) समास द्वारा । शब्दों का यह योग कैसे हो सकता है, इसका उत्तर सन्धियो के अध्ययन से मिलेगा और वह क्यों होता है, इसका समाधान समासों के द्वारा होगा ।

शब्द-सन्धि

दो शब्दो के परस्पर संयोग को सन्धि कहते है । यह सन्धि उनके रूप पर निर्भर होती है । प्रथम शब्द का अन्तिम वर्ण और द्वितीय शब्द का आदि वर्ण जैसा होगा, वैसी ही उनकी सन्धि होगी । इसके लिए संस्कृत की व्याकरण के विद्वानो ने अनेक नियम निर्धारित कर दिए हैं । ये संधियां स्वर, व्यंजन और विसर्ग के भेद से ३ प्रकार की होती है । यहा यह स्मरणीय है कि संस्कृत के केवल तत्सम शब्दों में ही इन सन्धियों का प्रयोग होता है ।

स्वर-सन्धि

दो स्वरों के परस्पर संयोग को स्वर-सधि कहते है । ये सन्धियां संस्कृत-व्याकरण के अनुसार ५ प्रकार की होती हैं (१) दीर्घ (२) गुण (३) वृद्धि (४) यण् और (५) अयादि ।

दीर्घ स्वर सन्धि

जब दो समान स्वर मिलते हैं, चाहे वे दोनों ह्रस्व हों या एक ह्रस्व और दूसरा दीर्घ हो या फिर दोनों ही दीर्घ हो, तब उनके स्थान पर सदैव दीर्घस्वर हो जाता है । यथा

१—अ + अ = आ
स्वर्ण + अवसर = स्वर्णावसर

[illegible]

३ आ+अ आ

विद्या+अर्थी=विद्यार्थी

करुणा+अवतार=करुणावतार

दशा+अंतर=दशान्तर

कमला+अयन=कमलायन

माया+अधीन=मायाधीन

४—आ+आ=आ

विद्या+आलय=विद्यालय

विद्या+आरम्भ=विद्यारम्भ

करुणा+आलय=करुणालय

महा+आशय=महाशय

करुणा+आकार=करुणाकार

५—इ+इ=ई

कवि+इन्द्र=कवीन्द्र

रवि+इन्द्र=रवीन्द्र

अभि+इष्ट=अभीष्ट

अधि+इन=अधीन

प्रति+इत=प्रतीत

६—इ+ई=ई

कवि+ईश्वर=कवीश्वर

कपि+ईश=कपीश

अधि+ईश्वर=अधीश्वर

गिरि+ईश=गिरीश

७—ई+इ=ई

अवनी+इन्द्र=अवनीन्द्र

मही+इन्द्र=महीन्द्र

देवी+इष्ट=देवीष्ट

हिन्दी+इतर=हिन्दीतर

८ ई+ई ई

पृथ्वी+ईश्वर पृथ्वीश्वर

मही+ईश=महीश

नदी+ईश=नदीश

अर्धनारी+ईश्वर=अर्धनारीश्वर

९—उ+उ=ऊ

कटु+उक्ति=कटूक्ति

इन्दु+उदय=इन्दूदय

लघु+उत्साह=लघूत्साह

भानु+उदय=भानूदय

अनु+उदित=अनूदित

१०—उ+ऊ=ऊ

कटु+ऊहा=कटूहा

लघु+ऊर्मि=लघूर्मि

अनु+ऊढि=अनूढि

पृथु+ऊर्जा=पृथूर्जा

सु+ऊर्ध्व=सूर्ध्व

११—ऊ+उ=ऊ

भू+उपरि=भूपरि

वधू+उत्तम=वधूत्तम

१२—ऊ+ऊ=ऊ

वधू+ऊढा=वधूढा

गुण सन्धि

अ अथवा आ के पश्चात्, जब ह्रस्व या दीर्घ इ, उ अथवा ऋ हो तो उनके परिवर्तित रूप को 'गुण-सन्धि' कहते है। यथा

१—अ+इ=ए

धन+इष्ट=धनेष्ट

नर+इन्द्र=नरेन्द्र

पूर्ण+इन्दु=पूर्णेन्दु

२ आ+इ=ए

महा+इन्द्र=महेन्द्र

करुणा+इन्द्र=करुणेन्द्र

पूर्णिमा+इन्दु=पूर्णिमेन्दु

३—अ+ई=ए

धन+ईश=धनेश

नर+ईश=नरेश

सुर+ईश्वर=सुरेश्वर

प्राण+ईश्वर=प्राणेश्वर

४—आ+ई=ए

कमला+ईश=कमलेश

करुणा+ईश=करुणेश

रमा+ईश=रमेश

महा+ईश्वर=महेश्वर

५—अ+उ=ओ

सूर्य+उदय=सूर्योदय

पर+उपकार=परोपकार

परम+उत्सव=परमोत्सव

नव+उत्साह=नवोत्साह

सर्व+उपरि=सर्वोपरि

६—आ+उ=ओ

महा+उदय=महोदय

विद्या+उत्साह=विद्योत्साह

गंगा+उत्तरी=गंगोत्तरी

यमुना+उत्तरी=यमुनोत्तरी

महा+उद्र=महोद्र

७—अ+ऊ=ओ

ऊर्ध्व+ऊर्ध्व=ऊर्ध्वोर्ध्व

नव+ऊढा=नवोढा

८—आ+ऊ=ओ

गगा+ऊर्ध्व=गगोर्ध्व

महा+ऊजस्वी=महोजस्वी

९—अ+ऋ=अर्

सप्त+ऋषि=सप्तर्षि

ग्रीष्म+ऋतु=ग्रीष्मर्तु

१०—आ+ऋ=अर्

महा+ऋषि=महर्षि

वृद्धि सन्धि

अ अथवा आ के बाद यदि ए अथवा ऐ हो तो 'ऐ' और ओ अथवा औ हो तो 'औ' हो जाता है, इसी वृद्धि को 'वृद्धि सन्धि' कहते है। यथा

१—अ+ए=ऐ

धर्म+एक=धर्मैक

एक+एक=एकैक

सूक्ष्म+एला=सूक्ष्मैला (छोटी इलायची)

२—आ+ए=ऐ

सदा+एव=सदैव

विद्या+एक=विद्यैक

महा+एला=महैला

३—अ+ऐ=ऐ

परम+ऐश्वर्य=परमैश्वर्य

धर्म+ऐक्य=धर्मैक्य

विश्व+ऐक्य=विश्वैक्य

४—आ+ऐ=ऐ

महा+ऐश्वर्य=महैश्वर्य

५—अ+औ=औ

वन+ओषधि=वनौषधि

पाप+ओघ=पापौघ

मधुर+ओष्ठ=मधुरौष्ठ

जल+ओक=जलौक

६—आ+ओ=औ

महा+ओषधि=महौषधि

७ अ+औ=औ

दिव्य+औषध=दिव्यौषध

परम+औदार्य=परमौदार्य

८—आ+औ=औ

महा+औषध=महौषध

दया+औदार्य=दयौदार्य

यण् सन्धि

अभी तक 'अ' और 'आ' के साथ अन्य स्वरो की संधि पर विचार किया गया था। अब अन्य स्वरो के साथ 'अ' और 'आ' की सन्धि पर विचार करना है। संस्कृत मे 'यण्' का अर्थ होता है य, व, र और ल, तथा 'यण् सन्धि' का तात्पर्य है कि यदि इ अथवा ई के बाद 'अ' हो तो 'य', 'उ' अथवा 'ऊ' के बाद 'अ' हो तो 'व', 'ऋ' के बाद 'अ' हो तो 'र' और 'लृ' के बाद 'अ' हो तो 'ल' हो जाता है। यदि इन स्वरो के बाद दीर्घ 'अ' (आ) हो तो उसका रूप भी दीर्घ (या, वा, रा, ला) हो जाता है। यहा स्मरणीय है कि हिन्दी में 'लृ' स्वर नही होता है, इसलिए उससे संबंधित संधि भी यहा नही होती है। शेष सन्धियो के उदाहरण इस प्रकार है:—

१—इ+अ=य

इति+अर्थ=इत्यर्थ

परि+अन्त=पर्यन्त

अति+अधिक=अत्यधिक

२—ई+अ=य

स्त्री+अर्थ=स्त्र्यर्थ

देवी+अर्चना=देव्यर्चना

वाणी+अन्त=वाण्यन्त

३—इ+आ=या

इति+आदि=इत्यादि

अधि+आशय=अध्याशय

अति+आचार=अत्याचार

४—ई+आ=या

पत्नी+आगम=पत्न्यागम

सरस्वती+आराधन=सरस्वत्याराधन

देवी+आदि=देव्यादि

५—उ+अ=व

मधु+अर्थ=मध्वर्थ

ऋतु+अन्त=ऋत्वन्त

६—ऊ+अ=व

वधू+अर्थ=वध्वर्थ

७—उ+आ=वा

कटु+आशय=कट्वाशय

मधु+आगम=मध्वागम

८—ऊ+आ=वा

वधू+आगमन=वध्वागमन

९—ऋ+अ=र

मातृ+अर्थ=मात्रर्थ

पितृ+अंश=पित्रंश

१०—ऋ+आ=रा

पितृ+आज्ञा=पित्राज्ञा

मातृ+आदेश=मात्रादेश

इसी प्रकार इ और उ की संधि मे, यदि इ अथवा ई के बाद 'उ' होगा तो 'यु', और 'ऊ' होगा तो 'यू' हो जायगा; और उ अथवा ऊ के बाद 'इ' होगी तो 'वि' और 'ई' होगी तो 'वी' हो जायगी । यथा

१—इ+उ=यु

कवि+उचित=कव्युचित

इति+उक्त=इत्युक्त

प्रति+उत्तर=प्रत्युत्तर

२—ई+उ=यु

देवी+उक्त=देव्युक्त

नारी+उदय=नार्युदय

३—इ+ऊ=यू

अति+ऊर्जस्वी=अत्यूर्जस्वी

प्रति+ऊह प्रत्यूह

वि+ऊह व्यूह

४—ई+ऊ=यू

नदी+ऊर्मि=नद्यूर्मि

नारी+ऊहा=नार्यूहा

५—उ+इ=वि

अनु+इष्ट=अन्विष्ट

लघु+इति=लघ्विति

ऋतु+इन्द्र=ऋत्विन्द्र

६—ऊ+इ=वि

वधू+इष्ट=वध्विष्ट

७—उ+ई=वी

अनु+ईप्सा=अन्वीप्सा

अनु+ईक्षण=अन्वीक्षण

८—ऊ+ई=वी

वधू+ईप्सा=वध्वीप्सा

अयादि सन्धि

इसके अनुसार जब 'ए' के बाद 'अ' हो तो 'अय', 'ओ' के बाद 'अ' हो तो 'अव्', 'ऐ' के बाद 'अ' हो तो 'आय' और 'औ' के बाद 'अ' हो तो 'आव्' हो जाता है। यथा

१—ए+अ=अय

ने+अन=नयन

शे+अन=शयन

२—ओ+अ=अव

पो+अन=पवन

लो+अण=लवण

३—ऐ+अ=आय

गै+अक=गायक

नै+अक=नायक

४ औ+अ आव

पौ+अक पावक

धौ+अक=धावक

इस सन्धि का प्रयोग हिन्दी मे बहुत कम होता है, क्योकि वहा एकारान्त और ओकारान्त तत्सम शब्द नही के बराबर है। संस्कृत मे भी यह सन्धि अधिकतर प्रत्ययो के ही सयोग मे काम आती है, जैसा कि ऊपर के उदाहरणो से सुस्पष्ट है।

व्यंजन सन्धि

दो स्वरों के संयोग को जिस प्रकार 'स्वर-सधि' कहते है, उसी प्रकार दो व्यंजनो के सयोग को तो व्यजन-सन्धि कहते है, इसके अतिरिक्त व्यंजन और स्वर के सयोग को भी 'व्यंजन-सन्धि' ही कहा जाता है। व्यंजनो की अनेकता के कारण उनकी संन्धि का क्षेत्र भी बहुत विशाल है। यह पहले ही कहा जा चुका है कि ये सभी सन्धियां संस्कृत के तत्सम शब्दों मे ही पाई जाती है। संस्कृत के विद्वानों ने व्यजन-सन्धि के लिए अनेकानेक नियम सुस्थिर कर दिए है।

व्यंजन–स्वर–संधि

१—यदि क्, च्, त्, ट्, और प्, के बाद कोई स्वर होगा, तो उनके स्थान पर क्रमशः ग्, ज्, द्, ड् और ब् हो जायगा। यथा

वाक्+ईश=वागीश

णिच्+अन्त=णिजन्त

षट्+आनन=षडानन

सत्+उपयोग=सदुपयोग

सुप्+अन्त=सुबन्त

२—यदि अनुस्वार के बाद स्वर होगा तो उसका 'म्' हो जायगा। यथा

सं+आगम=समागम

सं+आचार=समाचार

एवं+आदि=एवमादि

स्वयं+एव=स्वयमेव

एवम्+अस्तु=एवमस्तु

४ यदि इ या उ के बाद स' होगा तो उसका ष' हो जायगा

नि+स्था=निष्ठा

वि+सम=विषम

युधि+स्थिर=युधिष्ठिर

अभि+सेक=अभिषेक

सु+समा=सुषमा

इस नियम के कुछ अपवाद भी है; जैसे

वि+स्तार=विस्तार

सु+स्थिर=सुस्थिर

अन्य व्यजनों के बाद यदि स्वर होगा तो उनका सीधा अविकारी संयोग हो जायेगा।

व्यंजन-व्यंजन-सन्धि

१—यदि वर्ग के प्रथम वर्ण के बाद कोई भी तृतीय वर्ण होगा, तो प्रथम वर्ण भी (अपने वर्ग का) तृतीय हो जायगा। यथा

धिक्+जन्म=धिग्जन्म

वाक्+जाल=वाग्जाल

दिक्+गज=दिग्गज

उन्+गम=उद्गम

सत्+गति=सद्गति

षट्+दर्शन=षड्दर्शन

कुप्+जा=कुब्जा

अप्+ज=अब्ज

२—यदि वर्ग के प्रथम वर्ण के बाद कोई भी पचम वर्ण होगा तो प्रथम वर्ण भी (अपने वर्ग का) पंचम हो जायगा।

दिक्+मोह=दिङ्मोह

वाक्+मय=वाङ्मय

षट्+मास=षण्मास

सत्+नारी=सन्नारी

सत्+मार्ग=सन्मार्ग

उत्+मुख=उन्मुख

अप्+मात्र=अम्मात्र

३ यदि त् के बाद च या छ् होगा तो त् का च यदि ज या झ होगा तो त् का ज यदि ट या ठ होगा तो त् का ट और यदि ड् या ढ् होगा तो ड हो जायगा। यथा

उत्+चाटन=उच्चाटन
सत्+छात्र=सच्छात्र
उत्+ज्वल=उज्ज्वल
उत्+झित=उज्झित
तत्+टिप्पणी=तट्टिप्पणी
उत्+डयन=उड्डयन

४—यदि त् के बाद य, र, व होगे तो 'त्' का 'द्' और यदि 'ल' होगा तो 'त' का 'ल' हो जायगा। यथा

उत्+यान=उद्यान
तत्+रूप=तद्रूप
सत्+वेष=सद्वेष
सत्+वैद्य=सद्वैद्य
उत्+लास=उल्लास

५—यदि 'त्' के बाद 'श' होगा तो 'त्' के स्थान पर 'च्' और 'श' के स्थान पर 'छ' हो जायगा और यदि बाद में 'ह' होगा, तो 'त' का 'द्' और 'ह' का 'ध' हो जायगा। यथा

उत्+श्वास=उच्छ्वास
सत्+शिष्य=सच्छिष्य
उत्+शिष्ट=उच्छिष्ट
उत्+हरण=उद्धरण
तत्+हित=तद्धित
उत्+हार=उद्धार

६—यदि 'त्' के बाद हलन्त 'स्' होगा तो उसका लोप हो जायगा। यथा

उत्+स्थान=उत्थान
उत्+स्थित=उत्थित

७ म् के बाद यदि किसी वर्ग का कोई वर्ण होगा तो 'म्' के स्थान पर उसी वर्ग का पंचम वर्ण और यदि बाद मे कोई अन्य व्यजन होगा तो म्' का अनुस्वार हो जायगा। यथा

सम्+क्रान्ति=संक्रान्ति
सम्+चय=संचय
सम्+दर्भ=सन्दर्भ
सम्+पुट=सम्पुट
सम्+योग=संयोग
सम्+वाद=संवाद
सम्+रोष=सरोष
सम्+लाप=संलाप
सम्+शय=संशय
सम्+सार=संसार
सम्+हार=संहार
सम्+क्षेप=संक्षेप
सम्+त्रास=संत्रास
सम्+ज्ञा=संज्ञा

यहा यह स्मरणीय है कि अब सरलता के लिए सर्वत्र अनुस्वार का ही प्रयोग किया जाता है।

विसर्ग सन्धि

अन्य सन्धियो के समान यह सन्धि भी संस्कृत के उन्ही तत्सम शब्दो में पाई जाती है, जो हिन्दी मे व्यवहृत होते है। इसके लिए बहुत से नियम निश्चित किए गए हैं। यथा

१—विसर्ग के पूर्व यदि अ हो और बाद में भी अ हो तो दोनों अ और विसर्ग सब मिलकर केवल 'ओ' हो जाते हैं, किन्तु यदि बाद में अन्य स्वर हो तो विसर्ग का लोप हो जाता है। यथा

यशः+अर्थी=यशोऽर्थी
मनः+अनुकूल=मनोऽनुकूल
पयः+अंश=पयोऽश
रजः+अन्तर=रजोऽतर

यहा ध्यान रहना चाहिए कि लिखते समय ओ के बाद ऽ (अग्रेजी एस्) का चिन्ह लगा दिया जाता है ।

इस नियम का एक अपवाद है, किन्तु अति प्रचलित होने के कारण अब उसमे अशुद्धता नही रह गई है । यथा

मनः अर्थ=मनोऽर्थ होना चाहिए, किन्तु उसके स्थान पर सर्वत्र 'मनोरथ' का ही व्यवहार होता है ।

विसर्ग लोप

अतः+एव=अत एव

पयः+आदि=पय आदि

रजः+उद्गम=रज उद्गम

यहा ध्यान रहे कि इस सन्धि के बाद यहां दूसरी सन्धि फिर नही होगी, इसलिए 'अतैव' 'पयादि' और 'रजोद्गम' रूप कभी नही बनेंगे ।

२—विसर्ग के पूर्व यदि 'अ' हो और बाद मे ग, घ, ब, भ, य, र, ल, व या ह हो तो विसर्ग का अः, यदि बाद मे 'चवर्ग' हो तो विसर्ग का 'श्', यदि बाद मे 'टवर्ग' हो तो विसर्ग का 'ष', यदि बाद में 'तवर्ग' हो तो विसर्ग का 'स' हो जाता है किन्तु यदि बाद मे क, ख, प, फ, श, ष, या स हो तो विसर्ग का विसर्ग ही बना रहता है । यथा

यशः+गान=यशोगान

मनः+घोष=मनोघोष

अधः+गति=अधोगति

मनः+बल=मनोबल

मनः+भाव=मनोभाव

मनः+योग=मनोयोग

मनः+वेग=मनोवेग

मनः+हर=मनोहर

विसर्ग का 'श्'

पुनः+च=पुनश्च

विसर्ग का 'ष'

प्रातः+टंकोर=प्रातष्टंकोर

विसर्ग का स

मन +ताप मनस्ताप

विसग का विसग

अन्तः+करण=अन्तःकरण

प्रातः+काल=प्रात काल

अधः+पतन=अध पतन

पयः+फेन=पयःफेन

मनः+शाप=मनःशाप

अध+षड्यन्त्र=अधःषड्यन्त्र

पय;+सरण=पय सरण

इस 'विसर्ग-सन्धि' मे यह स्मरण रखना चाहिए कि संस्कृत में स और र केवल दो ही ऐसे वर्ण हैं, जिनका विसर्ग हो जाता है, यदि हिन्दी की प्रवृत्ति के अनुसार ऐसे स्थलों पर उनको हम स् और र् ही मानें तो व्यंजन-संधि मे ही काम चल सकता है। फिर उनकी 'विसर्ग-सन्धि' के लिए परिश्रम करने की कोई विशेष आवश्यकता नहीं रह जाती है। यथा

१—'स' वाले शब्द	उनके विसर्गान्त रूप
दुस्	दुः
निस्	निः
बहिस्	बहिः
पुरस्	पुरः
तिरस्	तिरः
मनस्	मनः
यशस्	यशः
अधस्	अधः
पयस्	पयः

२—'र' वाले शब्द	उनके विसर्गान्त रूप
प्रातर्	प्रातः
पुनर्	पुनः
अन्तर	अन्तः
निर्	निः
दुर्	दुः

अतः निम्न संधियों मे व्यंजन-सन्धि से भी काम चलाया जा सकता है। यथा

१—दुस्+तेज=दुस्तेज
निस्+तेज=निस्तेज
वहिस्+कार=बहिष्कार
पुरस्+सर=पुरस्सर
तिरस्+कार=तिरस्कार
मनस्+ताप=मनस्ताप
यशस्+वी=यशस्वी
अधस्+तात्=अधस्तात्
पयस्+विनी=पयस्विनी

२—प्रातर्+आश=प्रातराश
पुनर्+जन्म=पुनर्जन्म
अन्तर्+धान=अन्तर्धान
निर्+जल=निर्जल
दुर्+जन=दुर्जन

३—विसर्ग के पूर्व यदि इ या उ होगा और बाद म क, ख, ट, ठ, प या फ तो विसर्ग का 'ष', यदि बाद मे च या छ होगा तो विसर्ग का 'श', यदि बाद मे त, थ या स होगा तो 'स्' और यदि अन्य वर्ण होंगे तो विसर्ग का 'र्' हो जायगा। यथा

विसर्ग का 'ष्'

बहिः+कार=बहिष्कार
दुः+कर्म=दुष्कर्म
निः+ठुर=निष्ठुर
चतुः+पथ=चतुष्पथ
निः+फल=निष्फल

विसर्ग का 'श्'

निः+चय=निश्चय
निः+छल=निश्छल

विसर्ग का स

नि+तेज निस्तेज

नि+सन्देह निस्सदह

विसर्ग का 'र'

निः+गमन=निर्गमन

निः+झर=निर्झर

निः+जल=निर्जल

नि.+णय=निर्णय

निः+बल=निर्बल

नि.+भय=निर्भय

नि·+मम=निर्मम

नि·+यात=निर्यात

नि+वैर=निर्वैर

निः+लेप=निर्लेप

नि+हृदय=निर्हृदय

दु·+गम=दुर्गम

दुः+जन=दुर्जन

दुः+दम=दुर्दम

दुः+बल=दुर्बल

दुः+भाग्य=दुर्भाग्य

दुः+मद=दुर्मद

दु·+लभ=दुर्लभ

यहाँ स्मरणीय है कि केवल 'र' अपवाद है। यदि वह बाद मे होता है तो विसर्ग और 'र' दोनो का लाप हो जाता है और विसर्ग के पहले वाला स्वर दीर्घ हो जाता है। यथा

नि·+रोग='निर्रोग' नहीं होगा, किन्तु 'नीरोग' होगा।

निः+रव='निर्रव' नही, 'नीरव' होगा।

नि·+रज='निर्रज' नही, 'नीरज' होगा।

समास

दो शब्दों या पदों के परस्पर संयोग को समास कहते हैं । सम्+आस= समास का शाब्दिक अर्थ है ठीक से रखना या ऐसे मिलाना, जिससे संक्षेप में न्यूनतम शब्दों मे बडी से बड़ी और पूरी बात कही जा सके। अतः सरलता और संक्षिप्तता की दृष्टि से समास बड़े उपयोगी होते हैं। उन समासों के ६ भेद है—

(१) अव्ययीभाव
(२) कर्मधारय
(३) द्विगु
(४) तत्पुरुष
(५) द्वन्द्व
(६) बहुव्रीहि

अव्ययीभाव समास

इस समास मे प्रथम-पद अव्यय होता है और उसके साथ द्वितीय पद का संयोग करने से ही अव्ययीभाव समास कहलाता है। अव्यय शब्द का अर्थ है जिसमें कुछ व्यय न हो, अत. जो शब्द सदैव एक ही रूप मे रहते हैं, वे अव्यय कहलाते हैं। संस्कृत के विद्वानों ने ऐसे शब्दो की एक बडी सूची निर्धारित कर रखी है। संस्कृत के सभी उपसर्ग अव्यय कहलाते हैं अतः उनके साथ भी द्वितीय पद का संयोग होने पर अव्ययीभाव समास होता है। यथा

उपसर्ग

प्र+बल=प्रबल
परा+जय=पराजय
अप+वाद=अपवाद
सं+आचार=समाचार

अनु+चर अनूचर

निस्+तेज=निस्तेज

निर्+जल=निर्जल

दुस्+तर=दुस्तर

दुर+जन=दुर्जन

वि+शेष=विशेष

आ+जीवन=आजीवन

नि+हित=निहित

अधि+कार=अधिकार

अति+आचार=अत्याचार

सु+अगम=स्वागत

उत्+हरण=उद्धरण

अभि+योग=अभियोग

प्रति+उपकार=प्रत्युपकार

परि+चय=परिचय

उप+राष्ट्रपति=उपराष्ट्रपति

अन्य अव्यय

यथा+शक्ति=यथाशक्ति

वहिस्+कार=बहिष्कार

अन्तर्+व्यथा=अन्तर्व्यथा

अवश्यं+भावी=अवश्यंभावी

तथा+भाव=तथाभाव

एवम्+एव=एवमेव

यावत्+जीवन=यावज्जीवन

(२) कर्मधारय समास

जहा प्रथम पद विशेषण और द्वितीय पद विशेष्य, वहाँ कर्मधारय समास होता है। यथा

नील+आकाश=नीलाकाश

कृष्ण+मेघ=कृष्णमेघ

महा+ऋषि=महर्षि

सत्+जन=सज्जन

श्वेत+पत्र=श्वेतपत्र

चरम+सीमा=चरमसीमा

रक्त+कमल=रक्तकमल

छोटा+भैया=छुटभैया

भला+मानस=भलमानस

भद्र+महिला=भद्रमहिला

उच्चतर+विद्यालय=उच्चतरविद्यालय

महा+पुरुष=महापुरुष

कु+पुत्र=कुपुत्र

(३) द्विगु समास

जहा प्रथम पद संख्यावाची होता है, वहा द्विगु समास होता है। यथा

एक+धर्म=एकधर्म

द्वि+वचन=द्विवचन

त्रि+लोक=त्रिलोक

चतुस्+पथ=चतुष्पथ

पंच+वटी=पंचवटी

षट्+कोण=षष्टकोण

सप्त+अह=सप्ताह

अष्ट+सिद्धि=अष्टसिद्धि

नव+निधि=नवनिधि

दश+दिश=दशदिश

द्वादश+आदित्य=द्वादशादित्य

(४) तत्पुरुष समास

जहां पूर्वपद गौण हो और उत्तर पद प्रधान हो, वहां तत्पुरुष समास होता है। कर्ता और सम्बोधन को छोड़कर शेष सभी कारकों में इसका प्रयोग किया जाता है और उसको उसी नाम से अभिहित भी किया जाता है। वैसे सम्बन्ध कारक में इसका विशेष रूप से प्रयोग होता है। वहां उन कारक-चिन्हो का फिर लोप भी हो जाता है। इस समास के कुछ उदाहरण निम्नांकित हैं—

कर्म त पुरुष (कारक चिन्ह को)

हस्त+गत=हस्तगत (हाथ को प्राप्त)

विदेश+गत=विदेशगत (विदेश को गया)

करण तत्पुरुष (कारक चिन्ह, 'से [सहायता] और द्वारा')

हस्त+लिखित=हस्तलिखित (हाथ से लिखित)

विदेश+निर्मित=विदेशनिर्मित (विदेश से निर्मित)

सुरा+मत्त=सुरामत्त (सुरा से मत्त)

भाव+पूर्ण=भावपूर्ण (भाव से पूर्ण)

धर्म+अनुमत=धर्मानुमत (धर्म द्वारा अनुमत)

मोह+स्वीकृत=मोहस्वीकृत (मोह द्वारा स्वीकृत)

भाग्य+प्राप्त=भाग्यप्राप्त (भाग्य द्वारा प्राप्त)

आंखों+देखा=आंखों देखा (आंखों से देखा)

प्राण+प्यारा=प्राणप्यारा (प्राण से प्यारा)

संप्रदान तत्पुरुष (कारक चिन्ह 'के लिए')

गुरु+दक्षिणा=गुरुदक्षिणा (गुरु के लिए दक्षिणा)

बाल+अमृत=बालामृत (बालक के लिए अमृत)

नववर्ष+उपहार=नववर्षोपहार (नव वर्ष के लिए उपहार)

धर्म+दान=धर्मदान (धर्म के लिए दान)

अपादान तत्पुरुष (कारक चिन्ह 'से' [अलग होना])

पद+च्युत=पदच्युत (पद से च्युत)

धर्म+च्युत=धर्मच्युत (धर्म से च्युत)

विदेश+आगत=विदेशागत (विदेश से आगत)

देश+त्यक्त=देशत्यक्त (देश से त्यक्त)

धनुष+प्रक्षिप्त=धनुष्प्रक्षिप्त (धनुष से प्रक्षिप्त)

गृह+दूर=गृह+दूर (गृह से दूर)

लज्जा+मुक्त=लज्जामुक्त (लज्जा से मुक्त)

राज+विमुख=राजविमुख (राजा से विमुख)

हथ+फेंका=हथफेंका (हाथ से फेंका हुआ)

देश+निकाला=देशनिकाला (देश से निकाला हुआ)

घर+भगोड़ा=घरभगोड़ा (घर से भगोड़ा)

पथ+भ्रष्ट=पथभ्रष्ट (पथ से भ्रष्ट)

(५) सम्बन्ध तत्पुरुष (कारक चिन्ह 'का')

राज+पुत्र=राजपुत्र (राजा का पुत्र)

जाति+धर्म=जातिधर्म (जाति का धर्म)

प्राण+मोह=प्राणमोह (प्राण का मोह)

गुण+वृद्धि=गुणवृद्धि (गुण की वृद्धि)

शयन+आगार=शयनागार (शयन का आगार)

इसी प्रकार—

विद्या+आलय=विद्यालय

स्नान+गृह=स्नानगृह

करोड़+पति=करोड़पति

पान+डिब्बा=पनडिब्बा

पानी+डुब्बी=पनडुब्बी

पानी+चक्की=पनचक्की

हवा+गाड़ी=हवागाड़ी

राष्ट्र+पति=राष्ट्रपति

वायु+वेग=वायुवेग

(६) अधिकरण तत्पुरुष (कारक चिन्ह, 'में और पर')

नर+श्रेष्ठ=नरश्रेष्ठ (नरों में श्रेष्ठ)

गृह+प्रविष्ट=गृहप्रविष्ट (गृह में प्रविष्ट)

प्रेम+मग्न=प्रेममग्न (प्रेम में मग्न)

सिर+बीती=सिरबीती (सिर पर बीती हुई)

पन+डूबी=पनडूबी (पानी में डूबी हुई)

घर+घुसा=घरघुसा (घर में घुसा हुआ)

वन+वास=वनवास (वन में वास)

उच्चकुल+जन्म=उच्चकुलजन्म (उच्चकुल में जन्म)

(५) द्वन्द्व समास

जहां दोनों पद समान रूप से प्रधान हों और उनके बीच में 'और' शब्द का लोप हो गया हो वहां द्वन्द्व समास होता है। 'द्वन्द्व' का शाब्दिक

अर्थ है 'दो, दो,' अर्थात् जहां दो वस्तुएं जुड़ी हुई हों। यथा

माता+पिता=माता पिता (माता और पिता)
भाई+बहिन=भाई बहिन (भाई और बहिन)
धर्म+अर्थ=धर्मार्थ (धर्म और अर्थ)
गुण+अवगुण=गुणावगुण (गुण और अवगुण)
अन्न+जल=अन्नजल (अन्न और जल)
मान+अपमान=मानापमान (मान और अपमान)
जीवन+मरण=जीवनमरण (जीवन और मरण)
दाल+भात=दालभात (दाल और भात)
रोटी+बेटी=रोटीबेटी (रोटी और बेटी)
गंगा+यमुना=गंगायमुना (गंगा और यमुना)
हाथी+घोड़ा=हाथी घोड़ा (हाथी और घोड़ा)
लोटा+थाली=लोटाथाली (लोटा और थाली)
गुरु+चेला=गुरुचेला (गुरु और चेला)
दण्ड+बैठक=दण्डबैठक (दण्ड और बैठक)

(६) बहुव्रीहि समास

जहां दोनों ही पद गौण हो अर्थात् उनमें से कोई भी प्रधान न हो और उन दोनों के शाब्दिक अर्थों को छोड़कर वहां किसी विशिष्ट नये अर्थ का ग्रहण किया जाय, वहां 'बहुव्रीहि' समास होता है। प्रथम दृष्टि में, ऐसे समास में किसी दूसरे समास का भ्रम हो जाता है, किन्तु विचार करने पर वहां 'बहुव्रीहि' समास स्पष्ट हो जाता है। इस प्रकार इस समास के ५ भेद किए जा सकते हैं। यथा

१—कर्मधारय बहुव्रीहि

पीत+अम्बर=पीताम्बर (पीला कपड़ा, किन्तु कृष्ण)
घन+श्याम=घनश्याम (बादल जैसा काला, किन्तु कृष्ण)
नील+कण्ठ=नीलकण्ठ (नीला कण्ठ, किन्तु मोर या शंकर)
लम्ब+उदर=लम्बोदर (लम्बा पेट, किन्तु गणेश)

२—तत्पुरुष बहुव्रीहि

पंक+ज=पंकज (कीचड़ में उत्पन्न, किन्तु कमल)
गज+आनन=गजानन (हाथी का मुंह, किन्तु गणेश)

नाक+कटा=नकटा (नाक में कटा, किन्तु ऐसा आदमी)

विश्व+अमित्र=विश्वामित्र (विश्व के अमित्र, किन्तु एक ऋषि)

३—द्विगु बहुब्रीहि

त्रि+नेत्र=त्रिनेत्र (तीन नेत्र, किन्तु शंकर)

सहस्त्र+नेत्र=सहस्त्रनेत्र (हजार आंख, किन्तु इन्द्र)

दश+आनन=दशानन (दस मुंह, किन्तु रावण)

षड्+आनन=षडानन (छह मुंह, किन्तु कार्तिकेय)

इसी प्रकार—

चतुरानन=(ब्रह्मा)

पचानन=(शंकर)

४—अव्ययीभाव बहुब्रीहि

निर्+जल=निर्जल (बिना पानी, किन्तु ऐसा स्थान)

दुर्+मुख=दुर्मुख (बुरा मुंह, किन्तु ऐसा आदमी)

दुर्+वासा=दुर्वासा (बुरे कपडे, किन्तु एक ऋषि)

सु+बहु=सुबाहु (अच्छे हाथ, किन्तु एक राक्षस)

५—द्वन्द्व बहुब्रीहि

घास+कूडा=घासकूडा (घास और कूडा, किन्तु बेकार की वस्तुए)

भेड़+बकरी=भेड़बकरी (भेड़ और बकरी, किन्तु डरपोक जनता)

कीड़े+मकोडे=कीड़ेमकोडे (कीडे और मकोड़े, किन्तु भिखमंगे)

अन्न+जल=अन्नजल (अन्न और जल, किन्तु जीविका)

इन समासो के सम्बन्ध में एक बात सदैव स्मरणीय है कि यदि दो से अधिक पदों का संयोग किया गया हो और वहां दो या दो से अधिक समास विद्यमान हों, तो जो अन्तिम समास होगा, वही पूरे पद का मुख्य समास माना जायगा। यथा

माता+पिता+सेवा=माता पिता सेवा (माता और—द्वन्द्व समास—उनकी सेवा—तत्पुरुष समास) पहले द्वन्द्व फिर तत्पुरुष हैं, अतः तत्पुरुष मुख्य समास है।

चतुर्+गुण+संपन्न=चतुर्गुण संपन्न (चतुर+गुण—द्विगु—उससे सम्पन्न—तत्पुरुष) पहले द्विगु फिर तत्पुरुष है अत तत्पुरुष मुख्य समास है।

किन्तु इसका निर्णय पद के अर्थ पर निर्भर होता है, हम जैसा अर्थ चाहेंगे वैसा ही समास होगा। यथा

महा+विद्या+आलय=महाविद्यालय

यहां महा+विद्या—कर्मधारय—उसका आलय—तत्पुरुष समास, पहले कर्म धारय, फिर तत्पुरुष होना चाहिये, किन्तु ऐसा नहीं है क्योंकि 'महा' का सम्बन्ध 'आलय' से है न कि 'विद्या' से और पद का अर्थ है बड़ा विद्यालय, न कि बडा विद्या का आलय, अत. यहा पर कर्मधारय समास ही है। किन्तु यदि हम 'बड़ी विद्या का आलय' ही अर्थ करेंगे तो पूर्व नियमानुसार 'तत्पुरुष' समास माना जायगा। इसीलिए यह कहा गया है कि समास मे अर्थ की प्रधानता होती है।

अब अन्त में हमे सन्धि और समास का अन्तर भी स्पष्ट समझ लेना चाहिए।

१—सन्धि, केवल दो वर्णो (स्वर अथवा व्यजन, विसर्ग भी) की होती है, किन्तु समास दो शब्दो अथवा पदो का ही होता है।

२—सन्धि मे कुछ वर्णो का रूप परिवर्तन हो जाता है, किन्तु समास मे ऐसा कुछ नही होता। वहा तत्पुरुष समास मे कारक चिन्हों का लोप अवश्य हो जाता है।

३—सन्धि में समास नही होता, किन्तु समास मे सन्धि हो सकती है।

४—सन्धि मे एक ही अर्थ रहता है, किन्तु समास में कई अर्थ हो सकते है और तदनुसार उनका समास भी बदल सकता है। यथा

शब्द	अर्थ	समास
धर्मपुत्र—	१. धर्म से माना गया पुत्र—	कर्मधारय
	२. धर्म (किसी व्यक्ति) का पुत्र—	तत्पुरुष
	३. धर्म और पुत्र—	द्वन्द्व
	४. युधिष्ठिर—	बहुब्रीहि

५—सन्धि के अलग करने की प्रक्रिया को 'विच्छेद' और समास के अर्थ करने की प्रक्रिया को 'विग्रह' कहते हैं।

शब्द-प्रयोग

पिछले अध्याय मे यह कहा जा चुका है कि वाक्य में प्रयोग के योग्य अथवा प्रयोग किए गए शब्द को 'पद' कहते है। प्रयोग मे आने पर कुछ शब्द तो सदैव ज्यो के त्यो रहते है और कुछ शब्दों मे थोडा विकार अथवा रूप-परिवर्तन हो जाता है। इस दृष्टिकोण से प्रथम प्रकार के शब्द अविकारी कहलाते हैं और दूसरे प्रकार के शब्द विकारी कहलाते हैं।

अविकारी शब्द—

अविकारी शब्दो को 'अव्यय' कहते हैं। उनमें लिंग, वचन, कारक आदि के कारण कोई रूप-परिवर्तन नहीं होता। 'अव्ययीभाव' समास के अन्तर्गत ऐसे अव्यय शब्दो का उल्लेख किया जा चुका है। अव्यय शब्दो के, वाक्य मे उनके अर्थ एवं स्थान-महत्व के आधार पर, अनेक प्रकार माने जाते है। यथा

१—अर्थ के आधार पर— [१] सम्बन्ध बोधक अव्यय
[२] विस्मयादि बोधक अव्यय

२—स्थान-महत्व के आधार पर— [१] समुदाय बोधक अव्यय
[२] क्रिया विशेषण अव्यय

सम्बन्धबोधक अव्यय

ये 'अव्यय' शब्द 'संज्ञा' अथवा सर्वनाम के साथ जुड़कर, उसी वाक्य के अन्तर्गत दूसरे शब्दो के साथ उसका सम्बन्ध स्पष्ट करते है। यथा

ऊपर, नीचे, अन्दर, बाहर, भीतर, पहले, पूर्व, बाद उपरान्त, पश्चात्, अनन्तर, दूर, निकट, समीप, पास, संमुख, उलटे विपरीत, संग, सहित, साथ, योग्य, समान, मध्य, बदले, बिना, कभी, प्रायः, द्वारा, लगभग, रहित, व्यर्थ, वृथा, अकस्मात्, प्रतिकूल आदि

विस्मयादि बोधक अव्यय

यहां 'आदि' शब्द से हर्ष, शोक, घृणा, प्रशंसा, सम्बोधन, स्वीकृति और अस्वीकृति आदि शब्दों का भी ग्रहण अभिप्रेत है। यथा

१—विस्मय बोधक अव्यय—अरे, अच्छा, ओहो, अहा, एँ, आह्-आह, हे, ऊँहूं, आहा आदि।

२—हर्ष बोधक अव्यय—वाह वाह, क्या खूब, अति सुन्दर, बहुत अच्छा, अरे वाह, आदि।

३—शोक बोधक अव्यय—उफ्, हाय, अरे, हरेराम, आह, ऊँह, दैया, हरे हरे आदि।

४—घृणा बोधक अव्यय—छि, छिः, धिक् धिक्, थू थू, धत् आदि।

५—प्रशंसा बोधक अव्यय—शाबाश, बहुत अच्छा आदि।

६—सम्बोधन बोधक अव्यय—हे, अजी, ओ, ए, अरे आदि।

७—स्वीकृति बोधक अव्यय—हां, ठीक, अच्छा आदि।

८—अस्वीकृति बोधक अव्यय—हूं हूं, नाना, नहीं, मत आदि।

समुच्चय बोधक अव्यय

वे अव्यय, जो दो शब्दों अथवा वाक्यों को मिलाते हैं, 'समुच्चय बोधक' अव्यय कहलाते हैं। इनमें से, जो दो प्रधान वाक्यों को मिलाते हैं, वे 'समन्वि-करण' अथवा समानाधिकरण' कहे जाते हैं और जो एक प्रधान वाक्य को अन्य अप्रधान वाक्य या वाक्यों से मिलाते हैं, वे 'व्यधिकरण' अथवा 'असमा-नाधिकरण' अव्यय कहे जाते हैं। इस प्रकार इनके ३ भेद होते है, (१) शब्द संयोजक, (२) समानाधिकरण, और (३) असमानाधिकरण।

१—शब्द संयोजक—और, एवं, तथा, अलावा, अतिरिक्त, भी, या, व, अथवा, आदि (राम और श्याम अथवा हम भी, तुम भी आदि)।

२—समानाधिकरण अव्यय—ये अव्यय दो प्रधान वाक्यों को मिलाते हुए भी, कभी संयोग, कभी वियोग, कभी अनुकूलन और कभी प्रतिकूलता की भावनाएं व्यक्त करते है, अतः इस प्रकार उनके ४ भेद किए जाते हैं। यथा

(१) संयोग सूचक अव्यय—और, एवं, तथा आदि।

(२) वियोग सूचक अव्यय—या, अथवा, चाहे, अन्यथा, नहीं तो, किंवा आदि।

(३) अनुकूलता सूचक अव्यय—इसलिए, अतः अतएव आदि।

(४) प्रतिकूलता सूचक अव्यय—किन्तु, परन्तु, लेकिन, पर आदि।

३—असमानाधिकरण अव्यय—ये अव्यय प्रधान वाक्य के साथ सहायक वाक्य का सम्बन्ध कराने के साथसाथ, उस सम्बन्ध की व्याख्या भी करते है। वह सम्बन्ध सादृश्य, हेतु, फल और प्रतिज्ञा पर आधारित होता है, इसलिए ऐसे अव्ययो के भी उपर्युक्त ढंग से ४ भेद हो जाते है—

सादृश्यवाचक अव्यय—जैसे, यानी, अर्थात् आदि।

हेतुवाचक अव्यय—क्योकि, इसलिए आदि।

फलवाचक अव्यय—कि, ताकि, जिससे, फलस्वरूप, परिणाम-स्वरूप आदि।

प्रतिज्ञावाचक अव्यय—इनका प्रयोग दोनों वाक्यो के बीच बीच मे न होकर, उनके आदि मे होता है, अत. ये सदैव जोड़े से रहते है। यथा, यदि और तो, यद्यपि और तथापि, भले ही और किन्तु आदि।

विकारी शब्द

जो शब्द लिंग और वचन के आधार पर बदलते रहते हैं, उन्हे 'विकारी शब्द' कहते है। वाक्य मे प्रयोग के आधार पर ऐसे शब्दो के ४ भेद किए जाते हैं, (१) संज्ञा, (२) सर्वनाम, (३) विशेषण तथा (४) क्रिया।

संज्ञा—नामकरण की प्रक्रिया को संज्ञा कहते है। यह नामकरण किसी व्यक्ति, स्थान, वस्तु अथवा उसके भाव का हो सकता है। उनमे व्यक्तियो, स्थानो एवं वस्तुओ की एक निश्चित सामान्य एकरूपता होती है, जिसे जाति कहते हैं। उसका एक विशाल संग्रह भी हो सकता है। इस प्रकार संज्ञा के ५ भेद किए जाते है, जैसे (१) व्यक्तिवाचक (२) जातिवाचक (३) समूहवाचक (४) वस्तुवाचक और (५) भाववाचक।

(१) व्यक्तिवाचक संज्ञा—जिस शब्द से किसी अकेले व्यक्ति अथवा स्थान का नाम आदि ज्ञात हो, उसे 'व्यक्तिवाचक संज्ञा' कहते है, जैसे राम, कृष्ण, कमला, विमला, जय, विजय, कानपुर, जयपुर, गंगा, यमुना, राजस्थान, भारतवर्ष, हिमालय, रामायण, महाभारत, गीता आदि।

(२) जातिवाचक संज्ञा—जिस शब्द से किसी वर्ग की एक सामान्य एकरूपता का ज्ञान हो, उसे 'जातिवाचक संज्ञा' कहते है, जैसे मनुष्य, स्त्री बालक, नगर, नदी, प्रान्त, देश, पर्वत, पुस्तक आदि।

उपर्युक्त दोनों संज्ञाओं के उदाहरणों में एक स्पष्ट अन्तर दिखलाई देता है कि जहां राम, कृष्ण, जय अथवा विजय आदि शब्द किसी अकेले मनुष्य का ही ज्ञान कराते हैं, वहां 'मनुष्य' मात्र कह देने से उन सबका ग्रहण हो जाता है। इसी प्रकार कानपुर और जयपुर दोनों ही सामान्यतया 'नगर' हैं, और रामायण, महाभारत तथा गीता आदि सामान्यतया पुस्तकें हैं।

(३) समूहवाचक संज्ञा—जिस शब्द से एक ही जाति के समूह का ज्ञान हो, उसको 'समूहवाचक संज्ञा' कहते हैं जैसे, भीड़, सेना, परिवार, पंक्ति श्रेणी, ढेर आदि।

(४) वस्तुवाचक संज्ञा—जिस शब्द से किसी भी वस्तु का नाम ज्ञात हो, उसे वस्तुवाचक संज्ञा कहते हैं, जैसे सोना, चांदी, दूध, दही, गुड़, शक्कर, लोटा, गिलास आदि।

(५) भाववाचक संज्ञा—जिस शब्द से किसी व्यक्ति अथवा वस्तु के गुण, धर्म और स्थिति आदि का ज्ञान होता है, उसे 'भाववाचक संज्ञा' कहते हैं, जैसे लम्बाई, चौड़ाई, मिठास, कड़ुवाहट, स्वास्थ्य, सौन्दर्य, बचपन, जवानी, बुढ़ापा, सच्चाई, झूंठ, पढ़ाई, लिखाई आदि।

इस प्रकार के भाववाचक शब्द, व्यक्ति अथवा वस्तु के नामों में कुछ प्रत्यय जोड़कर बना लिए जाते हैं, जैसे पन, पा, पना, ता, त्व, आस, आई, आहट, वट, ई, आव, अ, य आदि।

प्रत्यय **शब्द**

१. पन—बालपन, बचपन, मूर्खपन आदि।

२. पा—बुढ़ापा, रंडापा आदि।

३. पना—बालपना, बचपना, मूर्खपना आदि।

४. ता—बालता, मनुष्यता, कृपणता, शूरता, वीरता आदि।

५. त्व—मनुष्यत्व, पुरुषत्व, स्त्रीत्व, पशुत्व आदि।

६. आस—खटास, मिठास, रुआस आदि।

७. आई—खटाई, मिठाई, रुवाई, हंसाई, उतराई, चढ़ाई आदि।

८. आहट—कड़ुवाहट, झुंझलाहट, घबड़ाहट आदि।

९. वट—बनावट, दिखावट आदि।

१०. ई—सफेदी, फसली, गरमी, सरदी आदि।

११, आव—घुटाव, चढ़ाव, उतराव, घुमाव आदि।

१२. अ—चाल, उतार, मेल, खल आदि।

१३. य—स्वास्थ्य, सौन्दर्य, सौजन्य, चाचल्य, औदार्य आदि।

सर्वनाम—संज्ञा के स्थान पर जिन शब्दो का प्रयोग किया जाता है, उन्हे 'सर्वनाम' कहते है। जैसे हम, तुम, यह, वह, कौन, कोई, अपना आदि। इन सर्वनामो के निम्नाकित ५ भेद है—

१—पुरुषवाचक सर्वनाम

२—निश्चयवाचक सर्वनाम

३—अनिश्चयवाचक सर्वनाम

४—सम्बन्धवाचक सर्वनाम तथा

५—प्रश्नवाचक सर्वनाम

(१) पुरुषवाचक सर्वनाम—जिस शब्द का प्रयोग किसी पुरुष अथवा स्त्री के लिए किया जाय, उसे प्रत्येक पुरुष अपने को उत्तम समझता है क्योंकि उसमे एक स्वाभाविक अहंकार होता है। वह जिसमे बात करता है उसको 'मध्यम' मानता है और दूसरे तो उसके लिए दूसरे अथवा उपेक्षणीय होते है। इस प्रकार इस सर्वनाम के ३ भेद होते है—

(१) उत्तम पुरुष

(२) मध्यम पुरुष

(३) अन्य पुरुष अथवा प्रथम पुरुष

उत्तम पुरुषवाचक—जिन शब्दो से व्यक्ति के अहकार अथवा प्रधानता का भाव व्यक्त होता हो, उनको 'उत्तम पुरुषवाचक' कहते है, जैसे मैं और हम।

मध्यम पुरुष—उत्तम पुरुष वाले व्यक्ति मे, जिस व्यक्ति का प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है, उसके लिए प्रयुक्त शब्दों को 'मध्यम पुरुषवाचक' कहते है, जैसे तू, तुम, आप आदि।

अन्य पुरुष अथवा प्रथम पुरुष—उत्तम पुरुष वाले व्यक्ति मे, जिसका अप्रत्यक्ष रूप मे समीप अथवा दूर का सम्बन्ध होता है, उसके लिए प्रयुक्त शब्दों को 'अन्य पुरुषवाचक' अथवा 'प्रथम पुरुषवाचक' कहते हैं, जैसे यह, वह, ये, वे आदि।

(२) निश्चयवाचक सर्वनाम—जो शब्द, किसी निश्चित व्यक्ति अथवा वस्तु के लिए संकेत करते हो, उन्हे निश्चयवाचक सर्वनाम कहते हैं। ये शब्द

कभी समीप का ज्ञान कराते हैं तो कभी दूर का। अतः इसी आधार पर इनके २ भेद माने जाते हैं, जैसे—

१—समीपवाची—यह, ये।

२—दूरवाची—वह, वे।

(३) अनिश्चयवाचक सर्वनाम—जो शब्द, किसी निश्चित बात का संकेत न करें, वे 'अनिश्चयवाचक सर्वनाम' कहलाते है, जैसे कुछ, कई, कोई, आदि।

(४) सम्बन्धवाचक सर्वनाम—जिन शब्दों से किसी संज्ञा का पारस्परिक सम्बन्ध व्यक्त किया जाता है, उन्हें 'सम्बन्धवाचक सर्वनाम' कहते है जैसे जो, जिस, जिनका, उनका।

(५) प्रश्नवाचक सर्वनाम—जो शब्द, किसी संज्ञा के सम्बन्ध मे प्रश्न प्रस्तुत करें, उन्हें 'प्रश्नवाचक सर्वनाम' कहते हैं, जैसे कौन, किसे, किसको, कैसे आदि।

विशेषण—जो शब्द, संज्ञा अथवा सर्वनाम के गुण, रूप, संख्या आदि की विशेषताओं को व्यक्त करते हैं, वे विशेषण कहलाते हैं। ये ४ प्रकार के होते हैं, यथा

(१) गुणवाचक

(२) संख्यावाचक

(३) परिमाणवाचक

(४) संकेतवाचक

१—गुणवाचक विशेषण—जो शब्द, किसी व्यक्ति अथवा वस्तु के गुण, रंग, रूप आदि की विशेषता बतलाते हैं, उनको 'गुणवाचक सर्वनाम' कहते है, जैसे छोटा, बड़ा, लम्बा, चौड़ा, काला, लाल, हरा, पीला, सुन्दर, असुन्दर, अच्छा, भद्दा, भला, बुरा आदि।

२—संख्यावाचक विशेषण—जो शब्द निश्चित अथवा अनिश्चित, क्रम, गणना, संख्या आदि का संकेत करते हैं, वे 'संख्यावाचक सर्वनाम' कहलाते हैं, जैसे—

(१) निश्चित संख्यावाचक सर्वनाम—एक, दो, तीन,

क्रमवाचक सर्वनाम—पहला, दूसरा, तीसरा

गुणवाचक सर्वनाम—दुगुना, तिगुना चौगुना

समूहवाचक सर्वनाम—दोनों, तीनों, चारों

(२) अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण:—जिन शब्दो मे कोई संख्या निश्चित नही होती, उन्हें अनिश्चित संख्यावाचक' कहते हैं, जैसे, बहुत, थोडा, कम, अधिक, कुछ, कई, अनेक आदि।

३—परिमाणवाचक विशेषण—जिन शब्दो से नाप–तौल–सम्बन्धी विशेषताओ का ज्ञान होता है, उन्हे परिमाणवाचक विशेषण कहते हैं। निश्चित और अनिश्चित परिमाण के भेद से इनके भी २ वर्ग किए जा सकते हैं, जैसे

(१) निश्चित परिमाणवाचक—एक सेर, दो छटाक, तीन तोला, चार गज, पाच मन आदि।

(२) अनिश्चित परिमाण वाचक—थोड़ा पानी, बहुत चाय, कुछ दूध, आदि में थोड़ा, बहुत, कुछ आदि शब्द।

यहा स्मरण रखना चाहिए कि यदि एक, दो, तीन, थोडा, बहुत कुछ आदि शब्द संख्या का ज्ञान करावें, तो वे 'संख्यावाचक विशेषण' कहलावेंगे और यदि वे परिमाण का ज्ञान करावें, तो वे 'परिमाणवाचक विशेषण' कहलावेंगे।

४—सकेतवाचक विशेषण—निश्चयवाचक सर्वनाम, जब किसी संज्ञा के पहले प्रयुक्त होते है, तो वे 'संकेतवाचक विशेषण' कहलाते हैं–जैसे यह आदमी, वह लड़का, वे दिन आदि में यह, वह, और वे शब्द।

लिंग

लिंग का अर्थ है पहिचान, निशान, चिन्ह आदि। संस्कृत में सजीव और निर्जीव के चिन्ह मे लिंग-भेद किया जाता है। वहां सजीव प्राणियों को पुरुष और स्त्री दो वर्गों मे तथा निर्जीव पदार्थों को 'नपुंसक' (न पुरुष और न स्त्री) वर्ग मे माना जाता है। हिन्दी मे निर्जीव पदार्थों को भी पुरुष और स्त्री वर्ग में ही समाहित कर लिया गया है, अतः यहां केवल २ लिंग है, जैसे

१—पुंल्लिग (पुरुष-चिन्ह वाले)।

२—स्त्रीलिंग (स्त्री चिन्ह वाले)।

सजीव प्राणियो मे, लिंग का निश्चय कर लेना बहुत सरल है, क्योकि उनका व्यवहार अधिकतर जोड़े के साथ होता है, जैसे

पुंलिग	स्त्रीलिग
पुत्र	पुत्री
लडका	लडकी
भाई	बहिन
पति	पत्नी
घोडा	घोडी
हाथी	हथिनी
शेर	शेरनी
कुत्ता	कुतिया
बकरा	बकरी
बंदर	बंदरिया

फिर भी ऐसे बहुत मे प्राणी है, जिनके लिए या तो सदैव पुंलिग का व्यवहार किया जाता है, या सदैव स्त्रीलिंग का।

सदैव पुंलिग—पक्षी, कौवा, चीता, गृद्ध आदि।

सदैव स्त्रीलिंग—चिड़िया, मछली, चील, कोयल आदि।

निर्जीव पदार्थों में लिंग–निर्धारण का काम उन शब्दों की प्रवृत्ति और परम्परा पर निर्भर होता है। तत्सम और तद्भव शब्दों में, यों तो संस्कृत के अनुसार ही लिंग का निश्चय किया जाता है, किन्तु उसके अनेक अपवाद भी हैं, जैसे आत्मा, देह, वायु, पवन, अग्नि, वस्तु, आयु, राशि, पुस्तक, शपथ, सामर्थ्य, गन्ध आदि शब्द संस्कृत में तो पुल्लिंग है, किन्तु हिन्दी में वे स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होते हैं।

इनके अतिरिक्त तारा, देवता आदि–शब्द ऐसे है, जो संस्कृत में तो स्त्रीलिंग हैं, किन्तु हिन्दी में वे पुंलिंग मान लिए गए हैं।

उपर्युक्त अपवादों को छोड़कर शेष सभी व्यक्तिवाचक, जातिवाचक समूहवाचक और वस्तुवाचक संज्ञा-शब्दों का लिंग-निर्णय संस्कृत के अनुसार ही सम्पन्न हो जाता है। भाववाचक संज्ञा शब्दों में कुछ प्रत्यय ऐसे है, जिनसे पुंलिंगान्त शब्द बनते है और कुछ ऐसे हैं, जिनसे स्त्रीलिंगान्त शब्द बनते है, जैसे

१—पुंलिंग वाले प्रत्यय

पन, पना, पा, प, अ, य, त्व, आव आदि।

२—स्त्रीलिंग वाले प्रत्यय

तिता, आई, ई, आहट, वट आदि।

'संज्ञा-प्रकरण' में इन प्रत्ययों से बने हुए विभिन्न शब्दों के उदाहरण देखे जा सकते हैं।

पुंलिंग से स्त्रीलिंग शब्द बना लेने के लिए भी, हिन्दी में अनेक प्रत्ययों का व्यवहार किया जाता है। उनमें से कुछ संस्कृत के है और कुछ हिन्दी के अपने हैं, जैसे

१—संस्कृत के प्रत्यय—'आ' प्रत्यय

अज से अजा
बाल से बाला
वृद्ध से वृद्धा
वत्स से वत्सा
प्रिय से प्रिया
मुग्ध से मुग्धा
वल्लभ से वल्लभा

(२) ई प्रत्यय

पुत्र — पुत्री
देव — देवी
दास — दासी
तरुण — तरुणी
नगर — नगरी
नर्तक — नर्तकी
कुमार — कुमारी
गोप — गोपी
नद — नदी
ब्राह्मण — ब्राह्मणी

(३) 'इनी' या 'इणी' प्रत्यय

अधिकारी से अधिकारिणी
मानी से मानिनी
सौभाग्यशाली से सौभाग्यशालिनी
परोपकारी से परोपकारिणी

(४) 'इका' प्रत्यय

कारक से कारिका
पालक से पालिका
बालक से बालिका

(५) 'आनी' प्रत्यय

इन्द्र से इन्द्राणी
पंडित से पंडितानी
भव से भवानी
क्षत्रिय से क्षत्रियाणी

हिन्दी के प्रत्यय—(१) 'ई' प्रत्यय

लडका से लड़की
बकरा से बकरी
कुत्ता से कुत्ती

(२) इन प्रत्यय

धोबी से धोबिन
जमादार से जमादारिन
कुम्हार से कुम्हारिन
चमार से चमारिन
माली से मालिन
हाथी से हाथिन
सांप से सापिन
गर्भ से गाभिन
पापी से पापिन
पुजारी से पुजारिन

(३) 'नी' प्रत्यय

मास्टर से मास्टरनी
जाट से जाटनी
ऊंट से ऊंटनी
साड से साडनी

(४) 'इया' प्रत्यय

पडवा से पडिया
चूहा से चुहिया
कुत्ता से कुतिया
मुन्ना से मुनिया
बेटा से बिटिया या बिटनिया
लोटा से लुटिया
लोढ़ा से लुढिया

(५) 'आनी' प्रत्यय

सेठ से सेठानी
जेठ से जेठानी
पंडित से पंडितानी (पंडिता भी)
बनिया से बनियानी
गुरु से गुरुआनी

मेहतर से मेहतरानी

देवर स देवरानी

(६) 'आइन' प्रत्यय

पंडित से पंडिताइन

ठाकुर से ठकुराइन

पांडे से पंडाइन

गुप्ता से गुप्ताइन

बाबू से बबुवाइन

शर्मा से शर्माइन

वर्मा से वर्माइन

मालिक से मलिकाइन

लाला से ललाइन

मास्टर से मास्टराइन

स्त्रीलिंगवाची इन प्रत्ययों का प्रयोग, कभी कभी लघुता के प्रदर्शन के लिए भी किया जाता है, जैसे

पहाड़ से पहाड़ी (छोटा पहाड़)
लोटा से लुटिया (छोटा लोटा)
महल से महलिया (छोटा महल)
पोथा से पोथी (छोटा ग्रंथ)
घंटा से घंटी (छोटा घंटा)
रस्सा से रस्सी (छोटा रस्सा)
खाट से खटिया (छोटी खाट)

कभी कभी नित्य स्त्रीलिंग शब्दों में से उनके 'ई' अथवा 'आ' को भ्रम से स्त्रीवाची प्रत्यय मानकर हटा दिया जाता है और इस प्रकार उनसे पुंलिंग शब्दों का निर्माण भी कर लिया जाता है। जैसे

मौसी से मौसा
जीजी से जीजा
बुआ से फुआ, फिर फूफी और उससे फूफा
ढोटी (लड़की) ढोटा (लड़का)

यहां एक मजेदार बात और है कि संस्कृत के अनुसार 'मौसा' [मातृ + स्वसा (बहिन), माउस मौसा] शब्द नित्य स्त्रीलिंग है, किन्तु हिन्दी में वह ठाट

स पुंलिंग बन गया है इसी प्रकार ढोटा शब्द (दुहिता) से बना है और नित्य स्त्रीलिंग है, किन्तु हिन्दी मे वह भी पुंलिंग हो गया है। इसका एक मात्र कारण यही है कि हिन्दी का 'आ' प्रत्यय 'पौरुष' का सूचक है और 'ई' प्रत्यय तो सर्वत्र स्त्रीत्व का निर्देशक है ही।

संस्कृत के कुछ पुंलिंग शब्दो मे 'इन्' प्रत्यय के 'ई' हो जाने से और 'अन्' प्रत्यय के 'आ' हो जाने से उनके ईकारान्त और आकारान्त रूप बन जाते है, जिसके कारण नए लोगो को भ्रम हो जाता है, किन्तु वे शब्द सदैव पुंलिंग ही है, जैसे

१—ईकारान्त शब्द—करी, हस्ती, धर्मी, कर्मी, मायावी, शरणार्थ, विद्यार्थी, अवस्थी, शास्त्री, दानी, पापी, लोभी आदि

२—आकारान्त शब्द—आत्मा, राजा, युवा, धर्मात्मा, महात्मा, सखा, शर्मा, वर्मा आदि

यहा ध्यान रहे कि हिन्दी मे आकारान्त तद्भव शब्द तो पुंलिंग होते ही है किन्तु कुछ ईकारान्त तद्भव शब्द ऐसे भी है, जो पुंलिंग ही रहते है, जैसे पानी, दही आदि।

(१) पानी (संस्कृत मे 'पानीय' है। 'य' का लोप हो गया है)

(२) दही (संस्कृत मे 'दधि' है। 'ध' का 'ह' और 'इ' का 'ई' हो गया है)

सर्वनाम तथा विशेषण शब्दो में लिंग–निर्णय

यह कहा जा चुका है कि 'सर्वनाम' शब्दो का प्रयोग सदैव सज्ञा के स्थान पर होता है और 'विशेषण' शब्द संज्ञा की विशेषता का वर्णन करते है। इसलिए ये दोनो शब्द (सर्वनाम और विशेषण) सदैव संज्ञा पर आधारित रहते है और इसी कारण संज्ञा के अनुसार ही उनका भी लिंग–निर्धारण किया जाता है। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि संज्ञा का जो लिंग होगा, वही लिंग उसके सर्वनाम और विशेषणों का भी होगा, जैसे

१—अरुण पढ़ रहा है, वह अच्छा लड़का है।
(यहां अरुण पुंलिंग है, अतः वह (सर्वनाम) और अच्छा (विशेषण) दोनो ही पुंलिग है)।

२—आशा पढ रही है, वह अच्छी लड़की है।
(यहां आशा स्त्रीलिंग है, अत वह (सर्वनाम) और अच्छी (विशेष) दोनो ही स्त्रीलिंग हैं।)

वचन

संस्कृत में 'एक वचन, द्विवचन और बहुवचन' ये तीन वचन होते हैं, किन्तु हिन्दी मे 'द्विवचन' नही होता, इसलिए 'एक वचन और बहुवचन' केवल दो ही 'वचन' होते है ।

एक वस्तु या एक व्यक्ति के लिए एक वचन का प्रयोग होता है और अनेक के लिए बहुवचन का, किंतु सर्वनामो मे 'अन्य पुरुष' तथा 'मध्यम पुरुष' के प्रति या वैसे भी किसी के प्रति आदर व्यक्त करने मे और 'उत्तम पुरुष' मे नम्रता दिखलाने के लिए 'एक वचन' के स्थान पर सदैव 'बहुवचन' का प्रयोग किया जाता है ! इसके अतिरिक्त कुछ शब्द नित्य बहुवचन होते है और कुछ शब्द बहुतायत का ज्ञान कराने पर भी 'नित्य एक वचन' ही रहते हैं। यथा

(१) आदरसूचक बहुवचन

(१) पिताजी अभी आये थे ।
(२) गुरुदेव आ रहे है ।
(३) शर्माजी बहुत अच्छे है ।

सर्वनाम (४) वे बडे आदमी है । ('वह के लिए 'वे')
(५) आप कहा से आ रहे है ? ('तुम' के लिए 'आप')
(६) आप यहां विराजिए । ('तुम' के लिए 'आप')
(७) उनका स्वागत करिए । ('उस' के लिए 'उन')

(२) नम्रतासूचक बहुवचन ('मैं' के लिए हम)

(१) हम पढ रहे हैं ।
(२) हमने यह काम किया है ।
(३) हम आपके आज्ञाकारी हैं ।

(३) नित्य बहुवचन—दर्शन, प्राण, हस्ताक्षर आदि

(१) आपके दर्शन प्राप्त हुए ।

(२) दशरथ के प्राण निकल गए।

(३) ये प्रिंसिपल के हस्ताक्षर हैं।

(४) नित्य एक वचन—सभा, समाज, वर्ग, सामग्री, समूह, समुदाय, सब, अनेक आदि।

यहाँ एक बात स्मरणीय है कि मध्यम पुरुष सर्वनाम के 'एक वचन' में जो 'तू' शब्द है, उसका प्रयोग केवल निकटतम सम्बन्ध वाले के साथ ही किया जाता है, भले ही वह क्रोध की भावना से हो या प्यार की भावना से, जैसे

१—तू कहां गया था? (क्रोध)

२—तू अच्छा लड़का है। (प्यार)

३—तू मेरे पास क्यों नहीं आता? (क्रोध और प्यार दोनों)

केवल ईश्वर के प्रति, आदर अथवा निकटतम सम्बन्ध बतलाने के लिए भी 'तू' शब्द का प्रयोग होता है, जैसे

१—ईश्वर! तू बड़ा दयालु है, अब तू ही रक्षा कर।

२—तू हमारा एक मात्र आधार है।

अन्यत्र सर्वत्र 'तू' के स्थान पर 'तुम' का ही प्रयोग किया जाता है, भले ही वहां एक वचन हो अथवा बहुवचन। 'तुम' का बहुवचन बनाने के लिए अब 'तुम लोग' का व्यवहार होने लगा है जो ठीक है। यों 'आप' शब्द, 'तुम' का बहुवचन होने पर भी, केवल 'एक वचन' का ही बोधक है; और वह आदर सूचित करने के लिए ही प्रयुक्त होता है, जैसा कि ऊपर के कुछ उदाहरणों में स्पष्ट हो जाता है।

एकवचन से बहुवचन बनाने के लिए हिन्दी में अनेक प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है। यथा ओं, आओं, ए, एं, इयों, उओं, इया, उएं, व और वों आदि।

पुलिंग शब्द

(१) 'ओं' प्रत्यय (पुलिंग अकारान्त शब्द)

एक वचन	**बहु वचन**
बालक	बालकों
नगर	नगरों
पर्वत	पर्वतों
फल	फलों

(२) आओं, प्रत्यय (पुंलिंग आकारान्त तत्सम शब्द)

राजा	राजाओं
आत्मा	आत्माओं
देवता	देवताओं

(३) 'ऐं' और 'ओं' प्रत्यय (पुंलिंग आकारान्त तद्भव शब्द)

रुपया	रुपये, रुपयों
कौवा	कौवे, कौवों
बेटा	बेटे, बेटों
लड़का	लड़के, लड़कों
घोड़ा	घोड़े, घोड़ों
पुराना	पुराने, पुरानों

(४) 'इयों' प्रत्यय (पुंलिंग इकारान्त और ईकारान्त शब्द)

पति	पतियों
साथी	साथियों
हाथी	हाथियों

(५) 'उओं' प्रत्यय (पुंलिंग उकारान्त और ऊकारान्त शब्द)

क्रतु (यज्ञ)	क्रतुओं
उल्लू	उल्लुओं

स्त्रीलिंग शब्द

(१) 'एं' और 'ओं' प्रत्यय (स्त्रीलिंग अकारान्त शब्द)

एक वचन	बहुवचन
गाय	गायें, गायों
बात	बातें, बातों
लात	लातें, लातों

(२) 'आओं' और 'आएं' प्रत्यय (स्त्रीलिंग आकारान्त शब्द)

बालिका	बालिकाओं, बालिकाएं
दशा	दशाओं, दशाएं
माया	मायाओं, मायाएं
कल्पना	कल्पनाओं, कल्पनाएं
कविता	कविताओं, कविताएं

(३) इयाँ और इयों प्रत्यय (स्त्रीलिंग इकारान्त और ईकारान्त शब्द)

शक्ति	शक्तियाँ, शक्तियों
बुद्धि	बुद्धियाँ, बुद्धियों
रानी	रानियाँ, रानियों
देवी	देवियाँ, देवियों
लड़की	लड़कियाँ, लड़कियों
पहेली	पहेलियाँ, पहेलियों

(४) 'उएँ' और 'उओं' प्रत्यय (स्त्रीलिंग उकारान्त और ऊकारान्त शब्द)

ऋतु	ऋतुएँ, ऋतुओं
धातु	धातुएँ, धातुओं
वस्तु	वस्तुएँ, वस्तुओं
बहू	बहुएँ, बहुओं

(५) 'वें' और 'वों' प्रत्यय (स्त्रीलिंग औकारान्त शब्द)

गौ	गौवें, गौवों

कारक

कारक

प्रत्येक वाक्य में संज्ञा अथवा सर्वनाम शब्दों (पदों) की विभिन्न स्थितियाँ होती हैं, जिनका पता कुछ विशेष चिन्हों से लगता है। इन्हीं चिन्हों को कारक चिन्ह कहते हैं। संस्कृत में ये कारक चिन्ह (विभक्तियाँ) शब्द के साथ मिले हुए होते हैं (जैसे राम, रामेण, रामस्य आदि) किन्तु हिन्दी में वे शब्द से अलग रहते हैं।

ये कारक ८ प्रकार के होते हैं। यथा

(१) कर्ता कारक
(२) कर्म ,,
(३) करण ,,
(४) सम्प्रदान ,,
(५) अपादान ,,
(६) सम्बन्ध ,,
(७) अधिकरण ,,
(८) सम्बोधन ,,

१ कर्ता कारक

किसी काम के करने वाले को 'कर्ता' कहते हैं। जिस संज्ञा अथवा सर्वनाम में यह कर्तृत्व भाव पाया जावे, उसे कर्ता कारक कहते हैं। यथा 'अजय आता है' इस वाक्य में अजय आने का काम करता है, इसलिए अजय 'कर्ता' है। 'पूर्णिमा दूध पीती है' इस वाक्य में पूर्णिमा दूध पीने का काम करती है, इसलिए पूर्णिमा 'कर्ता' है। कर्ता कारक का चिन्ह 'ने' है, किन्तु कर्ता के साथ इसका प्रयोग लाना, बोलना, भूलना आदि को छोड़कर अन्य सकर्मक क्रियाओं के भूतकाल में ही होता है। अन्यत्र यह चिन्ह लुप्त रहता है। यथा

(१) राम आता है। (अकर्मक क्रिया वर्तमान काल)
(२) राम आया। (अकर्मक क्रिया भूतकाल)
(३) राम पढ़ता है। (सकर्मक क्रिया वर्तमान काल)
(४) राम पढ़ेगा। (सकर्मक क्रिया भविष्य काल)
(५) राम ने पढ़ा। (सकर्मक क्रिया भूत काल)

२. कर्म कारक

क्रिया का परिणाम जिसे भुगतना पड़े, वही कर्म कारक है। इसका चिन्ह 'को' है। इसका प्रयोग 'व्यक्ति' के साथ तो सर्वत्र अनिवार्य होता है, किन्तु वस्तु के साथ वह विकल्प से किया जाता है। यथा

वर्तमान काल–(१) मैं तुमको देखता हूं। (व्यक्ति)
(२) मैं पुस्तक देखता हूं। (वस्तु)
अथवा
(३) मैं पुस्तक को देखता हूं। (,,)

भूत काल– (१) सुमन ने गोपाल को मारा। (व्यक्ति)
(२) सुमन ने मच्छर मारा। (वस्तु)
अथवा
(३) सुमन ने मच्छर को मारा।

भविष्य काल– (१) सुमन मोहन को मारेगा। (व्यक्ति)
(२) सुमन मच्छर मारेगा। (वस्तु)
अथवा
(३) सुमन मच्छर को मारेगा। (वस्तु)

३ करण कारक

कर्ता जिसकी सहायता से कुछ काम करता है, उस सहायक स
सर्वनाम पद को 'करण कारक' कहते हैं। इसका चिन्ह 'से' और
है। यथा

१. मैं चश्मे से देखता हूं।
२. आशा पेन से लिखती है।
३. वह चाकू से काटता है।
४. यह काम राम द्वारा होगा।
५. यह पत्र तुमको सोहन द्वारा मिलेगा।

४. सम्प्रदान कारक

कर्ता जिसके लिए कुछ काम करता है या जिसको कुछ देता
'सम्प्रदान कारक' है। इसका चिन्ह 'को' और 'के लिए' हैं। यथा

(१) मैंने उसके लिए पानी मंगाया है।
(२) मैं अनिल को रुपए देता हू।
(३) शीला कमला को पत्र लिखती है।

५. अपादान कारक

जहा किसी सज्ञा अथवा सर्वनाम से पृथक्ता का भाव व्यक्त हो,
अपादान कारक होता है। इसका चिन्ह 'से' है। ध्यान रहे कि यही चिन्ह
कारक' का भी है, किन्तु वहां 'सहायता' का भाव विद्यमान
है। यथा

(१) वह डंडे से मारता है (डंडे की सहायता से) करण
(२) पेड़ से फल गिरता है (अलग होता है) अपादान

पृथक्ता के अतिरिक्त समय, दूरी, घृणा, लज्जा, ईर्ष्या, तुलन
की स्थिति मे भी 'अपादान कारक' का प्रयोग होता है। यथा

समय—(१) कल से पानी बरस रहा है।
(२) मोहन कल से अच्छा है।
(३) मैं तुमको एक साल से लिख रहा हू।

दूरी— (१) यहा से घर एक मील है।
(२) कानपुर से जयपुर बहुत दूर है।
(३) घर से स्कूल जाने मे १ घण्टा लग सकता है।

घृणा—मैं तुम से घृणा करता हूं।

लज्जा—वह उससे शरमाता है।

तुलना मैं तुमसे बडा हूं ।
कश्मार सबसे अधिक आकर्षक है ।
ईर्ष्या—मैं मोहन से ईर्ष्या करता हूं ।

६. सम्बन्ध कारक

एक दूसरे का परस्पर सम्बन्ध बतलाने वाले चिन्हों को 'सम्बन्ध कारक' चिन्ह कहते है । यथा, का, की, के किन्तु 'आप' शब्द के साथ ना, नी, ने और 'तुम' तथा हम' शब्द के साथ रा, री, रे प्रत्यय जोड़े जाते हैं ।

अन्य शब्द—(१) राम का पुत्र, सीता की सखी, उसके लडके ।
आप शब्द—(२) अपना पुत्र, अपनी पुत्री, अपने रुपये ।
तुम शब्द—(३) तुम्हारा घर, तुम्हारी पुस्तक, तुम्हारे लड़के ।
हम शब्द—(४) हमारा घर, हमारी पुस्तक, हमारे लडके ।

इसी प्रकार 'तुम' और 'हम' शब्द के एक वचन मे तेरा, मेरा, मेरी और तेरे मेरे शब्द भी बन जाते हैं ।

७. अधिकरण कारक

वाक्य मे क्रिया का आधार बतलाने वाले शब्द को 'अधिकरण' कहते हैं । इसका चिन्ह 'मे' और 'पर' है । यथा

(१) कमरे में कोई बैठा है ।
(२) छत पर लड़के खेल रहे हैं ।

यहा 'मे' में अन्दर का भाव है (कमरे में या कमरे के अन्दर) और 'पर' मे ऊपर का भाव है । छत पर या छत के ऊपर ।

८. सम्बोधन कारक

किसी को बुलाने या पुकारने के लिए जिन चिन्हो का प्रयोग किया जाता है, उन्हें 'सम्बोधन कारक' चिन्ह कहते हैं जैसे हे और अरे । यहां ध्यान रहे कि ये कारक चिन्ह संज्ञा के सदैव पूर्व लगते हैं, जबकि अन्य चिन्हों का प्रयोग संज्ञा के बाद किया जाता है । यथा

१—हे राम !
२—अरे श्याम !

सम्बोधन के लिए बोली में 'हो' शब्द का भी प्रयोग होता है और वह संज्ञा के सदैव बाद में भी रहता है । यथा

१—राम हो !
२—श्याम हो !

क्रिया

जिस शब्द से किसी काम का होना या करना पाया जाय, उसे 'क्रिया' कहते है। इस प्रकार ये क्रियाएं २ प्रकार की होती है, यथा

१—अकर्मक क्रिया

२—सकर्मक क्रिया

अकर्मक क्रिया

इस क्रिया के नाम से ही स्पष्ट है कि इसमें कर्म नही होता, क्योंकि इसके द्वारा किसी काम का केवल होना ही ज्ञात होता है, जैसे होना, लगना, पड़ना, सोना, जागना, उठना, बैठना, बढना, हंसना, रोना, गिरना, फिरना, चलना, दौडना, जीना, मरना, जलना, बुझना, टूटना, फूटना, मिलना, जुड़ना, बिछुड़ना, बिगडना, सुधरना आदि।

सकर्मक क्रिया

इस क्रिया मे ऐक कर्म अवश्य होता है और इसके द्वारा किसी काम का करना ज्ञात होता है, जैसे खाना, पीना, पढना, मढना, गढना, बेचना, खरीदना, मारना, पीटना, गाना, सुनना, देखना, खेलना, काटना, खोलना, बांधना, छांटना, सीखना, मांगना, बुलाना, आना, जाना आदि।

द्विकर्मक क्रिया

कुछ क्रियाएं ऐसी होती है, जिसमे दो कर्म पाये जाते हैं। जैसे देना, लिखना आदि।

१—अरुण आशा को पुस्तक देता है।

(यहां 'आशा' और 'पुस्तक' दोनों ही कर्म है)

२—सुमन गोपाल को पत्र लिखता है।

(यहां 'गोपाल' और 'पत्र' दोनो ही कर्म हैं)

क्रिया की आवश्यकता

बिना क्रिया के प्रत्येक वाक्य अधूरा और निरर्थक रहता है। 'मैं रोटी' से कोई अर्थ तब तक नही निकल सकता है, जब तक कि उसके बाद 'खाता हूं', 'मागता हू', 'बनाता हूं', 'देता हू' आदि मे से कोई क्रिया न जोडी जाय। प्रत्येक वाक्य मे, कर्ता और कर्म से तो 'क्रिया' का सीधा और साक्षात् सम्बन्ध रहता है। अन्य कारको के स्पष्टीकरण मे भी 'क्रिया' का अपना महत्व है। इसीलिए क्रिया के अभाव मे किसी वाक्य की कल्पना करना एकदम असभव जान पडता है।

क्रिया का गठन

हिन्दी की सभी क्रियाओ के अन्त मे 'ना' प्रत्यय होता है, जैसा कि अकर्मक और सकर्मक क्रियाओ के उपर्युक्त उदाहरणो से स्पष्ट हो जाता है। यदि 'ना' प्रत्यय को हटा कर देखा जाय, तो उन क्रियाओ का मूल धातु रूप निकल आता है, जिससे लिग, वचन, काल आदि की आवश्यकतानुसार विभिन्न रूपो का निर्माण कर लिया जाता है। इस रूप–निर्माण मे कुछ क्रियाए भी सहायता पहुंचाती है, इसलिए उनको 'सहायक क्रिया' के नाम से अभिहित किया जाता है, जैसे होना, सकना, है, हैं, था, थे, चाहिए, रहना आदि। भविष्य काल मे क्रिया के साथ 'गा' प्रत्यय लगा लिया जाता है।

नाम धातु

कभी कभी कुछ संज्ञा शब्दो से नई क्रियाओ का गठन कर लिया जाता है। ऐसी क्रियाओ को नाम धातु कहते है, जैसे

सज्ञा	—	क्रिया
लात	—	लतियाना
बात	—	बतियाना
हाथ	—	हथियाना
फिल्म	—	फिल्माना
चपत	—	चपतियाना
गर्दन	—	गर्दनियाना
दुख	—	दुखाना

प्रेरणार्थक क्रिया

जब कर्ता किसी काम को स्वयं न करके, किसी दूसरे अथवा उसके द्वारा किसी तीसरे व्यक्ति को, उसके लिए प्रेरित करता है, तब उसे 'प्रेरणार्थक क्रिया' कहते हैं। इस प्रक्रिया में 'क्रिया' में कुछ प्रत्ययों का प्रयोग होता है

जिसमे उसका रूप–परिवतन हो जाता है। सभी क्रियाओं में मूल धातु और ना प्रत्यय के बीच मे 'आ' जोड देने से प्रथम प्रेरणार्थक क्रिया' और 'वा' जोड देने से 'द्वितीय प्रेरणार्थक क्रिया' बन जाती है। इस प्रकार प्रथम प्रेरणा मे अकर्मक क्रियाएं तो, तुरन्त सकर्मक बन जाती है और सकर्मक क्रियाएं 'द्विकर्मक' हो जाती हैं। द्वितीय प्रेरणा में तो शुद्ध प्रेरणा रहती ही है। नीचे कुछ उदाहरण दिए जा रहे है—

अकर्मक क्रियाएं	क्रिया	प्रथम प्रेरणा	द्वितीय प्रेरणा
	उठना	उठाना	उठवाना
	जगना	जगाना	जगवाना
	चलना	चलाना	चलवाना
	जलना	जलाना	जलवाना
	मिलना	मिलाना	मिलवाना
	बैठना	बिठाना	बिठवाना
	बोलना	बुलाना	बुलवाना
	जीतना	जिताना	जितवाना
	सीखना	सिखाना	सिखवाना

अन्तिम ४ उदाहरणो मे ध्यान दीजिए कि यदि मूलधातु का पहला स्वर दीर्घ होता है, तो वह 'प्रेरणा' में ह्रस्व हो जाता है। इसी प्रकार यदि मूलधातु के अन्त मे केवल स्वर होता है तो वहा 'आ' के स्थान पर 'ला' और 'वा' के स्थान पर 'लवा' हो जाता है। यथा

	स्वरान्त क्रिया	प्रथम प्रेरणा	द्वितीय प्रेरणा
(अकर्मक)	रोना	रुलाना	रुलवाना
,,	सोना	सुलाना	सुलाना
,,	जीना	जिलाना	जिलवाना
(सकर्मक)	सीना	सिलाना	सिलवाना
,,	देना	दिलाना	दिलवाना
,,	पीना	पिलाना	पिलवाना
,,	खाना	खिलाना	खिलवाना

किन्तु कुछ आकारान्त क्रियाएं इस नियम की अपवाद हैं, जैसे

(सकर्मक)	गाना	गवाना	गववाना
,,	छाना	छवाना	छववाना
सकर्मक	क्रिया	प्रथम प्रेरणा	द्वितीय प्रेरणा
क्रियाएं	पढना	पढाना	पढवाना
	लिखना	लिखाना	लिखवाना
	पीटना	पिटाना	पिटवाना
	सुनना	सुनाना	सुनवाना
	देखना	दिखाना	दिखवाना

कुछ क्रियाओं के साथ प्रेरणार्थक प्रत्ययों का प्रयोग नहीं होता है। यथा

(१) अकर्मक क्रिया—होना आदि

(२) सकर्मक क्रिया—आना, जाना आदि

क्रिया से संज्ञा

सभी क्रियाओं के शुद्ध रूप का भाववाचक संज्ञा के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। कभी कभी इसके लिए, उस धातु रूप का भी प्रयोग होता है और कभी कुछ प्रत्यय लगा लिए जाते है, जैसे

क्रिया का शुद्ध रूप—खेलना अच्छा होता है।
हंसना स्वास्थ्यकर है।
रोना बन्द करो।

क्रिया का धातु रूप—खेल हो रहा है।
दौड़ हो रही है।
मोड़ पर संभल कर चलो।

इस दिशा में अधिक ज्ञान के लिए 'कृदन्त प्रकरण' देखिए।

क्रियाओं का रूप परिवर्तन— पहले यह कहा जा चुका है कि संज्ञा अथवा सर्वनाम के लिंग, पुरुष, वचन आदि के अनुसार क्रियाओं में रूप परिवर्तन हो जाता है, जैसे

लिंग के अनुसार

(१) वर्तमान काल— पुंलिंग संज्ञा—राम खाता है।
स्त्रीलिंग संज्ञा—सीता खाती है।
पुंलिंग सर्वनाम—वह खाता है।
स्त्रीलिंग सर्वनाम—वह खाती है।

(२ भूत काल — पुलिंग सज्ञा — राम आया ।
स्त्रीलिंग सज्ञा—सीता आइ ।
पुलिंग सर्वनाम—वह आया ।
स्त्रीलिंग सर्वनाम—वह आई ।

किन्तु ध्यान रहे कि कर्ता के साथ 'ने' कारक चिन्ह का प्रयोग होने पर यह परिवर्तन नही होता है, जैसे

पुलिंग—राम ने लिखा । पुलिंग सर्वनाम—उसने लिखा ।
स्त्रीलिंग—सीता ने लिखा । स्त्रीलिंग सर्वनाम—उसने लिखा ।

इन उदाहरणो से स्पष्ट हो जाता है कि पुलिंग क्रिया का स्त्रीलिंग रूप बना लेने के लिए क्रिया के अन्तिम स्वर मे 'आ' के स्थान पर 'ई' का प्रयोग किया जाता है ।

पुरुष के अनुसार

		एक वचन	बहु वचन
(१) वर्तमान काल—	उत्तम पुरुष	मैं आता हूँ ।	हम आते है ।
	मध्यम पुरुष	तू आता है ।	तुम आते हो ।
	अन्य पुरुष	वह आता है ।	वे आते हैं ।
(२) भूत काल—	उत्तम पुरुष	मैं आया ।	हम आये ।
	मध्यम पुरुष	तू आया ।	तुम आये ।
	अन्य पुरुष	वह आया ।	वे आये ।

किन्तु कर्ता के साथ 'ने' कारक चिन्ह का प्रयोग होने पर यह परिवर्तन नही होता है, जैसे

		एक वचन	बहु वचन
	उत्तम पुरुष	मैंने कहा ।	हमने कहा ।
	मध्यम पुरुष	तूने कहा ।	तुमने कहा ।
	अन्य पुरुष	इसने कहा ।	उन्होने कहा ।
(३) भविष्य काल—	उत्तम पुरुष	मैं आऊंगा ।	हम आयेंगे ।
	मध्यम पुरुष	तू आयगा ।	तुम आओगे ।
	अन्य पुरुष	वह आयगा ।	वे आयेंगे ।

इसी प्रकार अन्य क्रियाओ के भी रूप बनाए जा सकते हैं ।

वचन के अनुसार

(१) वर्तमान काल—	एक वचन संज्ञा	—	लड़का आता है।
	बहु वचन संज्ञा	—	लड़के आते हैं।
	एक वचन सर्वनाम	—	वह आता है।
	बहु वचन सर्वनाम	—	वे आते है।
(२) भूत काल—	एक वचन संज्ञा	—	लड़का आया।
	बहु वचन संज्ञा	—	लड़के आये।
	एक वचन सर्वनाम	—	वह आया।
	बहु वचन सर्वनाम	—	वह आये।

किन्तु कर्ता के साथ 'ने' कारक चिन्ह के प्रयुक्त होने पर यह परिवर्तन नही होता है। यथा

	एक वचन संज्ञा	—	बालक ने लिखा।
	बहु वचन संज्ञा	—	बालकों ने लिखा।
	एक वचन सर्वनाम	—	उसने लिखा।
	बहु वचन सर्वनाम	—	उन्होंने लिखा।
(३) भविष्य काल—	एक वचन संज्ञा	—	बालक आयगा।
	बहु वचन संज्ञा	—	बालक आयेंगे।
	एक वचन सर्वनाम	—	वह आयगा।
	बहु वचन सर्वनाम	—	वे आयेंगे।

इस प्रकार इन उदाहरणो से यह स्पष्ट हो जाता है कि एक वचन क्रिया से बहु वचन क्रिया बनाने के लिए मूल क्रिया के अन्तिम स्वर में 'आ' के स्थान पर 'ए' हो जाता है और सहायक क्रिया अनुस्वार–युक्त हो जाती है।

काल

अभी अभी क्रियाओं के रूप परिवर्तन पर विचार करते समय 'वर्तमान, भूत और भविष्य' तीनों कालों का उल्लेख किया जा चुका है। 'काल' का अर्थ है समय। जिस समय जो क्रिया सम्पन्न होती है, वही उसका काल कहलाता है। प्रत्यक्ष समय को 'वर्तमान काल' बीते हुए समय को 'भूतकाल' और आने वाले समय को 'भविष्यकाल' कहते हैं। इस प्रकार काल के उपर्युक्त ३ भेद किए जाते है।

वतमान काल

प्रत्यक्ष समय मे भी कोई क्रिया सामान्य रूप से सम्पन्न होती है और कोई होती रहती है तथा किसी में सन्देह बना रहता है। इस प्रकार काल के ३ भेद किए जाते है, जैसे

१. सामान्य वर्तमान काल
२. अपूर्ण ,, ,,
३. संदिग्ध ,, ,,

(१) सामान्य वर्तमान काल— वह आता है।
मैं पढ़ता हूं।
श्याम खेलता है।

(२) अपूर्ण वर्तमान काल— वह आ रहा है।
मैं पढ रहा हूं।
श्याम खेल रहा है।

(३) संदिग्ध वर्तमान काल— वह आ रहा होगा।
मैं पढ रहा होऊंगा।
श्याम खेल रहा होगा।

भूतकाल

बीते हुए समय मे भी, ऐसा होता है कि कभी कोई क्रिया पूर्ण होती है, कभी अपूर्ण होती है, और कभी वह थोड़े समय पहले हो जाती है, कभी वह बहुत समय पहले। कभी उसमें कोई बन्धन रहता है और कभी सन्देह। इस प्रकार इस काल के निम्नांकित ६ भेद किए जाते हैं, जैसे

(१) अपूर्ण भूत — मैं आ रहा था।
(२) पूर्ण भूत — मैं आया था।
(३) आसन्न भूत — मैं आया हू।
(४) सामान्य भूत — मैं आया।
(५) हेतुहेतुमद् भूत — मैं आता, यदि तुम बुलाते।
(६) संदिग्ध भूत — मैं आया होऊंगा।

उपर्युक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि 'अपूर्ण भूत' में क्रिया का क्रम चल रहा होता है और 'पूर्ण भूत' मे समाप्त हो जाता है। 'आसन्न भूत' में वर्तमान काल के कुछ पहले ही क्रिया के सम्पन्न होने की सूचना मिलती

है किन्तु सामान्य भूत मे ऐसी कोई बात नही है। हेतुहेतुमद् भूत मे जहा एक बन्धन अथवा शर्त का ज्ञान होता है, वहा संदिग्ध भूत मे क्रिया के होने अथवा न होने मे सन्देह बराबर बना रहता है।

भविष्यकाल

आने वाले समय मे भी कभी किसी क्रिया के सम्पन्न हो जाने का निश्चय रहता है और कभी उसकी संभावना मात्र होती है। इस प्रकार उसके भी २ भेद किए जाते हैं, जैसे

१. सामान्य भविष्य काल — वह आयगा।

२. संभाव्य भविष्य काल — शायद वह आये।

पहले वाक्य मे जहां एक निश्चय स्पष्ट होता है, वहां दूसरे वाक्य मे क्रिया के सम्पन्न होने की संभावना बनी हुई है, भले ही वह क्रिया हो अथवा न हो।

पूर्वकालिक क्रिया

कभी कभी एक क्रिया के सम्पन्न होने के पूर्व, दूसरी क्रिया समाप्त भी हो जाती है। ऐसी स्थिति में जो क्रिया पहले सम्पन्न होती है, उसे 'पूर्व कालिक क्रिया' कहते हैं। इसके लिए उस क्रिया के मूल धातु रूप मे 'कर' प्रत्यय लगाया जाता है, जैसे

१. मैं खाकर पढ़ूंगा (यहां 'खाना' क्रिया पहले है और 'पढना' क्रिया बाद में है।)

२. राम दौड कर भागा। (यहा 'दौड़ना' पहले है और 'भागना' बाद में है।)

३. सीता नहा कर खाती है। (यहा 'नहाना' पहले है और 'खाना' बाद में है।)

इस प्रकार उपर्युक्त वाक्यो मे 'खाकर' 'दौड़ कर' और 'नहा कर' ये तीनों पूर्वकालिक क्रियाएं हैं। अन्य सभी क्रियाओं के भी ऐसे ही पूर्वकालिक रूप बनाए जा सकते हैं, जैसे, पढ़कर, लिखकर, सोकर, उठ कर, बैठ कर, हंस कर, रो कर, गा कर आदि।

वाच्य

वाच्य

यह पहले ही कहा जा चुका है कि प्रत्येक वाक्य मे, क्रिया का सीध सम्बन्ध उसके कर्ता से होता है, किन्तु कभी कभी कर्ता को प्रधानता न देक उसका (क्रिया का) सम्बन्ध कर्म के साथ अथवा किसी भाव विशेष के सा जोड दिया जाता है। सम्बन्ध बतलाने की इसी प्रक्रिया को 'वाच्य' कहते है जो उपर्युक्त कारणो से ३ प्रकार का माना जाता है, जैसे

१. कर्तृवाच्य २. कर्मवाच्य ३. भाववाच्य

वैसे तो इन वाच्यो का विशेष सम्बन्ध 'वाक्य' से होता है, किन्तु इनके कारण क्रिया के साधारणरूप में एक उल्लेखनीय परिवर्तन हो जाता है।

कर्तृवाच्य

जहा 'कर्ता' की प्रधानता रहती है, वहा 'कर्तृवाच्य' होता है, जैसे

मैं पुस्तक पढ़ता हू।

कर्मवाच्य

जहा 'कर्म' की प्रधानता होती है, वहां 'कर्मवाच्य' होता है, जैसे

मुझसे या मेरे द्वारा पुस्तक पढ़ी जाती है।

ऊपर के दोनो वाक्यों में 'पुस्तक' समानरूप से कर्म है, किन्तु प्रथम वाक्य मे उसको प्रधानता नहीं मिली है, जबकि द्वितीय वाक्य में वही प्रधान है।

भाववाच्य

जहां 'भाव' की प्रधानता रहती है, वहां 'भाववाच्य' होता है, जैसे

मुझसे पढा नही जाता है। मुझसे सोया नही जाता है।

वस्तुत. 'भाववाच्य' में अधिकतर अकर्मक क्रियाओं का ही प्रयोग होता हैं, और सकर्मक क्रियाएं यदि आती है, तो वाक्य मे उनका कर्म अनुपस्थित रहता है। उपर्युक्त उदाहरणों से एक बात और स्पष्ट हो जाती है कि 'कर्मवाच्य' और 'भाववाच्य' दोनो ही मे कर्ता कारक का रूप, करण कारक के रूप बदल जाता है और 'कर्मवाच्य' में 'कर्म' का रूप भी बदल कर 'कर्ता' हो जाता है। यथा

सकर्मक क्रियाएं

कर्तृवाच्य	कर्मवाच्य	भाववाच्य
मैं पत्र लिखता हूं।	मुझसे पत्र लिखा जाता है।	मुझसे लिखा नही जाता है।

मैं पानी पीता हूं   मुझसे पानी पिया जाता है   मुझसे पिया नहीं जाता है
मैं आम खाता हूं।   मुझसे आम खाया जाता है। मुझसे खाया नहीं जाता है।

अकर्मक क्रियाएं (इनमें 'कर्म' नहीं होता है, अतः 'कर्मवाच्य' भी नहीं होता है।)

कर्तृवाच्य	भाववाच्य
मैं जागता हूं।	मुझसे जागा नहीं जाता है।
मैं बैठता हूं।	मुझसे बैठा नहीं जाता है।

यहां स्मरणीय है कि अधिकतर असमर्थता-सूचक वाक्यों में ही 'भाववाच्य' का प्रयोग किया जाता है और वहीं उसकी अच्छी अभिव्यक्ति होती है। यों तो इसका प्रयोग कहीं भी किया जा सकता है।

'कर्तृवाच्य' से 'कर्मवाच्य' अथवा 'भाववाच्य' के बनाने के लिए कुछ नियम स्थिर कर दिए गए हैं। यथा

कर्तृवाच्य से कर्मवाच्य

इस रूप परिवर्तन मे, सर्वप्रथम कर्ता के बाद 'करण कारक' का चिन्ह 'से' लगाना चाहिए, फिर कर्म को कर्ता का रूप दे दिया जाय, किन्तु उसके चिन्ह 'ने' का प्रयोग नहीं किया जाय। इसके पश्चात् मूल धातु के 'सामान्य भूत' रूप और 'जाना' क्रिया के कालानुसार रूप का प्रयोग किया जाय। यथा

वर्तमान काल

कर्तृवाच्य	कर्म वाच्य	
मैं	मुझसे	(कर्ता का कारण और चिन्ह 'से' का प्रयोग)
कथा	कथा	(कर्म से कर्ता)
कहता हूं।	कही जाती है।	('कहना' क्रिया का सामान्य भूत रूप और 'जाना' क्रिया का वर्तमानकालीन रूप)

भूतकाल

मैंने	मुझसे	(कर्ता का 'करण' और 'से' का प्रयोग)
कथा	कथा	('कर्म' से कर्ता)
कही	कही गई।	('कही' सामान्य भूत रूप और 'जाना' क्रिया का भूतकालीन रूप)

भविष्यकाल

मैं	मुझसे	(कर्ता का करण और 'से' का प्रयोग)
कथा	कथा	(कर्म से कर्ता)
कहूंगा	कही जायगी	('कही' सामान्य भूतरूप और 'जाना' क्रिया का भविष्यकालीन रूप)

इसी प्रकार काल और वाच्य के विभिन्न भेदों के कारण क्रियाओ मे भी अनेक प्रकार से रूप परिवर्तन हो जाता है।

अर्थ-विचार

शब्द और अर्थ का नित्य सम्बन्ध होता है। महाकवि कालिदास ने वाक् (शब्द) और अर्थ को, पार्वती और परमेश्वर (शिव) के समान परस्पर संपृक्त बतलाया है[1]। यह पहले ही कहा जा चुका है कि हमारे मन में सबसे पहले कोई भाव उठता है। फिर उसे व्यक्त करने के लिए, हम किसी ऐसे शब्द का प्रयोग करते है, जिसका अर्थ उस भाव के निकटतम होता है। इस प्रक्रिया से ऐसे अनेक शब्दो का निर्माण हो जाता है, जो समानार्थक अथवा पर्यायवाची कहे जाते है।

वस्तुतः कोई शब्द किसी का पर्याय नही होता है, क्योंकि वह भाव की एक स्थिति का ही कुछ परिचय देता है और दूसरा शब्द दूसरी स्थिति का। उनमें एक सूक्ष्म भेद रहता ही है। फिर भी जो शब्द अपने भाव का जितना अधिक पूर्ण चित्र प्रस्तुत कर सकता है, वह उसके लिए उतना ही समर्थ माना जाता है। समर्थ का शाब्दिक अर्थ भी यही है। समर्थ शब्द की चिन्ता में कवि या साहित्यकार को जो कष्ट उठाना पड़ता है, उसे वही जानता है। इस प्रकार यह निश्चित हो जाता है कि भाव भेद के कारण शब्दों में अर्थ-भेद हो जाना बहुत स्वाभाविक है। इसीलिए दूर से 'एकार्थक' जान पड़ने वाले शब्द, समीप से स्पष्टतया भिन्नार्थक दिखलाई पड़ने लगते हैं।

---

[1] वागर्थाविव संपृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ ॥ रघुवंश १।१

कभी किसी एक वस्तु का नामकरण करते समय या परिचय समय विभिन्न दृष्टिकोणों के कारण अनेक शब्दों का निर्माण हो सभी शब्द एक ही वस्तु का बोध कराने के फलस्वरूप आपस मे माल लिए जाते हैं। कभी अनेक वस्तुओं के बोध के लिए एक ही श स्थिर हो जाता है। इस प्रकार के शब्द अनेकार्थक कहलाते है।

कभी ऐसा भी होता है कि बहुत से शब्द सुनने मे तो एक ही ड़ते है, किन्तु उनमें कुछ न कुछ ऐसा स्वर भेद अथवा व्यंजन-भेद के कारण वहा अर्थ-भेद स्पष्ट रूप से रहता है। ऐसे शब्दों को 'स ' शब्द कहते है।

इस प्रकार अर्थ भेद की दृष्टि से शब्दों के उपर्युक्त चारो वर्ग (१ २. समानार्थक, ३. अनेकार्थक और ४. समानोच्चरित) विचारणीय

एकार्थक शब्द

(एक ही अर्थ के लिए अनेक शब्द)

१ अति—अधिक से अधिक (अति वृष्टि हो रही है)
अधिक—साधारणतया अधिक (अधिक वर्षा हो रही है)

२ अन्त—समाप्ति (कथा के अन्त मे प्रसाद मिला)
इति—नाश (अब दुःखो की इति हो गई)

३. आदि—सर्वप्रथम (वेद आदि ग्रंथ है)
आरम्भ—नये सिरे से करना (गाना आरम्भ करो)

४. अस्त्र—जो फेंक कर मारा जाय (बाण आदि)
शस्त्र—जो हाथ मे पकड़ कर मारा जाय (लाठी आदि)

५. आधि—मानसिक कष्ट (चिन्ता)
व्याधि—शारीरिक कष्ट (ज्वर)

६. आतंक—दबदबा (पराधीन भारत में अंग्रेजों का बड़ा आतंक
भय—डर, घबराहट (मुझे बिजली से भय लगता है।)
त्रास—यातना (बलवान दुर्बलो को त्रास देते हैं।)

७. अहंकार—अपने को सबसे बड़ा समझना (रावण को अपनी का अहंकार था)
अभिमान—बड़प्पन का ज्ञान होना (मुझे भारतीय होने का मान है)

८. अमूल्य—जिसका कोई भी मूल्य निश्चित नहीं किया जा सकता (आंखें अमूल्य हैं)

बहुमूल्य—बहुत मूल्य वाला (सोना बहुमूल्य है)

९. अनुकम्पा—सुख से उत्पन्न दया (गुरुदेव की अनुकम्पा है)

करुणा—दुःख से उत्पन्न दया (प्राणियों पर करुणा करो)

१०. अंग—वह भाग, जो सम्मिलित हो (राजस्थान भारत का अंग है

अंश—वह भाग, जो पृथक् हो (सभी अवतार ईश्वर के अंश होते हैं)

११. अभिन्न—एक (हम दोनों अभिन्न मित्र हैं)

विभिन्न—अनेक (द्वितीय महायुद्ध के विभिन्न कारण थे)

१२. अद्वितीय—बेजोड़ (अर्जुन युद्धकला में अद्वितीय थे)

अद्भुत—आश्चर्यजनक (हनुमान अद्भुत वीर थे)

१३. अमात्य—राज्य के मन्त्री (चाणक्य चन्द्रगुप्त के अमात्य थे)

मन्त्री—परामर्श देने वाला, प्रबन्धक (क्या आप हिन्दूसभा के मन्त्री हैं ?)

सचिव—साधारण कार्यवाही मन्त्री (श्री शर्माजी, शिक्षा विभाग के सचिव हैं)

१४. आवेदन—प्रार्थना (मैं शिक्षक पद के लिए आवेदन कर रहा हूं)

निवेदन—विनयपूर्वक कहना (मेरा आप से एक निवेदन है)

१५. आचार—सामान्य बर्ताव (आपका आचार अच्छा होना चाहिए।)

व्यवहार—व्यक्तिगत बर्ताव (मेरे साथ आपका व्यवहार ठीक नहीं है।)

१६. अंक—साधारण चिन्ह (तिरंगे झण्डे पर अशोक चक्र का अंक है।)

कलंक—दोष का चिन्ह (झूंठ बोलना, तुम्हारे लिए कलंक है।)

१७. आयु—सम्पूर्ण जीवन की अवस्था (साधारणतया मनुष्य की आयु १०० वर्ष है।)

वय—वर्तमान अवस्था (आपकी इस समय क्या वय है।)

१८. अभिवादन—आदर व्यक्त करना (मैं आपका अभिवादन करता हूं।)

प्रणाम—आदर मे झुकना (आपको प्रणाम है)

अभिनन्दन—प्रशंसा (यह अभिनन्दन ग्रंथ, आपको भेंट है।)

अनुसन्धान—रहस्य खोजना (सभी देश अणुशक्ति का अनुस
कर रहे है ।)
आविष्कार—नई वस्तु बनाना (टेलीविजन एक नया आविष्कार
ईर्ष्या—जलन (मैं मन्त्री हो गया, इसलिए वह ईर्ष्या करता है
स्पर्धा—होड़ (वह प्रथम उत्तीर्ण होने के लिए मुझसे
करता है ।)
आशंका—दुखमय कल्पना (आज आंधी आने की आशंका है ।
शंका—सदेह (मुझे तुम्हारे पास होने मे शंका है ।)
इच्छा—कामना (आपके दर्शन की इच्छा है ।)
काम—वासना (काम, चारित्रिक पतन का कारण है ।)
इष्ट—प्रिय (आपका इष्ट क्या सुख है ?)
लक्ष्य—उद्देश्य (मेरा लक्ष्य बी. ए. पास करना है ।)
कष्ट—शारीरिक दुख (आज पेट मे कष्ट है)
क्लेश—मानसिक दुख (यह विवाद सुनकर बड़ा क्लेश हुआ)
पीड़ा—दर्द, टीस (इस फोड़े मे आज पीड़ा है)
वेदना—दुख का अनुभव (देश की दुर्दशा मे बड़ी वेदना है)
विषण्णता—हृदय का बैठना (इतने परिश्रम पर अनुत्तीर्ण हो
विषण्णता का विषय है)
व्यथा—अशान्ति (पता नहीं क्यों इतनी व्यथा है)
खेद—ग्लानि (मुझे आप से मिल न सकने का खेद है)
शोक—किसी की मृत्यु मे दुख (इस कुसमाचार से मुझे
शोक है ।)
आनन्द—मगन होना (वर्षा मे सब आनन्द मना रहे हैं)
सुख—संपन्न होना (मुझे सब प्रकार से सुख है)
हर्ष—रोमाच होना (आपकी पदोन्नति के समाचार से मुझे
हुआ)
प्रसन्नता—हृदय का उछलना (मुझे प्रसन्नता है कि आप सकुश
कारण—फलस्वरूप (चोरी के कारण वह पकड़ा गया)
हेतु—अभिप्राय (मैं आपके दर्शन के हेतु आया था)
चिन्ह—निशान (माथे पर चोट का चिन्ह है)

लक्षण गुण कम (आपके लक्षण अब अच्छे नहीं हैं)

२७. उत्तेजना—क्रोध (युद्धकाल मे चिढा देने से उत्तेजना बढ
प्रोत्साहन—बढ़ावा (मैं आपको उच्च अध्ययन के लिए
देता हूं)

२८. उपकरण—सामग्री (यह वस्तु अनेक उपकरणो से बनी है)
साधन—उपाय (आपके पास जीविकोपार्जन के क्या साधन

२६. प्रशंसा—बडाई (मैं आपकी सज्जनता की प्रशंसा करता हूं)
स्तुति—यशोगान (वह हनुमान्‌जी की स्तुति करता है)

३०. अटल—जो किसी बात पर आकर हटे नही (मैं अपनी प्र
अटल हूं)

अचल—जो कभी चले नही। (पर्वत अचल कहलाते हैं)

३१. अधिकारी—अधिकार वाला (मैं इस कार्यालय का अधिकार
भागी—हिस्सेवाला (वह मेरी सम्पत्ति मे भागी है।)

३२. आदर्श—उदाहरण के योग्य (वह आदर्श पुरुप है)
दृष्टान्त—उदाहरण (यह एक नया दृष्टान्त है।)

३३. लज्जा—शरम (क्या आपको लज्जा आ रही है ?)
संकोच—हिचकिचाहट (इसमें आप संकोच न करें)
ग्लानि—पश्चात्ताप (मुझे इस कुकृत्य पर ग्लानि है)

३४. प्रयत्न—उपाय (मैंने अनेक प्रयत्नो से परीक्षा उत्तीर्ण की है।
प्रयास—परिश्रम (इसके लिए मुझे बड़ा प्रयास करना पड़ा है

३५. नियम—रीति (प्राणायाम के क्या नियम है ?)
विधान—कानून (हमारे देश का विधान सर्वोत्तम है।)

३६. सेवा—बड़ो की सेवा (माता पिता की सेवा करो।)
शुश्रूषा—रोगी की सेवा, परिचर्या (आपके बीमार होने पर
शुश्रूषा की थी।)

३७. दोष—अपराध (आपने चोरी करने का दोष किया है।)
त्रुटि—गलती (इस प्रश्न मे ही कही त्रुटि है।)

३८. स्त्री—कोई स्त्री (आज मोटर से एक स्त्री कुचल गई।)
पत्नी—विवाहित स्त्री (यह मेरी पत्नी है।)

३९. पति—स्त्री का (ये मेरी बहिन के पति हैं।)

स्वामी—दास का (हे प्रभो ! आप मेरे स्वामी हैं ।)

४०. अन्त करण—आत्मा (यह अन्तःकरण की पुकार है ।)
मन—हृदय (मेरा मन यहां नहीं लग रहा है ।)
चित्त—तबियत (मेरा चित्त ठीक नहीं है ।)

४१. ऐतिहासिक—पुराना (प्रयाग ऐतिहासिक स्थान है ।)
इतिहासज्ञ—इतिहास जाननेवाला (डा. रघुवंशी बड़े इतिहासज्ञ हैं ।)

४२. नागरी—लिपि (यह पुस्तक 'नागरी' में छपी है ।)
हिन्दी—भाषा (हमारी मातृभाषा हिन्दी है ।)

४३. उत्साह—साधारण उत्साह (आपका उत्साह वास्तव में प्रशंसनीय है ।)
साहस—आपत्तिकालीन उत्साह (आपने उस दुर्घटना के समय बड़े साहस का प्रदर्शन किया था)

४४. विमर्श—स्वयं विचार करना (आज की परिस्थिति पर मैं विमर्श कर रहा हूं ।)
परामर्श—दूसरे के साथ विचार करना (मुझे आपके परामर्श की आवश्यकता है ।)

४५. आवश्यक—जरूरी (यह पुस्तक खरीदना बहुत आवश्यक है ।)
अनिवार्य—जिसके बिना काम न चले (स्वास्थ्य के लिए अच्छा भोजन अनिवार्य है)

४६. प्रेम—प्रणय (दम्पति का) ('रामचरितमानस' में राम और सीता के आदर्श प्रेम का वर्णन है ।)
स्नेह—मित्रों की सहृदयता (मुझे आपका स्नेह चाहिए ।)
वात्सल्य—बच्चों का प्यार (सूर ने यशोदा के वात्सल्य का अनुठा चित्रण किया है ।)

४७. प्रतियोगिता—जहां कई लोगों के बीच में सद्गुणों से जीतने की बात हो (यह कई कालेजों की वाद-विवाद प्रतियोगिता है ।)
प्रतिद्वन्द्विता—जहां दो के बीच में भले बुरे सभी प्रकार से जीतने की बात हो (बस हमीं दोनों में प्रतिद्वन्द्विता है ।)

४८. निद्रा—नींद (मुझे निद्रा आ रही है ।)
तन्द्रा—आलस (रात्रि जागरण के कारण तन्द्रा है ।)

४६. गौरव बड़प्पन (हमें देश के गौरव पर गर्व है)
    गर्व   घमण्ड   (हमे देश के गौरव पर गर्व है।)

५०. प्रवचन—धार्मिक उपेक्षा (आज सायं स्वामीजी का प्रवचन होगा
    भाषण—व्याख्यान (यहां नेहरूजी का भाषण हो रहा है।)

५१. सन्देह—अनिश्चय (मुझे सन्देह है कि वह पास होगा।)
    भ्रम—गलत निश्चय (उसे रस्सी मे सांप का भ्रम हो गया।)

५२. श्रद्धा—गुणों से आकर्षण (मुझे गांधीजी पर श्रद्धा है।)
    भक्ति—बड़ों के प्रति आकर्षण (मुझे अपने गुरु के प्रति श्रद्धा व भक्ति दोनो है)

५३. अनुचर—पीछे चलने वाला, सेवक (मैं आपका अनुचर हूं।)
    सहचर—साथ चलने वाला, मित्र (मुझे एक सहचर चाहिए।)

५४. आलस्य—ढीलापन (आज पढ़ने में आलस्य आ रहा है।)
    प्रमाद—जानबूझ कर गलती (समय पर न आना आपका प्रमाद है

५५. उद्यम—परिश्रम (हमे उद्यम करना चाहिए)
    उद्योग—उपाय (जीविका के लिए कुछ उद्योग करो)

५६. दुष्कर—कठिनता से करने योग्य (यह कार्य दुष्कर है।)
    दुर्लभ—कठिनता से पाने योग्य (यह वस्तु दुर्लभ है।)
    दुस्तर—कठिनता से पार जाने योग्य (यह नदी दुस्तर है।)
    दुर्गम—कठिनता से जाने योग्य (यह मार्ग दुर्गम है।)

५७. सुकर—सरलता से करने योग्य (यह कार्य सुकर है।)
    सुलभ—,,   ,,पाने योग्य (यह वस्तु सुलभ है।)
    सुगम—,,   ,,जाने योग्य (यह मार्ग सुगम है।)

५८. अज्ञ—जो किसी विशेष बात को न जाने (मैं मशीनरी के विष से अज्ञ हूं)
    मूर्ख—जो कुछ भी न जाने (वह तो एकदम मूर्ख है)

५९. कोप—निष्क्रिय अप्रसन्नता (वह मुझ पर कोप करता है)
    क्रोध—डाँटना, फटकारना, सक्रिय अप्रसन्नता (मुझे उसके अपशः पर क्रोध आ गय

६०. रीति—प्रथा (यह हमारी सामाजिक रीति है)
    नीति—नियम, व्यवहार (हमारे देश की नीति स्पष्ट है)

उपेक्षा — [illegible]
उदा[illegible] [illegible]

१ अनुभूति—अनुभव (मुझे इस विषय की अनुभूति है)
सहानुभूति—दुःख का अनुभव (मुझे आपके शोक में सहानुभूति

२. निश्चय—ठीक, पक्की बात (आज निश्चय ही वर्षा होगी)
विश्वास—श्रद्धा, भरोसा (मुझे आप पर विश्वास है।)

३. कुशल—चतुर, दक्ष (आप मोटर चलाने में बड़े कुशल है।
प्रवीण—पारंगत (आप संगीत में प्रवीण हैं)

४. वैभव—ऐश्वर्य (भारतवर्ष वैभवशाली देश है)
सम्पत्ति—धन (अमरीका सम्पत्तिशाली देश है)

५. दमन—दबाना (इन्द्रियों का दमन करना चाहिए।)
शमन—शान्त करना (योग में मन का शमन आवश्यक है)

६. नमस्ते—मित्रा के लिए (सुमनजी ! नमस्ते)
नमस्कार—बड़ों के लिए (गुरुदेव ! नमस्कार)

समानार्थक 'पर्यायवाची' शब्द

१. अति—अधिक, बहु, अनल्प, बहुत

२. अक्षि—नयन, नेत्र, आंख, चक्षु, लोचन, दृक्, दृग्

३. अरि—शत्रु, रिपु, वैरी, दुर्हृदय, विरोधी, विपक्षी, पर, द्वेष
अहित, अमित्र, सपत्न, अराति

४. अलि—भ्रमर, भौंरा, षट्पद, मधुप, भृंग, मिलिन्द, मधुकर

५. अग्नि—अनल, वह्नि, कृशानु, शिखी, पावक, दहन, हुताश
सर्वभक्षी, पवनमित्र

६. अमृत—सुधा, पीयूष, अमिय, दिव्य पदार्थ

७. अश्व—घोड़ा, हय, वाजि, घोटक, सप्ति, तुरंग, तुरग, तुरंग
वाह, सैन्धव, हरि और गन्धर्व

८. आनन्द—सुख, हर्ष, प्रसन्नता, आमोद, आह्लाद, शर्म, प्रमोद

९. अधर—ओठ, ओष्ठ, रदच्छद, दशनच्छद

१०. इच्छा—कामना, वांछा, स्पृहा, अभिलाषा, आकांक्षा, मनोरथ

११. इन्द्र—देवराज, सहस्त्रनेत्र, सुरपति, शक्र, मघवा, बिडौ
वासव, पाकशासन

१२ ईश्वर ब्रह्म भगवान् परमेश्वर, परमात्मा, प्रभु, जगन्नाथ, विश्वेश्वर

१३ कमल—जलज, पंकज, पद्म, सरोज, वारिज, इन्दीवर, कंज, अरविन्द, उत्पल, नलिन, राजीव

१४. किरण—कर, अंशु, रश्मि, मरीचि, दीधिति

१५. केश—बाल, कच, कुन्तल, चिकुर, शिरोरुह

१६. कल्पवृक्ष—देववृक्ष, सुरतरु, मन्दार, पारिजात

१७. काम—मदन, अनंग, स्मर, मार, पुष्पशर, मनोज, मन्मथ, मनसिज, मकरध्वज, कन्दर्प, पञ्चबाण, रतिपति

१८. क्रोध—कोप, रोष, अमर्ष, रिस

१९. कपड़ा—वस्त्र, वसन, पट, अम्बर, चीर, दुकूल

२०. कष्ट—दुख, वेदना, पीड़ा, व्यथा, खेद, क्लेश

२१. करुणा—दया, अनुकम्पा, कृपा, कारुण्य, अनुग्रह, अनुक्रोश

२२. खर—खरा, तेज, तीक्ष्ण, स्पष्ट

२३. गंगा—सुरनदी, सुरसरि, भागीरथी, जाह्नवी, त्रिपथगा, देवपगा, विष्णुपदी, भीष्मसू

२४. गणेश—गणपति, एकदन्त, लम्बोदर, गजानन, विनायक

२५. गुरु—उपाध्याय, आचार्य, शिक्षक, अध्यापक

२६. गौ—गाय, गैया, धेनु, पशुश्रेष्ठ

२७. गधा—गदहा, खर, बालेय, रासभ, वैशाखनन्दन, शीतलावाहन

२८. गर्व—दर्प, अभिमान, घमण्ड, मद, अहंकार

२९. घर—गृह, भवन, सद्म, गेह, सदन, मंदिर, धाम, निकेतन, आवास, आलय, निकेत, वास, निवास, असन, स्थान, ओक, अयन, आयतन, आगार

३०. चन्द्रमा—चन्द्र, इन्दु, शशी, सोम, राकेश, निशाकर, निशापति, द्विज, हिमकर, उडुपति, सुधांशु, मयंक, सुधाकर, द्विजराज, विधु, रजनीपति, मृगांक, राकापति, कलानिधि, नक्षत्रपति आदि

३१. चन्द्रिका—चांदनी, ज्योत्स्ना, राकाछवि, कौमुदी, उजियारी

३२. चतुर—चालाक, दक्ष, तेज, निपुण, प्रवीण, कुशल

३३ चवल चपला अस्थिर तेज क्षणिक ज ग्बाज

३४. चरण—पाव, पैर, पग, पद, पाद

३५. चरित्र—आचरण, व्यवहार, आचार, चाल-चलन, शील, स्वभाव जीवनी

३६. चिन्ता—सोच, ध्यान, परवाह, चिन्तन, फिक्र

३७. चोर—स्तेन, तस्कर, मोषक, दस्यु, चौर

३८. छल—कपट, धोखा, बहाना, व्याज, शठता, ठगी

३९. छिद्र—विवर, बिल, रन्ध्र, शुषिर

४०. जगत्—विश्व, ससार, दुनिया, जग, जगती, भव

४१. जन—मनुष्य, व्यक्ति, पुरुष, लोक, लोग, आदमी, मानव, मानुष, नर, मनुज

४२. जीभ—जिह्वा, रसना, जबान, जीह, रसज्ञा, रसान्यया

४३. जल—पानी, वारि, सलिल, आप, जीवन, विष, नीर, अम्बु, पय उदक, पाथ, अम्भ, अर्ण, अमृत, वन, तोय

४४ झण्डा—ध्वज, ध्वजा, पताका, निशान

४५. झुण्ड—गिरोह, दल, समूह, समुदाय, भीड

४६. तलवार—असि, खड्ग, कृपाण, खग, करवाल

४७. तालाब—सर, सरोवर, ताल, तडाग, पुष्कर, जलाशय

४८. तम—तमिस्र, ध्वान्त, अन्धकार, अन्धेरा, तिमिर

४९. तर्कस—तूण, तूणी, तूणीर, निषग, बाणाधि, इषुधि

५०. तंतु—सूत, डोरा, धागा, तागा, रेशा

५१. तट—तीर, किनारा, कूल, छोर

५२. तरुण—युवा, युवक, जवान, नौजवान

५३. तरु—पेड, वृक्ष, पादप, शाखी, द्रुम, विटप, महीरुह

५४. तर्क—युक्ति, दलील, बहस, विवाद, ऊहा, विवेचन

५५ दंत—दात, रदन, दशन, रद, द्विज

५६. दिन—दिवस, दिवा, अह, वार, वासर

५७. देवता—सुर, देव, अजर, अमर, विबुध, त्रिदश, आदितेय, आदित्य, अमर्त्य, गीर्वाण, दिवौकस

५८. दानव—असुर, राक्षस, दैत्य, दैतेय, सुरद्रोही, दनुज, निश्चर, निशाचर, रजनीचर, यातुधान

५९—दुग्ध पय क्षीर गोरस

६०. धर्म—सुकृत्, पुण्य, शील, वृष, श्रेय

६१. धनुष—चाप, धनु, धन्वा, कार्मुक, कोदण्ड, शरासन, बाणासन इष्वास

६२. धन—अर्थ, वित्त, सम्पत्ति, द्रव्य, द्रविण

६३. नदी—सरित्, सरिता, तटिनी, आपगा, निम्नगा, स्रोतस्विनी, सुवन्ती, तरंगिणी, धुनी, शैवलिनी

६४. नक्षत्र—तारा, उडु, ऋक्ष, तारका, भ

६५. नाव—नौ, नौका, तरी, तरिणी, पोत, जलयान

६६. निशा—निशि, रात, रात्रि, रजनी, क्षपा, क्षणदा, यामिनी, अमा (अमावस), राका (पूर्णमासी), शर्वरी, त्रियामा, तमिस्रा, विभावरी

६७. नेत्र—नयन, चक्षु, लोचन, अक्षि

६८. पर्वत—गिरि, अद्रि, भूधर, भूभृत्, महीधर, अचल, शैल, अग, नग

६९. पति—भर्ता, स्वामी, वल्लभ, प्राणेश, हृदयेश

७०. पत्नी—गृहिणी, परिणीता, सहचरी, सहगामिनी, वल्लभा, दारा, जाया, प्राण, प्रिया, भार्या, सहधर्मिणी, धर्मपत्नी

७१. पक्षी—खग, विहग, विहंग, पतंग, द्विज, शकुन, शकुन्त, अण्डज, पतत्री, विहंगम, खेचर, नभचर

७२. पवन—वायु, वात, हवा, समीर, मरुत, अनिल, बयार, प्रभंजन, (आंधी)

७३. पुष्प—सुमन, कुसुम, फूल, प्रसून

७४. पुत्र—सुत, तनुज, तनूज, आत्मज, तनय, सुवन, बेटा, औरस

७५. पुत्री—सुता, तनुजा, आत्मजा, तनया, बेटी, दुहिता, नन्दिनी

७६. पृथ्वी—भू, भूमि, धरा, धरिणी, धरित्री, मही, मेदिनी, वसा, वसुन्धरा, क्षिति, अवनी, अचला, क्षोणी, उर्वी, रत्नगर्भा, पृथिवी, वसुधा, वसुमती, हरिप्रिया, रत्नप्रसू

७७. पंडित—विज्ञ, विद्वान, विपश्चित्, बुध, विचक्षण, सुधी, कोविद, विशारद, प्राज्ञ

प्रेम—प्यार राग स्नेह अनुराग प्रणय प्रीति

पार्वती—शिवा, भवानी, उमा, सती, गौरी, गिरिजा, हिमालय-शैलपुत्री, शिवप्रिया, गणेशजननी

बिजली—तड़ित, विद्युत, चपला, चंचला, दामिनी, सौदामिनी, क्षणप्रभा, मेघप्रिया, शम्यापत्री

बाण—शर, इषु, तीर, सायक, नाराच, विशिख, शिलीमुख, पत्री

वाणी—भारती, सरस्वती, गी, गिरा, वाक्, ब्राह्मी, वाणी, शारदा

ब्रह्मा—अज, विधि, चतुरानन, कमलासन, बिरंचि, स्वयंभू, विधाता, प्रजापति

बादल—मेघ, घन, पयोधा, जलधर, तडित्वान्, पयोद, अम्बुद, जलद, नीरद, बलाहक, अभ्र, वारिद, धूमज. सारंग

बंदर—कपि, वानर, हरि, कीश, मर्कट, शाखामृग

मोर—मयूर, शिखी, केकी, नीलकण्ठ, सारंग, बर्हीं, कलापी

मछली—मीन, मकर, झष, पाठीन, मत्स्य, शफरी

मदिरा—मद्य, सुरा, हाला, कादम्बरी, वारुणी

महादेव—शिव, शंकर, शम्भू, त्रिनेत्र, पशुपति, शूली, गिरिश रुद्र, त्रिपुरारी, हर, भर्ग, भव, उमेश, गंगाधर, कैलाश-पति, वामदेव, खण्डपरशु, ईश, महेश, महेश्वर, चन्द्रशेख पिनाकी, शितिकण्ठ, नीलकण्ठ, विषमुक्, कामारि, स्थाणु

माता—अम्बा, जननी, मा, अम्मा, प्रसू, जन्मदायिनी

मोक्ष—मुक्ति, निर्वाण, अपवर्ग, कैवल्य, निःश्रेयस, अमृतपद

मास—आमिष, क्रव्य, पलल, पिशित

मुर्गा—कुक्कुट, ताम्रचूड, ताम्रशिख, तमचुर

यम—यमराज, धर्मराज, मृत्यु, काल, महाकाल

यमुना—कालिन्दी, सूर्यपुत्री. कालिन्दतनया, तरणितनूजा, रविजा, रवितनया, जमुना

राजा—नृप, भूप, नरेश, भूपति, महीपति, नृपति, महीप, भूपाल, क्षितिपाल, ईश्वरांश, प्रजापति, पृथ्वीपति, धराधीश

९७. राम—दाशरथि, भरताग्रज, अवधेश, सीतापति, कौशलेय, दशरथनन्दन

९८. लक्ष्मी—मा, श्री, रमा, कमला, पद्मा, इन्दिरा, विष्णुप्रिया, सिन्धुजा

९९. वन—विपिन, कानन, जंगल, कान्तार, अरण्य

१००. विष्णु—हरि, चक्रपाणि, केशव, माधव, अच्युत, कमलेश, समुद्रशायी, सर्पशायी, जनार्दन, लक्ष्मीपति, कमलापति

१०१. विष—जहर, गरल, माहु, हलाहल, कालकूट, गर

१०२. वैर—शत्रुता, विरोध, विपक्षिता, लडाई, दौर्मनस्य, द्वेष, वैमनस्य मनोमालिन्य

१०३. शरीर—देह, गात, वपु, तनु, तन, काया, विग्रह, कलेवर

१०४. समुद्र—सिन्धु, सागर, उदधि, जलधि, वारिधि, नीरनिधि, रत्नाकर, नदीश, अर्णव, पारावार, वारीश, पयोनिधि, अब्धि, नदीपति, विष्णुशय्या

१०५. स्वर्ग—देवालय, द्यौ, द्युलोक, स्वः, नाक, सुरलोक, वैकुण्ठ, परलोक, अमरपुरी

१०६. स्वर्ण—सोना, कंचन, कलधौत, सुवर्ण, हेम, हिरण्य, जातरूप

१०७. सिंह—शेर, हरि, मृगेन्द्र, मृगराज, पचानन, वनराज, केसरी, केहरी, नाहर

१०८. सांप—सर्प, उरग, पन्नग, अहि, भुजग, भुजंग, भुजंगम, नाग, काल, फणी, विषधर, वाताशी

१०९. स्त्री—नारी, अबला, कान्ता, रमणी, प्रमदा, युवती, महिला, तरुणी, वनिता, वामा, भामा, भामिनी, कामिनी कलत्र, अंगना, श्रीमती

११०. सूर्य—रवि, सविता, हंस, भानु, मित्र, दिनकर, विभाकर, प्रभाकर, भास्कर, भास्वान्, आदित्य, अर्क, अरुण, तरणि, चित्रभानु, पूषा, ग्रहपति, पतंग, तपन, दिनमणि, दिनेश्वर, मार्तण्ड, दिवाकर, अंशुमाली, इन, भग, सूर, सूरज, सप्ताश्व, रश्मिरथ, विकर्तन, पूषा, अर्यमा, द्युमणि दिनमणि. मिहिर

१११. सेना—सैन्य, वाहिनी, बल, कटक, चमू, चतुरंग, अनी, दल, चक्र

११२. सुन्दर—रम्य, मंजु, मंजुल, मनोहर, चारु, रुचिर, शोभन मनोरम, कलित, ललाम

११३. हरिण—मृग, कुरंग, सारंग, चमरी, कृष्णसार

११४. हाथी—हस्ती, गज, मतंग, मातंग, दन्ती, द्विप, नाग, कुंजर, द्विरद, दन्तावल, इभ, मतंगज, करी, वारण

११५. हनुमान्—महावीर, वज्रांग, रामदूत, पवन सुत, अंजनीपुत्र आंजनेय, हनुमान, कपीन्द्र, वानरेन्द्र, कपीश, वायुपुत्र

अनेकार्थक शब्द

(एक ही शब्द के अनेक अर्थ)

१. अज—ब्रह्म, दशरथ के पिता, बकरा, ईश्वर
२. अर्थ—धन, कारण, अभिप्राय
३. अर्क—सूर्य, अकौड़ा, किरण, खीचा हुआ रस
४. अधर—नीचे, नीचे का ओंठ, शून्य, मध्य
५. अमृत—सुधा, मोक्ष, पारा
६. अरुण—लाल, लाल सूर्य, सूर्य का सारथि
७. अम्बर—कपड़ा, आकाश, सुगन्धित पदार्थ
८. अनन्त—जिसका अन्त न हो, आकाश, विष्णु, शेषनाग
९. अक्षर—वर्ण, विष्णु, अविनाशी, मोक्ष, धर्म
१०. अंक—सख्या, गोद, निशान, परिच्छेद (नाटक में)
११ अंग—भाग, शरीर, एक देश
१२. अंड—अण्डा, विश्व (ब्रह्माण्ड), एरंड का पेड़
१३. अनु—पीछे, समान, हीन, कण (अणु)
१४. अक्ष—आँख, धुरी, पासा, इन्द्रिय, आत्मा, माला (रुद्राक्ष), रावण का पुत्र
१५. अलि—भौंरा, सखी
१६. आली—सखी, समूह, पंक्ति, वंश
१७. आगम—आगमन, शास्त्र, प्राप्ति, जन्म, वृद्धि, धारा, ज्ञान, वे
१८. अंत—निकट, आखिरी, सीमा, नाश, मृत्यु, परिणाम

१९ अंध—अंधा मूर्ख

२० अम्ब आम, माता दुर्गा

२१. आप—आदरपूर्ण संबोधन, जल, स्वयं, आकाश

२२. आम—आम, कच्चा, प्रसिद्ध, साधारण

२३. असुर—राक्षस, सूर्य, जल, ठग

२४. अहि—साप, सूर्य, जल, ठग

२५. आकाश—आसमान, शून्य, ईश्वर

२६. आत्मा—जीव, मन, बुद्धि, स्वभाव, शक्ति, साहस, सूर्य

२७. आमोद—हर्ष, सुगन्धि

२८. आर्द्रक—अदरख, गीला

२९. आमिष—मास, घूस, भोगेच्छा, रूप, नीबू

३०. आश्रय—आधार, घर, सहायता, उद्देश्य, तर्कस

३१. आशय—अर्थ, घर, उदर, हृदय, पापपुण्य

३२. इंदु—चन्द्रमा, कपूर, एक नक्षत्र

३३. इन्द्र—देवराज, राजा, बादल, श्रेष्ठ व्यक्ति, आत्मा

३४. ईश्वर—भगवान्, राजा, पति, आत्मा, शिव, कामदेव

३५. उग्र—तीव्र, भयानक, उच्च, परिश्रमी

३६. उडु—जल, तारा, कर्कल

३७ उत्कर्ष—उन्नति, घमंड, ऊपर खीचना, प्रसन्नता

३८. उत्तर—उत्तर दिशा, जवाब, बाद, ऊपर वाला, श्रेष्ठ

३९. उदक्—पानी, उत्तर दिशा, परवर्ती

४०. उदात्त—श्रेष्ठ, ऊंचा स्वर, प्रसिद्ध

४१. उद्दंश—खटमल, जुर्वा, मच्छड़

४२. उद्धव—कृष्ण के मित्र, उत्सव

४३. उद्धार—ऊपर उठना, छुटकारा, उद्धरण, उधार

४४. उपयमन—दबाना, विवाह करना, सहारा

४५. उपसंहार—नाश, अंत, लेख का सारांश

४६. उपाधि—पदवी, छत्र, धोखा, प्रयोजन

४७. उमा—पार्वती, शान्ति, रात्रि, हरिद्रा, चन्द्रकान्तमणि

४८. उषा—प्रातःकाल का आरम्भ, गाय, रात, बाणासुर की पुत्री

अक्षत — चावल, पूर्ण, बिना चोट का

अर्जुन — एक प्रकार का वृक्ष, धवल, पाण्डुपुत्र

४९. ऊन—भेड़ का बाल, न्यून

५०. ऊर्मि—लहर, पंक्ति, प्रकाश, प्राण, खेद, कपड़े की सिकुड़न

५१. ऋक्ष—भालू, नक्षत्र, राशि

५२. ऋण—कर्जा, उपकार, अभाव

५३. ऋद्धि—संपत्ति, लक्ष्मी, पत्नी, एक छन्द

५४ एक—संख्या, अद्वितीय, भेदहीन, प्रधान

५५. ऐन—आंख, असली, सोता, उद्गम

५६. ओट—आड़, शरण, परदे की दीवार

५७. और—संयोजक अव्यय, अधिक, दूसरा

५८. कंचुक—अंगरखा, चोली, छिलका

५९. कज—कमल, ब्रह्मा, केश

६०. कंटक—कांटा, नोक, रोक, रोमांच, दोष

६१. कंस—कांसा, कटोरा, कृष्ण का शत्रु

६२. कटक—सोना, सेना, समुद्र, समूह, उड़ीसा की राजधानी

६३ कनक—सोना, धतूरा, पलाश

६४. कन्या—लड़की, दुर्गा, घीकुवार. एक छन्द

६५. कफ—फेना, बलगम, कमीज का कफ

६६. कर—हाथ, किरण, सूंड, टैक्स, ओला

६७. करण—करना, साधन, इन्द्रिय, एक कारक, कारण, देह

६८. कर्ण—कान, पतवार, कुन्तीपुत्र, त्रिभुज की एक विशेष रेखा

६९. कर्ता—करने वाला ईश्वर, एक कारक

७०. कर्म—काम, भाग्य, आचरण, एक कारक

७१ कल—सुख, सुन्दर, मधुर, कोयल, हंस, बीता हुआ दिन, आने वाला दिन, मशीन

७२. कला—अंश, चन्द्रमा की कला, गुण, रचना का ढंग, उपाय

७३. कलिका—कली, टुकड़ा, कला, एक छन्द

७४. कलुष—पाप, दोष, क्रोध, भैंसा

७५. कवि—कविता करने वाला, ऋषि, ब्रह्मा, सूर्य, शुक्राचार्य, वाल्मीकि

७६. कल्प—प्रलय, स्वर्ग का वृक्ष, शराब, समान

[illegible]

[illegible]

[illegible]

७७ कान्त —सुन्दर पति चन्द्रमा बसन्त प्रिय व्यक्ति

७८ कादम्ब का पेड बाण हंस, ईख

७९. काम—इच्छा, वासना, कार्य, कामदेव

८०. काल—समय, मृत्यु, अवसर, अवधि, ऋतु, अंत, यमराज

८१. कुंभ—घड़ा, एक पर्व, एक राग, वेश्यापति, एक राशि

८२. कुमार—बेटा, युवा, युवराज, अग्नि, तोता

८३. कुल—सब, वंश, गोत्र, समूह

८४. कूट—कूटना, छल, पहाड़ की चोटी, कुटी, व्यंग

८५. कृष्ण—काला, नीला, दुष्ट, एक पक्ष, भगवान् कृष्ण अर्जुन लोहा

८६. केतु—ध्वजा, चिन्ह, किरण, एक राक्षस

८७. केश—बाल, किरण, विष्णु, वरुण

८८. कोटि—करोड़, सिरा, वर्ग, चरमोत्कर्ष, अन्तिम स्थान

८९. कोश—खजाना, अंडा, शब्दकोश, जीवात्मा के ५ आवरण (अन्नमय कोश आदि), कठिन परीक्षा

९०. कौशिक—उल्लू, इन्द्र, विश्वामित्र, कोशाध्यक्ष, गुग्गुल

९१. क्रतु—यज्ञ, विवेक, इच्छा, विष्णु इन्द्रिय

९२. क्रम—आगे का कदम, आरम्भ, तैयारी, सिलसिला, व्यवस्था

९३. क्रिया—करना, कर्म, शिक्षा, अभ्यास, पूजन, साधन

९४. क्षण—समय, अवसर, उत्सव, आनन्द

९५. क्षीर—दूध, जल, रस

९६. क्षेत्र—खेत, स्थान, तीर्थस्थान, मैदान

९७. क्षमा—पृथ्वी, माफी, सहनशीलता, एक छन्द

९८. खंड—टुकड़ा, देश, खांड, ग्रंथ का भाग

९९. खर—कड़ा, अशुभ, तीक्ष्ण, गरम, निर्दय, गदहा

१००. खल—दुष्ट, चुगलखोर, स्थान, खरल

१०१. खग —पक्षी, सूर्य, वायु, बादल, चन्द्रमा, पतंग, बाण, देवता, घर

१०२. गंड—कपोल, फोड़ा, गांठ, गैंडा

१०३. गंधर्व—गायक, घोड़ा, कस्तूरीमृग, सूर्य, एक देव जाति

१०४. गज—हाथी, एक नाप (दो हाथ)

~~[illegible]~~

छन्द [illegible] - छिद्र, भेद, दूरी [illegible]
अगाध [illegible] का नाम [illegible], [illegible]

१०५ गति गमन चाल स्मरण मोक्ष ज्ञान साधन न्याय उपाय प्रवाह

१०६. गण—वर्ग, श्रेणी, समूह, छन्दशास्त्र में ३ वर्णों का समूह (भगण आदि), शिव के सेवक

१०७. गुण—धर्म, जातिस्वभाव, सत् रज तम आदि ३ गुण, तार, डोरी, गुना (दुगुना), गुणसंधि

१०८. गुरु—भारी, शिक्षक, बड़ा, गुरुवर्ण (आ, ई आदि) शक्तिशाली, पिता, मन्त्रदाता, पूज्य, बृहस्पति

१०९. गो—किरण, इन्द्रिय, वाणी, आँख, पृथ्वी, दिशा, जीभ, गाय, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा, जल, स्वर्ग।

११०. गोत्र—वंश, पर्वत, समूह, धन, रास्ता

१११. गौरी—पार्वती, गोरी स्त्री, धरती, हल्दी, आठ वर्ष की कुमारी कन्या, तुलसी

११२. ग्राम—गाँव, जाति, समूह, स्वर सप्तक

११३. घट—घड़ा, देह, हृदय, हाथी का मस्तक, कमी

११४. घटी—कमी, घड़ी (२४ मिनट), रहट की घड़िया, शकर

११५. घन—घना, बादल, घनफल, ठोस, हथौड़ा, घटा समूह, कपूर

११६. घृत—घी, पानी

११७ घोष—आवाज, घोषणा, गड़गड़ाहट, अहीर, झोपड़ी, तट, एक बंगाली जाति, गोशाला

११८. चञ्चु—चोंच, चतुर, हिरन

११९. चन्द्र—चन्द्रमा, कपूर, सोना, जल, मोर पंख का चिन्ह, चन्द्र बिंदु (अनुनासिक चिन्ह)

१२०. चक्र—पहिया, कोल्हू, चक्की, बवंडर, समुदाय, सेना, योग के ६ चक्र, भ्रमण, षड्यन्त्र चकवा

२१. चरण—पैर, छन्द का चौथा भाग, जड़, चलना, पूजा अनुष्ठान, क्रम, सूर्यकिरण

२२. चल—चंचल, जंगम, पारा, वायु, शिव, विष्णु

२३. चर—जल. वायु, सजीव, दूत, जासूस, कौड़ी, पासे का खेल

२४. चित्र—तस्वीर, विचित्र, चित्रकाव्य, शब्द चित्र, चित्रगुप्त, आकाश, सफेद कोढ़, चमकदार

२५ चित्रक—चीता एरंड चित्रकार, युद्ध का एक प्रकार
२६. चूर्ण—चूना, पिसी वस्तु, चूर, खडिया
२७ चौकी—लकडी का चौकोर आसन, चुंगी चौकी, पुलिस चौकी, पहरा, पड़ाव, गले का भूषण, चकला
२८. छन्द—वृत्त, इच्छा, छल, वेद, मात्रा, छन्दशास्त्र, विष, एक आभूषण
२९. छाया—अंधेरा, प्रतिबिम्ब, समानता, सौन्दर्य, रक्षा, दुर्गा, सूर्य की पत्नी, आश्रय
१३०. छार—क्षार, धूल, राख, खारी नमक
१३१. जन्तु—जीव, कीड़ा, प्राणी
३२. जगत—संसार, कुएं का चबूतरा, वायु
३३. जन—आदमी, सेवक, प्रजा, जाति, समूह
३४. जनक—जन्म देने वाले, सीता के पिता
३५. जड़—अचेतन, मूर्ख, अकड़ा हुआ, गूंगा बहरा, पेड़ की जड़, नींव, असली कारण
३६. जरा—थोड़ा, बुढापा, एक राक्षसी, (जिसने जरासंध को जोड़ा)
३७. जव—जौ, वेग
३८. जल—पानी, जड़ (मूर्ख), खस
३९. जात—उत्पन्न, जन्म, बच्चा, प्राणी, समूह
४०. जलज—कमल, मछली, शंख, सिवार, चन्द्रमा, (समुद्र के १४ रत्न)
४१. जाल—जाली, फंदा, झरोखा, समूह, आंखों का रोग, विस्तार
४२. जेठ—बडा, पति का बड़ा भाई, एक महीना
४३. जीवन—जिन्दगी, प्राण धारण, पानी
४४. झोल—ढीलापन, आंचल, ओट, रसा, कढ़ी, गर्म, बहानेबाजी
४५. टंक—सोहागा, क्रोध, सिक्का, एक तौल, तलवार, टांकी, एक राग
४६. ठिकाना—स्थान, निवास, जमींदारी, सहारा, सीमा, व्यवस्था
४७. तंतु—डोरा, जाली, संतान, मकड़ी का जाला, परमेश्वर

तन्त्र—तांत सिद्धांत, कारण राष्ट्र सेना समूह नियम पूजा तार, नीति, वस्त्र, वेदशाला

तत्त्व—सार, गीत, नृत्य, ब्रह्म, स्वभाव, पंचामृत

तनु—शरीर, प्रकृति, कोमल, तुच्छ

तपन—गर्मी, जलाना, प्रचण्ड, ग्रीष्म, सूर्य, एक नरक, अगस्त्य, शिव

तम—अंधेरा, राहु, तमोगुण, तमाल वृक्ष

तल—नीचे का भाग, पेंदी, चमड़े की खोल, सतह, थप्पड़, हथेली, तलुवा, तालाब, पाताल, कारण

तात—तप्त, गरम, एक सम्बोधन, (छोटे और बड़े सब के लिए), प्रिय

तार—तारना, उच्च, स्वच्छ, मोती, शिव, विष्णु, चांदी, तारा, पुतली, सूत्र, धातु के तार, शीघ्र समाचार, ताड़ वृक्ष

ताल—हथेली, ताड़ का वृक्ष या फल, हरताल, तालाब, एक नृत्य, ताली देना, हाथ पर या जांघ पर हाथ पटकने का शब्द

तिल—सफेद या काला तिल, तिल जैसा दाग, आंख का तिल, टुकड़ा

तीर्थ—पवित्र स्थान, जलाशय, गुरु, पूज्य, घाट, समय, ब्राह्मण, अग्नि, एक उपाधि

तुरंग—मन, घोडा, एक राग, सात की संख्या

तूल—रूई, शहतूत, का पेड़, आकाश, धतूरा, तृण की नोक, बराबरी, उपमा, बढावा

तेज—तीक्ष्ण, प्रभाव, प्रकाश, शक्ति, अग्नि, सोना, फुर्तीला, दक्ष, महंगा

थाती—धरोहर, संचित पूंजी

थाह—नदी का तल, गहराई, सीमा, पता, अन्दाज

दण्ड—डंडा, सन्यासियों का दण्ड, सजा, दमन, राजनीति का एक अंग, यम, एक व्यायाम, सूंड, सेना, शिव, विष्णु

६५ दक्ष चतुर दक्षिण सती के पिता योग्य विष्णु अनेक स्त्रियों का नायक

६६. दम—दमन, कीचड, विष्णु, सास, क्षण, जान, ताकत, आधार, समय

६७. दर्शन—साक्षात्कार, दर्शन शास्त्र, प्रदर्शन, परीक्षा, शीशा, रूपरंग, परामर्श

६८. दल—समूह, टुकडा, फूल की पंखडी, सेना, मोटी परत, पक्ष, पत्ता

६९. दान—दे देना, हाथी के मस्तक का मद, राजनीति का एक चरागाह

१७०. दार—दरार, स्त्री (दारा), लकड़ी (दारु), बालक, विदारण, दाल

७१. दिव्य—स्वर्ग सम्बन्धी, प्रकाशवान्, सुन्दर, आकाशीय, देवोचित, अलौकिक, आवला, ब्राह्मी, चन्दन

७२. दीर्घ—बड़ा, ऊंचा, लम्बा, बड़ी मात्रा, ऊंट

७३. दुम—पूंछ, पिछलग्गू, डिग्री

७४. देव—देवता, इन्द्र, लम्बा चौड़ा आदमी, दानव, राजा, बादल, मूर्ख, देवदारु, पूज्य

७५. द्रव—रस, पिघलना, भागना, गति, क्षरण, क्रीड़ा

७६. द्विज—ब्राह्मण, पक्षी, चन्द्रमा, दांत, कवि, नाक

७७. द्वन्द्व—दो दो, झगड़ा, जोड़ा, दुर्ग, रहस्य, एक समास

७८. धन—जोड़ने की क्रिया, सम्पत्ति, स्त्री, गोधन, धन्य

७९. धर्म—पुण्य, नियम, शील, धर्मराज (यम), युधिष्ठिर, व्यवहार ढंग, सत्संग, शुभ कर्म

१८०. धातु—सोना, चांदी, आदि, रस, रक्त आदि; शब्दों का मूल, जड, ताकत, इन्द्रिय, ईश्वर

८१. धात्री—धाय, आंवला, पृथ्वी

८२. धी—लडकी, बुद्धि, कल्पना, भक्ति

८३. धुरन्धर—नेता, बैल, प्रधान, धिव, एक वृक्ष

८४ धारा प्रवाह परम्परा वर्षा सेना का अग्र भाग अफवाह, भोज की राजधानी, रात्रि, हल्दी, समूह, एक पत्थर

८५ ध्रुव—एक तारा, अटल, सत्य, नित्य, आकाश, ब्रह्मा विष्णु महेश

८६. नन्दन—आनन्ददायी, पुत्र, इन्द्र का उपवन, मेघ, मेंढक, शिव, विष्णु, एक छन्द

८७. नग—नगीना, अंचल, संख्या, पर्वत, वृक्ष, सर्प, सूर्य, स्थिर, सात की संख्या

८८. नर—पुरुष, अर्जुन, विष्णु, घोड़ा, सेवक

८९. नव—नौ संख्या, नया, स्तुति

९०. नाक—नासिका, स्वर्ग, मगर, मान, मर्यादा

१९१. नाग—सांप, हाथी, पर्वत, बादल, रांगा, सीसा, क्रूर मनुष्य, नागकेसर

९२. नाथ—ईश्वर, स्वामी, बैल के नाक की रस्सी, एक पंथ

९३. निकाय—समूह, ईश्वर, शरीर, लक्ष्य

९४. निगम—वेद, वेदांश, मार्ग, बाजार, निश्चय, कारपोरेशन

९५. निदान—कारण, रोग की पहचान, अन्त मे, निकृष्ट

९६. निर्वाण—मोक्ष, मृत, शान्त, गज स्नान, एक छन्द, परम आनंद

९७. निशा—रात, हल्दी, स्वप्न

९८. नील—नीला, एक संख्या, एक वानर, एक पर्वत, नीलमणि, मैना, एक छन्द

९९. न्याय—ठीक, फैसला, समान, एक दर्शन, नियम

२००. पंक—कीचड़, दलदल, पाप, लेप

२०१. पंच—५ की संख्या, ५ आदमियों का समूह, पचायत का

२. पक्ष—पन्द्रह दिन, दायां या बायां भाग, सेना, अंग, विचार योग्य विषय, पार्श्व पंख, बाण की पूंछ, शरीरार्ध, सम्बन्ध

३. पगड़ी—सिर की पगडी, दुकान की पगडी

४. पट—वस्त्र, रंगमंच का पर्दा, पर्दा, छत, चित्र के लिए कागज या वस्त्र, एक शब्द, स्थान

५. पत्र—पत्ता, चिट्ठी, कागज, समाचार-पत्र, पत्र, कापी का पृष्ठ, वर्क

६. पद—पैर, पदवी, स्थान, छंद का चतुर्थ भाग, प्रदेश, मृतक दान, अधिकार

७. पद्म—कमल, एक संख्या, एक पुराण, दाग, धब्बा, एक आसन, एक साप, एक नरक, एक नक्षत्र

८. पतंग—सूर्य, पक्षी, पारा, विष्णु, कनकैया।

९. पर—श्रेष्ठ, शत्रु, पास, भिन्न, दूसरा, श्रेष्ठ, संलग्न

१०. पय—दूध, पानी, अन्न, वीर्य, आहार, शक्ति।

२११. परिग्रह—ग्रहण करना, धन संचय, पत्नी, घर सेवक शपथ, आदर, दण्ड, शाप, स्वीकृति, सम्बन्ध, आधार, सहायता, विष्णु

१२. परिणय—चारों ओर ले जाना, विवाह

१३. परिच्छद—ढाकने का वस्त्र, अनुचर, सैनिक, यात्रा का सामान, परिवार, आभूषण

१४. परिसर—नदी नगर के पास की भूमि, विधान, नियम, मृत्यु, इधर उधर जाना, अवसर

१५. पर्व—त्योहार, उत्सव, गांठ, जोड, सूर्य चन्द्र ग्रहण, अध्याय, समय, यज्ञ

१६. पल—पलक, क्षण, सास

१७. पाडु—पीला, पीलिया रोग, पाण्डवों के पिता, परवल, एक प्राचीन प्रदेश

१८. पाक—पकाना, परिणाम, पवित्र, उल्लू, समाप्ति, अन्न, एक दैत्य, स्वच्छ, निर्दोष

१९. पाट—विस्तार, रेशमी कपड़ा, सिंहासन, पीढा, चक्की का पाट, बाल काढ़ना, प्रधान

२०. पाद—चरण, श्लोक का चतुर्थ भाग, पर्वत का किनारा, पादना, भाग, किरण, स्तंभ

२२१. पात्र—बर्तन, अभिनेता, योग्य व्यक्ति

२२. पालि—पंक्ति, सीमा, पुल, गोद, चिन्ह, एक भाषा, पारी

पिंगल पीला लाल और भूरे रंग का मिश्रण बंदर, आग उल्लू, नेवला, पीतल, हरताल, छन्द शास्त्र के प्रथम आचार्य, एक पर्वत, एक राक्षस, एक देश, एक विष, पपीहा, रुद्र

पिंड—ठोस, गोला, श्राद्ध की खीर, आहार, दान, जीविका, मास, देह, छज्जा, बरसाती, सोना

पीठ—लकड़ी या पत्थर का आसन, सिंहासन, उच्च स्थान, पृष्ठ भाग, एक आसन

पुण्डरीक—श्वेत कमल, श्वेत छत्र, बाघ, हाथी, बुखार, कमंडल, अग्नि, घड़ा, साँप, एक कोढ़

पुर—नगर, बाजार, किला, घर, शरीर, अंतःपुर, वेश्यालय, पत्ता, राशि, पहले, चरसा, पूर्ण

पुरुष—नर, सूर्य, आत्मा, परमात्मा, विष्णु, पति, पूर्वज, शिव, परम, पुरुष, पारा

पुष्कर—जल, तालाब, प्रसिद्ध तीर्थ, कमल, सूंड का अग्र भाग, तलवार की धार, युद्ध, नशा, संयोग, सूर्य, विष्णु, शिव, नृत्य कला, एक अशुभ योग

प्रकृति—स्वभाव, माया, पंच महाभूत, राज्य के अंग, प्रजा, स्त्री, माता, चराचर संसार, मूल शब्द, आकार प्रकार

प्रग्रह—सूर्य ग्रहण, चन्द्र ग्रहण, रस्सी, किरण, बाहु, बंधन, कैदी, नेता, विष्णु, कुहा

प्रत्यय—विश्वास, शपथ, निश्चय, बुद्धि, ध्यान, शब्द के साथ जुड़ने वाला प्रत्यय, सहायक

प्रसव—जन्म, फल, फूल, सन्तान, उत्पत्ति, गर्भ मुक्ति

प्रसाद—कृपा, स्वच्छता, देवता को भेंट, प्रसन्नता, गुरु का जूठन, काव्य का एक गुण, एक महाकवि (श्री जयशंकर प्रसाद)

प्राज्ञ—चतुर, महामूर्ख

प्रौढ़—वृद्ध, अनुभवी, विवाहित, उग्र, दक्ष, उठाया गया, एक मंत्र, परिपक्व

फल—परिणाम, पेड़ का फल, संतान, ब्याज, लाभ, हानि, तल-

बार की बार, ढाल, त्रिफला, गणित का उत्तर, प्रयोजन, जायफल

३८. फल्गु—क्षुद्र, असत्य, सुन्दर, गया की नदी, बसंत ऋतु

३९. बंद—बंधा हुआ, बाध, गांठ, तनी, एक उर्दू छन्द, सूची, चपड़ी

४०. बक—बगुला, ठग, ढोंगी, कुबेर, एक राक्षस, एक ऋषि, एक वृक्ष

२४१ बल—शक्ति, सेना, शुक, बलराम, सहारा, सिकुड़न, कौआ, अधय का जौ

४२. बलि—प्रसिद्ध दैत्य, बलिदान करना, चढ़ावा, सिकुडन, बवासीर का मस्सा

४३. बात—चर्चा, वादा, घटना, प्रसंग, बहाना, गूढार्थ, डांट फटकार, मतलब, रास्ता, उपाय, वस्तु, आदत, आदेश

४४. बाल—गेहूं का बाल, तरुणी, दूध, नारियल

४५. बिन्दु—शून्य, अनुस्वार चिन्ह, बूंद, भ्रूमध्य, नाटक का एक भाग

४६. बीज—फल फूल का बीज, शुक्र, मूल कारण, कथावस्तु का आदि भाग, बीज गणित, मंत्र रूप

४७. भंग—टूटना, एक नशा, खण्ड, पराजय, संकोच, अस्वीकार, छल, बाधा, भय, मोता

४८. भग—सूर्य, चन्द्रमा, सूर्य, शिवांश, प्रयत्न, यश, धन, यत्न

४९. भव—जन्म, संसार, अग्नि, शिव, कुशल

५०. भानु—सूर्य, किरण, विष्णु, शिव, राजा, स्वामी

२५१. भाव—जन्म, अर्थ, प्रेम, अवस्था, दशा, स्वभाव, श्रद्धाभक्ति, आत्मा, योनि, द्रव्य, इच्छा, प्रकार, मानसम्मान, विश्वास

५२. भूत—अतीत, उत्पन्न, सत्य, पंच महाभूत, भूतकाल, प्राणी, कृष्ण पक्ष, शिव, जगत्, कल्याण

५३. भूति—उत्पत्ति, वैभव, अष्टसिद्धि, राख, हाथी का शृंगार, भुना मांस, विष्णु, शिव

५४. मंगल—शुभ, पृथ्वी पुत्र, मंगलवार, विष्णु, अग्नि

५५. मंडल—गोल घेरा, सूर्य अथवा चन्द्र का बिम्ब, मंडली, सेना-चक्र, जिला, प्रदेश, कुत्ता, कोढ, क्षितिज

५६. मंद—सुस्त, दुर्बल, मूर्ख, शनिवार, यमराज, प्रलय, अभाग्य, गम्भीर

५७. मदन—कामदेव, मैनफल, मौलसिरी, खंजन, भौंरा, प्रेम, धतूरा, मोम

५८. मधु—शहद, शराब, वसंत, चैत्रमास, जल, शक्कर, सोमरस, एक राक्षस, पराग, दूध, मीठा

५९. मात्रा—परिमाण, अक्षर की मात्रा, औषधि की मात्रा, भोजन, इन्द्रिय, धन, कर्णाभूषण, अंग वर्ण के उच्चारण का समय

६०. माधव—विष्णु, वसंत, कृष्ण, वैशाख का महीना, काली मूंग, शराब

२६१. माया—धोखा, जादू, शक्ति, प्रकृति, अविद्या, लीला, सम्पत्ति, ममता, कृपा, लक्ष्मी, दुर्गा, बुद्धि

६२. मान—आदर, नाप-तौल, रूठना, क्रोध, प्रमाण, संगीत में ताल का विराम, मूल्य, अभिमान

६३. मुद्रा—सिक्का, रुपया, मूल्य, नाम की मोहर, मुख के भाव, शंख चक्र आदि के चिन्ह, टाइप, आसन, एक अलंकार

६४. मृग—हरिन, जंगली पशु, कबूतर, खोज, कस्तूरी, एक नक्षत्र, मार्गशीर्ष मास, चन्द्र कलंक, काम शास्त्र के अनुसार पुरुष का एक भेद

६५. यंत्र—मशीन, वीणा, ताबीज, संगीत, नियंत्रण, औजार, बंदूक

६६. यति—योगी, जैन साधु, छन्द में विराम, ब्रह्मचारी, संधि, विधवा, निर्देश, मनोविकार, संयम

६७. यम—यमराज, जुड़वा बच्चे, संयम, शनि, कौआ, दो की संख्या, नियम, निग्रह, वायु

६८. युग—जोड़ी, १२ वर्ष का समय, पीढ़ी, पासे की गोट, चार युग, बैलगाड़ी का जुआ, पुरुष

६९. योग—जोड़ना, उपाय, कौशल, वाहन, व्यवसाय, औषध, दूत, चित्तवृत्ति का निरोध, वैराग्य, हठयोग, छल, विश्वास-घात, ध्यान

७०. रंग—रंगमंच आनन्द, रागा लाल पीला रंग नाच खेल युद्ध क्षेत्र, सभा भवन, ठाटबाट, हालचाल, प्रभाव, प्रेम, तरंग, सौन्दर्य, वर्ण, यौवन

७१. रक्त—लाल रंग, खून, अनुरक्त, तांबा, कुंकुम, लाल चंदन, ईंगुर, विलासी, आंवला, गुल दुपहरी

७२. रति—प्रेम, कामदेव की पत्नी, सौन्दर्य, शृंगार रस का स्थायी-भाव, रहस्य, सौभाग्य

७३. रस—स्वाद, भोजन के रस, काव्य के रस, सार, तरल, शराब उमंग, इच्छा, प्रेम, दूध, अमृत, विष, पारा, गोंद

७४. राज—राज्य, शासन, रहस्य, मकान बनाने वाला, अधिकार, श्रेष्ठ

७५. राम—परशुराम, दशरथ पुत्र, बलराम, प्रेमी, ईश्वर, रमण, बाग, अशोक वृक्ष, वरुण, घोड़ा

७६. रास—शब्द, शोर, रहस्य, यशोगान, नाच, नाटक, शृंखला लगाम, समूह, ठीक, ब्याज, ढेर

७७. रूढ़—उत्पन्न, प्रसिद्ध, आरूढ़, कड़ा, अकेला, गंवार

७८. रोहित—लालरंग, खून, केसर, इन्द्र धनुष, कुंकुम, मछली, मृग, गन्धर्व

७९. लक्ष्मी—श्री, शोभा, गृहलक्ष्मी, दुर्गा, मोती, हरिद्रा, सौभाग्य, सफलता, उन्नति

८०. लघु—छोटा, हलका, तुच्छ, फुर्तीला, कम, तत्वहीन, दुर्बल, ह्रस्व, अस्थिर, प्रिय, तेज

२८१. लीला—खेल, रहस्य, गोदना, नाटक, अभिनय, विहार, सौन्दर्य, शृंगार, नीला

८२. लोक—संसार, मनुष्य, प्रजा, समूह, तीन लोक, १४ लोक, प्रान्त, दिशा, व्यवहार

८३. वन—जंगल, बाग, पानी, उपवन, झरना, पद्म गुच्छ, किरण

८४. वंश—बांस, परिवार, वंशलोचन, ईख, बासुरी, संतान, विष्णु

८५. वर—वरदान, दूल्हा, श्रेष्ठ, इच्छा, चुनाव, भेंट, प्रेमी, हल्दी, चिरोंजी, मौलसिरी

८६. वर्ण—रंग, अक्षर, ब्राह्मणादिवर्ण, जाति, भेद, यश, पोशाक, रूपरंग, आवरण, सोना, केसर

२८७. वर्ष—साल, बरसात, बादल, पृथ्वीखंड (भारतवर्ष)

८८. वसु—धन, मधुर, सोना, रत्न, शुष्क, वृक्ष, तालाब, सूर्य, चन्द्रमा, लगाम, जल, शिव, मणि, कुबेर, मछली

८९. वाम—स्त्री, टेढ़ा, कामदेव, शिव, बाया, वमन, सर्प, दुर्भाग्य, कठोर, सुंदर

९०. विदेह—शरीरहीन, मृत, वैरागी, राजा जनक, कामदेव, बेहोश

९१. विधि—ब्रह्मा, ढंग, उपाय, धर्मग्रंथ, कार्य, भाग्य, आचार व्यवहार

९२. वेला—फूल, समुद्रतट, समय, कटोरा

९३. विष—पानी, जहर, गोंद

९४. विषय—इन्द्रियों के विषय, लक्ष्य, विस्तार, देश, प्रकरण, धार्मिक अनुष्ठान, पति, पदार्थ

९५. शकुन—सगुन, पशु, पक्षी, व्यक्ति, वस्तु

९६. शिखा—चोटी, शिखर, लपट, किरण, नोक, कलंगी

९७. शिव—शंकर, कल्याण, वेद, सेंधा नमक, सुहागा, पारा, धतूरा, सियार, नीलकण्ठ, खूंटा

९८. शुक्ल—श्वेत, चांदी, मक्खन, शुक्ल पक्ष, शिव, विष्णु, ब्राह्मणों की एक उपाधि

९९. श्री—शोभा, सौन्दर्य, संपत्ति, यश, लक्ष्मी, आदर सूचक शब्द, गौरव, संमान, वेश विन्यास

३००. समिति—कमेटी, मिलना, समूह, युद्ध, समानता

३०१. सारंग—मृग, सिंह, हाथी, भौंरा, मोर, हंस, शिव, कामदेव, खंजन, कमल, कपूर, रात्रि, अश्व, पृथ्वी, सोना, समुद्र, कौआ, कबूतर, मेंढक, आकाश, बिजली, सांप, चन्द्रमा, बादल, वृक्ष, वस्त्र, बाल, चंदन, सारंगी, अनेक वर्ण, सुन्दर, कोयल आदि

२. सार—तत्व, मूल, मुख्य, श्रेष्ठ, एक अलंकार, जल, हृदय, पासा, फल, प्रसार

३. सुर—ध्वनि, देवता, सूर्य, पंडित

३०४. सोम—चन्द्रमा, सोमरस, सोमवार, पितर वर्ग, अमृत, वायु, कपूर, जल, स्वर्ग, शिव

३०५. हरि—हरा, यम, वायु, विष्णु, इन्द्र, वानर, मेघ, ब्रह्मा, सूर्य, चन्द्रमा, सिंह, अग्नि, किरण, तोता, मोर, साप, मेढ़क, अश्व, शृंगाल

३०६. हंस—सूर्य, एक पक्षी, आत्मा, ब्रह्मा, शिव, कामदेव, भैंसा, पर्वत, सोना चादी, ईर्ष्या, द्वेष, गुरु, आचार्य

३०७. हेम—स्वर्ण, हिम, धतूरा, जल, पाला, बुध ग्रह

३०८. हस्त—हाथ, सूंड, एक नाप, एक नक्षत्र, हस्ताक्षर, हस्तमुद्रा, समूह (केशहस्त)

समानोच्चरित शब्द

(समान उच्चारण, किन्तु भिन्न अर्थ वाले शब्द)

१. अग=न चलने वाला, पर्वत (हिमालय एक अग है)
   अघ=पाप (अघ मत करो)

२. अनु=पीछे (लक्ष्मण राम के अनुज (अनु+ज=अनुज=छोटे भाई) थे।
   अणु=लघु कण (प्रत्येक अणु मे बडी शक्ति होती है)

३. अंक=संख्या, गोद (हम अंक-गणित पढते है)
   (कृष्ण यशोदा के अंक मे थे)
   अंग=शरीर का भाग (हमारा प्रत्येक अंग पुष्ट होना चाहिए)

४. अज=ब्रह्मा (अज ने सृष्टि बनाई)
   आज=(आज शनिवार है)
   आज्य=घी (यह आज्य पूजा के लिए है)

५. अनल=आग (अनल जल रहा है)
   अनिल=हवा (अनिल शीतल है)

६. अन्न=अनाज (अन्न का उत्पादन बढ़ाना चाहिए)
   अन्य=दूसरा (ईश्वर के सिवा अन्य रक्षक नही है)

७. अध्व=मार्ग (अध्व में देवी का मंदिर है)
   अध्वर=यज्ञ (यहां एक बड़ा अध्वर हो रहा है)

अन्त्र=आंत (अन्त्र रोग से बचना चाहिए)
अन्यत्र=दूसरी जगह (कहीं अन्यत्र जाइये)
अंश=भाग (अठन्नी रुपये का आधा अंश है)
अंस=कन्धा (आचार्यजी के बाम अंस पर यज्ञोपवीत शोभि
अक्ष=जुआ (अक्ष खेलना बुरा है)
अक्षि=नेत्र (मुझे अक्षि-रोग हो गया है)
अगम=जहां जा न सकें, अगम्य (यह पर्वत शिखर अगम है
आगम=वेद, शास्त्र (आप आगम के पण्डित हैं)
अपेक्षा=आवश्यकता (मुझे आपकी सहायता की अपेक्षा है)
उपेक्षा=उदासीनता (वे मेरी बराबर उपेक्षा करते हैं)
अपकार=बुराई (किसी का अपकार न करो)
उपकार=भलाई (सदैव उपकार करो)
अनिष्ट=बुरा (आज का दिन अनिष्ट रहा)
अनिष्ठ=निष्ठा (लगन) से हीन (अनिष्ठ मनुष्य असफल हं
अशक्त=कमजोर (मैं कालेज जाने में अशक्त हूं)
आसक्त=आकर्षित (मैं इस दृश्य पर आसक्त हूं)
अवलम्बन=सहारा
अविलम्ब=शीघ्र
{ हे ईश्वर मुझे अविलम्ब, अपना दीजिए।
अपमान=निरादर (किसी का अपमान मत करो)
उपमान=उपमा (पूर्णचन्द्र के सौन्दर्य का उपमान नहीं)
अविहित=अनुचित, अकृत (आपका कथन यहां अविहित है)
अभिहित=कथित (यह कथा महात्माजी के द्वारा अभिहित
आकाश=आसमान (आकाश में तारे छिटके हुए हैं)
अवकाश=अवसर (मुझे अवकाश नहीं है)
आयु=अवस्था (आपकी आयु बहुत है)
आय=आमदनी (मेरे पिता आय-कर देते हैं)
आयत=विस्तृत (यह प्रदेश आयत है)
आयतन=घर (यह गुरुदेव का आयतन है)
अलि=भौंरा (कमल पर अलि गूंज रहे हैं)
आलि=सखी (श्यामा मेरी आलि है)

आली पंक्ति (दिवाली में दीपों की आली प्रज्वलित होती है)

२३ आदि आरंभ (आज महीने का आदि है)
आधि=मन का दुख (ईश्वर किसी को आधि न दे)
आधी=आधा (आधी रोटी खाये, सुख में रहे)

२४. अर्थ=मतलब, धन (मेरी बात का अर्थ स्पष्ट है)
अर्ध=आधा (यह ठीक ठीक अर्ध भाग है)

२५. अर्घ=मूल्य [यह वस्तु महार्घ (बहुमूल्य) है]
अर्घ्य=पूजा (तुलसी का अर्घ्य आदि से सम्मान करो)

इसी प्रकार के हजारों शब्द है। प्रयोग करने में उनका अन्तर स्पष्ट हो जाता है। नीचे उदाहरणार्थ कुछ शब्द युगल दिए जा रहे है—

१. अरि=शत्रु
अरी=स्त्रीवाचक संबोधन

२. अवि = भेड़
अपि = भी

३. अवर = दूसरा
उपरि = ऊपर

४. ऋचा = मंत्र
अर्चा = पूजा

५. अन्त = समाप्त
अन्त्य = अन्तिम, नीच

६. ऋत = सत्य
ऋतु = मौसम

७. आनन = मुंह
आनक = ढोल
आनन्द = सुख

८. अकार = 'अ' अक्षर
आकार = रूप
आकर = खान

९. आशु = शीघ्र
अश्रु = आंसू

१०. इह = यहां
अहि = सांप

११. इति = समाप्त
ईति = उपद्रव

१२. आयास = परिश्रम
आवास = घर

१३. आहार = भोजन
आभार = कृतज्ञता

१४. आशंका = खतरा
शंका = सन्देह

१५. आवृत = ढका हुआ
आवृत्ति = दुहराना

१६. अग्र = आगे
उग्र = तेज, क्रोधी

१७. अविराम = लगातार
अभिराम = सुन्दर

१८. उदर = पेट
उधर = उस तरफ
उधार = कर्ज

१९ उद्धत = दुष्ट
उद्धृत = लिया गया
उद्यत = तैयार

२०. उन्नत = ऊंचा
उन्नति = तरक्की

२१. उर = हृदय
ऊरु = जांघ

२२. उद्योग = उपाय
उद्योत = प्रकाश

२३ ऐन स्थान
एण हिरन
२४. ओर=तरफ
और = अधिक, दूसरा
२५. ओट = आड़
ओठ = ओष्ठ
२६. ओप = कांति
ओफ = अफसोस
२७. ओज = तेज
ओछ = नीच
२८. कर्ण = कान
करण = साधन
२९. कर = हाथ
करी = हाथी
३०. कोर = किनारा
कौर = ग्रास
३१. कृत = किया गया
कृति = रचना
कृत्य = काम
३२. कान = कर्ण
कानि = मर्यादा
३३. कलपना = विचार
कलपना = दुख पाना
३४. कक्ष = बगल
कक्षा = श्रेणी
कुक्षि = कोख
३५. कटाह = कढ़ाई
कटाक्ष = दृष्टि, व्यंग
३६. कल = बीता या आने वाला दिन
कलि – कलियुग झगड़ा
काल = समय, मृत्यु
३७. कदा = कब
कथा = कहानी
३८. कटक = सोना
कंटक = कांटा
३९. कन्या = युवती
कन्धा = स्कन्ध
४०. कवि = शायर
कपि = वानर
४१. कच = बाल
कुच = स्तन
४२. केसर = सिंह की गर्दन के बाल (इसीलिए उसे केसरी कहते हैं)
केशर = काश्मीरी केशर
४३. कम = थोड़ा
क्रम = सिलसिला
कर्म = काम
काम = वासना
४४. कृष्ण = काला, भगवान
कृष्णा = द्रोपदी
४५. कद्दु = कद्दू
कीट = कीड़ा
कटि = कमर
४६. क्षमा = माफी
क्षपा = रात
क्ष्मा = पृथ्वी
४७. क्षति = हानि
क्षिति = पृथ्वी

[illegible] = [illegible]
[illegible] = [illegible]
[illegible] = [illegible]

४८ क्षिप्र = जल्दी
क्षिप्त = फेंका हुआ, पागल
४९. क्षत्र = क्षत्रिय
छत्र = छाता
५०. क्षण = उत्सव
छन = पल
५१. क्षेम = कुशल
क्षेप = फेंकना
५२. क्षोभ = दुख
छोह = सुख
५३. क्षीर = दूध
क्षीण = कमजोर
५४. खग = पक्षी
खड्ग = तलवार
५५. खेत = मैदान
खेद = दुख
५६. खर = गधा
खुर = पशु के खुर
खरा = तेज
खल = दुष्ट
५७. खली = तेल की खली
खील = धान की खील
५८. खोर = दोष
खौर = माथे का आभूषण
५९. गर्व = घमण्ड
गर्भ = पेट का बच्चा
६०. गृह = घर
ग्रह=नक्षत्र
६१. गर्त = गड्ढा
गर्द = धूल
छन्ना = छाना
छात्र विद्यार्थी
६२ गमन = जाना
गगन = आकाश
६३. गायन = गाना
गायक = गाने वाला
६४. घड़ा = घट
धड़ा = तराजू का धड़ा
६५. घन = बादल
घना = गाढ़ा
६६. चरण = पैर
चारण = भाट
६७. चर्म = चमड़ा
चरम = अन्तिम
६८. चन्द = चन्द्रमा
चन्दा = धन का सहयोग
६९. चित् = चेतन
चित्त=मन
७०. चित्त = सीधा, पीठ के बल
चित्र = तस्वीर
७१. चैन = आराम
चयन = इकट्ठा
७२. चून = आटा
चूर्ण = पिसा हुआ, चूना
७३. चौपट = बरबाद
चौखट = दरवाजेकी चौखट
चौंघट = मूर्ख
७४. छत = मकान की छत
क्षत = घायल
७५. जलज = कमल
जलद = बादल
चिर = दीर्घ
चीर = वस्त्र
चैल = वस्त्र

७६ जल पानी
जाल = फंसाने का जाल
७७. जटा = सिर के बाल
जड़ा = जडा हुआ
७८. जरा = बुढ़ापा, थोड़ा
ज्वर = बुखार
७९. जय = जीत
छय (क्षय) = नाश
८०. जात = उत्पन्न
जाति = गोत्र

८१. झट = शीघ्र
झोंट = बाल
८२. टाग = पैर
टांट = सिर
८३. टलना = जाना
टालना = बहाने करना
८४. ठग = ठगने वाला
डग = कदम
८५. ढंग = रीति
तंग = सकरा
८६. ढोल = ढोलक
डोल = बाल्टी
८७. डमरू = एक बाजा
डामर = तारकोल
डाबर = गन्दा
८८. तरुण = जवान
तरणि = सूर्य
तरणी = नाव
तरुणी = युवती

८९ तरग = लहर
तुरंग = घोड़ा
९०. तुरग = घोड़ा
उरग = सांप
९१. तारीख = तिथि
तारीफ = प्रशंसा
९२. तनय = पुत्र
तनक = थोड़ा
९३. तन = शरीर
तनी = फंदा
तनिक=थोड़ा
९४. तिन=तृण
तीन = संख्या
तून = तरकश
९५. तडाक = फौरन
तड़ाग = तालाब
९६. तटनी = नदी
चटनी = चाटने वाली चीज
९७. तर्क = बहस
तक्र = मट्ठा
९८. ताक = ताकना
ताख = आला
९९. तकदीर = भाग्य
तकरीर = भाषण
तदबीर = उपाय
तस्वीर = चित्र
तस्बीह = माला
तम्बीह = चेतावनी
१००. तग = संकरा
तुंग = ऊंचा

१०१ थल = जमीन
थाला = पेड़ के चारों ओर घेरा

२. थाली = एक बरतन
थूली = दलिया

३. दग्ध = जला हुआ
दुग्ध = दूध

४. देव = देवता
दैव = भाग्य

५. दर्प = घमंड
दर्भ = कुश

६. दिन = दिवस
दीन = गरीब, धर्म
देन = दान

७. द्विप = हाथी
द्वीप = टापू
दीप = दिया

८. दशन = दांत
दशम = दसवां

९. दश = दस
दशा = स्थिति
दिशा = ओर

१०. दक्ष = चतुर
दीक्षा = संस्कार

११. दुष्ट = बुरा
द्विष्ट = शत्रु

१२. दूत = संदेश वाहक
द्यूत = जुवां

१३. दाम = मूल्य
दान = देना
दार = पत्नी

१४ द्वैत – दो
द्वैध = संदेह

१५. दोष = अपराध
दोषा = रात

१६. दूषण = दोष
दूषक = दोष लगाने वाला

१७. दवाई = दवा
दबाई = दबाना

१८. द्वार = दरवाजा
द्वारा = से
द्वारी = द्वारपाल

१९. दारा = स्त्री
दारू = शराब
दारु = लकड़ी

२०. धृत = पकड़ा हुआ
धृति = धैर्य
घृत = घी

२१. धन = सम्पत्ति
धन्य = प्रशंसा के योग्य
धनु = धनुष

२२. धनि = स्त्री
धनी = धनवान
धणी = पति

२३. धर्म = कर्तव्य
घर्म = घाम, पसीना

२४. धार्य = धारण करने योग्य
धैर्य = धीरज

२५. धाय = दाई
धार = धारा

२६ नर्म – कोमल
नम्र — विनीत
२७. नींद = निद्रा
बींद = पति
२८. नद = नदी
नाद = शब्द
२९. नख = नाखून
नग = पर्वत, अंगूठी का नग
नाग = सांप
१३०. नरी = गर्दन
नारी = स्त्री
३१. नय = नीति
नव = नया, नौ
नव्य = नवीन
३२. नर = आदमी
नल = पम्प
३४. नाक = नासिका, स्वर्ग
नाग = सर्प, हाथी
३५. निधन = मृत्यु
निर्धन = दीन
३६. नत = झुका हुआ
नट = भांड
३७. नक्र = मगर
नर्क = नरक
३८. नेक = थोड़ा
नेग = विवाह में निछावर
३९. निकाम = अत्यन्त
निष्काम = कामहीन
निकाय = निवास

१४० नम गीला
नम: = नमस्कार
४१. नाह = नाथ
नेह = प्रेम
४२. पद = पैर, शब्द
पाद = पैर, भाग
४३. परुष = कठोर
पुरुष = मनुष्य
४४. पानी = जल
पाणि = हाथ
४५. पद्य = काव्य
पद्म = कमल
४६. पंक = कीचड़
पिंग = पीला
पंगु = लंगड़ा
४७ प्रसाद = कृपा
प्रासाद = महल
४८. प्राकार = परकोटा
प्रकार = ढंग
४९. प्रसार = फैलाना
प्रचार = फैलना
५०. प्रणाम = नमस्कार
प्रमाण = सबूत
१५१. परिणाम = फल
परिमाण = नापतौल
५२. प्रकृति = स्वभाव
प्रकृत = स्वाभाविक
प्रगति = उन्नति
प्राकृत = एक भाषा
५३. प्रथा = रीति
पृथा = कुन्ती

५४. पिक = कोयल
पीक = पान की पीक

५५. पायस = खीर
पावस = वर्षा

५६. प्रवाह = बहाव
प्रभाव = असर

५७. प्रकट = स्पष्ट, ज्ञात
प्रगट = सामने आना

५८ परिचय = पहचान
परिचर = दास

५९. पतंग = सूर्य
पतंगा = कीडा

६०. प्रणय = प्रेम
परिणय = विवाह

१६१. प्रथम = पहला
प्रमथ = शिव

६२. परिक्षत = क्षत विक्षत
परिक्षित = जाता हुआ

६३. परजन = दूसरे लोग
परिजन = घर के लोग
पुरजन = नगर के लोग

६४. पर्यंक = पलंग
पर्यन्त = सीमा

६५. पशु = जानवर
पाश = बंधन
पास = समीप

६६. पुष्कर = तालाब
पुष्कल = अधिक

६७. फल = आम आदि
फली = सेम आदि

६८. फांस = फांसना
फूस = घास

६९. फिरकी = चक्र
फिरंगी = अंग्रेज

७०. फिर = बाद में
फुर = उड़ना

१७१. बदला = मुकाबिला करना
बदली = छोटा बादल

७२. बलि = बलिदान
बली = शक्तिशाली

७३. बीच = मध्य
बीज = बीजा

७४. बंक = टेढ़ा
बंग = बंगाल

७५. बस = समाप्त, मोटर
वश = अधिकार

७६. बंध = बांधना
बद = पकड़ना

७७. भवन = घर
भुवन = लोक

७८. भट = योद्धा
भट्ट = विद्वान्, भाट

७९. माल = माला
भाला = एक हथियार

८०. मात्र = केवल
मातृ = माता

१८१. मत = राय
मति = बुद्धि
मती = नहीं

८२. मूल = जड़
मूल्य = दाम

८३ मन चित्त
मनु = आदि मनुष्य
८४. मद = शराब, घमंड
मद्य = शराब
मध्य = बीच मे
८५. मनुज = मनुष्य
मनोज = कामदेव
मनोज्ञ = सुन्दर
८६. मंडित = शोभित
मुंडित = मुड़ा हुआ
८७. मित्र = सुहृद
मृत्यु = मौत
८८. मोहत = आकर्षण
मोचन = छुटकारा
८९. मेह = मूत्र, बादल
मोह = प्रेम
९०. मेघ = बादल
मेध = यज्ञ
१९१. मेधा = बुद्धि
मेदा = चर्बी
९२. युक्ति = उपाय
उक्ति = कथन
९३. योग = जोड़
योग्य = ठीक
९४. यम = यमराज
याम = पहर
यामा = रात
९५. वामा = स्त्री
रामा = स्त्री
लामा = बौद्धो के गुरु

९६ वाद बहस
बाद = अन्त में
९७. वसन = वस्त्र
व्यसन = शौक
९८. वेश्या = रंडी
वैश्या = वैश्य की स्त्री
९९. विकल = बैचेन
विमल = निर्मल
विफल = असफल
विरल = कोई, अकेला
२०० विशद = स्पष्ट
विपद = विप देने वाला
२०१. विविध = अनेक
विबुध = देवता
२. वय = आयु
व्यय = खर्च
विय = दो, दो
३. विदुषी = विद्वान् स्त्री
विदेशी = विदेश का
४. विवाद = बहस, झगडा
विषाद = दुख
५. विकार = बुराई
विचार = कल्पना
६. वृन्त = डंठल
वृन्द = समूह
७. विरत = अलग
विरद = यश
८. विपद् = विपत्ति
विपक्ष = कुपथ
९. व्याध = शिकारी
व्याधि = बीमारी

१० वारिद = बादल
वारिधि = समुद्र
२११. वृत = घिरा हुआ, ढका हुआ
वृत्त = गोल, छन्द
वृत्ति = जीविका
१२. विधि = ब्रह्मा
विधु = चन्द्रमा
१३. वसुदेव = कृष्ण के पिता
वासुदेव = कृष्ण
१४. वर्ण = रंग, अक्षर
वरण = पति बनाना
१५. लय = लीन
लव = टुकड़ा
१६. लास = नृत्य
लाश = शव
१७. लत = आदत
लात = पैर
१८. लीक = लकीर
लीख = जुवा
१९. शर = बाण
सर = तालाब
शिर = सिर
शिरा = नस
२०. शूर = वीर
सूर = अन्धा
२२१. शक्तु = सत्तू
शत्रु = वैरी
२२. शव = लाश
शिव = शंकर
शिवि = एक राजा
२३ शिविर छावनी
शिशिर = जाड़ा
२४. शकल = टुकड़ा
सकल = सम्पूर्ण
२५. शक्त = समर्थ
सक्त = लगा हुआ
२६ शबल = रंगबिरंगा
सबल = बलवान्
२७. शम = शान्ति
सम = समान
२८. शंकर = शिव
संकर = मिला हुआ
संकट = कष्ट
२९. शील = सद्‌व्यवहार
सील = [illegible]
३०. शची = इन्द्राणी
सूची = सूई, विषय सूची
२३१. शाला = स्थान
साला = पत्नी का भाई
३२. श्रोत्र = कान
स्रोत = उद्‌गम
श्रुति = वेद
३३. सुत = पुत्र
सूत = सारथी, उत्पन्न
३४. सर्ग = निर्माण
स्वर्ग = देवलोक
३५. सुमन = फूल
सुवन = पुत्र
३६. सुर = देवता
सुरा = शराब

३७ सारंग = इन्द्र हंस मोर आदि
सारंगी = एक बाजा
३८. सर्वदा = हमेशा
सर्वथा = सब तरह से
३९. समान = बराबर
सम्मान = आदर
सामान = सामग्री
४०. सोम = चन्द्रमा
सौम्य = सज्जन
२४१. स्व= अपना
श्व = कुत्ता, आने वाला कल
४२. स्वगत = मन मे
स्वागत = आदर करना
४३. सौर्य = सूर्य का
शौर्य = शूरता
४४. स्वर्ण = सोना
सुवर्ण = सोना
सवर्ण = एक जाति का,
उच्च जाति का

४५ सुधि याद
सुधी – बुद्धिमान
४६. ह्रद = तालाब
हृद = हृदय
४७. हरिण = हरिन
हिरण्य = सोना
४८. हाल = दशा, बड़ा कमरा
हाला = शराब

४९. हेम = सोना
होम = हवन
५०. हास = हंसी
हास्य = हंसी, एक रस
ह्रास = हानि
२५१. हितू = हितकारी

हेतु = कारण
५२. हत = मरा हुआ
हित = उपकार

विलोम शब्द (विरुद्धार्थक शब्द)— परस्पर विरोधी अर्थ रखने वाले शब्द 'विलोम शब्द' कहलाते है। नीचे इस प्रकार के कुछ युग्मों को उदाहरणार्थ प्रस्तुत किया जा रहा है —

अथ	इति	अनुराग	विराग
आदि	अन्त	अनुरक्त	विरक्त
अगम	सुगम	अनुकूल	प्रतिकूल
अरि	मित्र	अमृत	विष
अर्थ	अनर्थ	अंधेरा	उजेला
अणु	महान्	आकाश	पाताल
अधर	ऊपर	अति	अल्प
अपकार	उपकार	अधिक	न्यून

अपमान	सम्मान
आदान	प्रदान
आर्य	अनार्य
अनुलोम	विलोम
आचार	अनाचार
आशा	निराशा
अपना	पराया
अम्ल	मधुर
अधम	उत्तम
अच्छा	बुरा
अग्रज	अनुज
आन्तरिक	बाह्य
आय	व्यय
अल्प	महान्
आदिम	अन्तिम
अन्तरंग	बहिरंग
अन्दर	बाहर
आकर्षण	विकर्षण
आस्तिक	नास्तिक
आपत्ति	संपत्ति
आवश्यक	अनावश्यक
इधर	उधर
इहलोक	परलोक
इच्छा	अनिच्छा
इष्ट	अनिष्ट
ईश्वर	अनीश्वर
उदय	अस्त
उपकार	अपकार
ऊँचा	नीचा
उचित	अनुचित

उपेक्षा	अपेक्षा
उत्थान	पतन
उत्तीर्ण	अनुत्तीर्ण
उत्कर्ष	अपकर्ष
उग्र	सरल
उष्ण	शीतल
उऋण	ऋणी
उदार	अनुदार
उद्दण्ड	नम्र
उत्कृष्ट	निकृष्ट
ऋणी	अनृणी
ऋत	अनृत
ऋजु	टेढा
एक	अनेक
ऐश्वर्य	अनैश्वर्य
एकान्त	अनेकान्त
एकत्र	अनेकत्र, सर्वत्र
एकार्थक	अनेकार्थक
एकदा	सर्वदा
ऐक्य	अनैक्य
कृष्ण	शुक्ल
कष्ट	सुख
कटु	मधुर
काला	गोरा
कृत्रिम	स्वाभाविक
क्रेता	विक्रेता
क्रय	विक्रय
कृतज्ञ	अकृतज्ञ, कृतघ्न
कठोर	नम्र
क्षमा	दण्ड

कोमल	कठोर
कुपुरुष	सुपुरुष
कुदिन	सुदिन
कुपुत्र	सुपुत्र
कपूत	सपूत
कनिष्ठ	ज्येष्ठ
कुपथ	सुपथ
कीर्ति	अपकीर्ति
क्रोध	क्षमा
खट्टा	मीठा
खरा	खोटा
खण्ड	पूर्ण
खल	सज्जन
खास	आम
खाद्य	अखाद्य
खर	सरल
खग	पाताली
खबरदार	बेखबर
गुण	अवगुण, दोष
गृहस्थ	सन्यासी
गुरू	लघु, शिष्य
गरम	ठण्डा
गत	आगत
गमन	आगमन
गेय	अगेय
गीला	सूखा
गौण	मुख्य
गाना	रोना
गर्वित	अगर्वित
घात	प्रतिघात, रक्षा

घाम	छाया
घृणा	प्रेम
घर	जंगल
घर वाला	बेघर
घटिया	बढ़िया
घना	विरल, पतला
घाटा	लाभ
चतुर	मूर्ख
चालाक	सीधा
चर	अचर
चिन्तित	निश्चिन्त
चेतन	जड़
चंचल	अचंचल, स्थिर
चुप्पी	शोर
चोर	शाह
चूक	अचूक
चटपट	धीरे धीरे
चीज	नाचीज
च्युत	अच्युत
चरम	प्रथम
छली	विश्वासी
छूत	अछूत
छिन्न	जुड़ा हुआ, अविच्छिन्न
छत	फर्श
जय	पराजय
जीवन	मरण
जीत	हार
जन्म	मृत्यु
जंगम	स्थावर

पंडित	मूर्ख	मांगना	जमना
पुराना	नया, नवीन	मान	अपमान
पूर्व	अपूर्व	मोही	निर्मोही
पुरुष	स्त्री	मिथ्या	सत्य
पूर्णिमा	अमावस	मित्र	शत्रु
प्रथम	अंतिम	मनुष्य	देव, पशु, राक्षस
परकीय	स्वकीय	मरण	जीवन
पराधीन	स्वाधीन	मारना	बचाना
परजन	स्वजन	महीन	मोटा
प्रतिष्ठा	अप्रतिष्ठा	मस्त	चिन्तित
फुरती	सुस्ती	ममता	घृणा
फुहार	मूसलाधार	यथा	तथा
बली, बलवान्	कमजोर	यत्र	तत्र
बंधन	मोक्ष	यहां	वहां
बहुत	थोडा	यद्यपि	तथापि
बंटवारा	शामिलात	यश	अपयश
बडा	छोटा	योग्य	अयोग्य
बैरी	मित्र	युक्ति	अयुक्ति
बद्ध	मुक्त	रोगी	निरोगी
बारंबार	एक बार	रोष	प्रेम
भारी	हलका	राग	द्वेष
भूत	वर्तमान या भविष्य	राजा	रंक
भलाई	बुराई	रति	घृणा
भक्ष्य	अभक्ष्य	रंच	बहुत
भोग	त्याग	रुष्ट	प्रसन्न
भय	प्रेम, अभय	रात	दिन
भाग्यशाली	अभागा, दुर्भाग्य-	रम्य	भयानक
	शाली	लाभ	हानि
भीड़	सुनसान	लोभी	शान्त
भीतर	बाहर	लंपट	सदाचारी

लोलुप	त्यागी	सजीव	निर्जीव
लघु	दीर्घ	संदेह	विश्वास
लम्बा	चौड़ा	सत्य	असत्य
ललित	कुरूप	सौभाग्य	दुर्भाग्य
विरोध	समर्थन	सत्संग	कुसंग
वैर	मित्रता	सभ्य	असभ्य
वाचाल	मौन, मूक	समर्थ	असमर्थ
विष	अमृत	सायंकाल	प्रातःकाल
विधवा	सधवा, सुहागिन	साधारण	असाधारण
विपत्ति	संपत्ति	सुर	असुर
विधि	निषेध	सृष्टि	प्रलय
वियोग	संयोग	स्वस्थ	अस्वस्थ
व्यर्थ	सार्थक	सस्ता	महंगा
विमाता	माता	सन्धि	विग्रह
विश्वासी	विश्वासघाती,	हानि	लाभ
	अविश्वासी	हर्ष	शोक
विद्या	अविद्या	हार	जीत
विशाल	लघु	हिंसा	अहिंसा
विद्वान्	मूर्ख	हित	अहित
विपक्षी	पक्षपाती	होनी	अनहोनी
शूर	कायर	हलका	भारी
शांति	अशान्ति	ह्रस्व	दीर्घ
शुभ	अशुभ	ह्रास	विकास
श्रद्धा	घृणा	हेय	श्रेय
श्वेत	कृष्ण	होश में	बेहोश
स्मृति	विस्मृति		

शब्द

संस्कृत के बहुत से कवि संख्या बतलाने के लिए कुछ ऐसे विशेष वर्गों के नाम का प्रयोग करते हैं, जो अपनी संख्या के लिए प्रसिद्ध है। वहा उन वर्गों का अर्थ गौण होता है और संख्या का अर्थ सदैव प्रधान रहता है। यथा

शून्य = आकाश, संसार, वन्ध्या-पुत्र, खरविषाण आदि।

यहा जान लेना चाहिए कि आकाश शून्य है, ससार मिथ्या है, अतः शून्य है, वन्ध्या (बाझ) के पुत्र नही होता है और खर (गधा) के विषाण (सीग) नही होते है, इसलिए वे सब शून्य है। उपर्युक्त सभी प्रयोगो मे आकाश आदि का यदि कोई अर्थ है, तो शून्य। इसी प्रकार नीचे के उदाहरणों में भी समझना चाहिए।

एक— ईश्वर, सूर्य, चन्द्र, मुंह, शिर, जीभ, नाक, कण्ठ।

दो— पक्ष (कृष्ण और शुक्ल) २ अश्विनीकुमार (देवताओं के वैद्य) २ आख, २ कान, २ हाथ, २ पैर, २ आत्मा (जीवात्मा, परमात्मा)।

तीन— ३ शिव के नेत्र
- ३ राम (राम, परशुराम, बलराम)।
- ३ गुण (सत, रज, तम)।
- ३ लोक (आकाश, पृथ्वी, पाताल)।
- ३ अग्नि (बाडवाग्नि, दावाग्नि, जठराग्नि)।
- ३ देव (ब्रह्मा, विष्णु, महेश)।
- ३ अवस्था (बचपन, जवानी, बुढापा)
- ३ ताप (दैहिक, दैविक, भौतिक)
- ३ कारण (उपादान, निमित्त, साधारण)
- ३ त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आवला)
- ३ त्रिकुटा (सोठ, मिर्च, पीपर)
- ३ काल (भूत, वर्तमान, भविष्य)

चार— ४ ब्रह्मा के ४ मुख
- ४ युग (सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग)
- ४ वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र)
- ४ आश्रम (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास)।
- ४ वेद (ऋक्, यजु, साम, अथर्व)।
- ४ उपवेद (आयुर्वेद, धनुर्वेद, गन्धर्ववेद, स्थापत्यवेद)।
- ४ नीति (साम, दाम, दण्ड, भेद)।
- ४ जीव (अण्डज, पिंडज, स्वेदज, उद्भिज्ज)।

४ सेना के अंग (हाथी घोड़ा रथ पैदल)

४ पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष)।

४ अवस्था (जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरीय)।

४ विष्णु चिन्ह (शंख, चक्र, गदा, पद्म)।

४ दशरथ पुत्र (राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न)।

४ धाम (बदरिकाश्रम, पुरी, रामेश्वरम्, द्वारिका)।

४ दिशा (उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम)।

पाँच— ५ पत्रा (पचांग) के अंग (तिथि, वार, योग, नक्षत्र, करण)।

५ वृक्ष के अंग (जड़, छाल, पत्ता, फूल, फल)।

५ मकार (मद्य, मांस, मत्स्य मुद्रा, मैथुन)।

५ कामदेव के बाण (संमोहन, उन्माद, स्तंभन, शोषण, तापन)।

५ शिव के मुख

५ स्वर्ग के वृक्ष (मंदार, पारिजात, संतान, कल्पवृक्ष, हरिचंदन)।

५ पिता (पिता, उपनयन कराने वाला, ससुर, अन्नदाता, भयत्राता)।

५ ज्ञानेन्द्रिय (आँख, नाक, कान जीभ, त्वचा)।

५ कर्मेन्द्रिय (हाथ, पैर, मुंह, मूत्रेन्द्रिय, मलेन्द्रिय)।

५ वायु (प्राण, अपान, व्यान, समान, उदान)।

५ कन्या (अहल्या, द्रौपदी, तारा, कुन्ती, मन्दोदरी)।

५ तत्व (पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश)।

५ कोष (अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, आनन्दमय)।

५ गुण (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध)।

छह— ६ षट्पद (भ्रमर) के पैर

६ षडानन के मुंह

६ भोजन के रस (मधुर, अम्ल, लवण, कटु, कषाय, तिक्त)।

६ दर्शन (वेदान्त, योग, न्याय सांख्य, मीमांसा, वैशेषिक)।

६ ऋतु (बसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, शिशिर, हेमन्त)।

६ वेदांग (शिक्षा, कल्प, निरुक्त, छंद ज्योतिष, व्याकरण)।

६ ब्राह्मण कर्म (पठन, पाठन, यजन, याजन, दान, प्रतिग्रहण)।

६ तान्त्रिक कम (मारण उच्चाटन, स्तभन, वशीकरण शाति विद्वेषण) ।

६ योगिक चक्र (मूलाधार, अधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा) ।

६ देह के अंग (शिर, धड, दो हाथ, दो पैर) ।

६ राजा के उपाय (संधि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव, संश्रय) ।

६ राग (भैरव, मलार, श्री, हिंडोल, मालकोस, दीपक) ।

६ विकार (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर) ।

सात— ७ शरीर के तत्व (रक्त, मांस, मेदा, वसा, अस्थि, मज्जा, शुक्र) ।

७ राज्य के अंग (राजा, मंत्री, मित्र, कोष, राष्ट्र, दुर्ग, सेना)।

७ ऋषि (अत्रि, वसिष्ठ, गौतम, भरद्वाज, विश्वामित्र, कश्यप, यमदग्नि) ।

७ स्वर (षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पचम, धैवत, निषाद) ।

संक्षेप में, सा, रे, ग, म, प, ध, नी) ।

७ ऊपर के लोक (भू, भुव, स्वः, मह, जन, तप, सत्य) ।

७ नीचे के लोक (अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, रसातल, पाताल) ।

७ दिन (इतवार, सोमवार, मंगलवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार, शनिवार) ।

७ रंग (लाल, हरा, पीला, नीला, नारंगी, बैंगनी, काला) ।

७ पुरी (अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, कांची, अवंती, द्वारिका

आठ— ८ सिद्धिया (अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, वशित्व, ईशत्व) ।

८ मंत्री (प्रधान, अमात्य, सचिव, मंत्री, वैद्य, धर्माध्यक्ष, न्यायपाल, सेनापति) ।

८ शुभ (ब्राह्मण, गाय, सोना, अग्नि, घी, सूर्य, जल, राजा) ।

८ अष्ट छाप के कवि (सूरदास, नन्ददास कृष्णदास परमानन्ददास, चतुर्भुजदास, कुंभनदास, छीतस्वामी, गोविंदस्वामी)।

८ धातु (सोना, चांदी, तांबा, रांगा, जस्ता, सीसा, लोहा, पारा)।

नौ— ९ रस (शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत, शांत)।

९ निधि (पद्म, महापद्म, शंख, कुन्द, मुकुन्द, कच्छप, मकर, नील, खर्व)।

९ भक्ति (श्रवण, स्मरण, कीर्तन, चरण सेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य, आत्म-निवेदन)।

९ ग्रह (सूर्य, सोम, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु, केतु)।

९ संख्या (१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९)।

९ रत्न (माणिक, नीलम, मूंगा, पन्ना, पद्मराग, हीरा, गोमेद, वैदूर्य, मोती)।

९ विक्रम की सभा के रत्न (कालिदास, वररुचि, अमरसिंह, वेताल, शंकुक, धन्वन्तरि, वराहमिहिर, क्षपणक, घटखर्पर)।

दस— १० अवतार (मत्स्य, कूर्म, वाराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि)।

१० दूध देने वाले प्राणी (गाय, भैंस, भेड़, बकरी, ऊंटनी, घोड़ी, गधी, हरिणी, हथिनी, स्त्री)।

१० दिशाएं (पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, आग्नेय, नैऋत्य, ईशान, वायव्य, ऊर्ध्व, अधः)।

ग्यारह—११ रुद्र।

११ इन्द्रियां (५ कर्मेन्द्रिय, ५ ज्ञानेन्द्रिय और ११वां मन)।

बारह—१२ राशियां (मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक धन मकर कुंभ मीन

१२ मास (चैत्र वैशाख ज्येष्ठ आषाढ श्रावण भाद्रपद आश्विन, कार्तिक, आग्रहायण, पौष, माघ, फाल्गुन)।

१२—आदित्य ।

१२—प्रयोग (वशीकरण, आकर्षण, मोचन, कामपूरण, वाक्प्रसारण, स्तंभन, मोहन, उच्चाटन, कीलन, विद्वेषण, कामनाशन, मारण)।

१२ विष्णु मंत्र के अक्षर (ॐ नमो भगवते वासु देवाय)।

चौदह—१४ समुद्र से उत्पन्न रत्न (लक्ष्मी, रम्भा, विष, वारुणी, अमृत, शंख, ऐरावत, (हाथी), धन्वन्तरि, कामधेनु, कल्पवृक्ष, चन्द्रमा, उच्चैःश्रवा (घोड़ा), मणि, धनुष)।

१४ लोक (उपर्युक्त ऊपर के सात लोक तथा नीचे के सात लोक)

१४ विद्या (उपर्युक्त ४ वेद, ४ उपवेद और ६ वेदांग)

सोलह—१६ संस्कार (गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्त, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूडाकर्म, कर्णवेध, उपनयन, केशान्त, विद्यारम्भ, वेदारम्भ, समावर्तन, विवाह, अन्त्येष्टि)।

१६—श्रृंगार (उबटन, स्नान, वस्त्रधारण, केशप्रसाधन, अंजन, सिंदूर, महावर, तिलक, गाल या ठोढ़ी पर तिल बनाना, मेहदी, इत्र, आभूषण, पुष्पहार, पान खाना, लाली और काजल लगाना)।

१६—चन्द्रकलाएं ।

१६—दान ।

१६—देवियां ।

१६—गण ।

अठारह १८ राज की सपत्तिया (राजा, मत्री, पुरोहित युवराज द्वारपाल, अन्तर्वेशिक, काराध्यक्ष, द्रव्य संचयकारी, प्रदेष्टा कृत्याकृत्य नियोजक, नगराध्यक्ष, कार्यनिर्माण-कारी, धर्माध्यक्ष, सभाध्यक्ष, दंडपाल, दुर्गपाल, वनपाल, राष्ट्रान्तपाल)।

१८ पुराण (विष्णु, पद्म, ब्रह्म, शिव, भागवत, नारद मार्कण्डेय, अग्नि, ब्रह्मवैवर्त, लिंग, वराह, स्कंद, वामन, कूर्म, मत्स्य, गरुड, ब्रह्माण्ड, भविष्य)।

बीस— २० अंगुलियां ।

बत्तीस— ३२ दांत ।

छत्तीस—३६ गुण ।

उनचास—४९ मरुत ।

सौ— १०० कमल-दल ।

सहस्त्र—१००० इन्द्र के नेत्र ।

इन संख्याओं के प्रयोग में दो विशेषताएं दिखलाई पड़ती हैं। एक तो जैसा कहा जा चुका है कि संख्या के स्थान पर उसके वाचक वर्ण का उल्लेख होता है, और दूसरे यह क्रम सदैव उलटा चलता है। जैसे यदि १९६२ लिखना होगा, तो २६९१ ही लिखा जायगा और उन संख्याओं के लिए उसी प्रकार क्रम से 'नेत्र दर्शन निधि सूर्य' लिखा जायगा, तात्पर्य यह है कि नेत्र २, दर्शन ६, निधि ९ और सूर्य १ पढा जायगा और अन्त में उलटा करके १९६२ माना जायगा ।

इसी प्रकार ३४५ के लिए ५४३=वायुवर्ण गुण=३४५

,, ,, १०६७ के लिए ७६०१=ऋषि ऋतु आकाश सूर्य=१०६७

,, ,, ८२५९ के लिए ९५२८=निधि कन्या, हस्त, सिद्धि। आदि आदि ।

शब्द-शक्ति

इस प्रकरण मे एकार्थक, समानार्थक, अनेकार्थक, समानोच्चरित (भिन्नार्थक) विलोम और संख्यावाचक शब्दो और उनके अर्थों के अध्ययन से हमे ज्ञात हो गया कि शब्द और अर्थ का वास्तव मे एक विशिष्ट सम्बन्ध है। शब्द की अनेक शक्तियो के प्रभाव से ही अनेक अर्थों का ग्रहण किया जाता है। कही हम सीधा सीधा अर्थ लेते है, कहीं कुछ उससे मिलता जुलता और कहीं कहीं तो हम बिल्कुल नया अर्थ ले लेते हैं, जैसे संख्यावाचक शब्दो मे। इस प्रकार ये अर्थ ३ प्रकार के होते है—

१—अभिधेय
२—लक्ष्य
३—व्यग्य

इसी आधार पर शब्द की उन शक्तियो के भी स्वत. ३ भेद मान लिए गए हैं, जिनसे उपर्युक्त अर्थों का प्रकटीकरण होता है—

१—अभिधा
२—लक्षणा
३—व्यंजना

अभिधा शक्ति

शब्द की जिस शक्ति से उसका सीधा सीधा अर्थ प्रगट होता है, उसे अभिधा शक्ति कहते है और उस अर्थ को 'अभिधेय अर्थ' कहते हैं।

जैसे, जल का सीधा अर्थ है पानी।
अग्नि का सीधा अर्थ है आग।
आकाश का सीधा अर्थ है आसमान।

अत: जल:, अग्नि और आकाश के कमशः पानी, आग और आसमान अर्थ, यहां 'अभिधेय अर्थ' हुए, क्योकि जल आदि शब्दों की 'अभिधा शक्ति' से उनका स्पष्टीकरण हुआ।

लक्षणा शक्ति

जहां अभिधा शक्ति वाला अर्थ असंगत अथवा विरोधी जान पड़ता है, वहां शब्द की जिस शक्ति से उसका कोई संगत और मिलता जुलता अर्थ ग्रहण किया जाता है, उसको 'लक्षणा शक्ति' कहते हैं और उस अर्थ को 'लक्ष्य अर्थ' कहते हैं। जैसे—

१. शेर बोल रहा है।

यहाँ यदि वास्तव में कोई शेर बोल रहा है, तब तो 'अभिधा शक्ति' और 'अभिधेय अर्थ' होगा, लेकिन यदि कोई 'वीर आदमी' बोल रहा है और 'शेर' शब्द से उस 'वीर आदमी' का ज्ञान होता है तो यह ज्ञान 'लक्षणा शक्ति' से ही होगा और वह नया अर्थ 'लक्ष्य अर्थ' कहलावेगा। इसी प्रकार नीचे के उदाहरणों में भी 'लक्ष्य अर्थ' समझ लेना चाहिए।

२. यह लड़का 'गधा' है।
लक्ष्यार्थ—यह लड़का मूर्ख है।

३. लाठियां चल गईं।
लक्ष्यार्थ—लाठी वाले आदमी चल पड़े।

४. जयपुर मेरे पैरों नीचे है।
लक्ष्यार्थ—जयपुर मेरा घूमा हुआ है।

५. मैंने अजमेर की गली गली छान डाली।
लक्ष्यार्थ—मैंने अजमेर अच्छी तरह देख लिया है।

६. राजस्थान वीर है।
लक्ष्यार्थ—राजस्थानी वीर हैं।

७. चोटी और दाढ़ी मिल गई।
लक्ष्यार्थ—हिन्दुओं और मुसलमानों में मेल हो गया।

८. कुर्सी की महिमा है।
लक्ष्यार्थ—कुर्सी पर बैठे हुए आदमी (चेयरमैन) की महिमा है।

९. उन दोनों की दांत-काटी रोटी है।
लक्ष्यार्थ—उन दोनों की बड़ी दोस्ती है।

१०. मेरा मकान गंगा पर है।
लक्ष्यार्थ—मेरा मकान गंगा के बिल्कुल पास है।

व्यंजना शक्ति

जहां हम शब्द के 'अभिधेय अर्थ' को ठीक होने पर भी, उसे न ग्रहण करके, किसी दूसरे नये अर्थ को ग्रहण करते हैं, वहां 'व्यंजना शक्ति' का चमत्कार होता है और उस अर्थ को 'व्यंग अर्थ' कहा जाता है। यथा

१. शाम हो गई।

इसका सीधा अर्थ है कि शाम का समय हो गया है, लेकिन यह हमारा अभीष्ट नहीं है, क्योंकि हम संभवतः यह कहना चाहते है कि

१. सूर्य अस्त हो रहा है। अथवा
२. पढना बन्द करो। अथवा
३. दिया जलाओ। अथवा
४. घूमने चलो। अथवा
५. सिनेमा चलना है। अथवा
६. एक मीटिंग में जाना है। अथवा
७. भोजन का प्रबन्ध करो। अथवा
८. राम आने वाला था, नहीं आया। आदि आदि

इसी प्रकार अनेक अर्थ ग्रहण किए जा सकते है। अर्थों की यह अनेकता कहने वाले (वक्ता) सुनने वाले (श्रोता) और प्रसंग आदि पर निर्भर होती है। जब जैसी स्थिति हो, तब वैसा अर्थ हो सकता है। ये सभी अर्थ 'व्यंग अर्थ' कहलाते हैं और शब्द की 'व्यंजना शक्ति' से स्पष्ट होते हैं। इसी प्रकार नीचे के उदाहरणों में समझना चाहिए।

१. घण्टा बज गया।

व्यंग्यार्थक—१. पीरियड समाप्त हो गया। अथवा
२. बाहर चलो। अथवा
३. अब हिन्दी की कक्षा हो चुकी। अथवा
४. अब अंग्रेजी होगी। आदि आदि

२. बड़ा सुन्दर दिन है।

१. घूमने चलो। अथवा
२. पिकनिक करो। अथवा
३. आज जेब गर्म है। आदि आदि

३ भगवान की भक्ति करो।

व्यंग्यार्थ— तभी पास होंगे। अथवा
तभी मुकदमा जीतोगे। अथवा
तभी नौकरी मिलेगी। अथवा
तभी संकटों में शान्ति मिलेगी। आदि आदि

४. भारत स्वतन्त्र हो गया।

व्यंग्यार्थ—१. अब हम सभी स्वतन्त्र हैं। अथवा
२. अंग्रेजों का अत्याचार समाप्त हो गया। अथवा
३. नई योजनाओं से उन्नति करो। अथवा
४. फिर भी दरिद्रता दूर नहीं हुई। अथवा

५. राजस्थान वीर है।

१. यहां के लोग कायर नहीं है। अथवा
२. अवसर आने पर राजस्थानी लोग मरना जानते है। अथवा
३. राजस्थानियों ने अनेक संकटों को हंसते-हंसते सहा है। अथवा
४. राजस्थान सभी राज्यों मे श्रेष्ठ और अग्रणी बन कर रहेगा। आदि आदि

उपर्युक्त लक्षणा और व्यंजना शक्तियों के हजारों भेद किए जाते हैं, क्योंकि उनके 'लक्ष्य और व्यंग्य' अर्थों मे बड़ा ही सूक्ष्म अन्तर होता है। उच्च साहित्य के विद्यार्थियों को उसकी जानकारी अत्यन्त आवश्यक है। विशेषकर काव्य में इन शक्तियों का चमत्कार दर्शनीय होता है।

वाक्य-विचार

वाक्य—वक्ता के आशय को पूर्णतया स्पष्ट करने वाले पद या पद-समूह को 'वाक्य' कहते है। जैसे:—

एक पद का वाक्य—जाओ, पढो, बैठो आदि।

दो पद का वाक्य—तुम जाओ, वह आया आदि।

तीन पद का वाक्य तुम यहा बैठो, पानी नहीं बरसेगा आदि।

यह पहले ही कहा जा चुका है कि वक्ता चाहे एक शब्द बोले या अनेक, वह (शब्द) आशयपूर्ण होता है, इसीलिए वह वाक्य कहलाता है। इस सम्बन्ध मे बच्चे का उदाहरण दिया जा चुका है कि यदि वह केवल 'पानी' का ही उच्चारण करता है, तो भी उसके अभिभावक उसका आशय समझ लेते हैं। यह भी कहा जा चुका है कि शब्द तब तक शब्द ही रहता है, जब तक उसका वाक्य मे प्रयोग न हो और प्रयोग में आते ही वह 'पद' कहलाने लगता है।

वाक्य-निर्माण के लिए पदो मे ३ अनिवार्य गुण माने गए हैं, (१) आकांक्षा, (२) योग्यता और (३) सन्निधि।

आकांक्षा—आकांक्षा का अभिप्राय है कि वे पद सार्थक और साभिप्राय हों, साथ ही उनके द्वारा कुछ कहने की इच्छा भी स्पष्ट हो। जैसे एक वाक्य है 'घोडा मगर नगर जलकर यूनिवर्सिटी फंस लडका अमेरिका आलू उड़ जाते हो।'

इस वाक्य मे सभी पद सार्थक और साभिप्राय तो हैं, किन्तु वक्ता का कोई आशय स्पष्ट नही हो रहा है। ऐसी दशा मे ही वक्ता को 'पागल' कह दिया जाता है। वाक्य-निर्माण के लिए 'आकाक्षा' की अनिवार्यता इस प्रकार स्पष्ट हो जाती है।

योग्यता—वाक्य के लिए प्रयुक्त पदों मे एक 'योग्यता' भी होनी चाहिए। अयोग्य पदों मे अयोग्य अर्थ निकलेगा और उस वाक्य पर (उसके बोलने वाले पर भी) हंसी आवेगी। जैसे एक वाक्य है 'मैं पानी मे जला रहा हूं।' यहा स्पष्ट है कि पानी मे जलाने की योग्यता नहीं है। इसी प्रकार यदि कोई कहे

'वह आग से सींच रहा है। या 'पहाड़ सो रहा है' या 'गधा कुर्सी पर बैठकर भाषण दे रहा है। आदि आदि, तो इन वाक्यों में योग्यता के अभाव से कोई भी अर्थ स्पष्ट नहीं होगा और ये वाक्य किसी के पागलपन के उदाहरण बन जायेंगे। इसलिए यहाँ 'योग्यता' भी एक अनिवार्य गुण है।

सन्निधि—'सन्निधि' से तात्पर्य है कि जिन पदों से वाक्य का निर्माण अभीष्ट हो, उनका उच्चारण एक क्रम से एक ही समय में किया जावे। अन्यथा यदि कोई प्रातःकाल तो 'मैं' कहे, एक घंटे बाद 'दो' कहे, शाम को 'रोटी' कहे और रात में 'खाऊंगा' कहे, तो आकांक्षा और योग्यता के होते हुए भी उपर्युक्त वाक्य (मैं दो रोटी खाऊंगा) का कोई अर्थ नहीं निकलेगा। इसलिए वाक्य की सार्थकता के लिए यह आवश्यक है कि पदों का उच्चारण एक निश्चित क्रम से और एक ही समय में किया जावे।

वाक्य के अङ्ग

प्रत्येक सार्थक वाक्य मे, एक कर्ता और एक क्रिया का होना अनिवार्य है। 'जाओ' या 'पढ़ो', या 'बैठो' आदि आज्ञासूचक एक शब्द के वाक्यों मे भी कर्ता ('तुम' शब्द) होता है, किन्तु वह लुप्त रहता है। इस प्रकार प्रत्येक वाक्य के २ भाग होते हैं (१) कर्ता और (२) क्रिया। इन दोनों के अतिरिक्त वाक्य के विस्तार में, और जो कुछ भी होता है, वह कर्ता और क्रिया से किसी न किसी रूप में सम्बन्धित रहता है। वहाँ कर्ता की सर्वत्र प्रधानता होती है, और शेष विस्तार गौण होता है। इस दृष्टिकोण से वाक्य के २ अंग माने जाते हैं (१) उद्देश्य और (२) विधेय।

उद्देश्य—प्रत्येक वाक्य में जिसके सम्बन्ध मे कुछ कहा जाता है उसे 'उद्देश्य' कहते हैं। ध्यान रहे कि इस प्रकार कर्ता ही सदैव 'उद्देश्य' कहलाता है।

विधेय—उद्देश्य अथवा कर्ता के सम्बन्ध में, जो कुछ भी कहा जाय वह सब 'विधेय' होता है।

इस प्रकार प्रत्येक वाक्य मे कर्ता तो 'उद्देश्य' और शेष सारा विस्तार विधेय होता है। यथा

१. 'मैं विद्यालय जा रहा हूं।'

यहाँ 'मैं' उद्देश्य और 'विद्यालय जा रहा हूं' विधेय है।

२. 'राम और श्याम पुस्तक पढ़ रहे हैं।'
   यहां 'राम और श्याम' उद्देश्य तथा 'पुस्तक पढ़ रहे हैं' विधेय है।

३. 'अरुण और आशा सगे भाई बहिन है।'
   यहा 'अरुण और आशा' उद्देश्य तथा 'सगे भाई बहिन हैं' विधेय है।

इसी प्रकार सभी वाक्यो मे 'उद्देश्य' और 'विधेय' को पहचान लेना चाहिए।

वाक्यों के भेद

यह कहा जा चुका है कि प्रत्येक वाक्य मे कम से कम एक कर्ता और एक क्रिया का होना अत्यन्त आवश्यक है, किन्तु बहुत से वाक्य ऐसे होते हैं जो कई वाक्यों के मेल से बनते हैं। उन वाक्यो मे कुछ ऐसे भी हो सकते हैं जो प्रथम वाक्य के आश्रित हों और कुछ ऐसे भी हो सकते हैं जो उसी की तरह पूर्ण स्वतन्त्र हों। इस दृष्टिकोण से वाक्यों के ३ भेद किए जाते है (१) साधारण वाक्य (२) मिश्र वाक्य और (३) संयुक्त वाक्य।

साधारण वाक्य

जिस वाक्य मे एक ही कर्ता और एक ही क्रिया हो, वह 'साधारण वाक्य' कहलाता है। जहां दो कर्ता और एक क्रिया अथवा एक कर्ता और दो क्रियायें होती हैं, वहां 'साधारण वाक्य' नहीं किन्तु 'सयुक्त वाक्य' होता है, क्योंकि वहां दो ऐसे स्वतन्त्र वाक्य होते है, जिनमें से एक के कर्ता अथवा क्रिया का लोप हो जाता है। यथा

१. सुषमा और सुनन्दा पुस्तक पढ रही हैं।

इस एक वाक्य मे दो वाक्य इस प्रकार जुड़े हुए है—

१. सुषमा पुस्तक पढ रही है।
२. सुनन्दा पुस्तक पढ़ रही है।

यहा क्रिया का दो बार प्रयोग न करके 'और' की सहायता से दोनो कर्ताओं को जोड़ दिया गया है। इस प्रकार एक क्रिया (पढ रही है) का यहा लोप हो गया है।

२ जय खाता है और खेलता है।

इस एक वाक्य में भी दो वाक्य जुडे हुए हैं—

१. जय खाता है।

२. जय खेलता है।

यहा कर्ता का दो बार प्रयोग न करके और की सहायता से दोनो कर्ताओ को जोड़ दिया गया है। इस प्रकार यहा एक कर्ता (जय) का लोप स्पष्ट जान पडता है।

शेष अन्य विस्तार

यह पहले ही कहा जा चुका है कि प्रत्येक 'साधारण वाक्य' में कर्ता और क्रिया के अतिरिक्त, जो शेष अन्य विस्तार होता है, वह उन दोनो से सम्बद्ध रहता है। सकर्मक क्रिया वाले वाक्यों मे कर्म भी होता है और उसका कुछ विस्तार भी हो सकता है। इन सब के अलावा वाक्य मे जो कुछ भी अन्य विस्तार होता है उसे 'पूरक विस्तार' कहते हैं। इस प्रकार प्रत्येक 'साधारण वाक्य' का विग्रह करते समय निम्नांकित बातो का ध्यान रखना चाहिए—

१. कर्ता

२. कर्ता का विस्तार

३. कर्म

४. कर्म का विस्तार

५. पूरक विस्तार

६. क्रिया

७. क्रिया का विस्तार

साधारण वाक्यों का विग्रह

वाक्य—१. मैं प्रयाग से दस सेर अमरूद लाया हूं।

२. अरुण बहुत पढ़ा लिखा लडका है।

३. वह लड़की खाना खाकर अपने स्कूल जाती है।

४. वह कानपुर से काशी होता हुआ २५ अगस्त को कलकत्ता पहुँचा।

५. आजकल बडे जोर शोर से वर्षा हो रही है।

६. तुम नई किताबें क्यों नही पढ़ते हो ?

वाक्य विग्रह

क्रम संख्या	कर्ता	कर्ता का विस्तार	कर्म	कर्म का विस्तार	पूरक विस्तार	क्रिया	क्रिया का विस्तार
१.	मै	—	अमरूद	दस सेर	प्रयाग से	लायाहू	—
२.	अरुण	—	—	—	बहुत पढ़ा लि०लड़का	है	—
३.	लडकी	वह	स्कूल	अपने	—	जाती है	खाना खाकर
४	वह	—	कलकत्ता	—	२५ अगस्त को	पहुचा	कानपुर सेकाशी होता हुआ
५.	वर्षा	—	—	—	—	होरहीहै	आजकल बड़े जोर शोर से
६.	तुम	—	किताबें	नई	—	पढतेहो	क्यो नही

अभ्यास (साधारण वाक्य-विग्रह)

निम्नाकित साधारण वाक्यो का विग्रह कीजिए—

१. वह सुन्दर खिलौना बड़े जोर से नाचता है।
२. तुम ने उस दिन लायब्रे री से कितनी पुस्तकें ली ?
३. आज तो बहुत थक गया हू ।
४. इतने आदमी थोडा ही काम करेंगे ।
५. शर्मा जी दिल्ली से पठानकोट होकर लगभग तीन दिन मे काश्मीर पहुचे थे ।
६. आज का दिन कितना सुहावना है !
७. अक्षय कभी कभी बहुत हठ करता है ।
८. मैं तुमको इस छन्द का अर्थ बतलाता हूं ।
१०. मेरे पास पांच बहुत मुलायम गद्दे वाली कुर्सिया हैं ।

मिश्र वाक्य

जिस वाक्य-समूह में एक वाक्य प्रधान होता है और अन्य वाक्य उसके आश्रित होते हैं, वह 'मिश्र वाक्य' कहलाता है । जैसे

१. मैंने कहा कि तुम क्या कर रहे हो ।
२. तुम मूर्ख हो, यह देखकर मुझे बहुत दुःख होता है ।

यहा पहले वाक्य मे मैंने कहा प्रधान वाक्य है और तुम क्या कर रहे हो' आश्रित उपवाक्य है। दूसरे वाक्य मे 'यह देख कर मुझे दुःख होता है' प्रधान वाक्य है और 'तुम मूर्ख हो' आश्रित उपवाक्य है।

उपवाक्य

प्रत्येक वाक्य-समूह मे प्रधान वाक्य के अतिरिक्त जो अन्य वाक्य होता है या होते हैं, वे सब 'उपवाक्य' कहलाते हैं। ये उपवाक्य प्रधानवाक्य के आश्रित भी हो सकते हैं, जैसा कि ऊपर के उदाहरणो मे दिखलाया जा चुका है, अथवा वे स्वतन्त्र भी हो सकते हैं, जैसा 'संयुक्त वाक्यों' के अन्तर्गत स्पष्ट किया जावेगा।

आश्रित उपवाक्य

'मिश्र वाक्यों' में पाये जाने वाले 'आश्रित उपवाक्य' कभी संज्ञा, कभी विशेषरग और कभी क्रिया-विशेषण के समान व्यवहार करते है, इसलिए उनके निम्नांकित ३ भेद किए जाते हैं—

१. सज्ञा उपवाक्य
२. विशेषरग उपवाक्य
३. क्रिया-विशेषण उपवाक्य

१. संज्ञा उपवाक्य

ऐसे उपवाक्य कभी कर्ता, कर्म और कभी पूरक का कार्य करते है, इसलिए उनको इस प्रकार के ३ वर्गों में परिगणित किया जाता है—

१. कर्तृवाचक संज्ञा उपवाक्य
२. कर्मवाचक सज्ञा उपवाक्य
३. पूरक संज्ञा उपवाक्य

(१) कर्तृवाचक उपवाक्य

वे वाक्य जो कर्ता का कार्य करते हैं, 'कर्तृवाचक संज्ञा उपवाक्य' कहलाते हैं। यथा

१. 'ईश्वर जो करता है, अच्छा है।'

यहां 'ईश्वर जो करता है' यह पूरा वाक्य 'है' क्रिया का कर्ता है।

२. 'आपने मेरे साथ जो कुछ किया, सर्वथा उचित है।'

यहा 'आपने मेरे साथ जो कुछ किया' यह पूरा वाक्य 'है' क्रिया का कर्ता है।

(२) कर्मवाचक संज्ञा उपवाक्य

वे वाक्य जो कर्म का कार्य करते है, 'कर्मवाचक संज्ञा उपवाक्य कहलाते है। यथा

१. मैं कहता हूं कि आप पास होंगे।
यहां 'आप पास होंगे' यह पूरा वाक्य 'कहता हूं' क्रिया का कर्म है।

२. उसने समझाया कि वह प्रतिज्ञा नही कर सकता है।
यहां 'वह प्रतिज्ञा नही कर सकता है' यह पूरा वाक्य 'समझाया' क्रिया का कर्म है।

(३) पूरक संज्ञा उपवाक्य

वे वाक्य जो प्रधान वाक्य के अर्थ की पूर्ति करते है, 'पूरक संज्ञा उपवाक्य' कहलाते है। यथा

१. ऐसा लगता है कि कोई आने वाला है।

यहां 'कोई आने वाला है' यह पूरा वाक्य 'ऐसा लगता है' प्रधान वाक्य के अर्थ को पूरा करता है, अन्यथा वह (प्रधान) वाक्य एकदम अस्पष्ट और निरर्थक हो जाता है।

२. अब जान पड़ता है कि राजस्थान विश्वविद्यालय बन जावेगा।
यहां द्वितीय वाक्य, प्रथम वाक्य का स्पष्टतया पूरक है।

२. विशेषण उपवाक्य

वे उपवाक्य, जो प्रधान वाक्य के कर्ता अथवा कर्म की विशेषताओं को व्यक्त करते है, 'विशेषण उपवाक्य' कहलाते है। उपर्युक्त विशेषता के कारण ही उनके निम्नांकित दो भेद हो जाते है—

१. कर्तृवाचक विशेषण उपवाक्य
२. कर्मवाचक

(१) कर्तृवाचक विशेषण उपवाक्य

जो वाक्य, प्रधान वाक्य के कर्ता का विशेषण होता है, वह 'कर्तृवाचक विशेषण उपवाक्य' कहलाता है। यथा

१. वह आम, जो मैंने कल खाया था, बड़ा मीठा था।
यहा, 'आम' कर्ता है और 'जो मैने कल खाया था' यह पूरा वाक्य उसका (आम का) विशेषण है।

२. वह प्रामाणिक है जो तुम देख रहे हो ।
यहा 'वह' कर्ता है और 'जो तुम देख रहे हो' यह पूरा वाक्य उसका विशेषण है ।

३. हमारा राजस्थान, जो वीरों की सदा जन्मभूमि रहा है, शिक्षा के क्षेत्र में भी बहुत तेजी से आगे बढ़ रहा है ।

यहां 'राजस्थान' कर्ता है और 'जो वीरों की सदा जन्मभूमि रहा है' यह पूरा वाक्य उसका विशेषण है ।

(२) कर्मवाचक विशेषण उपवाक्य

जो वाक्य, प्रधान वाक्य के कर्म का विशेषण होता है, वह 'कर्मवाचक विशेषण उपवाक्य' कहलाता है । यथा

१. मैं यह कहता हूं कि तुम मेरी बात मान जाओ ।
यहां 'यह' कर्म है और 'तुम मेरी बात मान जाओ' यह पूरा वाक्य उसका विशेषण है ।

२. मैं 'कामायनी' पढ रहा हू जो प्रसादजी द्वारा लिखित एक अमर महाकाव्य है ।

यहा 'कामायनी' कर्म है और 'जो प्रसादजी द्वारा लिखित एक अमर महाकाव्य है' यह पूरा वाक्य उसका विशेषण है ।

३. मैंने तुम्हें एक पत्र लिखा था, जो कहीं गायब हो गया ।

यहां 'पत्र' कर्म है और 'जो कहीं गायब हो गया' यह पूरा वाक्य उसका विशेषण है ।

३. क्रिया विशेषण उपवाक्य

जो वाक्य, प्रधान वाक्य की क्रिया की विशेषताओं का वर्णन करते है, वे 'क्रिया विशेषण उपवाक्य' कहलाते है । यथा

१. मैं मोटर संभाल कर चलाता हू कि कहीं कोई दुर्घटना न हो जाय ।

यहां 'चलाता हूं' प्रधान क्रिया है और 'कहीं कोई दुर्घटना न हो जाय' यह पूरा वाक्य उसका विशेषण है ।

२. यदि तुम खूब पढ़ते रहोगे, प्रथम श्रेणी मे अवश्य उत्तीर्ण होगे ।

यहां 'उत्तीर्ण होगे' प्रधान क्रिया है और 'यदि तुम खूब पढ़ते रहोगे' यह पूरा वाक्य उसका विशेषण है ।

३. भगवान उसी समय प्रगट होते हैं जब भक्त उनकी शरण मे जाकर उन्हें सहायता के लिए पुकारने लगता है ।

यहां 'प्रगट होते है' प्रधान क्रिया है और 'जब भक्त ····· पुकारने लगता है।' यह पूरा वाक्य उसका विशेषण है।

सयुक्त वाक्य

यह वाक्य समूह, जिसमे सभी वाक्य समानतया स्वतन्त्र होते है, 'सयुक्त वाक्य' कहलाता है। जैसे

१. वह खूब कमाता है और आनन्द से रहता है।

२. आप या तो कुछ देर प्रतीक्षा करें या फिर आज-कल पधारें।

यहा दोनो उदाहरणों में सभी वाक्य पूर्णतया स्वतंत्र है क्योंकि उन पर प्रधान वाक्य के अतिरिक्त जो दूसरा वाक्य होता है उसे 'समाधिकरण वाक्य' कहते है।

वाक्य-विश्लेषण

'साधारण वाक्य' का विग्रह करते समय यह कहा जा चुका है कि उसमे एक ही कर्ता और एक ही क्रिया होती है। इसलिए जिन वाक्यों मे अनेक कर्ता और अनेक क्रियाएं होंगी, वे वाक्य या तो 'मिश्र' होंगे या 'संयुक्त'। उनकी वास्तविकता पहचानने के लिए उनका विश्लेषण करना आवश्यक हो जाता हैं।

इसके लिए उस वाक्य समूह में सर्वप्रथम वाक्य की खोज करना चाहिए, फिर यह देखना चाहिए कि अन्य वाक्य उसके आश्रित हैं या समकक्ष है। यदि वहां एक भी वाक्य प्रधान वाक्य के समकक्ष होगा, तो वह पूरा वाक्य 'सयुक्त वाक्य' कहलावेगा, अन्यथा वह 'मिश्र' होगा। यथा

१. भारतवर्ष, जो किसी समय सोने की चिड़िया कहा जाता था, आज शोचनीय अवस्था मे है, क्योंकि विदेशियों ने सब प्रकार से इसका शोषण किया किन्तु हमे चिन्ता नही करनी चाहिए और ईश्वर पर पूरा भरोसा रखना चाहिए जो सर्व-समर्थ है और हमे इस योग्य बना सकता है कि हम पूर्ववत् सुसंपन्न हो जावें।

(१) भारतवर्ष आज शोचनीय अवस्था में है। (प्रधान वाक्य)

(२) जो किसी समय सोने की चिड़िया कहा जाता था। (कर्तृ-वाचक विशेषण उपवाक्य, क्योंकि वह (१) मे 'भारतवर्ष' का विशेषण है)

(३) क्योंकि विदेशियों ने सब प्रकार से इसका शोषण किया (क्रिया-विशेषण उपवाक्य, क्योंकि वह (१) में 'शोचनीय अवस्था में है क्रिया का विशषण है)

(४) किन्तु हमें चिन्ता नहीं करना चाहिए।
(प्रधान वाक्य का समकक्ष वाक्य)

(५) और ईश्वर पर पूरा भरोसा रखना चाहिए।
(प्रधान वाक्य का समकक्ष वाक्य)

(६) जो सर्व समर्थ है (कर्मवाचक विशेषण उपवाक्य, क्योंकि वह (५) मे 'ईश्वर' का विशेषण है)

(७) और हमें इस योग्य बना सकता है [(६) के समान ही कर्म-वाचक विशेषण उपवाक्य]

(८) कि हम पूर्ववत् सुसंपन्न हो जावे।
(कर्मवाचक विशेषण उपवाक्य, क्योकि वह (७) में 'इस योग्य' का विशेषण है)

इस वाक्य-समूह मे चौथे और पांचवे वाक्य प्रधान-वाक्य के समकक्ष हैं, इसलिए यह संपूर्ण वाक्य 'संयुक्त वाक्य' है।

२. नेहरूजी ने अपने भाषण मे कहा कि आराम हराम है, इसलिए सबको मिलकर ऐसा करना चाहिए कि अपना देश सुखी और समृद्ध हो सके।

१. नेहरूजी ने अपने भाषण मे कहा (प्रधान वाक्य)
२. कि आराम हराम है
(कर्मवाचक संज्ञा उपवाक्य, (१) में 'कहा' क्रिया का कर्म)
३. इसलिए सबको मिलकर ऐसा करना चाहिए
[(२) के समान कर्मवाचक संज्ञा उपवाक्य]
४. कि अपना देश सुखी और समृद्ध हो सके
(पूरक संज्ञा उपवाक्य)

यहां सभी वाक्य 'प्रधान वाक्य' के आश्रित हैं, इसलिए यह संपूर्ण वाक्य 'मिश्र वाक्य' है।

३. हम लोग विदेशियो का किसी प्रकार अपमान करे, शोभनीय नही है, क्योंकि उससे अपने ही देश का अपमान होता है, जो किसी स्वाभिमानी व्यक्ति को सह्य नही होगा।

(१) शोभनीय नही है। (प्रधान वाक्य)

(२) हम लोग विदेशियों का किसी प्रकार अपमान न करें।
(कर्तृवाचक संज्ञा उपवाक्य, क्योंकि वह (१) में 'है' क्रिया का कर्ता है)

(३) क्योंकि उससे अपने ही देश का अपमान होता है।
(क्रिया विशेषण उपवाक्य, (१) में क्रिया की विशेषता बतलाता है)

(४) जो किसी स्वाभिमानी व्यक्ति को सह्य नहीं होगा।
(कर्मवाचक विशेषण उपवाक्य, (३) में 'अपमान' का विशेषण है)

यहां सभी वाक्य 'प्रधान वाक्य' के आश्रित हैं, इसलिए यह संपूर्ण वाक्य भी मिश्र वाक्य है।

पदव्याख्या

वाक्य-विश्लेषण से, जहां किसी वाक्य-समूह में स्थित अनेक उप-वाक्यों की वास्तविकता का पता चलता है, वहां 'पद-व्याख्या' से उस वाक्य में स्थित पदों की विशेषता का उद्घाटन हो जाता है।

यह पहले कहा जा चुका है कि वे पद, या तो संज्ञा या सर्वनाम और विशेषण पदों में उनके (१) प्रकार, (२) वचन (३) लिंग, (४) कारक और (५) सम्बन्ध को अवश्य बतलाना चाहिए। क्रिया पदों में कारक के स्थान पर 'काल' और 'वाच्य' का विचार किया जाता है। यथा

(१) अनिल कह रहा है कि वह बासी पूड़ी नहीं खावेगा।

अनिल—व्यक्तिवाचक संज्ञा, एक वचन, पुंलिंग, कर्ता कारक, और 'कह रहा है' क्रिया का कर्ता है।

कह रहा है—सकर्मक क्रिया, एक वचन, पुंलिंग, वर्तमान काल, कर्तृवाच्य। इसका कर्ता 'अनिल' है और दूसरा पूरा वाक्य इसका 'कर्म' है।

कि—संयोजक अव्यय, दोनों वाक्यों को मिला रहा है।

वह—पुरुषवाचक सर्वनाम, अन्य पुरुष, एकवचन, पुंलिंग, कर्ता कारक और 'खावेगा' क्रिया का 'कर्ता' है।

बासी—गुणवाचक विशेषण, एकवचन, स्त्रीलिंग, 'पूड़ी' का विशेषण है।

पूड़ी—जातिवाचक संज्ञा, एक वचन, स्त्रीलिंग, कर्मकारक और 'खावेगा' क्रिया का कर्म है।

नहीं—क्रिया विशेषण अव्यय, निषेधात्मक, खावेगा' क्रिया से संबद्ध है।

खावेगा—सकर्मक क्रिया, एकवचन, पुंलिंग, भविष्यकाल, कर्तृवाच्य। इसका कर्ता 'वह' है और कर्म है 'पूडी'

जयन्ती कल स्कूल जावेगी और वहां से वह दो पुस्तकें लावेगी।

जयन्ती—व्यक्तिवाचक संज्ञा, एकवचन, स्त्रीलिंग, कर्ता कारक और 'जावेगी' क्रिया की 'कर्ता' है।

कल—कालवाचक क्रिया विशेषण अव्यय, 'जावेगी' क्रिया से सम्बद्ध है।

स्कूल—जातिवाचक संज्ञा, एक वचन, पुल्लिग, कर्म कारक और 'जावेगी' क्रिया का 'कर्म' है।

जावेगी—सकर्मक क्रिया, एक वचन, स्त्रीलिंग, भविष्य काल, कर्तृवाच्य। इसका कर्ता 'जयन्ती' है और कर्म 'स्कूल' है।

और—संयोजक अव्यय—दोनों वाक्यों को मिला रहा है।

वहां—क्रिया विशेषण, स्थानवाचक अव्यय, 'लावेगी' क्रिया से सम्बद्ध है।

से—कारक चिन्ह, अपादान कारक, 'वहां' से सम्बद्ध है।

वह—पुरुषवाचक सर्वनाम, अन्य पुरुष, एक वचन, स्त्रीलिंग, कर्ता कारक, 'लावेगी' क्रिया की 'कर्ता' है।

दो—निश्चित संख्यावाचक विशेषण, पुल्लिग, बहुवचन, 'पुस्तकें' का विशेषण है।

पुस्तकें—जातिवाचक संज्ञा, बहुवचन, पुल्लिग, कर्मकारक, 'लावेगी' क्रिया का 'कर्म' है।

लावेगी—सकर्मक क्रिया, एकवचन, स्त्रीलिंग, भविष्य काल, कर्तृवाच्य। इसका कर्ता 'वह' है और कर्म है 'पुस्तकें'।

मैं तेज दौड़ती हूं।

मैं—पुरुषवाचक सर्वनाम, उत्तम पुरुष, एकवचन, स्त्रीलिंग, कर्ता कारक, 'दौड़ती हूं' क्रिया की कर्ता है।

तेज—क्रिया विशेषण अव्यय, रीतिवाचक, 'दौड़ती हूं' क्रिया से सम्बद्ध है।

दौड़ती हूं अकर्मक क्रिया, एकवचन, स्त्रीलिंग वर्तमान काल
कर्तृवाच्य इसका कर्ता 'मैं' है।

वाक्य-संक्षेप तथा वाक्य-विस्तार

जब वक्ता का शब्दों पर अधिक से अधिक अधिकार हो जाता है और वह उनकी विभिन्न प्रवृत्तियों से सुपरिचित हो जाता है, तब वह उन्हें इच्छानुसार अंगुलियों के इशारे पर नचा सकता है। वह चाहे तो मिनटों की बात घंटों तक कहता रहे और घंटो की बात मिनटो मे कह दे। यह एक बहुत बड़ी कला है। इसका उत्तम अभ्यास हो जाने पर ही, कोई वक्ता या लेखक महान् बन सकता है। वस्तुतः बात को बढ़ाना उतना ही कठिन है जितना बात को कम करना, किन्तु बाद मे अभ्यास से वह अत्यधिक सरल बन जाता है।

वाक्य-संक्षेप—थोड़े शब्दों में बड़ी से बड़ी बात कह देना 'वाक्य संक्षेप' कहलाता है। संस्कृत मे कहावत है 'अर्धमात्रालाघवेन पुत्रोत्सव मन्यन्ते वैयाकरणाः।' अर्थात् यदि लेख में आधी मात्रा भी कम हो जाय तो विद्वान् लोग पुत्रोत्सव सा मनाते हैं। इस कहावत से वाक्य-संक्षेप का महत्व स्पष्ट हो जाता है। अंग्रेजी में एक महापुरुष का कहना है कि यदि मुझे ५ मिनट का भाषण देना हो, तो एक सप्ताह चाहिए, यदि १५ मिनट बोलना हो तो २ दिन का समय चाहिए और यदि एक घण्टा या अधिक बोलना है, तो मैं अभी तैयार हूं। इस उक्ति से भी वाक्य-संक्षेप के सम्बन्ध मे प्रयुक्त सावधानी का पता चल जाता है।

इस प्रकार—चाहे लेख हो चाहे भाषण—संक्षेप का अपना महत्व है। उसमें एक सारगर्भिता है जिससे वक्ता या लेखक की विद्वत्ता का परिचय मिल जाता है।

संक्षेप करने के लिए कई बातों की ओर ध्यान देना होता है। सर्वप्रथम यह देखना चाहिए कि अनावश्यक शब्दों का प्रयोग न हो, दूसरे किसी शब्द को बेकार दुहराया न जावे, तीसरे जहां तक संभव हो सके 'वाक्य-शब्दों' का प्रयोग किया जावे।

अनावश्यक शब्दो की सीधी पहचान करने का एक उपाय है कि उनको हटाकर अर्थ की परीक्षा की जावे, यदि अर्थ अस्पष्ट हो जाता है तो वे शब्द आवश्यक हैं और यदि अर्थ में कोई अन्तर नही पड़ता है, बल्कि सौन्दर्य कुछ

ाधिक बढ ही जाता है तो वे शब्द एकदम अनावश्यक है और उनको
टा देना चाहिए । जहां तक शब्दो के बार बार न दुहराने का प्र
म्बन्ध मे सर्वनामों के अधिकाधिक प्रयोग पर, तब तक ध्यान दे
ब तक अर्थ स्पष्ट रहे । जहा अर्थ में कुछ गड़बड़ी आने लगे, वह
ल्लेख अवश्य कर देना चाहिए । 'वाक्य-शब्द' से हमारा अभिप्राय
ं है; जो पूरे वाक्य के स्थान में प्रयुक्त हों और अकेला ही वाक्य
र्थ के प्रकाशन में समर्थ हो । हिन्दी में इस प्रकार के शब्दो की एक
ख्या है । नीचे उनके कुछ उदाहरण दिए जा रहे है—

ाक्य शब्द

१. जो सरलता से प्राप्त हो सके—सुलभ ।
२. जहां बड़ी सरलता से जा सकें—सुगम ।
३. जो कठिनता से प्राप्त हो सके—दुर्लभ ।
४. जहां कठिनता से जा सकें—दुर्गम ।
५. जो किसी प्रकार से कहा न जा सके—अकथनीय ।
६. जो किसी प्रकार भी पढ़ा न जा सके—अपठनीय ।
७. जहां किसी प्रकार से जा न सकें—अगम्य ।
८. जो किसी प्रकार से मिल न सके—अलभ्य
९. जो खूब पढ़ा लिखा हो—सुशिक्षित ।
१०. जो कुछ भी नहीं पढा हो—अशिक्षित ।
११. जो किए गए उपकार को माने—कृतज्ञ ।
१२. जो किए गए उपकार को न माने—कृतघ्न ।
१३. जो सब के साथ उपकार करे—परोपकारी ।
१४. जो केवल अपना ही मतलब साधे—स्वार्थी ।
१५. जो मांस न खावे—शाकाहारी ।
१६. जो मास खावे—मांसाहारी ।
१७. जिसके समान कोई दूसरा न हो—अद्वितीय ।
१८. जो पहले कभी न हुआ हो—अभूतपूर्व ।
१९. जो पहले (किसी पद पर) हुआ हो—भूतपूर्व ।
२०. जो समय आने पर कुछ कर्तव्य न सोच सके—किंकर्तव्यवि
२१. जो पहले से ही दूर की बातें सोचले—दूरदर्शी ।

२२. जो जीता न जा सके—अजेय ।
२३. जो गाया न जा सके—अगेय ।
२४. जो नापा न जा सके—अमेप ।
२५. जो पिया न जा सके—अपेय ।
२६. जो दिया न जा सके—अदेय ।
२७. जो निन्दा के योग्य हो—निन्दनीय ।
२८. जो प्रशंसा के योग्य हो—प्रशंसनीय ।
२९. जो तुलना के योग्य हो—तुलनीय ।
३०. जो पढने के योग्य हो—पठनीय ।
३१. जो देखने के योग्य हो—दर्शनीय ।
३२. जो जाने के योग्य हो—गमनीय ।
३३. जिसका वर्णन न किया जा सके—अवर्णनीय ।
३४. जिसका वर्णन किया जा सके—वर्णनीय ।
३५ जिसका ठीक ठीक वर्णन न किया जा सके—अनिवर्चनीय ।
३६. जो बहुत बड़ा कजूस हो—मक्खीचूस ।
३७. जो हमेशा दान दिया जाय—सदावर्त ।
३८. जो कम भोजन करे—मिताहारी ।
३९. जो कम व्यय करे—मितव्ययी ।
४०. जो कम बोले—मितभाषी ।
४१. जो बहुत बोले—वावदूक ।
४२. जो बहुत खावे—पेट्ट ।
४३. जो बहुत व्यय करे—फिजूलखर्च ।
४४. जानने की इच्छा—जिज्ञासा ।
४५. पाने की इच्छा—लिप्सा ।
४६. पीने की इच्छा—पियासा ।
४७. खाने की इच्छा—बुभुक्षा ।
४८. अच्छा आदमी—सज्जन ।
४९. अच्छे चरित्र वाला—सच्चरित्र ।
५०. बुरा आदमी—दुर्जन ।
५१. बुरे चरित्र वाला—दुश्चरित्र ।

५२. जो क्षण भर में नष्ट हो जावे—क्षणभंगुर।
५३. जो अनादि काल से चला आवे—सनातन।
५४. जिसका आदि न हो—अनादि।
५५. जिसका अन्त न हो—अनन्त।
५६. जो काटा न जा सके—अकाट्य।
५७ जो जनाया न जा सके—अग्राह्य।
५८. जो कभी नष्ट न हो—अविनाशी।
५९. जो नष्ट हो जाय—नश्वर।
६०. जो ईश्वर में विश्वास करे—आस्तिक
६१. जो ईश्वर में विश्वास न करे—नास्तिक।
६२. जो वेदों को जानने वाला हो—वेदज्ञ।
६३. जो सब कुछ जानता हो—सर्वज्ञ।
६४. जो कुछ नही जानता हो—अज्ञ।
६५. जिसके पत्नी न हो—विधुर।
६६ जिसकी पहली पत्नी मर गई हो—कल्याणभार्य।
६७. जिसके पति न हो—विधवा, रांड।
६८. जिसके कभी सन्तान न हो—वन्ध्या, बांझ।
६९. जिस खेत में कुछ पैदा न हो—ऊसर, बंजर।
७०. जो काम से मुंह चुराता हो—कामचोर।
७१. जो सदा लड़ने को तैयार रहता हो—सीनाजोर।
७२. जहां कोई भी आदमी न हो—निर्जन।
७३. जो किसी दल (पार्टी) में न हो—निर्दल।
७४. जिसमें बिल्कुल बल न हो—निर्बल।
७५. जिसके कोई सहारा न हो—निराश्रय, अनाथ।
७६. जो शीघ्र उन्नति करने वाला हो—होनहार, प्रगति
७७. जो लड़ने की आदत वाला हो—युद्धशील, लड़ाकू
७८. जो बात कभी न हो सके—असंभव।
७९. जब देश में अन्न की कमी पड़ जावे—अकाल, दुभि
८०. जब देश में खूब अन्न हो—सुकाल, सुभिक्ष।
८१. जब पानी खूब बरसे—अतिवृष्टि।

८२ जब पानी बिल्कुल न बरसे अनावृष्टि अवृष्टि ।
८३. जब पानी आवश्यकतानुसार बरसे—सुवृष्टि ।
८४. जहां संस्कृत पढ़ाई जावे—पाठशाला ।
८५. जहां अंग्रेजी पढाई जावे—स्कूल ।
८६. जहां हिन्दी पढाई जावे—विद्यालय ।
८७. जहा उर्दू पढाई जावे—मदरसा ।
८८. हिन्दुओं के पूजा का स्थान—मंदिर ।
८९. मुसलमानों के पूजा का स्थान—मस्जिद ।
९०. सिक्खो के पूजा का स्थान—गुरुद्वारा ।
९१. ईसाइयो के पूजा का स्थान—चर्च, गिरजाघर ।
९२. जहा मृत व्यक्ति को मिट्टी में गाड़ा गया हो—समाधि
९३. जहा मृत व्यक्ति जलाए जाते हो—श्मशान ।
९४. जो देश के ऊपर प्राण बलिदान कर सकता हो—देश
९५. जो स्वार्थ के लिए देश को छोड़ सकता हो—देशद्रोही
९६. जिस पर भरोसा किया जा सके—विश्वासी, विश्वसनी
९६. जिसका कोई भरोसा न किया जा सके—अविश्वासी ।
९७. जो भरोसा करने पर धोखा दे—विश्वासघाती ।
९८. जो गुरु की हत्या करे—गुरुघाती ।
९९. जो पिता की हत्या करे—पितृघाती ।
१००. जो माता की हत्या करे—मातृघाती ।
१०१. जो मित्र की हत्या करे—मित्रघाती ।
१०२. जो अपनी हत्या करे—आत्मघाती
१०३. जो अपने से पहले उत्पन्न हो—पूर्वज ।
१०४. जो अपने से बाद में उत्पन्न हो—अनुज ।
१०५. जो पानी में पैदा हो—जलज, नीरज ।
१०६. जो अण्डे मे पैदा हो—अंडज ।
१०७. जो स्त्री की बात माने—स्त्रैण ।
१०८. जो स्त्रियों में अधिक रहे—मेहरा ।
१०९. जो घर में ज्यादातर घुसा रहे—घरघुस ।
११०. जिसके दोनो आंखे जन्म से ही न हो—जन्मान्ध ।

१११. जो इन्द्रियों के वश में हो—लोलुप ।

११२. जो इन्द्रियों के वश में नही हो—जितेन्द्रिय ।

११३. जो कभी मरे नही—अमर ।

११४. जो कभी बुड्ढा न हो—अजर ।

११५. जो कभी गिरे नही—अच्युत ।

११६. जो कभी नष्ट न हो—अक्षय ।

११७. जो कभी डरे नही—निर्भय ।

११८. जिसमें पानी न हो—निर्जल ।

११९. जो कभी चले नही—अचल ।

१२०. जो कभी टले नही—अटल ।

१२१. जो कभी डिगे नही—अडिग ।

१२२. जिसका कोई आधार न हो—निराधार ।

१२३. जिसमें कोई सार न हो—निस्सार ।

१२४. जो काम बिना किसी स्वार्थ के किया जावे—निष्काम ।

१२५. जिसका कोई कारण न हो—निष्कारण, अकस्मात ।

१२६. जो किसी लेख या भाषण के आदि मे हो—भूमिका, पूर्व

१२७. जो किसी लेख या भाषण के अन्त में हो—उपसंहार ।

१२८. अपना निजी पुत्र—औरस ।

१२९. गोद लिया हुआ पुत्र—दत्तक ।

१३०. जिसका विवाह न हुआ हो—पुरुष—अविवाहित, कुमार,
स्त्री—अविवाहिता, कुमारी,

१३१. जो अपने धर्म का न हो—विधर्मी ।

१३२. जो धर्म पर जान दे सकता हो—धर्म-प्राण ।

१३३. जो धर्म का व्यवहार करे या उपदेश दे—धर्मात्मा ।

अब वाक्य संक्षेप के कुछ प्रयोग नीचे दिए जा रहे है—

(प्रस्तुत वाक्य) १. मैं स्कूल गया । मोहन भी स्कूल गया । वहा मैंने और मोहन ने एक दृश्य देखा जो पहले दिखलाई नही पड़ा था ।

(संक्षिप्त वाक्य) मैं मोहन के साथ स्कूल गया, वहा हम दोनों ने अपूर्व दृश्य देखा ।

(विस्तृत वाक्य) २ जो किसी का स्वय भरोसा न करे जो किसी के भरोसा करने पर उसे धोखा दे, जो किसी के द्वारा किए गए उपकार को न माने और जो उपकार का बदला न चुकावे, ऐसे आदमी का साथ शीघ्र छोड़ देना चाहिए क्योकि उससे कोई लाभ नहीं होता है।

(संक्षिप्त वाक्य) अविश्वासी, विश्वासघाती, अकृतज्ञ, और कृतघ्न आदमी की संगति त्याज्य और व्यर्थ है।

(विस्तृत वाक्य) ३. जो लोग बल से और उत्साह से हीन हैं, उनका कोई सहायक नहीं होता है। हमे चाहिए कि हम उनकी सदैव रक्षा करें।

(संक्षिप्त वाक्य) निर्धन, निर्बल और निरुत्साह लोग असहाय होते हैं, अतः वे हमारे रक्षणीय हैं।

(विस्तृत वाक्य) ४. देश मे कई दिनों से इतना अधिक पानी बरसा है कि जनता भूखों मर रही है।

(संक्षिप्त वाक्य) देश मे अतिवृष्टि से अकाल पड गया है।

(विस्तृत वाक्य) ५. जिन स्त्रियो के पति मर जाते हैं, वे दुबारा विवाह कर सकतीं हैं। हमारा कानून उनको ऐसी सम्मति देता है।

(संक्षिप्त वाक्य) हमारे यहां विधवा पुनर्विवाह वैध है।

(विस्तृत वाक्य) ६. आज जो हमारे यहां श्रीमान् पधारे हुए हैं और जिनका हम सम्मान कर रहे हैं, वे इसी विद्यालय मे बचपन में शिक्षा ग्रहण किया करते थे।

(संक्षिप्त वाक्य) हमारे आज के संमान्य अतिथि इसी विद्यालय के भूतपूर्व छात्र है।

(विस्तृत वाक्य) ७. आज मेरा सारा रोग दूर हो गया है और मैं अपने सहारे से सारा काम कर सकता हूं।

(संक्षिप्त वाक्य) आज मैं नीरोग और स्वस्थ हू।

(विस्तृत वाक्य) ८. देवता लोग कभी मरते नही हैं और वे कभी बुड्ढे भी नहीं होते हैं।

(संक्षिप्त वाक्य) देवता अमर और अजर हैं।

(विस्तृत वाक्य) ९. मैं सोचता हूं कि यह वस्तु मुझे कभी नहीं मिल सकती है और इसके पाने का मार्ग भी ऐसा है जहां किसी

प्रकार से बताया भी नहीं जा सकता है, फिर भी मेरे मन में यह जानने की इच्छा है कि वह वस्तु किस प्रकार सरलता से प्राप्त हो सकेगी और उसके पाने का मार्ग भी किस प्रकार सरल हो सकेगा।

(संक्षिप्त वाक्य) मैं सोचता हूं यह वस्तु अलभ्य है और इसका प्राप्ति मार्ग अगम्य है, फिर भी मुझे इसकी सुलभता और इसकी प्राप्ति में सुगमता के लिए जिज्ञासा है।

(विस्तृत वाक्य) १०. मनुष्य को चाहिए कि वह अपनी इन्द्रियों को वश में रखे, अपने मन के ऊपर पूरा पूरा नियन्त्रण रखे और अपने चित्त वृत्तियों को सब ओर से रोक कर केवल अच्छे कामों में ही लगावे।

(संक्षिप्त वाक्य) मनुष्य को जितेन्द्रिय, मनस्वी और कर्मयोगी बनना चाहिए।

वाक्य विस्तार—जरा सी बात को बहुत से शब्दों में कहना ही 'वाक्य विस्तार' कहलाता है। इसलिए शब्दों के पर्यायों का ज्ञान बहुत आवश्यक है और साथ ही कहने की अनेक शैलियों से भी अच्छा परिचय होना चाहिए।

अभी ऊपर 'वाक्य-संक्षेप' के जो उदाहरण दिए गए है, उन्हें उलटे क्रम से विचार करके देखें, तो 'वाक्य-विस्तार' अपने आप समझ में आ जावेगा। फिर भी दो चार उदाहरण नीचे दिए जा रहे है।

(वाक्य संक्षेप) १. इस विश्वविद्यालय की शीघ्र उन्नति अवश्यंभावी है।

(वाक्य विस्तार) यह कोई मामूली स्कूल या कालेज नहीं, यहां दुनिया भर की सभी विद्याएं पढ़ाई जाती हैं। इसीलिए इसको विश्वविद्यालय कहते हैं। आजकल यहां पर अनेक नए विभाग खुल गए है। बहुत से बड़े बड़े प्रोफेसर भी आ गए हैं। हमें आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि यह विश्वविद्यालय निकट भविष्य में बहुत आगे बढ़ जाएगा।

(वाक्य संक्षेप) २. अशिक्षित मनुष्य अविवेकी होता है।

(वाक्य विस्तार) जो मनुष्य पढ़ा लिखा नहीं है, उसे यह पता नहीं चलता है कि कौनसा काम अच्छा है और कौनसा काम बुरा। इसीलिए वह मनुष्य भटकता रहता है।

(वाक्य संक्षेप) ३. यह संसार अस्थिर, शून्य और नश्वर है।

(वाक्य विस्तार) इस संसार मे कोई वस्तु टिकाऊ नहीं है, यहां कुछ भी ठोस या सारगर्भित नही है और साथ ही यहा की वस्तुएं कभी न कभी नष्ट हो जाने वाली हैं।

(वाक्य संक्षेप) ४. परोपकारी प्रातःस्मरणीय है।

(वाक्य विस्तार) जो व्यक्ति दूसरों की भलाई करता है, उसका नाम सदैव याद रखना चाहिए और सुबेरे सुबेरे उठते ही सबसे पहले उसी का गुणगान करना चाहिए।

(वाक्य संक्षेप) ५. हिमालय अजेय और दुर्गम है।

(वाक्य विस्तार) हिमालय पर्वत को कोई जीत नही सकता है और उसके सभी स्थानो पर कोई पहुँच भी नही सकता है।

(वाक्य विस्तार) ६. विधर्मियो ने हमारे धर्मात्माओं और धर्मप्राण देशभक्तो का समूल नाश कर दिया।

(वाक्य संक्षेप) भारतवर्ष पर आक्रमण करने वाले लोग हमारे धर्म को मानने वाले नही थे, इसीलिए यहां आते ही उन्होने हमारे देश में धर्म का व्यवहार करने वाले तथा धर्म का उपदेश देने वाले लोगो को जडमूल से समाप्त कर दिया था। इतना ही नही, उन्होने हमारे देश के उन लोगों को भी एकदम समाप्त कर दिया जो धर्म पर अपने जीवन निछावर करते थे और जो देश के लिए भी अपनी जान हथेली पर लिए हुए घूमा करते थे।

(वाक्य संक्षेप) ७ आस्तिक और नास्तिक होने का सम्बन्ध ईश्वर की अपेक्षा वेद से अधिक है।

(वाक्य विस्तार) 'जो लोग यह कहते है कि ईश्वर को मानने वाले आस्तिक कहलाते है और ईश्वर को न मानने वाले नास्तिक कहलाते है' वे गलत कहते हैं। सच बात तो यह है कि वेद को मानने वाले आस्तिक होते है और वेद को न मानने वाले ही नास्तिक होते है।

(वाक्य संक्षेप) ८ आपके प्रवचन से अवर्णनीय आनन्द मिला।

(वाक्य विस्तार) आज आपने जो यहां धर्म का इतना बडा सदुपदेश दिया है, उससे मुझको जो आनन्द प्राप्त हुआ है, मै उसका वर्णन करने में एकदम असमर्थ हूं।

विराम चिन्ह

जब हम बातचीत करते हैं अथवा भाषण देते हैं, तो बीच बीच में, कही कम रुकते है और कही अधिक, इसी को 'विराम' कहते हैं। लेख में इस 'विराम' को हम अनेक चिन्हों से स्पष्ट करते हैं, अन्यथा अर्थ के अनर्थ हो जाने की संभावना रहती है। जैसे

(१)	लड़का न लडकी*	=	कुछ नही है।
	लड़का, न लडकी	=	लडका है, लडकी नही है।
	लड़का न, लड़की	=	लडका नही, लड़की है।
(२)	पढो न लिखो	=	कुछ मत करो।
	पढ़ो, न लिखो	=	केवल पढो।
	पढो न, लिखो	=	केवल लिखो।
(३)	तुम सिनेमा जाओगे ?	=	क्या तुम जाओगे (प्रश्न)।
	तुम सिनेमा जाओगे।	=	जरूर जाओगे।
	तुम ! सिनेमा जाओगे।	=	तुम में योग्यता नही है।
	तुम सिनेमा ! जाओगे।	=	सिनेमा अच्छा नही है।
	तुम सिनेमा जाओगे !	=	जाना अच्छा नही है।
(४)	मैं क्या खा सकता हूं ?	=	क्या खा सकता हूं ?, प्रश्न।
	मैं, क्या खा सकता हू।	=	क्या चीज खा सकता हुं, जिज्ञासा।
	मैं क्या, खा सकता हू।	=	खाने में अयोग्यता, असामर्थ्य।

* एक ज्योतिषगि गर्भ के बच्चे को इसी प्रकार लिखकर भविष्यवाणी करते थे और अवसर आने पर इधर उधर कामा (,) लगाकर अपनी धाक जमा लेते थे। यदि कुछ गड़बड़ होता, तो वे कह देते कि हमने इसीलिए लिख दिया था 'लडका न लडकी।'

उपर्युक्त विवेचन से विराम चिन्हों का महत्व स्पष्ट हो जाता है । अत भाषा के अध्ययन के लिए उनका परिचय अत्यन्त आवश्यक है। हिन्दी मे निम्नलिखित विराम-चिन्हों का विशेष रूप से प्रयोग किया जाता है—

(१) **अल्प विराम** (,)— जहां थोड़े समय के लिए रुकना आवश्यक होता है, वहां इस चिन्ह का प्रयोग किया जाता है, जैसे—

(१) जय, अजय, अनिल और अक्षय सभी स्कूल जा रहे है ।

क—वाक्यो अथवा वाक्याशो के अलग करने मे भी इसका व्यवहार होता है जैसे—(१) वह लड़का, जो परिश्रम नहीं करता है, सदा अनुत्तीर्ण हो जाता है । (२) मैंने इस ग्रंथ को देखा, पढा और खरीद लिया ।

ख—किसी उद्धरण के पूर्व भी इसका प्रयोग होता है, जैसे—

(१) नेहरूजी ने कहा, 'आराम हराम है ।'

(२) तिलकजी कहते थे, 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है ।'

ग—समयसूचक शब्दो के बीच मे भी इसे स्थान मिलता है, जैसे—

(१) आज दिनाक २२ अगस्त, बुधवार, १९६२ को जन्माष्टमी मेला होगा ।

(२) ३० जनवरी, १९४८ को महात्मा गाधी की मृत्यु हुई थी ।

घ—सम्बोधक के बाद भी इसका प्रयोग कर देते है, वैसे वहां संबोधनवाचक चिन्ह का प्रयोग ही उचित है, जैसे—

(१) आशा, आज तुम एन. सी. सी. मे नही जाओगी ?

(२) विजय, वहा खडा खडा क्या कर रहा है ?

ङ—मिश्र और संयुक्त वाक्यो में, उप वाक्यो को पृथक् करने के लिए भी इस चिन्ह का प्रयोग किया जाता है ।

(१) यदि तुम मेरी बात नही मानोगे, तो पछताओगे ।

(२) मैं वहा जाऊंगा, किन्तु कुछ रुपये चाहिए ।

(२) **अर्धविराम** (;)— जहा 'अल्पविराम' से कुछ अधिक रुकना पड़े, वहा 'अर्धविराम' के चिन्ह का व्यवहार किया जाता है ।
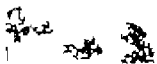
(१) मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, वह समाज से दूर भाग ही नही सकता।

(२) अंधेरी रात; सुनसान जंगल; मूसलाधार वर्षा; हिंसक पशुओ का भय; बड़ों बड़ों के छक्के छूट जाते हैं, उस नन्हें से बच्चे की क्या बिसात।

(३) **पूर्णविराम (।)**— जहा बात पूरी हो जाती है, वहा पूर्णविराम के चिन्ह (।) का प्रयोग होता है। जैसे

(१) आज वर्षा नही होगी।

(२) तुम अब भटकना छोड दो।

(३) वह दृश्य देखते ही बनता है।

(४ मरता, क्या न करता।

(४) **योजक चिन्ह (-)**— दो या दो से अधिक पदो के योग मे इसका विशेष प्रयोग किया जाता है।

(१) पाप-पुण्य, राज-पुत्र, धर्म-तत्व।

(२) श्वेत-पद्म-सरोवर, हरिजन-छात्र-वृत्ति

ऐसे पदों को यदि मिलाकर लिखा जाय, तो फिर इस चिन्ह की कोई आवश्यकता नही रह जाती है। जैसे

(१) पापपुण्य, राजपुत्र

(२) श्वेतपद्मसरोवर

(५) **प्रश्नसूचक चिन्ह (?)**— प्रश्न वाले वाक्यों मे इसका व्यवहार होता है। जैसे

(१) क्या तुम पढ रहे हो?

(२) क्या कल कालेज बन्द रहेगा?

(६) **विस्मयसूचक चिन्ह (!)**— जहा विस्मय आदि का ज्ञान कराना हो, वहा इस चिन्ह का प्रयोग किया जाता है। जैसे

(१) ओहो! यह तो दस मंजिला महल है।

(२) अरे! तू कहा गया था?

सम्बोधन के साथ भी इसी चिन्ह का प्रयोग होता है। जैसे

(१) हे भगवान ! तुम्ही रक्षक हो।

(२) निर्मलजी ! कृपया, इस पत्र का उत्तर अवश्य दें।

(७) **विवरण सूचक चिन्ह (:—)**— किसी बात को विस्तार से स्पष्ट करने के लिए इन चिन्हों का स्मरण किया जाता है। जैसे

(१) वाक्य ३ प्रकार के होते है.—साधारण, मिश्र और संयुक्त।

(२) सिद्धियां आठ होती है:—अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व और वशित्व।

(८) **उद्धरण चिन्ह (" ")**— किसी की बात का उद्धरण देने में इस चिन्ह का प्रयोग करते हैं। जैसे

(१) नेहरूजी ने कहा "आराम हराम है।"

(२) गीता कहती है, "कर्म पर ही तुम्हारा अधिकार है, फल पर नहीं।"

(९) **विशेषक चिन्ह (' ')**— जब किसी पारिभाषिक अथवा विशेष उल्लिखित शब्द का प्रयोग किया जाता है, तब उसके साथ यह चिन्ह लगा दिया जाता है। जैसे

(१) हमारे ज्ञान का संचित कोष ही हमारा 'साहित्य' है।

(२) 'धर्म' और 'अर्थ' दोनों का ही जीवन में अपना अपना महत्व है।

(१०) **निर्देशक चिन्ह (—)** — यह योजक चिन्ह (-) का दुगुना होता है और इसका अधिकतर प्रयोग संवादों, परिभाषाओं और अन्तर्वाक्यों में किया जाता है। यथा

(१) राम—लक्ष्मण ! तुम अयोध्या में रह कर मातापिता की सेवा करो। (संवाद)

(२) धर्म—जिसके द्वारा हम अपने को धारण करें, उसे धर्म कहते हैं। (परिभाषा)

(३) इस भारतवर्ष में—जहा कभी दूध दही की नदिया बहा करती थी—आज अन्न का आयात करना पड़ रहा है। (अन्तर्वाक्य)

(११) कोष्ठ चिन्ह ( ) { } [ ]— वैसे इन चिन्हों का प्रयोग मुख्य रूप मे गणित मे मिलता है। भाषा मे इनका प्रयोग अधिकतर सख्याओ और अन्तर्वाक्यो के साथ किया जाता है। यथा

छोटा कोष्ठ ( ) (१) (१), (२), (३), (४)।
(२) मैं आप मे (यदि आप दयालु है), कुछ कहना चाहता हू।

कभी कभी पदों के स्पष्टीकरण के लिए भी इसका प्रयोग होता है। जैसे
(१) जो गुण (सत्, रज और तम) से रहित है, वही निर्गुण है।
(२) विदेशी समझते है कि भारत दुर्बल (?) है।

मंझला कोष्ठ { } — इसका भाषा मे कोई प्रयोग नही दिखलाई पडता है।

बड़ा कोष्ठ [ ]— छोटे कोष्ठ को अन्तर्गत करने के लिए बहुधा इसका व्यवहार किया जाता है। जैसे

[(१) और (२) संख्या वाले वाक्यो पर विशेष ध्यान दीजिए।]

(१२) **संक्षेप चिन्ह (०)**—अनेक वर्णों वाले शब्दो को संक्षेप मे लिखने के लिए प्रथम वर्ण के पश्चात् यह चिन्ह (०) लगा देते है। जैसे

१. पडित का = पं०
२. महामहोपाध्याय का = म० म०
३. स्वर्गीय का = स्व०
४. मास्टर आफ आर्ट्‌स का = एम० ए०
५. मोहनदास कर्मचन्द गाँधी का = मो० क० गांधी।

(१३) **विस्मरण चिन्ह (‸)**— जब लिखते लिखते कुछ भूल जाते हैं तो इस चिन्ह को लगाकर, भूली हुई बात ऊपर लिख देते हैं। जैसे

(१) मैं तुम से कल पांच बजे अपने घर पर मिलूंगा।

(२) राजा दशरथ के चार पुत्र थे।

(१४) संकेत चिन्ह (*)— जब लिखते समय यह ध्यान आवे कि बहुत कुछ विस्मरण हो गया है, तब उसे कहीं भी लिखकर इस चिन्ह से सकेतित किया जा सकता है। जैसे

(*) बोली केवल मौखिक रहती है, उसमें कोई साहित्य नही होता है, किन्तु भाषा में उसका विविध साहित्य होता है, इस प्रकार हम कह सकते है कि भाषा और बोली मे एक महान् अन्तर है, जिसे लोग साधारणतया समझ नही पाते।

(१५) परम्परासूचक चिन्ह (|)— जब हम किसी वस्तु के विभागो और उप-विभागो की परम्परा का स्पष्ट उल्लेख करना चाहते है, तब इस चिन्ह का प्रयोग करते है। जैसे
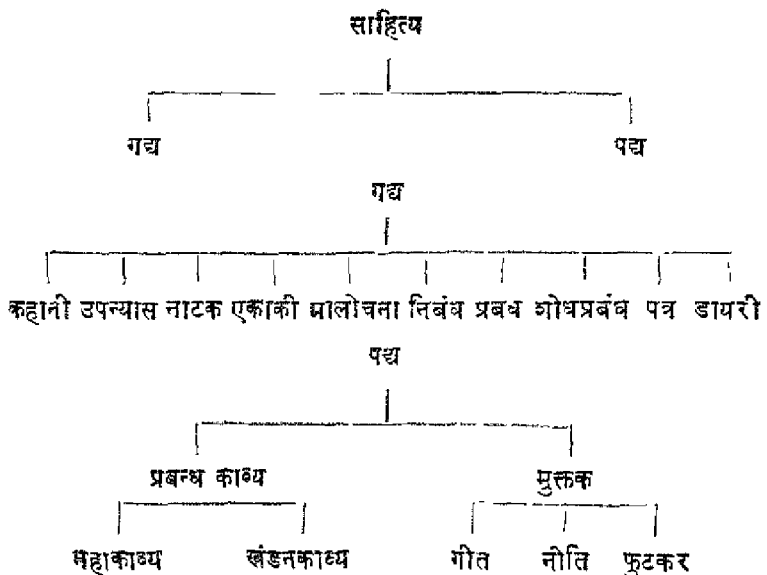
(१६) लोप चिन्ह (...)—जहा वाक्य मे कुछ अंश लुप्त होता है या लुप्त रखा जाता है वहां इस चिन्ह का प्रयोग करते हैं। जैसे

(१) तुम कल प्रातःकाल............।

२) कल मुझे बड़ा क्रोध था, मैंने उसे ....।

कभी इन बिन्दुओं के स्थान पर योग चिन्हो (+++) का भी व्यवहार
।

समतासूचक चिन्ह (=)— दो बातों में समता बताने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है । जैसे

(१) राम+ईश्वर=रामेश्वर ।

(२) श्रद्धा+प्रेम=भक्ति ।

योग चिन्ह (+) — दो शब्दों का मेल दिखलाने के लिए इस चिन्ह का प्रयोग किया जाता है जैसा कि ऊपर के दोनों उदाहरणों में स्पष्ट ो जाता है ।

इन चिन्हो के प्रयोग में बहुत सावधानी बरतनी चाहिए, क्योंकि थोड़ी असावधानी का परिणाम भयंकर हो सकता है, जैसा कि ऊपर कहा जा । अभ्यास के लिए नीचे के उदाहरण दर्शनीय हैं—

[१] मैंने कहा, "श्याम ! यदि तुम मेरी बात मान जाओ, तो कल्याण है, अन्यथा सच कहता हूं, तुम—भले ही कितना प्रयत्न करो—कभी सफल नहीं हो सकते हो ।"

[२] जीवन में आज अशान्ति ही अशान्ति है, काश तुम होते........।

[३] इस औषध की तीन विशेषताएं हैं—

१–रोग को समूल नष्ट करती है ।

२–स्वास्थ्य की उन्नति करती है ।

३–नेत्रो की ज्योति बढ़ाती है ।

[४] वे ही सच्चे विद्यार्थी हैं, जो वास्तव मे 'विद्या के अर्थी' हैं, क्योंकि इस शब्द का मूल अर्थ यही है, विद्या+अर्थी = विद्यार्थी । जो इस अर्थ को नहीं समझते हैं, वे 'विद्यार्थी' शब्द का अपमान करते हैं, या यो कहें कि वे विद्या की 'अर्थी' लिए हुए घूमते हैं । मैं कहता हूं "उन्हें एकदम पढ़ाई छोड़ देनी चाहिए ।"

[५] तुम्हारे हृदय में पाप है–छल है–धोखा है और......। खैर, मैं देख लूंगा और समय आने पर तुमसे पूछूंगा "तुम्हारा पाप का घड़ा भरा, या कि नहीं ।"

[६] आज का प्रात काल कितना सुहावना है चिड़िया ऐसा लगता है—कुछ भविष्यवाणी कर रही हैं। क्या तुम मिलोगे ? मनोहर ! तुम सचमुच 'मनो+हर' हो, क्या कहूं ! आज हृदय······है ।

[७] थक गया हूं, दिन भर दौड़ कर ऊब गया हूं, बहुत कुछ घबड़ा गया हूं । क्या यही जीवन है ? क्या यही मानवता है ? क्या यही समाज है ? आग लगे ऐसी कट्टरता पर, मैं तो वही करूंगा, जो अब मैंने निर्णय कर लिया है । पूछूंगा समाज के ठेकेदारो से उस समय "तुमने क्या बिगाड़ लिया मेरा, तुम्हे धिक्कार है ! एक बार नहीं, सौ बार ।"

[८] बापू ने कहा था "हिन्दी की अवहेलना देश की अवहेलना है," किन्तु आज बापू के बेटे······। उफ् ! क्या करूं······ ।

मुहावरे और लोकोक्तियां

मुहावरे और लोकोक्तियों में एक स्पष्ट अन्तर है। प्रायः इनके प्रयोग मे बड़े बड़े लोग भी भूल कर जाते हैं। 'मुहावरे' का शाब्दिक अर्थ है, अभ्यास। बहुत से वाक्यांश ऐसे हैं जो अभ्यासवश आज दूसरा अर्थ प्रगट करने लगे हैं। उनका सामान्य अर्थ इतना लुप्त हो गया है कि हमें उसका भान तक नहीं होता। आज हम बात–बात में मुहावरों का प्रयोग करते हैं। कभी कभी हम अनजान में भी बड़े बड़े मुहावरे बोल जाते हैं, इसका कारण है एक परम्परागत अभ्यास। इसी विशेषता के कारण मुहावरे अधिक लोक-प्रिय हैं।

'लोकोक्ति' का शाब्दिक अर्थ है लोगों की उक्ति, जनश्रुति या कहावत। 'लोग ऐसा कहते आए हैं, इसके पीछे कोई कथा है या कोई घटना, कुछ न कुछ रहस्य है, कोई विशेष बात है'' इस प्रकार की अनेक संभावनाएं लोकोक्तियों के साथ जुड़ी हुई हैं। कही कहीं हम उन (संभावनाओं) का विश्लेषण कर लेते है और कहीं कही अनुमान। दोनो ही स्थितियों में बड़ा आनन्द आता है।

एक कहावत है "न नौ मन तेल होगा, न राधा नाचेगी।" इसके पीछे बहुत संभव है कि किसी ने कभी राधा से नाचने का आग्रह किया हो और राधा ने अनेक कठिन शर्तों मे 'नौ मन तेल' का भी उल्लेख कर दिया हो। बस कहावत चल पडी। अब जहा कोई व्यक्ति, किसी कार्य की सिद्धि के लिए अनेक कठिन शर्तें प्रस्तुत करता है, वही इस कहावत का प्रयोग, उसके लिए कर दिया जाता है।

एक दूसरी कहावत है 'टेढ़ी खीर'। इसके पीछे एक कहानी बतलाई जाती है कि किसी अंधे राजा ने अपने मंत्री से खीर के सम्बन्ध में पूछा तो उसने उत्तर दिया 'सफेद होती है।'' राजा ने पूछा 'कैसी सफेद', मत्री ने कहा "बगुले जैसी"। राजा ने जब बगुले के विषय में पूछा, तो मंत्री ने हाथ टेढा करके बगुले की सूरत बनादी। राजा ने उसे टटोल कर कहा "तुम्हारी खीर

तो बहुत टेढी होती है, मैं नही खाऊं गा। बस अब किसी भी कठिन काम के लिए इस कहावत का प्रयोग कर दिया जाता है।

वास्तव मे लोकोक्तियो की जन्म कथा बहुत विचित्र है। उनका इतिहास भी जाना नही जा सकता है।

यहा हम क्रम से पहले मुहावरो की चर्चा कर रहे हैं। ये मुहावरे साधारणतया तीन प्रकार के होते हैं—

(१) अङ्ग-सम्बन्धी
(२) पशुपक्षी सम्बन्धी
(३) क्रिया सम्बन्धी

(१) **अङ्ग सम्बन्धी मुहावरे**—सिर की चोटी से लेकर पैर के तलुवे तक सभी अङ्गो पर अनेक मुहावरे प्राप्त होते हैं, यहाँ उसी क्रम से उन्हें प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया जा रहा है, ताकि उनके अध्ययन में एक विशेष सुविधा हो सके।

(१) चोटी

१. चोटी पकड़ना — वश मे करना।
२. चोटी पकड़ाना — वश मे होना।
३. चोटी उडाना — जड़ काटना।
४. चोटी काटना — जड़ काटना।
५. चोटी कटवाना — जड़ कटवाना।
६. चोटी का होना — सर्वोच्च होना।
७. चोटी खोलना — प्रतिज्ञा करना।
८. चोटी दबना — वश मे होना।
९. चोटी दबाना — वश मे करना।
१०. चोटी हाथ में पकड़ाना — वश में होना।
११. (एडी से) चोटी तक जोर लगाना — खूब प्रयत्न करना।
१२. (मुट्ठी मे) चोटी करना — वश में करना।

(२) बाल

१. बाल पकना — बुड्ढा होना, अनुभव प्राप्त करना

२. बाल बाल बचना — किसी आफत से बचना।
३. बाल बांका न होना — कोई भी हानि न होना।
४. बाल की खाल निकालना — कुतर्क करना, अति सूक्ष्म खोज करना।
५. बाल बनाना — क्षौर कर्म करना।
६. बाल बांधना — शृंगार करना।
७. बाल उडाना — मारना पीटना।
८. बाल उखाड़ना — झगड़ा मोल लेना।

(३) सिर

१. सिर उठाना — विरोध के लिए प्रयत्न करना।
२. सिर मारना — खूब प्रयत्न करना।
३. सिर चढ़ाना — कुछ भी करे, पर बुरा न मानना
४. सिर चढ़ना — उद्दण्ड होना।
५. सिर ऊंचा करना — विरोध करना।
६. सिर घूमना — चक्कर आना।
७. सिर खाली करना — बकवाद करना।
८. (स्वयं) सिर झुकाना, नीचा करना — शर्माना या प्रणाम करना।
(दूसरे का) सिर झुकाना नीचा कर देना — हरा देना, परास्त करना।
९. सिर ठोकना, पीटना — दुखी होना।
१०. सिर पटकना — परिश्रम करना, दुखी होना।
११. सिर मांगना — बलिदान के लिए बुलाना।
१२. सिर खपाना — खूब सोच विचार करना।
१३. सिर के बल जाना — बहुत नम्रता से जाना।
१४. सिर खाना — तंग करना।
१५. सिर होना — पीछे पड़ना।
१६. सिर देना या सिर से खेलना — प्राण देना।
१७ सिर धुनना — पश्चाताप करना।

१८ सिर फिरना — पागल होना विचार बदल देना।
१९. सिर मूंड़ना — चेला बनाना, ठग लेना।
२०. सिर मुंड़ाना — चेला बनना, ठगा जाना।
२१. सिर बचाना — अपनी रक्षा करना।
२२. सिर लड़ाना — प्रयत्न करना।
२३. सिर आँखो पर बिठाना — खूब स्वागत करना।
२४. सिर से पैर तक — आदि से अन्त तक।
२५. सिर का पसीना पैर तक — खूब परिश्रम करना।
२६. बे सिर पैर का — निराधार
२७. सिर मढ़ना — ऊपर डालना।
२८. सिर पर खून सवार होना — हत्या के लिए तैयार होना।
२९. सिर काटना — घोर अपमान करना।
३०. सिर चुगना — परेशान करना।
३१. सिर पर कफन बांधना — प्राण दान के लिए प्रस्तुत होना।
३२. सिर पर सवार होना — सब तरह से दबाना।
३३. सिर टेकना — हार मान लेना।
३४. सिर फुटौवल होना — खूब लड़ाई झगड़ा होना।
३५. ओखली में सिर देना — जान बूझ कर आफत मोल लेना।

(४) माथा

१. माथा पचाना — प्रयत्न करना
२. माथा खपाना — दिमागी परिश्रम करना।
३. माथापच्ची करना — खूब सोचना विचारना।
४. माथे होना — ऊपर होना
५. माथा लगाना — कोशिश करना।
६. माथाफोड़ी करना — माथा पच्ची करना।
७. माथाजोड़ी करना — सलाह करना।
८. माथा टेकना — सिर झुकाना।
९. माथे चढ़ना — उद्दण्ड होना।
१०. माथे चढ़ाना — आदत बिगाड़ना।
११. सिर माथे चढाना — स्वागत करना।

(५) आंख

१. आंख खुलना	—	जागना, भ्रम दूर होना।
२. आंख बन्द होना, मिचना, उलटना	—	मर जाना।
३. आखें चार होना	—	सामने आना, प्रेम करना।
४. आखे चुराना, बचाना, छिपाना	—	छिपे छिपे रहना।
५. आख मिलना, लगना, लड़ना	—	प्रेम होना
६. आखें मिलाना, लगाना, लडाना	—	प्रेम करना।
७. आखें दिखाना	—	डराना, धमकाना।
८. आखें बिछाना	—	प्रतीक्षा करना।
९. आख मारना	—	संकेत करना
१०. आखें लाल होना या आखें लालपीली करना।	—	क्रोध करना।
११. आख उठाना	—	बेशरम होना।
१२. आख आना	—	आख मे लालिमा आना।
१३. आंख जाना, फूटना	—	अंधे होना, अज्ञात होना।
१४. आखो पर पर्दा पड़ना	—	कुछ भी ध्यान न देना।
१५. आख फडकना	—	सगुन या असगुन होना।
१६. आंखो में धूल झोकना	—	सरासर ठग लेना।
१७. आंख डबडबाना	—	आंसू भर लाना।
१८. आंख न ठहराना	—	चकाचौंध से आत होना।
१९. आंखें फिर जाना	—	दया समाप्त होना।
२०. आखें मूंदना	—	विचार न कहना।
२१. आंख भर देखना	—	अच्छी तरह देखना।
२२. आखो पर चर्बी छाना	—	गर्व करना।
२३. आंखो से गिरना	—	प्रतिष्ठा कम होना।
२४. आखो में समाना	—	बहुत प्रिय होना।

२५. आंखों का तारा होना		बहुत प्रिय होना।
२६. आंख होना	—	ज्ञान होना।
२७. आंख खोलना	—	ज्ञान देना, जगना, जगाना।
२८. आंख सेंकना	—	वासना से देखना।
२९. एक आंख से देखना	—	समान व्यवहार करना।

(६) भौं

१. भौं सिकुड़ना, भौं पर पड़ना	—	क्रोध आना।
२. भौं टेढ़ी करना	—	क्रोध करना।
३. भौं सिकोड़ना	—	घृणा करना।

(७) पलक

१. पलकों मे बसना	—	सदा ध्यान आना।
२. पलक मारना	—	इशारा करना।
३. पलक मारते ही	—	एक क्षण में।
४. पलक मुंदना	—	मर जाना।
५. पलक खुलना	—	जागना।
६. पल में बिछाना	—	प्रतीक्षा करना।
७. पलक घुमाना या बदलना	—	कृपा कम होना।
८. पलक गीली होना	—	रोना।
९. पलक भारी होना	—	रात्रि जागरण से, चिन्ता से दुखी होना।

(८) नजर (दृष्टि)

१. नजर मे आना	—	दिखलाई पड़ना।
२. नजर से उतरना	—	प्रतिष्ठा कम होना।
३. नजर मे चढना	—	सम्मानित होना, जंचना, अच्छा लगना।
४. नजर मे खटकना	—	प्रतिक्षण बुरा लगना।
५. नजर उतारना	—	भूत प्रेत आदि की बाधा दूर
६. नजर लगना	—	प्रेम होना, कुप्रभाव पड़ना।
७. नजर मिलना, मिलाना	—	प्रेम होना, प्रेम करना।
८. नजर बांधना	—	जादू करना।

९. नजर मे फर्क पड़ना — कृपा कम होना।
१०. नजर दौड़ना — खूब दूर तक सोचना, देखना।

(९) नाक

१. नाक कटना — अपमानित होना।
२. नाक काटना — अपमानित करना।
३. नाक में दम करना — परेशान करना।
४. नाक घिसना, रगड़ना — खुशामद करना।
५. नाकों चने चबाना — बहुत अधिक तंग होना।
६. नाकों चने चबवाना — बहुत अधिक तंग करना।
७. नाक रखना, बचाना — सम्मान की रक्षा करना।
८. नाक चढाना या सिकोड़ना या नाक भौं सिकोड़ना — घृणा करना, उपेक्षा करना।
९. नाक का बाल होना — अत्यन्त निकट होना, घनिष्ठ बनना।
१०. नाक बजाना — बड़बड़ाना, गहरी नींद में सोना।
११. नाक घुसेड़ना — हस्तक्षेप करना।
१२. नाक मटकाना — चिढ़ाना।
१३. नथुने फुलाना — क्रोध करना।
१४. नकेल डालना — वश मे करना।

(१०) कान

१. कान काटना, कान कतरना या कुतरना — अधिक चालाक होना।
२. कान देना — ध्यान से सुनना।
३. कान भरना — चुगली करना।
४. कान खाना — बहुत शोर करना, पीछे पड़ जाना
५. कान उमेठना, मरोड़ना — इच्छानुसार चलाना।
६. कान फूंकना — चेला बनाना, चुगली खाना।
७. कान खड़े होना — सावधान होना।
८. कान लाल होना — शरमाना।
९. कान का कच्चा होना — चुगलियों पर सहज विश्वास करना।

१० कान मे तेल डालना — कुछ न सुनना।
११. कानाफूसी करना — बहुत धीरेधीरे बात करना, षड़यन्त्र करना।
१२. कान पर जूं न रेंगना — अप्रभावित रहना।
१३. कान मसलना, उखाड़ना — दण्ड देना।
१४. कान में डालना — सूचित करना।
१५. कान में उंगली डालना — कुछ न सुनना, न ध्यान देना।
१६. कानोकान खबर न होना — बहुत गुप्त रखना।

(११) गाल

१. गाल बजाना — स्वयं प्रशंसा करना।
२. गाल फुलाना — रूठना।
३. गाल लाल होना — शरमाना।
४. गाल मे गाल मिलाना — एक मत होना।
५. गाल फोड़ना — दण्ड देना।
६. गाल पर हाथ फेरना या थपथपाना — प्यार करना।
७. गाल पिचकना — दुर्बल होना।

(१२) मूंछ

१. मूंछ ऊंची करना, ऐंठना, मरोड़ना, मूंछ पर ताव देना — अभिमान करना।
२. मूंछ नीची करना, झुकाना, कटवाना, मुंडाना, साफ करवाना — हार मान लेना।
३. मूंछ पर हाथ फेरना या मूंछ फटकाहना — शान दिखाना।
४. मूंछ नोचना, उखाड़ना — अपमानित करना।

(१३) ओठ

१. ओठ काटना — आश्चर्य करना।
२. ओठ चाटना — आकर्षित होना।

३ ओठ सूखना — बेहद थक जाना, प्यासा होना।
४. ओठ फैलाना — परास्त होना।
५. ओठ गोल होना — बोलने को उत्सुक होना।

(१४) दांत

१. दांत पीसना या कटकटाना — क्रोध करना।
२. दांत दिखाना, निपोरना — हारजाना, खिसियाना।
३. दांत तोड़ना — हराना, नीचा दिखाना।
४. दांत खट्टे करना — युद्ध में परास्त कर देना।
५. दांत बजाना — लड़ाई करना।
६. दांत उखाड़ना — लड़ाई करना।
७. दांतों तले अंगुली दबाना
दांत से जीभ दबाना — आश्चर्य करना
८. दांत काटी रोटी — घनिष्ठ मित्रता।
९. दांत गड़ाना — ताक में रहना।
१०. दात मे तिनका दबाना — लज्जित होना, शान्त रहना।
११. दात निकालना — बेशर्मी से हंसना।
१२. दांतो में जीभ — संकटों से घिरा हुआ।
१३. दांत टूटना — बुड्ढा होना।
१४. दूध के दांत — बचपन।

(१५) जीभ

१. जीभ दिखाना — चिढ़ाना।
२. जीभ निकालना — हार मान लेना।
३. जीभ चलाना — बहुत बातें करना।
४. जीभ चलना — चटोर होना।
५. जीभ पकड़ना — बोलने से रोक देना।
६. जीभ पलटना — बात बदलना।
७. जीभ संभालना — शान्त रहना।
८. जीभ के नीचे जीभ होना — सांप की तरह कपटी और खतरनाक होना।
९. जीभ लड़ाना — प्रेम करना, बहुत बातें करना।

१०. जीभ के वश होना — इन्द्रियों का दास होना ।
११. जीभ वाला आदमी — सच्ची बात वाला आदमी ।
१२. जीभ रोकना — इन्द्रियों को वश में रखना ।
१३. जीभ हिलाना — वशीभूत होना, हां में हां करना

(१६) मुंह

१. मुंह मोड़ना — अस्वीकार करना ।
२. मुंह छूना, पोंछना — ऊपरी भाव दिखलाना ।
३. मुंह चिढाना, बनाना — हंसी करना, नकल करना ।
४. मुंह भरना — रिश्वत देना ।
५. मुंह मे खून लगना — बुरी आदत पड़ जाना ।
६. मुंह चलाना — बहुत बातें करना ।
७. मुंह खोलना — बात आरम्भ करना ।
८. मुंह खुलना — झिझक दूर होना ।
९. मुंह आना — मुहां होना, लार टपकाना ।
१०. मुंह की खाना — अपमानित होना ।
११. मुंह बांध कर बैठना — मौन या उदास ।
१२. मुंह लगाना — धृष्ट बनाना ।
१३. मुंह दिखाना — शान दिखाना ।
१४. मुंह छिपाना, चुराना — शरमाना ।
१५. मुंह उतारना, फक होना — घबड़ाना ।
१६. मुंह लेकर रह जाना — उदास होना ।
१७. मुंह काला होना — बदनाम होना ।
१८. मुंह में पानी आना — लालच होना ।
१९. मुंह ताकना — आश्रित रहना ।
२०. मुंह फट — स्पष्ट वक्ता ।
२१. मुंह देखे प्रीत — ऊपरी प्रीति ।
२२. मुंह सीना, मुंह में ताला
२३. मुंह धो रखना — आशा त्याग देना ।
२४. मुंह फुलाना — रूठना ।
२५. मुंह सूखना — उदास होना ।

२६. मुँह से फूल झड़ना — मीठी बातें करना।
२७. मुँह चोर — काम चोर।
२८. मुँह जोर — झगड़ने वाला।
२९. मुँह में लगाम न होना — मनमानी बकना।
३०. मुँह काला करना — व्यभिचार करना, भाग जाना।
३१. मुँह ताकते रह जाना — असहाय रहना।
३२. मुँह चमकना — प्रसन्न होना।
३३. मुँह मारना — जबर्दस्ती करना।
३४. मुँह मिलाना — प्रेम करना।
३५. मुँह लड़ाना — बेकार बहस करना।

(१७) गला

१. गले पड़ना, सवार होना — पीछे पड़ना।
२. गले लगना, लगाना — प्रेम करना।
३. गला घोटना — बल प्रयोग करना।
४. गला भरना — गद्गद होना, रोना।
५. गला पकड़ना — दबाना।
६. गला फाड़ना — चिल्लाना।
७. गला कटाना — हानि उठाना।
८. गला ठीक करना — स्वर मिलाना।
९. गले के नीचे उतारना — स्वीकार करना।
१०. गले पर छुरी फेरना — अत्याचार करना।
११. गलाबाजी करना — अच्छे स्वर में गाना।
१२. गला बैठना, पड़ जाना — आवाज भारी होना।
१३. गले का हार — बहुत प्यारा।
१४. गला काटना — हानि पहुँचाना।
१५. गले मिलना — प्रेम दिखाना।

(१८) कन्धा

१. कन्धा लगाना — सहारा देना।
२. कन्धा देना — लाश उठाना।
३. कन्धे से कन्धा भिड़ाना — साथ देना।

४. कन्धा गिराना — साथ छोड़ देना।

(१९) छाती

१. छाती फूलना — गर्व करना।
२. पत्थर की छाती करना — कठोर हृदयी बनना।
३. छाती पर सांप लोटना — ईर्ष्या के कारण दुखी होना।
४. छाती फाटना — असीम कष्ट होना।
५. छाती ठण्डी होना — शान्ति अनुभव करना।
६. छाती लगाना — आलिंगन करना।
७. छाती पीटना — बड़े जोर से रोना।
८. छाती ठोंकना — साहस दिखाना।
९. छाती जलना — ईर्ष्या अनुभव करना।
१०. छाती चौड़ी होना — विशाल हृदयता दिखाना।

(२०) हृदय

१. हृदय फूलना — प्रसन्न होना।
२. हृदय कांपना — घबड़ाना।
३. हृदय निकाल कर रख देना — सर्वस्व दे देना, पूर्ण सत्य बोलना।
४. हृदय पकना — परेशान हो जाना।
५. हृदय फटना — दुखी होना, वैरी होना।
६. पत्थर का हृदय — कठोर हृदय।
७. हृदय धड़कना — भयभीत होना।
८. हृदय थामना — चुपचाप रहना।
९. हृदय पर सांप लोटना — ईर्ष्या करना।
१०. हृदय का टुकड़ा — बहुत प्यारा, पुत्र।
११. हृदय भारी होना — बहुत दुखी होना।
१२. हृदय से लगाना — प्रेम दिखाना, आलिंगन करना।

(२१) कलेजा

१. कलेजा मुंह को आना — घबड़ा जाना।
२ कलेजा थाम कर बैठना दुख सह कर रह जाना।

नोट—हृदय के सभी मुहावरों का प्रयोग कलेजे के साथ किया सकता है और किया जाता है। उनमे अर्थ सदैव समान ही रहता है।

(२२) पेट

१. पेट काटना — कंजूसी करना।
२. पेट पर लात मारना — किसी की जीविका लेना।
३. पेट दिखाना — अपनी गरीबी बतलाना
४. पेट मे रखना — छिपाना।
५. पेट पालना, भरना — निर्वाह करना।
६. पेट की आग बुझाना — भोजन करना।
७. पेट फूलना — उत्सुक होना।
८. पेट का हलका आदमी — जो भेद न छिपा सके।
९. दाई से पेट छिपाना — जानकार से भेद छिपाना।
१०. पेट रहना — गर्भ रहना।
११. पेट मे घुसना — तह में जाना।
१२. पेट मे मूछे होना — बचपन से ही चालाक होना।
१३. पेट मे पाप होना — छल का व्यवहार।
१४. पेट मे होना — मन में होना।
१५. पेट की आग — भूख, वात्सल्य।
१६. पेट चलना, झरना — पेचिस होना।

(२३) पीठ

१. पीठ दिखाना — हार कर भागना।
२. पीठ पर छुरा भोकना — विश्वासघात करना।
३. पीठ ठोकना — शाबासी देना।
४. पीठ पर होना — सहायता करना।
५. पीठ पीछे — परोक्ष में।
६. पीठ फेरना — प्रतिकूल हो जाना।
७. पीठ पर जन्म लेने वाला — छोटा भाई या बहिन
८. पीठ लगाना — आराम करना।

(२४) कमर

१. कमर कसना — तैयार होना।
२. कमर बांधना — साहस करना।

३ कमर टूटना — कमजोर हो जाना।
४. कमर हिलाना — नाचना।

(२५) हाथ

१. हाथ उठाना — मारना, नमस्ते करना, वोट देना।
२. हाथ बंटाना — सहयोग देना।
३. हाथ पीले करना — विवाह करना।
४. हाथ खाली होना, तंग होना — पैसे की कमी होना।
५. हाथ आना, लगना — प्राप्त होना।
६. हाथ खींचना — सहायता बंद करना।
७. हाथ फैलाना, पसारना — भीख मांगना
८. हाथ धोना, धो बैठना — निराश होना।
९. हाथ दिखाना — वीरता दिखाना।
१०. हाथ मलना या रगड़ना — पश्चात्ताप करना।
११. हाथ जोड़ना — प्रार्थना करना, दूर भागना।
१२. हाथ मारना — चोरी करना।
१३. हाथ पैर जोड़ना — विनती करना।
१४. हाथ कटाना — अपने लेख से बंध जाना।
१५. हाथ पैर मारना, चलाना — कोशिश करना।
१६. हाथ में करना, हथियाना — अधिकार करना।
१७. हाथ का मैल — साधारण वस्तु।
१८. हाथ पर हाथ धरना — बेकार रहना।
१९. हाथ छोड़ना — मारपीट करना।
२०. हाथ डालना। — भाग लेना।
२१. हाथ पैर फूलना — घबड़ा जाना।
२२. आड़े हाथों लेना — फटकारना।
२३. हाथोंहाथ लेना — बहुत स्वागत करना।
२४. हाथोंहाथ — बहुत शीघ्र।
२५. हथछुट — पहले मार देने वाला।
२६. लगे हाथों — इसी क्रम में।
२७. रंगे हाथों — अपराध करते हुए।

२८ हाथ धोकर पीछे पड़ना — जी जान से जुट जाना
२९ हाथ देखना — भविष्यवाणी बतलाना।
३०. हाथ फेंकना — तैरना।
३१. हाथ के तोते उड़ जाना — हक्का बक्का रह जाना।
३२. हाथापाई होना — हाथ पैर से लड़ाई होना।
३३. हाथ पकड़ना — जीवन भर निर्वाह करना।
३४. हाथ टूटना — सहायक का समाप्त होना।

(२६) मुट्ठी

१. मुट्ठी गरम करना — रिश्वत देना।
२. मुट्ठी में रखना, लेना — वश में रखना।
३. मुट्ठी भर — थोड़े से।
४. मुट्ठी दिखाना — धमकाना, पहेली पूछना।
५. मुट्ठी खुली होना — निर्धन होना।
६. मुट्ठी खोलता जाना — सब कुछ छोड़कर जाना, मर जाना।

(२७) हथेली

१. हथेली चूमना — प्यार करना।
२. हथेली लगाना — सहायता पहुँचाना।
३. हथेली पर सरसों जमाना — बहुत जल्द बाजी करना।
४. हथेली मारना — शर्त लगाना।
५. हथेली दिखलाना — भीख मांगना।
६. हथेली पर जान लेकर काम करना — जान की बाजी लगाना।

(२८) अंगूठा (हाथ का)

१. अंगूठा दिखाना — चिढ़ाना।
२. अंगूठा चूंसना — बचपन दिखाना।
३. अंगूठा कोंचना — आगे बढ़ाना।
४. अंगूठा बताना — धोखा देना।

(२९) अंगूली

१. अंगुली दिखाना — मना करना।
२. अंगुली करना — प्रेरित करना।

३. अ गुली पर नचाना	वश में करना ।
४. अ गुली चाटना	स्वाद देखना ।
५. अ गुली चाटते रह जाना	ताकते हुए पिछड़ जाना ।
६. अ गुली उठाना	दोष लगाना ।
७. पांचो अ गुली घी में	बहुत आनन्द में ।

(३०) पैर या पांव

१ पैर जमना, जमाना	टिकना, टिकजाना ।
२. पैर उखड़ना	भाग जाना ।
३. पैर पकड़ना	विनती करना ।
४. पैर पूजना	कन्यादान करना, आदर करना ।
५. पैर तोड़कर बैठना	न कही आना, न कही जाना ।
६. पैर पटकना	प्रयत्न करना ।
७. पैर उठाना, बढ़ाना	आगे जाना ।
८. पैर फैलाना, पसारना	विश्राम करना, दूर दूर तक अधिकार करना ।
९. पैर भारी होना	गर्भवती होना ।
१०. पैर अड़ाना	बीच में पड़ना ।
११. पैर भर जाना	थकजाना ।
१२. पैर सोजाना	पैर सुन्न पड़ जाना ।
१३. पैर के नीचे से जमीन खिसकना	घबड़ा जाना ।
१४. फूंक फूंक कर पैर रखना	सावधानी बरतना ।
१५. पैर से पैर बांधना	साथ साथ रखना ।
१६. जमीन पर पैर न रखना	घमंड करना ।

(३१) घुटना

१. घुटने झुकाना	हार मान लेना, विनती करना ।
२. घुटने तोड़कर बैठना	न कही आना, न कही जाना ।
३. घुटने मोड़ना	बैठ जाना ।

(३२) पैर का अ गूठा

१. अ गूठा पूजना	सम्मान करना ।

२ अंगूठा चूमना	वश में होना।
३. अंगूठा पीना	चरणोदक लेना।

(३३) चाल

१. चाल चलना, करना	चालाकी करना।
२. चाल दिखाना	चलते फिरते दिखलाई पडना, छल करना।
३. चाल डालना	आसक्ति उत्पन्न करना।
४. चालबाजी करना	धोखा देना।
५. चालचलन	चरित्र।
६. हालचाल	स्थिति।
७. चालू	चालाक।

(३४) ठोकर

१. ठोकर मारना	बड़ा त्याग करना। घृणा से उपेक्षा करना।
२. ठोकर खाना	दुःख पाना, धोखा खाना।
३. ठोकर लगाना	हानि पहुँचाना।
४. ठोकर देना	ठुकराना, अपमान करना।
५. ठोकर खिलाना	दुःख पहुंचाना।
६. ठोकर दिलाना	दूसरे से नुकसान पहुँचवाना।
७. ठोकर झेलना	दुःख का सामना करना।

(३५) तलुवा

१. तलुवा चाटना	वश में होना।
२. तलुवा सहलाना	खुशामद करना।

पशु-पक्षी सम्बन्धी मुहावरे

१. बछिया के ताऊ	महामूर्ख।
२. कोल्हू के बैल	जहां के तहां।
३. गाय	सीधा सादा।

४. दुधारू गाय की लात भली-स्वार्थ में सब सहा जाता है।

५. कुत्ता	स्वामिभक्त, खुशामदी।

६. हाथी जाता है, कुत्ते भोंकते है	बड़ा आदमी मनमानी करता है और छोटे पीछे से बड़बड़ाते रहते हैं।
७. कुत्ते की चाटी हुई हड्डी	बेकार की चीज।
८. गधा	मूर्ख।
९. गधापचीसी	मूर्खता की बातें, १५ से लेकर २० वर्ष तक उम्र।
१०. घोडा	स्वामिभक्त, तेज।
११. घुड़दौड़	दौड़धूप।
१२. हाथी	मस्त।
१३. हाथीचाल	मस्तचाल।
१४. हाथी के दांत	दिखावटी चीज।
१५. शेर	स्वाभिमानी, जो कहीं दबे नहीं, जबरदस्ती करने वाला।
१६. शेर का मुंह किसने धोया?	बड़े आदमी से कौन बोल सकता है?
१७. भेड़िया	चालाक, धोखा देकर हत्या करने वाला।
१८. भेड़िया धसान	भीड़ का तितर बितर हो जाना।
१९. भेड़	डरपोक।
२०. भेड़चाल	आंख बंद करके पीछे चलना।
२१. भेड़ तो मुड़ेगी ही	दुर्बल आदमी हर जगह सताया जायगा।
२२. बलि का बकरा	निःसहाय व्यक्ति।
२३. बकरे की मां, कब तक खैर मनाए?	निःसहाय व्यक्ति कब तक प्राण बचा सकेगा?
२४. बकरी के गलस्तन	अनुपयोगी वस्तु।
२५. बिल्ली	चालाक, धूर्त।
२६. भीगी बिल्ली	भय से मौन।
२७. बिल्ली-दण्डवत्	दिखावटी नम्रता।
२८. म्याऊं का ठौर पकड़ना	मोर्चा साधना।
२९. खिसियानी बिल्ली	अपमान से क्रुद्ध

३०. कुत्ता-बिल्ली	जन्मजात बैर।
३१. कुत्ता बिल्ली बरसना (अंग्रेजी मे)	मूसलाधार वर्षा।
३२. बन्दर	चालाक, झपट्टा लगाने वाला।
३३. बन्दर-घुड़की, भभकी	केवल धमकी।
३४. बंदर-बाट	स्वयं हड़प कर जाना।
३५. बंदरिया का बच्चा	मरने पर भी प्रेम।
३६. सियार	चालाक।
३७. रंगा सियार	धोखेबाज।
३८. सांप छछूंदर की गति	न इधर के रहे, न उधर के रहे।
३९. लोमड़ी	चालाक, धूर्त।
४०. लोमड़ी के अंगूर खट्टे	कोई वस्तु यदि न मिले, तो बुरी कहना।
४१. मेंढक-टर्र	बेमतलब रट लगाना।
४२. मेंढक को जुकाम	क्षुद्र को घमंड।
४३. मेंढक दर्शन	कभी कभी या बरसात में ही दिखलाई पड़ना।
४४. सांप लोटना	ईर्ष्या करना।
४५. सांप की मणि	अमूल्य वस्तु।
४६. सांप का बदला	कभी न कभी बदला ले लेना।
४७. अक्ल बड़ी या भैंस	बुद्धि बड़ी या धन।
अक्ल बड़ी या भैंस	बुद्धि बड़ी या उम्र।
४८. अनाज के साथ घुन	दोषी के साथ निर्दोष।
४९. गिरगिट	रंग बदलने वाला।
५०. उल्लू	मूर्ख।
५१. काठ का उल्लू	महामूर्ख।
५२. उल्लू बनाना	मूर्ख बनाना।
५३. उल्लू सीधा करना	अपना काम निकालना।
५४. मक्खीचूस	कंजूस।
५५. पहले कौर में मक्खी	आरम्भ में ही विघ्न।

५६ जीती मक्खी निगलना	जान बूझकर अपमान सहना सरासर बेईमानी करना, या झूठ बोलना।
५७. कौवा	चालाक।
५८. कौवा-रोर	बहुत शोर करना।
५९. कौवा स्नान	केवल मुंह भिगोना।
६०. बगुला भगत	धोखेबाज।
६१. चील झपट्टा	एकदम छीन लेना।
६२. भौंरा	अस्थिर, कामुक।
६३. तितली	रंगबिरंगी, ज्यादा फैशन करने वाली।
६४. टिड्डी दल	भीड़ की भीड़।
६५. टिड्डी के पैर आसमान को–	'आसमान गिरेगा तो पैर पर रुक जायगा। संकट आयगा, तो योंही रुक जायगा।' ऐसा सोचना।
६६. पतंगा	प्रेमी।
६७. कोयल	मीठा गाने वाली।
६८. कोयल के बच्चे	दूसरों के अन्न पर पले हुए।

क्रियावाची मुहावरे

(१) आना

१. आ बनना	काम बन जाना।
२. आ पड़ना	सहसा टपक जाना।
३. आ लेना	पकड़ना।
४. आ लगना	ठिकाने लग जाना।
५. आनाकानी करना	टालमटोल करना।
६. आवागमन	जन्म लेना और मरना।
७. आना जाना	मिलना।

(२) आवाज करना

१. आवाज देना, लगाना	पुकारना।
२. आवाज उठाना	विरोध करना।
३. आवाज बैठना	स्वर मन्द होना।
४ आवाज करना	शोर करना, व्यंग करना, खटखटाना।
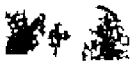
(३) आसन देना

१. आसन देना	स्वागत करना।
२. आसन हिलना या डिगना	डगमगाना।
३. आसन उखड़ जाना	हट जाना।

(४) उठना

१. उठ जाना	मर जाना।
२. उठ खड़ा होना	तैयार होना।
३. उठना-बैठना	मित्रता।
४. उठते-बैठते	प्रतिक्षण।
५. उठती जवानी	जवानी का आरम्भ।
६. उठती बाजार, पैठ	बन्द होती हुई बाजार।
७. उठाऊ चूल्हा	अस्थिर।
८. जूता उठाना	खुशामद करना, पंचायत की आज्ञा मानना।
९. झण्डा उठाना	आगे होना।

(५) उड़ना

१. उड़ जाना	भाग जाना।
२. उड़ती खबर	अफवाह।
३. उड़ती दृष्टि	सरसरी दृष्टि।
४. उडन छू	एकदम गायब।
५. उडनखटोला	हवाई जहाज।
६. उड़ाऊ	खर्चीला।

(६) उलटना

१. उलट पुलट उलट फेर	महा परिवर्तन; क्रान्ति।
२. उलट देना	नष्ट कर देना।
३. उलटा सीधा बकना	गलत सही, या अंटसंट कहना।
४. उलटी सांस	रुक रुक कर सांस।
५. उलटे पैर	पीछे भागना।
६. उलटी खोपड़ी	महामूर्ख।
७. उलटी गंगा बहाना	असंभव बात करना।

८ उलट छुरे से मुंडना — मूर्ख बनाना।

९. उलटे छुरे से मूंडना	मूख बनाना।
१०. उलटा जमाना	अंधेरगर्दी।
११. उलटे बांस बरेली को	लौट के फिर वहीं आना।
१२. टाट या फट्टा उलटना	दिवाला निकालना।

(७) कटना, काटना

१. कटना	दूर रहना, शरमाना।
२. काटना	हानि पहुंचाना।
३. काट खाना	घायल करना।
४. काटने दौड़ना	क्रोध से बात करना।
५. काट-छांट, काट-पीट	कतर-ब्योंत, सुधार।
६. समय काटना	समय बिताना।
७. समय काटता है	सूनापन जान पड़ता है।
८. काटो तो खून नहीं	सुन्न हो जाना।
९. चांदी काटना	मौज करना।

(८) खाना

१. खाना	मांस खाना, रिश्वत खाना।
२. खाने दौडना	गुस्से में झपटना।
३. खाना-पीना	जीविका।
४. खाने-पीने वाले लोग	मांस और शराब वाले लोग।
५. खाऊ	खूब खाने वाला, रिश्वती।
६. खार खाना	ईर्ष्या करना।
७. हवा खिलाना	टरकाना।
८. खानाबदोश	अस्थिर।

(९) घूमना, घुमाना

१. घूमना	चक्कर काटना।
२. घुमाना	टरकाना, चक्कर देना।
३. घुमाव-चढ़ाव	विघ्न बाधाएं।

(१०) चढ़ना

१ चढ़ाई	आक्रमण।

२ चढ़ बैठना	दबा लेना।
३. चढ़ती जवानी	जवानी का आरम्भ।
४. चढ़ती धूप	दोपहर।
५. चढ़ा चढ़ी	ईर्ष्या, स्पर्धा, प्रतियोगिता।
६. चढ़ जाना	विजय कर लेना।

(११) चाटना

१ चाटना	खुशामद करना।
२. चाटुकार	खुशामदी।
३. चटोर	फिजूल खर्च करने वाला।
४. चाट जाना	हजम कर जाना।

(१२) छूना

१. छूना	पहुँचना।
२. छूत	अपवित्र।
३. अछूत	हरिजन।
४ छुआछूत की भावना	पवित्र और अपवित्र की भावना।

(१३) जलना

१. जलना	ईर्ष्या करना।
२. घर जलना	उजड़ना।
३. दिल जलना	द्वेष करना।
४. दिलजली	द्वेषभरी।
५ जलाना	कुढ़ाना।
६. जले पर नमक	दुख मे दुख पहुँचाना।

(१४) झुकना

१. झुकना	नम्रता दिखाना।
२. बादल झुकना	बादल घिर आना।
३. झोका	तेजी।
४. झुक जाना	दबना।

(१५) टहलना

१. टहलना	खिसक जाना, घूमना।
२. टहल	सेवा।

३ टहलाना	टरकाना।
४. टहलुवा -	सेवक।

(१६) तौलना

१. तौलना	बराबरी देखना।
२. तुल जाना	सर्वस्व त्याग करना।
३. तुलादान	अपने वजन के बराबर देना।

(१७) थूकना

१. थूकना	तिरस्कार करना।
२. थूक चाटना	प्रतिज्ञा से टल जाना, बात बदल देना।
३. थुक्का-फजीहत	घोर अपमान।

(१८) दौड़ना

१. दौड़ना	परिश्रम करना।
२. दौड़ लगाना	बारबार जाना।
३. दौड़धूप	प्रयत्न
४. दौड़ादौड़ी	जल्दबाजी।

(१९) धरना

१. धरना	पकड़ना।
२. धरना देना	सत्याग्रह करना।
३. धर-पकड़	गिरफ्तारी।
४. धरा का धरा रह जाना	काम में न आना।
५. धरा-धराया	संचित।
६. धराऊ	कभी कभी काम आने वाला।
७. धर देना	मारना।
८. धर पकड़ना	दौड़ कर पकड़ना।
९. धर दबोचना	चढ़ बैठना।
१०. धर लाना	जबर्दस्ती लाना।

(२०) नाचना

१. नाचना	इशारे पर काम करना।
२. नाच नचाना	परेशान करना।
३. नच्चू	खुशामदी।

(२१) फूलना

१. फूलना	घमंड करना।
२. फूल	कोमल।
३. फूलाफूला	खूब खुश।
४. फूला हुआ	क्रुद्ध।

(२२) मिलना

१. मिलना	मित्रता करना।
२. मिलाप	मित्रता।
३. मेलजोल	मित्रता।
४. मेला	जहाँ सब मिलें।
५. मिला-भेंटी	बिदाई।

(२३) होना

१. होने लगना	प्रारम्भ होना।
२. हुआ-हुवाया	पूर्व निश्चित।
३. हो चुकना	बीत जाना।
४. हो गुजरना	घटित होना।
५. होनी	भाग्य।
६. होनहार	अच्छे भविष्य वाला, अवश्यंभावी।
७. होना-हवाना	प्राप्त होना।

उपर्युक्त मुहावरों के अतिरिक्त सैकड़ों ऐसे मुहावरे हैं जिनकी गणना विविध वर्ग में करली जाती है। यथा

विविध मुहावरे—

१. अंधे की लकड़ी	सहारा।
२. आंख के अंधे, गाठ के पूरे —	मूर्ख किन्तु धनी।
३. अंधे के साथी अन्धे	मूर्ख के साथी मूर्ख।
४. अंधे की बटेर	बिना प्रयत्न के मिली वस्तु।
५. अंधे की आंख	संकट मे सहारा।
६. अंग लगना	स्वस्थ होना।
७. अंगारे उगलना	क्रोध में बोलना।
८. अंग-अंग टूटना	थक जाना

९. अंधेरे का उजाला — वंश का होनहार बालक अथवा निराशा मे आशा ।
१०. अक्ल का दुश्मन — मूर्ख ।
११. अपने मुँह मियामिट्ठू — आत्म प्रशसा करना ।
१२. आसमान से बातें करना — ऊंची कल्पना करना ।
१३. आच न आना — नुकसान न होना ।
१४. आंधी के आम — प्रयत्न के बिना बहुत प्राप्ति ।
१५. आग मे घी — क्रोध बढाना ।
१६. आकाश पाताल का अन्तर — बहुत बडा अन्तर ।
१७. आठ आठ आसू रोना — फूट फूट कर रोना ।
१८. आस्तीन का सांप — धोखेबाज, विश्वासघाती ।
१९. आटा गीला — विपत्ति मे विपत्ति ।
२०. आटे दाल का भाव — दुख का अनुभव
२१. अगर मगर करना — टालमटोल करना ।
२२. आग बबूला — बहुत क्रुद्ध ।
२३. आग मे सींचना — कष्ट देना, किन्तु नम्रता से ।
२४. आसमान पर थूकना — बेकार लांछन लगाना ।
२५. अपनी खिचड़ी अलग पकाना — सबसे न्यारा रहना ।
२६. अपने पैर कुल्हाड़ी मारना — स्वयं अपना नुकसान करना ।
२७. अंगारा होना — गुस्सा होना ।
२८. अंगारो की वर्षा — कड़ी धूप ।
२९. इधर उधर करना — टालमटोल करना ।
३०. इनेगिने — थोड़े से ।
३१. इधर सुना, उधर निकाला — ध्यान न देना ।
३२. ईंट से ईंट बजाना — बरबाद करना ।
३३. ईद का चाद — बहुत कम दर्शन ।
३४. ईंट का जवाब पत्थर से — जैसे को तैसा ।
३५ ईंगुर सगाना — स्त्री से विवाह करना

३६. उंगली पकड़कर पहुँचा पकड़ना	थोड़ी सुविधा के बाद अधिक की माँग करना।
३७. उधार खाना	ताक में रहना।
३८. उधेड़-बुन करना	सोच विचार करना।
३९. ऊटपटांग कहना	अंटसंट बकना।
४०. ऊपर होना	चढ बैठना।
४१. काया पलट	महा परिवर्तन
४२. कच्चा काम	अधूरा काम।
४३. कच्चे कान वाला	शीघ्र विश्वास करने वाला।
४४. कागजी घोड़ा	व्यर्थ की कल्पना
४५. कुत्ते की मौत	लावारिस मरना।
४६ कागज काला करना	व्यर्थ लिखना।
४७. काटे बोना	दुख देना।
४८. कांटे चुनना	दुख दूर करना।
४९. खेत रहना, होजाना	मर जाना।
५०. खटाई में पड़ना	निश्चय न होना।
५१. खेल खेल में	अनजाने।
५२. ख्याली पुलाव	व्यर्थ कल्पना।
५३. खरगोश चाल	अन्त में असफल, पहले तेजी दिखाना।
५४. गधे का सींग	असम्भव।
५४. गुदड़ी का लाल	दरिद्र किन्तु होनहार।
५५. गूलर का फूल	असम्भव।
५६. गाढे का मित्र	संकट का साथी।
५७. गुरुघंटाल	बहुत चालाक।
५८. गोबर-गणेश	महामूर्ख।
५९. गुड़ गोबर करना	काम बिगाड़ देना।
६०. गड़े मुर्दे उखाड़ना	पिछली बातों पर झगड़ना।
६१. गधे के गधे	मूर्ख के मूर्ख, मूर्ख परम्परा।
६२. घड़ो पानी पड़ना	शरमा जाना।
६३. घर बैठे मिलना	बिना परिश्रम के मिलना।

६४. घर-घुस — सदा घर मे रहने वाला, कायर, डरपोक।
६५. घाव पर नमक — दुख मे दुख देना।
६६. घोड़े बेचकर सोना — निश्चित रहना।
६७. घी के दिए जलाना — बहुत प्रसन्न होना।
६८. घी की मक्खी — दूर फेंकना।
६९. घाट घाट का पानी पीना — देश देशान्तर भ्रमण करना।
७०. चादर फैलाकर सोना — निश्चित सोना।
७१. चिकना घड़ा — बेशरम।
७२. चिकनी चुपड़ी बात — चापलूसी।
७३. चिकनी खोपडी — चालाक।
७४. चुल्लू भर पानी में मरना — लज्जित होना।
७५. चिराग तले अंधेरा — आशा के विपरीत कार्य होना।
७६. चीटी के पैर लगना — घमड करना।
७७. चादर के समान पैर फैलाना — अपनी सीमा में काम करना।
७८. चार चाद लगाना — शोभा बढाना।
७९. चादमारी — अभ्यास।
८०. छटा हुआ — दुष्ट।
८१. छोटे मुंह बड़ी बात — हैसियत से बढ़कर बोलना।
८२. छिपा रुस्तम — जिसका भेद न जान पड़े।
८३. जलना-भुनना — कुढ़ना।
८४. जबानी जमा खर्च करना — गप्प लड़ाना।
८५. जबान पर लगाम लगाना — कम बात करना।
८६. जमीन पर पैर न रखना — घमंड करना।
८७. जी जी करना — खुशामद करना।
८८. जूतिया चटकाना — मारे मारे फिरना।
८९. जान मे जान आना — हौसला बधना।
९०. जंग लगना — बात पुरानी पड़ जाना।
९१. टकसाली — शुद्ध, खरा।
९२ टोपी — अपमान करना

९३. टका सा जवाब देना — एकदम टरका देना।
९४. ढाई दिन के बादशाह — थोड़े समय के स्वामी।
९५. ढपोर शंख — बकवादी।
९६. तख्ता पलटना — राज्य बदलना।
९७. तिल का ताड़ — बात बढ़ाना।
९८. तीन पांच करना — झगड़ा करना।
९९. तीन तेरह करना — इधर उधर करना।
१००. न तीन मे, न तेरह मे — कहीं के नहीं।
१०१. तोता चश्मी — मुंह देखा व्यवहार।
१०२. तोता रटन्त — बिना समझे हुए दुहराना।
१०३. थाली का बैगन — किसी का नहीं।
१०४. दाल मे काला — सन्देहपूर्ण।
१०५. दाल गलना — काम बनना।
१०६. द्रोपदी का चीर — अनन्त।
१०७. दिन में तारे दिखाई पड़ना — घबड़ा जाना।
१०८. दिन दूना रात चौगुना — लगातार खूब उन्नति होना।
१०९. दूज का चांद — ईद का चांद, कम कम दर्शन।
११०. दोनों हाथ में लड्डू — सब प्रकार से आनन्द।
११. दानापानी — जीविका।
१२. दालभात — बहुत सरल, अभ्यस्त।
१३. दबे पांव भागना — चुपचाप खिसक जाना।
१४. दो टूक बात — स्पष्ट बात।
१५. दंग हो जाना — आश्चर्य करना।
१६. दिन रात एक करना — खूब परिश्रम करना।
१७. दो कौडी — तुच्छ।
१८. दीन दुनियां भूल जाना — सब कुछ भूल जाना।
१९. दिन फिरना — अच्छे दिन आना।
१२०. धोती ढीली होना — घबड़ा जाना।
२१. धोखे की टट्टी — धोखे में डालना।
२२. धता बताना — टालमटोल करना।

६४ छ — रोब दिखाना।

६ — सत्यवादी।

ाना — घबड़ा जाना।

फेर मे पडना — पैसे के चक्कर में फसना, कंजूसी दिखाना।

ाही — अत्याचार।

२८. ानी करना — दोष खोजना।

२९. नदी नाव संयोग — भाग्य से मिलना।

१३०. नमक मिर्च लगाना — बात बढाना।

३१. नौ दो ग्यारह होना — भागना।

३२. नाक पर मक्खी न बैठने देना — शान पर बट्टा न लगने देना।

३३. नाम करना — प्रसिद्ध होना।

३४. नाम धरना — दोषी बनाना।

३५. पानी पानी होना — शरमाजाना।

३५. पहाड़ टूटना — एकदम विपत्ति आना।

३५. पानी का बुलबुला — क्षण मे नष्ट होने वाला।

३६. पते की बात कहना — सही बात कहना।

३७. पानी भरना — वश मे होना।

३८. पापड़ बेलना — कुचक्र करना।

३९. पाला पड़ना — काम पड़ना।

१४०. पौ बारह — काम सिद्ध।

४१. पाप काटना — झगडा दूर करना, सम्बन्ध छोड़ना।

४२. पिंड छुडाना — जान बचाना।

४३. पुराना घाघ — बहुत चतुर।

४४ पुराना घाव — पुराना कटु स्मरण।

४५. पत्थर की लकीर — अटल होना।

४५. पानी फिरना — समाप्त होना।

४६. पट्टी पढाना — स्वार्थ पूर्ण सलाह देना।

४७. पानी के मोल देना — बहुत सस्ता देना।

४८. फलना फूलना	खुश हाल होना।
४६. फजीहत करना	डाटना, फटकारना।
५०. बगल झाकना	इधर उधर देखना, चुप हो जाना।
५१. बालू की दीवार	अस्थिर।
५२. बीड़ा उठाना	जिम्मेदारी लेना।
१५३. बात का धनी	दृढ़ प्रतिज्ञ।
१५४. बे पेंदी का लोटा	अस्थिर।
१५५ बाज न आना	आदत न छोड़ना।
१५६. बाए हाथ का खेल	सरल कार्य।
५७. बात का बतंगड़	बात बढाना।
५८. बेपर की उड़ाना	निराधार कहना।
५६. बाग बाग होना	प्रसन्न होना।
१६०. बट्टा लगाना	कलंक लगाना, हानि पहुँचाना।
६१. बाल की खाल निकालना —	नुक्ता चीनी करना।
६२. बात बात मे बात बढ़ना —	शीघ्र झगड़ा होना।
६३. बात बनाना	बहाने करना।
६४. बात कसना	ताना देना।
६५. बासो उछलना	प्रसन्न होना।
६६. भण्डाफोड़ करना	भेद खोल देना।
६७. भूंजी भांग नहीं	बहुत गरीब।
६८. भाड़े का टट्टू	किराए का आदमी।
६६. भूत सवार होना	हठ करना।
१७०. भिड़ के छत्ते में हाथ देना	जान बूझ कर आफत बुलाना।
७१. भूसा भरा हुआ दिमाग	मूर्ख।
७२. मन के लड्डू खाना	सोच सोच कर प्रसन्न होना।
७३. मन मैला होना, मन मुटाव होना	शत्रुता होना, उदास होना।
७४. मन मारना	उदास होना।
७५ माई का लाल	साहसी आदमी।

७६ माल बनाना	धन कमाना ।
७७ मोटा आसामी	धनवान ग्राहक ।
७८. माला जपना	याद करना, शान्त होकर बैठना ।
७९. मिट्टी के माधो	महामूर्ख ।
१८०. मिट्टी मे मिल जाना	बरबाद हो जाना ।
८१. रफू चक्कर होना	भाग जाना ।
८२. राई-राई होना	बिखर जाना ।
८३. रोडा अटकाना	विघ्न पहुंचाना ।
८४. रंग दिखाना	प्रभाव जमाना ।
८५. राम राम करना	स्वागत करना, बिदा होना, सम्बन्ध छोड़ना, धिक्कारना ।
८६. लोहे के चने	कठिन काम ।
८७ लहू का घूंट पीना	अपमान सहना, क्रोध रोकना ।
८८. लंका काड होना	मारपीट या अग्नि काड होना ।
८९. लट्टू होना	रीझ जाना ।
१९० लुटिया डुबाना	इज्जत गंवाना ।
९१. लोहा मानना	अधिकार स्वीकार करना ।
९२. लंगोटिया यार	बचपन का मित्र ।
९३. लाल पीला होना	क्रोध करना ।
९४. लकीर के फकीर	पुरानी परिपाटी पर चलना ।
९५. लौंडपना	मूर्खता, बचपन ।
९६. लोट पोट होना	बहुत प्रसन्न होना ।
९७. लम्बा होना	भाग जाना ।
९८. श्रीगणेश करना	आरम्भ करना ।
९९. शहद लगाकर चाटना	बेकार की चीज को खूब संभालना ।
२००. सितारा चमकना	यशस्वी होना ।
१. सूरज को दीपक दिखाना	अति प्रसिद्ध व्यक्ति का परिचय देना ।
२. सिक्का जमाना	धाक जमाना ।
३. सालिगराम के बट्टे	सब एक जैसे ।
४. हवा लगना	संगति का प्रभाव पड़ना ।

५. हवा से बात करना	बहुत तेज दौड़ना।
६. हवा हो जाना	भाग जाना।
७. हवा बाधना	गप्प लडाना, झूठी शान बघारना।
८. हवाई उड़ना	उदास होना।
९ हवाई किले बनाना	व्यर्थ कल्पना करना।
२१०. हक्का बक्का रह जाना	आश्चर्य चकित हो जाना।
११. हवा निकालना, खिसकना — डर जाना।	
१२. होश मे आना	समझ मे आना।
१३ होश संभालना	उम्र मे बडा होना।
१४. होश फाख्ता होना	घबडा जाना।
१५. हाथी निगलना	बड़ी चीज हजम कर जाना।
१६. हाय तोबा करना	बेकार चिल्लाना।

अब नीचे कुछ मुहावरों के उदाहरण, अर्थ और प्रयोग के साथ दिए जा रहे हैं:—

१—बाल की खाल निकालना = नुक्ताचीनी करना।

प्रयोग—यह तुम्हारी क्या गन्दी आदत पड गई है कि हमेशा बाल की खाल निकाला करते हो।

२—सिर आंखों पर बिठाना = स्वागत करना।

प्रयोग—श्रीमान्‌जी, आप यहां सहर्ष पधारे, हम आपको अपने सिर आंखो पर बिठाने के लिए तैयार है।

३—कान खड़े होना = सावधान होना।

प्रयोग—जब मेरे घनिष्ठ मित्र गोपाल ने वहां मेरी बुराई करना आरम्भ कर दिया, तो मेरे कान खड़े हो गए।

४—गाल फुलाना = रूठना।

प्रयोग—ऐसी भी क्या बात है; जो गाल फुलाए बैठे हो।

५—दांत काटी रोटी = बहुत गहरी दोस्ती।

प्रयोग—रूस और चीन की तो दात-काटी रोटी है, वे तो एकमत रहेंगे।

६—पीठ फेरना या मुंह मोडना = प्रतिकूल होना।

प्रयोग—हे भगवान! दुनिया मुंह मोड ले, लेकिन तुम पीठ न फेरना, अन्यथा मैं अनाथ हो जाऊंगा।

७—मुट्ठी भरना, चादी का जूता मारना (कहावत) = रिश्वत देना।

प्रयोग—आजकल जब सब तरफ मुट्ठी भरने से काम चल जाता है, तो किसी की खुशामद कोई क्यों करे, चांदी का जूता ही न मारे।

८—तलुवा सहलाना = खुशामद करना।

प्रयोग—आजकल बड़े बड़े अफसर इन नेताओं का तलुवा सहलाते है।

६—बछिया के ताऊ = महामूर्ख।

प्रयोग—तुम से क्या रोना रोये, तुम तो पूरे बछिया के ताऊ हो।

१०—बंदर घुड़की = कोरी धमकी।

प्रयोग—वह बनिया उस दुष्ट की बंदर घुडकी मे आकर सब कुछ गंवा बैठा।

११—उल्लू सीधा करना = काम निकालना।

प्रयोग—सुधा बड़ी चालाक है, सब जगह अपना उल्लू सीधा कर लेती है।

१२—रंगा सियार = धोखेबाज।

प्रयोग—इस मन्दिर के महन्तजी बडे रगे सियार है। पूजा का ढोग करते हैं। उनका धन्धा ही और है।

लोकोक्तियां

किसी भी भाषा के विकास में लोकोक्तियों का बड़ा हाथ होता है। उनके द्वारा हमें पूर्वजो का संचित अनुभव सहज ही उपलब्ध हो जाता है। आज ये लोकोक्तियां या कहावतें हमारे जीवन में इतनी घुलमिल गई हैं और महत्व-पूर्ण बन गई है कि इनके बिना हमारा काम चल ही नही सकता है। ये कहावतें, सच पूछो, तो ऐसे अमोघ रामबाण हैं कि कभी कभी हम केवल इन्ही का प्रयोग करते हैं और दूसरे शब्दो का उच्चारण तक नही करते हैं, फिर भी अपने उद्देश्य के स्पष्टीकरण में हमे अचूक सफलता प्राप्त हो जाती है। नीचे कुछ कहावतों के उदाहरण, अर्थ और प्रयोग दिए जा रहे हैं:—

१. अन्धो मे काना राजा = बेपढो में थोड़ा साक्षर भी विद्वान् बन बैठता है।

प्रयोग—प० चैनसुख गाव में अपनी विद्या की धाक जमाए हुए हैं, यद्यपि उन्होंने कभी विद्यालय का मुंह तक नहीं देखा। वास्तव में वे 'अन्धो में काने राजा' है।

२. ऊंची दुकान फीका पकवान या नाम बड़े दर्शन थोड़े = नाम बहुत काम हलका।

प्रयोग—कल मैं 'आनन्द होटल' गया। बहुत नाम था, मगर घंटे भर में चाय आई और वह भी बेकार। दाम भी बहुत अधिक देने पडे। क्रोध मे कह गया 'ऊंची दुकान फीका पकवान'।

३. ऊंट बगीचे मे भी जाय, तो काटा खाय = अच्छी चीज मे भी दोष निकालना।

प्रयोग—बहुत से आलोचक महा कवियों के काव्य मे भी दोष ही ढूंढते है। इसी को कहते है 'ऊंट बगीचे में जाय, तो भी काटे खाय।'

४. ऊंट के मुंह मे जीरा = अधिक भोजन करने वाले को कम खिलाना।

प्रयोग—परमसुख चौबे पक्का ५ सेर खाते है, कल सेठ दमडीमल ने उन्हे पाव भर मलाई खिलाई तो वे बिगड़ कर बोले 'ऊंट के मुंह मे जीरा।'

५. एक पन्थ दो काज = एक साथ दो काम होना।

प्रयोग—काशी गया था 'इंटरव्यू' देने और गंगा स्नान भी हो गया। मैंने कहा 'एक पंथ दो काज'।

६. कहा राजा भोज कहा भुजवा तेली = नाम एक होने से ही बराबरी नहीं होती।

प्रयोग—मुंशी जवाहरलाल कचहरी मे मामूली मुहर्रिर है, कल नेहरूजी की तरह भाषण देने लगे 'आराम हराम है।' मैंने कहा बस अपनी हैसियत में आ जाओ 'कहां राजा भोज कहा भुजवा तेली।'

७ जैसा देश वैसा भेष समय और स्थान देख कर चलना।

प्रयोग—प्रो. शर्मा गुरुकुल में खद्दर का धोती कुर्ता पहन कर पढ़ाते थे। यहां गवर्नमेंट कालेज में सूट और टाई में आते हैं। उस दिन पूछा, तो हंस कर बोले 'जैसा देश वैसा भेष।'

८. जिसकी लाठी उसकी भैंस = बलवान् की विजय होती है।

प्रयोग—इस मकान पर कुछ लोगों ने जबर्दस्ती अधिकार कर लिया है। बिचारा मकान मालिक बुड्ढा और अकेला है, इसलिए कुछ कर नहीं सकता। इसी को कहते हैं 'जिसकी लाठी उसकी भैंस।'

९. तबेले की बला बन्दर के सिर = किसी का पाप, किसी को भुगतना पड़े।

प्रयोग—आफिस में कुछ लोग छुट्टी पर चले गये हैं। उनका काम भी शेष लोगों को करना पड़ेगा। इसी को कहते हैं 'तबेले की बला बन्दर के सिर।'

१० दमड़ी की हांडी गई, कुत्ते की जात पहचानी गई = थोड़े नुकसान से किसी की बुरी आदत का पता चल जाय।

प्रयोग—वह चोर लड़का इधर उधर घूमता रहा, फिर चम्मच ही चुराकर ले गया, और कोई बड़ा नुकसान न कर सका। मैंने कहा, चलो 'दमड़ी की हांडी गई कुत्ते की जात पहचानी गई।'

११. धोबी का कुत्ता घर का न घाट का = इधर के रहे न उधर के।

प्रयोग—वहां से इस्तीफा देकर यहां आया था। यहां भी नोटिस मिल गया। यह तो वैसा ही हुआ जैसा 'धोबी का कुत्ता घर का न घाट का।'

१२. नाच न जाने आंगन टेढ़ा = अपनी अयोग्यता को छिपा कर दूसरे को अयोग्य कहना।

प्रयोग—कल सरला से कहा कि जरा हारमोनियम पर एक गीत गा दो, बोली, यह हारमोनियम ही खराब है, कैसे गाऊं। तभी निमला बोल पड़ी 'नाच न आवे आंगन टेढ़ा।'

१३. नागा क्या नहावेगा, क्या निचोड़ेगा = दरिद्र दूसरो की क्या सहायता करेगा ।

प्रयोग—धर्मपालजी स्वय तो चन्दे से काम चलाते है, लेकिन दूसरो की सहायता करने के लिए, जब देखो जब शान बघारते रहते हैं । यह देख कर मैंने कहा कि 'नागा क्या नहावेगा, क्या निचोड़ेगा ।'

१४ पराधीन सपनेहु सुख नाहीं = परतन्त्रता दुख देने वाली है ।

प्रयोग—अभी आज एक सप्ताह का 'टूर' करके लौटा, अभी फिर बाहर जाने का 'आर्डर' आ गया । जाना ही पडेगा, क्या करूं 'पराधीन सपनेहुं सुख नाही' ।

१५. पाचो सवार दिल्ली जा रहे हैं = बड़ो के साथ स्वयं को भी बड़ा समझना ।

प्रयोग—बा० रामशरण कल बडे साहब और कुछ अफसरो की सेवा के लिए उनके साथ 'अशोक होटल' जा रहे थे । पूछने पर बड़ी शान मे बोले हम सब 'अशोक होटल' जा रहे हैं' और जा रहे थे पिछलग्गू बनकर तभी बा० मुरारी-लाल ने कहा, अरे भाई ये 'पाचो सवार दिल्ली जा रहे है ।'

१६. बाप न मारी मेढ़की, बेटा तीरन्दाज = अधिक डींग मारने वाला ।

प्रयोग—कल उस मूर्ख मिस्त्री ने मेरा रेडियो खोल खालकर खराब कर डाला । बडा 'एक्सपर्ट' बनता था । दुष्ट कही का 'बाप न मारी मेढ़की, बेटा तीरन्दाज ।'

१७. बन्दर क्या जाने, अदरक का स्वाद = किसी अमूल्य वस्तु का मूल्य न पहचानना ।

प्रयोग—आज एक पाव शक्कर लाया, दुकानदार ने जिस कागज मे उसकी पुड़िया बांधी, वह हस्तलिखित रामायण का एक पन्ना था । देखते ही खेद हुआ और मुंह से निकल पड़ा 'बन्दर क्या जाने अदरक का स्वाद ।'

७ जैसा देश वैसा भेष — समय और स्थान देख कर चलना।
प्रयोग प्रो शर्मा गुरुकुल मे खद्दर का धोती कुर्ता पहन कर पढाते थे। यहां गवर्नमेंट कालेज में सूट और टाई में आते हैं। उस दिन पूछा, तो हंस कर बोले 'जैसा देश वैसा भेष।'

८ जिसकी लाठी उसकी भैंस = बलवान् की विजय होती है।
प्रयोग—इस मकान पर कुछ लोगों ने जबर्दस्ती अधिकार कर लिया है। बिचारा मकान मालिक बुड्ढा और अकेला है, इसलिए कुछ कर नहीं सकता। इसी को कहते हैं 'जिसकी लाठी उसकी भैंस।'

९. तबेले की बला बन्दर के सिर = किसी का पाप, किसी को भुगतना पड़े।
प्रयोग—आफिस में कुछ लोग छुट्टी पर चले गये हैं। उनका काम भी शेष लोगो को करना पड़ेगा। इसी को कहते है 'तबेले की बला बन्दर के सिर।'

१० दमड़ी की हांडी गई, कुत्ते की जात पहचानी गई = थोड़े नुकसान से किसी की बुरी आदत का पता चल जाय।
प्रयोग—वह चोर लड़का इधर उधर घूमता रहा, फिर चम्मच ही चुराकर ले गया, और कोई बड़ा नुकसान न कर सका। मैंने कहा, चलो 'दमड़ी की हांडी गई कुत्ते की जात पहचानी गई।'

११ धोबी का कुत्ता घर का न घाट का = इधर के रहे न उधर के।
प्रयोग—वहां से इस्तीफा देकर यहां आया था। यहां भी नोटिस मिल गया। यह तो वैसा ही हुआ जैसा 'धोबी का कुत्ता घर का न घाट का।'

१२. नाच न जाने आगन टेढ़ा = अपनी अयोग्यता को छिपा कर दूसरे को अयोग्य कहना।
प्रयोग—कल मरला से कहा कि जरा हारमोनियम पर एक गीत गा दो, बोली, यह हारमोनियम ही खराब है, कैसे गाऊ। तभी विमला बोल पड़ी नाच न आवै आंगन टेढ़ा।'

१३ नागा क्या नहावेगा क्या निचोड़ेगा दरिद्र दूसरो की क्या सहायता करेगा ।

प्रयोग—धर्मपालजी स्वयं तो चन्दे से काम चलाते है, लेकिन दूसरो की सहायता करने के लिए, जब देखो जब शान बघारते रहते हैं । यह देख कर मैंने कहा कि 'नागा क्या नहावेगा, क्या निचोड़ेगा ।'

१४. पराधीन सपनेहु सुख नाहीं = परतन्त्रता दुख देने वाली है ।

प्रयोग—अभी आज एक सप्ताह का 'टूर' करके लौटा, अभी फिर बाहर जाने का 'आर्डर' आ गया । जाना ही पडेगा, क्या करूं 'पराधीन सपनेहुं सुख नाहीं' ।

१५. पाचो सवार दिल्ली जा रहे हैं = बड़ो के साथ स्वयं को भी बड़ा समझना ।

प्रयोग—बा० रामशरण कल बडे साहब और कुछ अफसरो की सेवा के लिए उनके साथ 'अशोक होटल' जा रहे थे । पूछने पर बडी शान से बोले हम सब 'अशोक होटल' जा रहे हैं और जा रहे थे पिछलग्गू बनकर तभी बा० मुरारीलाल ने कहा, अरे भाई ये 'पाचों सवार दिल्ली जा रहे हैं ।'

१६. बाप न मारी मेढकी, बेटा तीरन्दाज = अधिक डींग मारने वाला ।

प्रयोग—कल उस मूर्ख मिस्त्री ने मेरा रेडियो खोल खालकर खराब कर डाला । बडा 'एक्सपर्ट' बनता था । दुष्ट कही का 'बाप न मारी मेढकी, बेटा तीरन्दाज ।'

१७. बन्दर क्या जाने, अदरक का स्वाद = किसी अमूल्य वस्तु का मूल्य न पहचानना ।

प्रयोग—आज एक पाव शक्कर लाया. दुकानदार ने जिस कागज मे उसकी पुड़िया बांधी, वह हस्तलिखित रामायण का एक पन्ना था । देखते ही खेद हुआ और मुंह से निकल पड़ा 'बन्दर क्या जाने अदरक का स्वाद

१८. बिल्ली के भाग्य से छींका टूटना – अकस्मात् काम बन जाना।

प्रयोग—कल एक रेडियो खरीदने जा रहा था, तभी मिश्राजी मिल गए, बोले 'विदेश जा रहा हू, कुछ भारी सामान और रेडियो अपने पास ही रख लो।' मैंने मन ही मन कहा कि यह तो वैसा ही हुआ जैसे 'बिल्ली के भाग्य से छींका टूटे।'

१९. मान न मान, मैं तेरा मेहमान = जबर्दस्ती पीछे पड़ना।

प्रयोग—कल रात एक सज्जन अपनी पत्नी और पांच बच्चो के साथ आए और घर मे टिक गए। पूछने पर बोले 'मैं आपके मौसे के भतीजे के साले का गुरु भाई हूं। दस दिन रहकर दिल्ली देखना है।' मैंने मन ही मन कुढकर कहा 'वाह मान न मान, मैं तेरा मेहमान।'

२०. मियां की जूती, मिया के सिर = किसी की चीज का, उसी के विरुद्ध प्रयोग करना।

प्रयोग—पिछले सप्ताह मिस शर्मा ने 'पिकनिक' के लिए चन्दा इकट्ठा किया था लेकिन किसी कारण जा न सके। आज जब उनसे एम. ए. पास होने की मिठाई मांगी गई, उन्होंने सबको भर पेट खिलाया। फिर जब 'पिकनिक' की बात चली, तो वे बोली कि चन्दे से ही तो आप सबको दावत दी थी। इस पर मिस वर्मा बिगड गईं 'वाह मियां की जूती, मिया के सर।'

२१. राम नाम जपना, पराया माल अपना = छल कपट करना।

प्रयोग—लाला काशीनाथ तिलक लगाए, रामनामी दुपट्टा ओढे तथा गले मे माला डाले हुए दुकान पर शोभित थे और ग्राहक को घटिया माल देकर छोटे बाटो से कम तौल रहे थे। तब उसने कहा 'वाह लालाजी, 'राम नाम जपना, पराया माल अपना।'

२२. लातों के देव बातो से नहीं मानते = दुष्ट लोग समझाने से नही मानते।

प्रयोग घण्टे भर से कुली से कह रहा था एक लेने डेढ लेले

अरे दो रुपए लेने' किन्तु रिमाग ही नहीं मिलता। आखिर स्टेशन मास्टर से शिकायत कर दी तो बच्चू तीन आने में ही मान गए।

सिर मुंडाते ही ओले पड़ना = आरम्भ मे विघ्न पड़ना।

प्रयोग—कल बहुत दिनों में तो दुकान खोली और सुबरे सुबेरे ही इंस्पेक्टर आ मरा और चालान कर गया तो पडोसी ने कहा कि विचारे को 'सिर मुंडाते ही ओले पड़ गए।'

सौ सुनार की, एक लुहार की = बार बार सहना, एक बार कम के बदला लेना।

प्रयोग—मोहन जब देखो गालियां देता रहता है और थपडियाता रहता है, कल मैंने एक घूंसा धर दिया, बस वह बेहोश हो गया, मैंने कहा 'सौ सुनार की, एक लुहार की।'

समरथ को नहिं दोष गुसाईं = शक्तिशाली को कोई दोष नही होता।

प्रयोग—वैसे ब्रह्म हत्या को बड़ा दोष मानते थे, किन्तु राम ने रावण (ब्राह्मण) को मार डाला तो किसी ने चूं तक न किया। सच है 'समरथ को नहिं दोष गुसाईं।'

होनहार बिरवान के होत चीकने पात = होनहार आदमी का बचपन से ही पता चल जाता है।

प्रयोग—स्वामी दयानन्द ने बहुत छोटी अवस्था में ही समस्त विद्याओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया था और वे अनेक सभाओं मे शास्त्रार्थ करके बडे बड़े दिग्गजों को परास्त कर देते थे। उन्हें देख कर उनके गुरु कहा करते थे कि 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात।'

हीरे की परख जौहरी करता है = गुणी गुण को पहचानता है।

प्रयोग—बा० रामचन्द्र १० वर्षों से क्लर्क थे। नये आफिसर ने उनके प्रमाण-पत्र देख कर और उनसे दो मिनट बातें कर के उन्हें तुरन्त हैडक्लर्क बना दिया। सच है 'हीरे की परख जौहरी करता है।'

हथेली पर सरसों उगाना = जल्दी से किसी काम में सफलता प्राप्त करना।

प्रयोग अभी कल तो आपने प्रार्थना पत्र दिया था और आज नौकरी के लिए आ गए। अभी तो बड़ा विचार होगा, साक्षात्कार होगा फिर कमेटी का निर्णय होगा। तब आइयेगा। आप तो 'हथेली पर सरसों उगाना चाहते है।'

२९. हल्दी (हर्रा) लगे न फिटकरी, रंग चोखा आ जाय = प्रयत्न कुछ नहीं और पूरे लाभ की आशा करना।

प्रयोग—आजकल के छात्र न तो पुस्तक खरीदना चाहते हैं, न डटकर पढना चाहते हैं और न कुछ परिश्रम करना चाहते है। उन्हे बस 'डिग्री' की इच्छा है। 'हर्रा लगे न फिटकरी रंग चोखा आ जाय' बस इसी को कहते है।

३०. हाथी के दाँत खाने के और दिखाने के और = वचन और कर्म भिन्न भिन्न होना।

प्रयोग—प्रो० माथुर हमे तो सिनेमा न देखने का उपदेश देते है और स्वयं तीन तीन शो रोज देखते है। इसी को कहते हैं 'हाथी के दांत खाने के और दिखाने के और।'

अब अभ्यास के लिए कुछ कहावतों के उदाहरण और अर्थ-मात्र दिए जा रहे हैं—

१. आग लगने पर कुआं खोदना = आवश्यकता होने पर प्रयत्न करना।
२. अपनी पगड़ी अपने हाथ = अपनी प्रतिष्ठा अपने हाथ होती है।
३. आंख फिरी माल दोस्तों का = थोड़ी लापरवाही करते ही भारी नुकसान हो गया।
४. अटका बनियां देय उधार = दबा हुआ आदमी ही खुशामद करता है।
५. अन्धा बांटे रेवड़ी, फिर फिर अपने देय = अपने रिश्तेदारो को ही लाभ पहुँचाना।
६. आगे कुआ पीछे खाई = दोनों ओर मुसीबत।
७. आंख के अन्धे नाम नयन-सुख = नाम के विपरीत गुण।
८. अपनी गली मे कुत्ता भी शेर होता है = अपने लोगो के बीच मे दुर्बल आदमी भी बलवान् हो जाता है।
९ अन्धी पीसे, कुत्ते खाय = कोई परिश्रम करे, कोई मौज करे।

१०. अपनी अपनी ढपली, अपना अपना राग – भिन्न भिन्न मत होना।

११. अधजल गगरी छलकत जाय या थोथा चना बाजे घना = नीच आदमी कुछ मिलते ही घमंड करने लगता है।

१२ अब पछताए होत क्या, जब चिड़िया चुग गई खेत या का वर्षा जब कृषी सुखाने = समय चूकि पुनि का पछताने, फिर पछताने से क्या।

१३. अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता = अकेला आदमी कुछ नहीं कर सकता।

१४. आकाश से गिरा, खजूर पर अटका = काम पूरा होने के समय, फिर नई बाधा का पड़ जाना।

१५. अंधे के आगे रोना, अपने नैन खोना = निर्दयी से दया की आशा व्यर्थ है।

१६. आप मरे जग परलय होय = मरने के बाद कुछ भी हो, क्या चिन्ता।

१७. आम के आम गुठली के दाम = दुहरा लाभ होना।

१८. आंधी के आम = बिना प्रयत्न के बहुतसा लाभ, किन्तु थोड़े समय के लिए।

१९. उलटा चोर कोतवाल को डांटे = अपना दोष न मान कर दूसरे को दोषी कहना।

२०. ऊधो का लेना न माधो का देना = किसी से कोई मतलब नहीं।

२१. उतर गई लोई, तो क्या करेगा कोई = बेशर्म आदमी किसी की चिन्ता नहीं करता है।

२२. एक और एक ग्यारह = एकता में बड़ी ताकत होती है।

२३. एक अनार सौ बीमार = एक स्थान के लिए सौ उम्मीदवार।

२४. एक तो चोरी दूसरे सीना जोरी = उल्टा चोर कोतवाल को डांटे।

२५. एक हाथ से ताली नहीं बजती = अकेले आदमी से झगड़ा नहीं होता, दो चाहिए।

२६. एक चुप सौ को हरावे = मौन रहने से सारी लड़ाई समाप्त हो जाती है।

२७. एक मछली सारे तालाब को गन्दा करती है = एक बदनाम से सब बदनाम हो जाते हैं।

२८. एक लकड़ी से सबको हांकना = सबके साथ एकसा व्यवहार करना।

२९. एक ही थैली के चट्टे बट्टे = सब एक ही जैसे।

३०. ओस चाट कर प्यास नहीं बुझती है = थोड़ी वस्तु से पूरा नही पड़ता है।

३१. ओखली मे सिर दिया, फिर चोटों से क्या डरना = लक्ष्य की प्राप्ति मे क्या घबड़ाना।

३२. ओला गले, खेत गलावे = दुष्ट आदमी स्वय तो मरता है, दूसरों के भी प्राण लेता है।

३३. ओछी संगत नीच की, आठो पहर उपाधि = नीच के साथ से सदा कष्ट होता है।

३४. काठ की हाड़ी एक बार चढ़ती है = धोखा, एक बार ही, दिया जा सकता है।

३५. कोयले की दलाली मे काले हाथ = बुरो की संगति से बदनामी होती है।

३६. काला अक्षर भैंस बराबर = महा मूर्ख या निरक्षर महाचार्य।

३७. कभी नाव गाड़ी पर, कभी गाड़ी नाव पर = एक दूसरे की सहायता से ही समय पर काम चलता है।

३८. काबुल में क्या गधे नहीं होते = मूर्ख आदमी अच्छी जगह मे भ मिल जाते हैं।

३९. खोदा पहाड़, निकली चुहिया = परिश्रम अधिक, लाभ कम।

४०. खग जाने खग ही की भाषा = साथ रहने वाले ही साथी का भे जानते हैं।

४१. खरबूजे को देखकर खरबूजा रंग बदलता है = साथी को देख साथी भी वैसा ही हो जाता है।

४२. खूंटे के बल बछड़ा नाचे = किसी के सहारे से शान दिखाना।

४३. खरी मजूरी चोखा काम = नकद दाम दो, अच्छा काम लो।

४४ खुदा गंजे को नाखून न दे भगवान दुष्ट को अधिकार न दे

४५ खनी सदेशन नही होनी स्वामी की दखरख मे ही काम होता है।

४६. गंगा गए तो गगादास, जमुना गए तो जमुनादास या जैसा देश वैसा भेष = जहां रहे वही का होकर रहे, मुह देखी बात करे।

४७. गुड़ खाय गुलगुलो से परहेज = बनावटी विरोध करना।

४८. गोदी मे छोरा, शहर मे ढिंढोरा या बगल मे लड़का गांव गुहार=पास मे वस्तु होना किन्तु चारो ओर खोजना।

४९. गुड खाए मरे तो विष क्यो दे = सीधे सीधे काम निकल जाय, तो दण्ड क्यों दे।

५०. गुरु तो गुड़ रह गए, चेले शक्कर हो गए = बड़े तो जहां के तहा रहे, किन्तु छोटे उन्नति कर गए।

५१. गागर मे सागर भरना = संक्षेप मे सब कुछ कह जाना।

५२. गवाह चुस्त, मुद्दई सुस्त = स्वयं तो मौज करे, दूसरे उसके लिए प्रयत्न करें।

५३. घर का भेदी लंका ढाहे = घर की फूट से सर्वनाश होना है।

५४. घर बैठे, गंगा आई = बिना प्रयत्न के सिद्धि मिलना।

५५. घर की मुर्गी साग बराबर = ज्यादा परिचय मे सम्मान नही रहता।

५६. घोडा घास मे दोस्ती करे तो खाय क्या = अपने पारिश्रमिक में क्या लाज ?

५७. घर घर मिट्टी के चूल्हे हैं = सभी समान हैं, सभी भीतर मे पोले हैं।

५८ घर का चकिया कोई न पूजे, जेहिका पीसा खाय = घरेलू आदमी का एहसान कोई नही मानता।

५९. चादी का जूता मारना = रिश्वत देकर काम बनाना।

६०. चमड़ी जाय पर दमडी न जाय = महा कंजूस।

६१. चन्दन की चुटकी भली, गाडी भरी न काठ = अच्छी वस्तु थोड़ी ही ठीक।

६२. चोर की डाढी मे तिनका = दोषी स्वयं घबडाता रहता है।

६३. चोरी का माल मोरी मे = बुरे का बुरा परिणाम।

६४. चार दिन की चांदनी, फेर अंधेरी रात = संसार मे सुख क्षणिक है।

६५. चुपड़ी और दो दो = दुहरा लाभ।

६६. चलती का नाम गाडी = चल जाय, तो सब कुछ ठीक है, ठहरना मौत के बराबर है।

६७. छोटा मुंह बडी बात = हैसियत से बढ़कर बात करना।

६८. छछूंदर के सिर मे चमेली का तेल = अयोग्य को अच्छी चीज मिल जाना।

६९. जल मे रह कर मगर से बैर = अपने आश्रयदाता से लडाई अच्छी नही।

७०. जिन खोजा तिन पाइया, गहरे पानी बैठ = परिश्रम से ही काम बनता है।

७१. जो गरजते हैं, बरसते नही या जो भोंकते हैं, काटते नही = बातूनी लोग कुछ नही कर सकते।

७२. जाके पांव फटी न बिवाई, सो क्या जाने पीर पराई = जिसने कभी दुख नही सहा, वह दूसरों के दुखो को क्या समझे।

७३. जब तक स्वास, तब तक आस = आखिरी क्षण तक आशा बनी रहती है।

७४. झोपडी मे रहे, महलो के सपन देखे = अलभ्य वस्तु की कामना करना।

७५. टेढ़ी अंगुली बिना घी नही निकलता = सिधाई से काम नही चलता।

७६. टेढी खीर = कठिन काम।

७७. टट्टी की ओट से शिकार खेलना = छिपा कर काम करना, दूसरो की सहायता से चुपचाप काम बनाना।

७८. डूबते को तिनके का सहारा बहुत है = दुखी व्यक्ति को थोड़ी सहायता ही काफी होती है।

७९. डेढ चावल की खिचड़ी पकाना = अपना काम अलग करना।

८०. ढाक के तीन पात = सदा उसी दशा मे ही रहना।

तीर नही तो तुक्का ही सही = पूरा काम यदि न बना तो थोड़ा ही सही।

तिल की ओट पहाड़ = जरा से सहारे से बड़ा काम करना।

तेल तिलों से ही निकलता है = दाता से ही दान मिल सकता है, वस्तु से ही वस्तु का मूल्य निकल सकता है।

तू डाल डाल, मैं पात पात = एक चालाक ही दूसरे चालाक को पछाड़ सकता है।

दीवाल के भी कान होते हैं = गुप्त बातें बहुत एकान्त में करनी चाहिए।

दुविधा मे दोनों गए माया मिली न राम = धोबी का कुत्ता घर न घाट का।

दूध का जला हुआ, छाछ फूंक कर पीता है = एक बार धोखा खाने पर दुबारा सावधान हो जाना।

दूर के ढोल सुहावने = दूर की चीज अच्छी ही लगती है।

दूध का दूध, पानी का पानी = पूरा सही सही न्याय करना।

नक्कारखाने मे तूती की आवाज = शोर में कौन किस की सुनता है ? बड़े आदमियों में छोटे की चिन्ता कौन करता है ?

नौ नगद, न तेरह उधार = नकद व्यवहार अच्छा, उधार वाला नही।

न रहे बांस न बजे बांसुरी = जड़ से समाप्त कर देना।

नौ दिन चले अढाई कोस = बहुत सुस्त।

नंगा बड़ा परमेश्वर से = दुष्ट आदमी से सब डरते है।

नीम हकीम खतरा जान या नीम हाकिम खतरा ईमान = अनुभवहीन आदमी से काम बिगड़ जाता है।

पढ़े फारसी बेचे तेल, ये देखो कुदरत का खेल = पढ़े लिखे, मगर बेकार, बेरोजगार।

प्यासा ही कुएं के पास जाता है = गरज बावली होती है।

पाँचो उंगलियां बराबर नहीं होती = सभी समान नही हो सकते।

बद अच्छा, बदनाम बुरा = कलंक अच्छा, कलंकित होना बुरा है।

बावन तोले पाव रत्ती = बिल्कुल सही।

बारह वर्ष दिल्ली मे रहे, भाड़ झोंकते रहे = अच्छे स्थान पर भी उन्नति न करना।

२ बहती गंगा में हाथ धोना = अवसर से लाभ उठाना।

३ बिना मांगे मोती मिले, मांगे मिले न भीख = समय की बलिहारी, जो मिलना है, वह मिलेगा।

४. भैंस के आगे बीन बाजे, भैंस खड़ी पगुराय = मूर्ख व्यक्ति किसी की कदर नहीं कर सकता।

५. भागते भूत की लंगोटी भली या सर्वनाश उत्पन्न होने पर विद्वान् लोग स्वयं आधा छोड़ देते हैं (संस्कृत) = जहां सब नष्ट हो रहा हो, वहां जो मिल जाय, वही ठीक है।

६. मन चंगा तो कठौती में गंगा या आप भला तो जग भला = यदि स्वयं ठीक है, तो सब ठीक है।

७. मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक = निश्चित सीमा तक प्रयत्न करना।

८. मन के लड्डू फिर फीके क्यों = जब कोरी कल्पना है, तो अच्छी कल्पना करो।

९. मानो तो देवता, नहीं तो पत्थर = विश्वास फलदायक होता है।

११०. मेरी बिल्ली मुझसे म्याऊं = अपना आश्रित व्यक्ति अपने को हानि पहुँचावे।

११. मियां बीबी राजी, तो क्या करेगा काजी = जब दो आदमी आपस में एक हो जावें, तो किसी का हस्तक्षेप बेकार होता है।

१२. मार के आगे भूत भागे = मार से सब घबड़ाते हैं।

१३. मलयागिरि की भीलनी, चंदन देय जलाय = कोई वस्तु यदि अधिक होती है, तो उसकी कदर नहीं होती।

१४. यथा राजा तथा प्रजा = जैसे स्वामी वैसे सेवक।

१५. यथा नाम तथा गुण = नाम और गुण के समान होना।

१६. रस्सी जल गई, ऐंठन न गई = सर्वनाश होने पर भी घमण्ड न छोड़ना।

१७. रोज कुआं खोदना, रोज पानी पीना = रोज कमाना, रोज खाना।

१८. रानी रूठेगी, अपना सुहाग लेगी = बला से, कोई नाराज हो, तो क्या।

१९. लकड़ी के बल बन्दरी नाचे या भय बिन होय न प्रीत = भय से ही सारे काम होते हैं।

१२० विष दे विश्वास न दे विश्वासघात न करे भले ही विष खिला दे।

२१ सावन सूखे न भादो हरे = सदा एक समान रहना।

२२. सोने मे सुगन्ध = सुन्दर वस्तु मे और अधिक गुण का होना।

२३. सत्तर चूहे खाय बिलैया, हज को चली = जन्म भर तो पाप करना और अन्त मे पुण्य करने का धोखा देना।

२४. साप मरे, न लाठी टूटे = काम बन जाय, कोई हानि न हो।

२५. शौकीन बुढ़िया चटाई का लहंगा = बेमेल काम करना।

२६ शिकार के वक्त कुतिया हगासी = मौके पर बहानेबाजी करना।

२७. साप निकल गया, फिर लकीर पीटने से क्या = समय चूकि पुनि का पछताने।

२८. सांच को आँच कहा = सच्चा आदमी कही नहीं घबड़ाता है।

२९. सौ सौ जूते पड़े, तमाशा घुस के देखेंगे = हानि होने पर भी हठ न छोड़ना।

१३०. हाथ कंगन को आरसी क्या ?
पढ़े लिखे को फारसी क्या ?
अर्थ—प्रत्यक्ष को क्या प्रमाण।

३१. होनी होय सो होयगी, अनहोनी नहि होय। या
तुलसी जस भवितव्यता, तैसी मिलो सहाय।
आयु न आवै न ताहि पै, ताहि तहा लै जाय॥
अर्थ—होनहार टलता नही है।

३२. हाजिर से हुज्जत नही, गए की तलाश नही।
अर्थ—वर्तमान की चिन्ता करना।

१३३. हरि मेरे हिरदय बसैं, खोजूं सब संसार।
अर्थ—पास की वस्तु को, दूर दूर, इधर उधर खोजना।

पत्र-लेखन

वर्तमान युग में सामाजिक जीवन बड़ा व्यस्त होता जा रहा है। व्यस्त के दो अर्थ हैं, कार्य-संलग्न और बिखरा हुआ। दोनो ही अर्थो मे 'व्यस्त' शब्द का प्रयोग किया गया है। पहले परिवार सम्मिलित था और जीविका की समस्या भी इतनी विषम न थी, जितनी आज है। आज परिवार बिखर गया है और उसके सभी सदस्य अपनी अपनी जीविका के निर्वाह के लिए आवश्यकता से अधिक कार्य-संलग्न है। ऐसी दशा में 'पत्र' ही एक ऐसा माध्यम रह जाता है, जो उन सभी छिन्न भिन्न सूत्रो मे एक सम्बन्ध स्थापित रखता है। किसी जमाने में 'पाती आधा मिलन है' कहा जाता था, आज तो 'पाती पूरा मिलन' हो गया है, क्योंकि जीवन मे अनेक ऐसे अवसर आते है, जब मनुष्य स्वयं न जाकर—केवल पत्र ही भेजकर—सारा काम चला लेने को विवश हो जाता है।

इस प्रकार पत्र वस्तुतः एक व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करता है। पारिवारिक जीवन ही नही, व्यावहारिक जीवन मे भी 'पत्र' का बड़ा महत्व है। वहां तो शायद ही कभी उन पत्र-मित्रों का साक्षात्कार हो पाता हो, किन्तु जीवन भर बहुत प्रगाढ़ और मधुर सम्बन्ध बने रहते हैं।

व्यवहार के अतिरिक्त, आज विदेशी पत्र-मित्रो की एक बाढ़ सी आ गई है। समाचार पत्रों में ऐसे पत्र-मित्रों की अनेक सूचनाएं छपा करती हैं। वे परस्पर एक सांस्कृतिक सम्बन्ध का निर्माण करते है, और 'सुदूर देश में भी उनका कोई अपना है' यह समझकर सदैव उत्साहित हुआ करते हैं। यह पत्र-मैत्री, कभी कभी पारिवारिक मैत्री से भी अधिक बढ़ जाती है। यदि इस दृष्टिकोण से देखा जाय तो हमारे दैनिक जीवन में पत्रों की बड़ी उपयोगिता है

आज के पत्र केवल समाचार वाहक ही नहीं रह गए हैं, प्रत्युत वे बहुत कुछ आगे बढ गए हैं। उनका कला पक्ष भी आज बहुत विकसित हो गया है। अनेक नई नई शैलियां इस दिशा मे भी प्रतिष्ठापित हो गई हैं। 'पत्र-साहित्य' के रूप मे आज वह सुस्थिर होता जा रहा है। महान् नेताओं, विचारकों और धर्मात्माओं के पत्र इस क्षेत्र मे प्रमाण हैं।

पत्र-लेखन आज इसीलिए हमारे अध्ययन का विषय है, ताकि हम उसको उपर्युक्त विशेषताओं से पूर्ण परिचित हो सकें।

पत्र-लेखक को पत्र लिखते समय, अनेक सावधानियों को बरतना पड़ता है। सरल, सरस और स्पष्ट होने के साथ साथ, उसे आवश्यकतानुसार संक्षिप्त या विस्तृत भी होना पड़ता है। यहीं उसकी कला की परख हो जाती है। वस्तुतः उसकी सबसे बड़ी सफलता इसी मे है कि वह चुने हुए सशक्त शब्दो में, डटकर अपनी बात इस तरह कह जावे कि पत्र पाने वाला उससे सदा के लिए प्रभावित बना रहे।

जैसा कि ऊपर संकेत किया जा चुका है, ये पत्र अनेक प्रकार के हो सकते हैं, (१) पारिवारिक, (२) सामाजिक, (३) व्यावहारिक, (४) सांस्कृतिक, आदि। इन सभी प्रकार के पत्रों में, निम्नांकित कुछ बातों का सामान्य रूप से ध्यान रखना पड़ता है:—

(१) *सम्बोधन*
समाचार
(३) *निवेदन*
(४) *पता*

इनमे सबसे महत्वपूर्ण अंग है 'पता', अन्यथा कितना भी महत्वपूर्ण पत्र हो, यदि वह अभीष्ट हाथो में नहीं पहुँच सका, तो सब बेकार हो जाता है, फिर दूसरा महत्व है 'सम्बोधन' का। यदि उसमें कुछ भी अनौचित्य हुआ, तो सम्भवतः पत्र-पाठक की भावना को पहले ही ठेस लग जावे और वह पूरे पत्र को भी न पढ़े, और यदि पढ़े भी तो यथेष्ट प्रभावित न हो सके।

इसके बाद दृष्टि जाती है 'निवेदन' पर। यदि वहां भी कोई अव्यवस्था हुई तो पूर्ववत् क्षोभ हो जाता है। अन्त में 'समाचार' तो अपना महत्व रखता ही है क्योंकि उसी में पत्र लेखक अपने समस्त व्यक्तित्व को निचोड़ कर मानो, रख देता है।

इस प्रकार पत्र का समाचार भाग जो वास्तव मे अत्यधिक मह पूर्ण है, क्योंकि पत्र साहित्य मे केवल उसी को ही प्रधानता मिलती है, व्य हारिक क्षेत्र में पिछड जाता है। यहा हम उसी क्रम से पहले 'पते' की कर रहे है।

पता—पता लिखते समय, सर्व प्रथम पाने वाले का पूरा नाम, उपाधिया लिखनी चाहिए। फिर मकान का नाम या नम्बर तथा गली नाम या नम्बर होना चाहिए। इसके बाद क्रम से मुहल्ले का नाम, क्षेत्र का (यदि कोई हो) और नगर का नाम लिखना चाहिए। गाव के पत्रो मे क्र गाव, डाकखाना और जिला का नाम अवश्य लिखना चाहिए। फिर अन्त प्रान्त का नाम लिखना न भूलें, संभवतः वह नगर या जिला या उसके ना मिलता जुलता नगर या जिला अनेक प्रान्तो में हो। विदेश को पत्र लि समय उस देश का नाम अवश्य लिखें। ध्यान रहे कि यदि पत्रों मे पता ग होता है तो उन्हें प्रान्त के 'मुर्दा पत्र घर' (डेड लेटर आफिस) में पहुँचा जाता है, जहां उनका 'पुनर्जन्म' नही होता है। यह पता, पोस्टकार्ड, लिफ या अन्तर्देशीय पत्र में निश्चित स्थान पर ही लिखा जाना चाहिए। स्वच्छता, स्पष्टता और सुपठता अनिवार्य होती है, साथ ही उचित टिकटो भी वहा प्रबन्ध होना चाहिए। नीचे पतो के कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं

(क) पोस्ट कार्ड का पता

(१) पोस्टकार्ड का पता (छोटे शहरो मे)

यहा चाहे जो कुछ लिखिए	टिकट ५ नए पैसे श्री तेजकरन डडिया, एम॰ ए म० नं० १०/४७, पंडित मार्ग जवाहर नगर अजमेर (राजस्थान)

कलकत्ता, बम्बई, दिल्ली आदि बड़े नगरो को, वहां के डाकखाने सुविधा के लिए अनेक भागों में बांट देते हैं, वहां उस भाग का नम्बर भी देना चाहिए जिसमें वह मुहल्ला स्थित हो। इससे बड़ी सुविधा हो जा और पत्र अति शीघ्र पहुंच जाता है। जैसे

टकार्ड का पता (कलकत्ता, बम्बई, दिल्ली आदि बड़े शहरों में)

यहाँ चाहे जो कुछ लिखिए	टिकट ५ नए पैसे श्री धर्मवीरजी सहायक अधिकारी, अर्थशास्त्र विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली—८

ा का पता (यदि गाव में डाकखाना नहीं हो)

यहाँ चाहे जो कुछ लिखिए	टिकट ५ नए पैसे प० राजेन्द्रकुमार शुक्ल गाव—राजपुर डाकखाना—कुम्हरावा जिला—लखनऊ

ा का पता (यदि गाव में ही डाकखाना हो)

यहाँ चाहे जो कुछ लिखिए	सेवा मे, टिकट ५ नए पैसे प० जगमोहन प्रसाद शुक्ल गाव तथा डाकखाना—इटौंजा जिला लखनऊ

ाट—गाव के पते मे डाकखाने के नाम के नीचे लकीर (हो सके तो लाल) अवश्य लिखिए और जिले का नाम कोष्ठक मे लिखिए ।

ख) लिफाफे का पता

पोस्टकार्ड के समान ही लिफाफे पर पता लिखा जात
अन्तर केवल इतना है कि लिफाफे में बाईं ओर नीचे की तरफ, भेजने
अपना नाम और पता भी—यदि चाहे—तो लिख सकता है। पोस्टक
भेजने वाले के नाम और पता लिखने की कोई निश्चित जगह नहीं होती ह

टिकट
१५ नए पैसे

सेवा में,
श्रीयुत सम्पादक महोदय,
'राष्ट्रदूत'
जयपुर
(राजस्थान)

प्रेषक:—
तिवारी बन्धु
पाल बीसला
अजमेर

यदि किसी लड़के या लड़की को पत्र लिखना हो तो 'द्वारा' या '
लिखकर फिर उसके पिता अथवा संरक्षक का नाम अवश्य लिखिए, जैसे

टिकट
१५ नए पैसे

कुमारी निर्मला
द्वारा पं० बाबूलाल मिश्र
सेंट्रल बैंक आफ इंडिया लि.
हरदोई (उत्तर प्रदेश)

प्रेषक
सुषमा शुक्ला
सी ९०, बापूनगर
जयपुर।

यदि किसी अप्रसिद्ध आदमी को पत्र लिखना हो तो 'द्वारा' या
लिखकर किसी प्रसिद्ध आदमी का नाम लिखना चाहिए, जिसके पा
रहता हो, जैसे

टिकट
१५ नए पैसे

मोहन चौकीदार
C/o सेठ नन्दप्रसाद अग्रवाल
'नन्दन भवन' ब्रह्मनगर
कानपुर
(उत्तर प्रदेश)

प्रेषक.—
मूलचन्द
C/o सेठ धन्नामल वीरमल
चादपोल, जयपुर।

देशीय-पत्र का पता—ऐसे पत्रो मे प्रेपक (भेजने वाला) के न
ने का स्थान नियत होता है, वही पर वह सब लिखना चाहि
ट वाले भाग के ठीक पीछे होता है। लिफाफे मे तो कुछ
। है, किन्तु इसके अन्दर कुछ नही रखना चाहिए, वरना वह

अन्तर्देशीय पत्र

टिकट
१० नए पैसे

डा० रामजी लाल मेहरोत्रा,
'रामभवन' नवीन मार्ग,
(दरीबा पो. आ. के सामने)
अशोक सर्किल, मोरीगेट
बम्बई २६

← तीसरा मोड →

दूसरा मोड

भेजने वाले का नाम और पताः—
शशि मेहरोत्रा
C/o प्रो० रामचन्द्र मेहरोत्रा
'साकेत', आदर्शनगर
अजमेर (राज०)

इस पत्र के अन्दर कुछ न रखिए

(४) स्थानीय पत्र का पता

उसी नगर के लिख गए पत्र 'स्थानीय पत्र' कहलाते हैं। केवल पोस्टकार्ड मे ही यह रियायत है, २ नए पैसे की। उसमें भी पता लिखने का वही ढग है, जो अन्य कार्डो मे होता है। जैसे

यहां चाहे जो कुछ लिखिए प्रेषक:— कमला भार्गव गांधीनगर जयपुर	स्थानीय पत्र — टिकट २ नए पैसे डा० बी. डी. भार्गव, नवीन मेडिकल हाल चौड़ा रास्ता जयपुर

सम्बोधन

(*i*) *पारिवारिक पत्र*—(क) अपने से बड़े लोगों को पत्र लिखते समय उचित सम्मानवाची शब्दों का प्रयोग करना चाहिए, जैसे पूज्य, आदरणीय, (स्त्रियों के लिए) पूज्या, आदरणीया आदि।

(ख) अपने से छोटे लोगो के लिए स्नेहवाची शब्द चाहिए, जैसे प्रिय, चिरंजीव आदि।

३. बराबर वालों के लिए बराबरी वाले शब्द लिखना चाहिए, जैसे प्रियमित्र, प्रियवर, (स्त्री मित्र के लिए) प्रिय सखी।

(*ii*) व्यावहारिक पत्र—इस प्रकार के पत्र सदैव बराबरी मे ही लिखे जाते है। इनमे और अन्य सभी प्रकार के पत्रो मे साधारण संबोधन से काम चलाना चाहिए, जैसे श्री, श्रीयुत, श्रीमान् आदि।

नोट—यह सम्बोधन तब तक पूरा नही होता, जब तक उचित शिष्टाचार का निर्वाह न किया जावे। इसके लिए उसी के समान अनेक प्रकार है, जैसे

१. बडो के लिए—सादर प्रणाम, चरणस्पर्श आदि।
२. छोटो के लिए—प्रसन्न रहो, शुभाशीर्वाद आदि।
३. बराबर वालों के लिए—नमस्ते, नमस्कार आदि।

निवेदन—निवेदन समाचार के अंत मे होता है, इसका सम्बोधन के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। जिसका जैसा सम्बोधन हो, उसके लिए वैसा ही वहा निवेदन भी होना चाहिए, जैसे

(१) बड़ों के लिए

१—माता और पिता के लिए—आपका पुत्र।

२—गुरु के लिए—आपका शिष्य।

३—बड़े भाई के लिए—आपका अनुज।

४—अन्य बड़े लोगों के लिए—आपका आज्ञाकारी।

(२) छोटों के लिए

१—पुत्रों और पुत्रियों के लिए—तुम्हारा पिता, तुम्हारी माता।

२—शिष्य के लिए—तुम्हारा शुभचिन्तक।

३—छोटे भाई बहिनों के लिए—तुम्हारा भाई, बहिन।

४—अन्य छोटे लोगों के लिए—तुम्हारा हितैषी, शुभेच्छु, शुभचिन्तक आदि।

(३) बराबरी वालों के लिए

१—मित्रों के लिए—आपका मित्र, आपका अभिन्न आदि।

२—सभी के लिए समान रूप से—आपका, आपका ही, भवदीय आदि।

नोट—यदि पत्र लिखने वाली कोई लड़की या स्त्री है, तो निवेदन में उसको 'स्त्रीलिंग' के शब्दों का व्यवहार करना चाहिए, जैसे

१—बड़ों के लिए—आपकी पुत्री, आपकी शिष्या, आपकी छोटी बहिन, आपकी आज्ञाकारिणी।

२—छोटों के लिए—तुम्हारी माता, तुम्हारी शुभचिन्तिका, तुम्हारी बड़ी बहिन, तुम्हारी हितैषी, तुम्हारी शुभाकांक्षिणी आदि।

३—बराबरी वालों के लिए—तुम्हारी सखी, आपकी, भवदीया आदि।

(४) समाचार—यह तो पत्र भेजने वाले की परिस्थितियों पर निर्भर होता है, जब जैसी बात हो, तब वैसा लिखना चाहिए।

अब नीचे कुछ पत्रों के नमूने दिए जा रहे हैं, जिनमें आवश्यक अभ्यास हो सके।

पारिवारिक पत्र

(१) पिता को—

अजमेर

१५ अगस्त ६२

आदरणीय पिताजी!

चरणस्पर्श।

आपका कृपा पत्र मिला। मुन्ना की बीमारी से चिन्ता हुई। ईश्वर उसे बहुत शीघ्र स्वस्थ करे।

मेरी पढाई यहा ठीक से चल रही है। होस्टल मे खाने पीने की अच्छी व्यवस्था है हम सभी छात्र मिलकर प्रतिमास एक मेस मैनेजर के चुनाव कर लेते है, जो पूरे महीने भर तक 'मेस' की देख-भाल करता रहता है। हमारे वार्डन साहब भी बहुत अच्छे है। लड़कों के साथ पितृ-तुल्य व्यवहार करते है। अभी उस दिन रमेश (हमारा पड़ोसी) कुछ बीमार पड गया था, तो बेचारे २ घंटे तक रात मे बैठे रहे और उसके 'इंजेक्शन' का प्रबन्ध करके, फिर अपने सोने गए थे।

अगले रविवार को हमारी पिकनिक 'बीर' जाने वाली है। सुनते है कि बडा सुन्दर प्राकृतिक स्थान है। अगले पत्र मे अपने अनुभव लिखूंगा।

माताजी को चरणस्पर्श, मुन्ना को प्यार। उसके लिए यहा से एक बहुत बढ़िया चीज भेज रहा हूं।

आपका आज्ञाकारी पुत्र
मोहन

(२) *गुरु को—*

११५३, नई कालोनी
अलवर
१–६–६२

आदरणीय गुरुदेव !

चरणस्पर्श।

आपके आशीर्वाद से इस कालेज मुझे प्रवेश मिल गया है। यहा सीमित संख्या में ही छात्र लिए जाते हैं और उसके लिए बड़ी कठिन प्रतियोगिता होती है। इस बार भी १४५ मे से कुल ३६ छात्र चुने गए है, जिनमे आपका कृपा पात्र मैं भी हूं।

आपके चरणों में बैठकर मैंने इतने दिनो तक जो कुछ सीखा है, मुझे विश्वास है कि मैं उसका निर्वाह करता रहूंगा।

बस, आपकी कृपा दृष्टि सदैव चाहिए।

आपका आज्ञाकारी शिष्य
रामेश्वरलाल

शारदा सदन, आगरा।

(३) *छोटे भाई को—*

प्रिय मुन्ना ! १५–६–६२

सदैव प्रसन्न रहो।

बहुत दिनों से तुम्हारा कोई पत्र नही मिला। ऐसा लगता है कि पढ़ाई

में आजकल बहुत व्यस्त हो। ठीक भी है और ऐसा ही होना चाहिए किन्तु कभी कभी तो अपने कुशल समाचार भेज दिया करो।

इस बार तुम्हारी छमाही परीक्षा बड़े दिनो की छुट्टी के पहिले ही शायद समाप्त हो जायगी, तो फिर छुट्टियो मे इधर ही चले आना। सुना है कि यहां 'कमला सरकस' २३ दिसम्बर मे चालू हो जायगा और १ महीने तक रहेगा। तुम्हारे साथ तुम्हारे भतीजे भी देख लेंगे।

रामू, मुन्नू और चुन्नी तुम्हारी बड़ी याद करते है। तुम्हारी भाभी तुमको आशीर्वाद लिखवा रही है।

पत्रोत्तर अवश्य देना।

तुम्हारा भाई
अच्युत कुमार

(४) छोटी बहिन को—

महारानी कालेज, जयपुर
१५–९–६२

प्रिय शीला!

प्रसन्न रहो!

मैं यहा सकुशल आ गई। रास्ते मे किसी प्रकार का कोई कष्ट नही हुआ। आगरा मे मेरी गाड़ी बिल्कुल ठीक समय पर पहुँची थी। यदि ५ मिनट भी लेट हो जाती तो जयपुर वाली गाड़ी छूट जाती। फिर पूरे १२ घंटे प्रतीक्षा करनी पड़ती। अस्तु

मैं वहा अपनी शाल, एक नीली सलवार और वह मथुरा वाली साड़ी जल्दी मे भूल आई हूं। तुम संभाल करके रख लेना, अम्मा को भी नहीं बताना, नही तो वे गुस्सा होकर कहेंगी "मीनू बडी लापरवाह है, यहां घर मे जब ये हाल है, तो वहा होस्टल में क्या करती होगी" आदि आदि।

और सुनो, मैंने यहा तुम्हारे 'स्कालरशिप' का एक प्रबन्ध किया है, आशा है कि एक सप्ताह मे सारी लिखा-पढी पूरी हो जायेगी, और फिर तुम्हें ४०) प्रति मास का लाभ हो जायगा।

रमेश से कहना कि अपनी पढाई लिखाई ठीक से करता रहे, तभी जयपुर वाली दीदी उसके लिए 'चीज' भेजेगी।

शेष कुशल है। माताजी से प्रणाम कहना और रमेश को प्यार। वीना, रमा और सावित्री से नमस्ते कह देना, जब मिलें।

और हां, मेरी शाल सलवार और साडी को अपने बक्स में ठीक से रख लेना, अच्छा, भूल मत जाना।

तुम्हारी दीदी
मीनाक्षी

(५) *पत्र मित्र को—*

१०५/१८
प्रेमनगर, कानपुर
२०—६—६२

प्रिय श्यामजी !

सप्रेम मिलन।

तुम तो बिल्कुल भूल ही गए हो, ऐसा लगता है। जब से 'इन्कमटैक्स अफसर' हुए हो, छोटे लोगो से सम्बन्ध ही छूट गया है। क्यों न हो भाई, अफसरी ऐसी ही चीज है।

मैं पिछले सप्ताह दिल्ली गया था, तुमसे मिलने के लिए। वहा जाकर मालूम हुआ कि तुम्हारी बदली 'शिमला' हो गई है। इसलिए मिल न सका। यह मत सोचना कि एक पंथ, दो काज। आये किसी और काम से दिल्ली और कह दिया कि तुमसे मिलने आए थे। सचमुच तुम से एक जरूरी काम था, जो मिलने पर ही हो सकता था, पत्र से नहीं। अब शिमला आना तो एक बड़ा कठिन काम था, इसलिए मौन हो गया।

कल समाचार-पत्र में पढा था कि तुम्हारी बदली अब लखनऊ हो गई है। कब तक यहां Join कर रहे हो ? मैं प्रतीक्षा मे हूं मिलूंगा अवश्य ।

आशा है कि तुम पूर्ण स्वस्थ और सानन्द होंगे।

उत्तर अवश्य अवश्य देना।

तुम्हारा ही अभिन्न मित्र
गोपाल

व्यावहारिक पत्र

(१) किसी प्रकाशक को, पुस्तक मंगाने के लिए—

हिन्दी साहित्य समिति
पाली (राजस्थान)

श्रीयुत प्रबन्धक महोदय,
गीता प्रेस,
गोरखपुर

प्रिय महोदय !

निवेदन है कि मुझे आप की प्रकाशित निम्नांकित धर्म पुस्तकें चाहिए। यहां पाली में आपकी पुस्तकें सुलभ नहीं है, इसलिए आपको कष्ट दे रहा हूं। आप कृपया पाली W. R. स्टेशन पर सारा माल भेज दें और अपनी रेलवे रसीद (आर. आर.) वी. पी. पी. हमारे उपर्युक्त पते पर भेज दें।

(१) रामचरित मानस—मूल गुटका	३० प्रतियां
(२) गीता (शांकर भाष्य सहित)	२४ प्रतियां
(३) अध्यात्म रामायण	१२ प्रतियां
(४) वेदान्त दर्शन	१० प्रतियां
(५) विनय पत्रिका	२४ प्रतियां
(६) समस्त उपनिषद् (तीन खण्ड)	१० प्रतियां
(७) लघु सिद्धान्त कौमुदी	२४ प्रतियां
(८) गीतावली	१२ प्रतियां
(९) कवितावली	३ प्रतियां
(१०) श्री मद्भागवत (सटीक) बड़ा वाला	३ प्रतियां

साथ में कृपया अपने प्रकाशनों की नई सूची भी भेज दें, ताकि आगे पुस्तकें मंगाने में सुविधा रहे।

कष्ट के लिए क्षमा।

भवदीय
रामगोपाल शर्मा
प्रधान मन्त्री
हिन्दी साहित्य समिति, पाली।

(२) पोस्ट मास्टर को, एक शिकायत

३१-८-६२
बीकानेर

श्रीयुत पोस्टमास्टर साहब !

बीकानेर

बड़े खेद की बात है कि आगरा दयालबाग पोस्ट आफिस से मेरे पिता ने मेरे नाम ५०) का एक मनीआर्डर जो ११ अगस्त को भेजा था, वह आज तक नहीं मिला। पहले अधिक से अधिक एक सप्ताह लगता था, किन्तु आज तो पूरे तीन सप्ताह हो गए हैं।

पैसे की यों ही तंगी है महीने के अन्तिम दिन बीत रहे है और मित्र लोग चिढ़ाने मे बाज नहीं आते हैं कि वह मनीआर्डर 'नौ दिन चले अढ़ाई कोस' की रफ्तार मे आ रहा है।

उधर से पिताजी ने भी आगरा के पोस्ट मास्टर को शिकायत कर दी है कि अभी तक मनीआर्डर का पता नहीं लग रहा है।

मैं सोचता हूं कि आप एक विद्यार्थी की कठिनाइयों को अच्छी तरह से समझते हैं, इसलिए आपसे प्रार्थना है कि शीघ्रातिशीघ्र मेरे मनीआर्डर का पता लगा करके मुझे रुपये दिलाने का प्रबन्ध करेंगे।

कष्ट के लिए क्षमा।

आपके उत्तर की प्रतीक्षा में
भवदीय
बिहारी लाल शर्मा बी. ए (फाइनल)
डूंगर कालेज, बीकानेर।

(३) विश्वविद्यालय को, प्रमाण पत्र की प्रतिलिपि मंगाने के लिए

२१५, भूपालपुरा, उदयपुर।

श्रीयुत रजिस्ट्रार महोदय,
राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर।

महोदय

मुझे खेद है कि मेरा बी. ए. का प्रमाण पत्र डाक की गड़बड़ी मे कहीं खो गया है। मुझे उसकी एक प्रतिलिपि की शीघ्र आवश्यकता है। मैंने उसके लिए १०) का मनीआर्डर आज रवाना कर दिया है। उसमें मैंने सारा विवरण भी दे दिया है। फिर भी आपके कार्यालय की सुविधा के लिए यहां दुबारा लिख रहा हूं:—

१. रोल नम्बर ३६५
२ परीक्षा का नाम बी. ए.
३. वर्ष १६५६
४ श्रेणी प्रथम
५. विषय हिन्दी, भूगोल, समाज शास्त्र।
६. कालेज का नाम गवर्नमेंट कालेज, कोटा।

अब आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि मुझे शीघ्र ही वह 'डुप्लीकेट' प्रमाण पत्र मिल जायगा।

कष्ट के लिए क्षमा करें।

भवदीय

आनन्द बिहारी वाजपेयी

पुनश्च—मैंने इसी आशय का एक पत्र, आज कोटा कालेज के प्रिंसिपल के नाम भी लिख दिया है कि वे आपको मेरा वह पत्र अपनी सिफारिश के साथ 'फारवर्ड' कर दें, ताकि सफलता मे शीघ्रता हो जाय।

आ. बि. वाजपेयी

(४) नौकरी के लिए आवेदन-पत्र

श्रीयुत प्रधानाध्यापक महोदय,
सनातन धर्म हायर सेकैण्डरी स्कूल,
दिल्ली—८

महोदय,

कल १० अक्टूबर के 'हिन्दुस्तान' मे प्रकाशित एक विज्ञापन से मुझे ज्ञात हुआ है कि आपको भूगोल और गणित के अध्यापन के लिए एक सहायक अध्यापक की आवश्यकता है। तदनुसार मैं अपनी सेवाएं अर्पित करना चाहता हू। मेरी योग्यताएं निम्नांकित हैं:—

(क) शैक्षणिक योग्यता

१ हाई स्कूल—१९५५—प्रथम श्रेणी—हिन्दी, अंग्रेजी, गणित, नागरिक शास्त्र तथा भूगोल।

२. इंटरमीडिएट — १९५७ — प्रथमश्रेणी—हिन्दी, अंग्रेजी, गणित तथा भूगोल।

३. बी. ए—१९५९--प्रथम श्रेणी—हिन्दी, गणित तथा भूगोल।

४. एम. ए—१९६१—प्रथम श्रेणी—भूगोल।

५. एम. ए—(प्रीवियस)—१९६२—प्रथम श्रेणी—गणित।

(ख) अनुभव—

मैं पिछले एक वर्ष से एक स्थानीय हायर सेकेंडरी स्कूल मे अध्यापक का कार्य कर रहा हूं, जहा से मैंने अध्यापक के रूप में ही एम. ए. (गणित) प्रीवियस पास किया था।

(ग) विशेष रुचि—मैं खेलों मे हाकी, वालीवाल और वास्केटबाल मे सदैव अपने कालेज की 'ए' टीम में रहा हू और हमारी टीम ने गत वर्ष दो प्रथम पुरस्कार प्राप्त किए थे।

जहा तक साहित्यिक कार्यों का सम्बन्ध है, मुझे 'ड्रामा' करने तथा करवाने का अच्छा अभ्यास है। संगीत मे, वीणा और जलतरंग के वादन मे मुझे विशेष योग्यता प्राप्त है। मैंने अनेक वाद-विवाद प्रतियोगिताओ मे भी बडी सफलता के साथ भाग लिया है। दो वर्ष पहले दिल्ली मे, आपके विद्यालय मे ही पुरस्कृत हुआ था।

(घ) आयु—२५ वर्ष

अन्त में, मैं आपको विश्वास दिलाना चाहता हू कि मैं अपने सभी प्रयत्नो से, आपके विद्यालय का एक सुयोग्य शिक्षक बनने की चेष्टा करूंगा यदि मुझे वहा सेवा का अवसर मिलेगा।

प्रमाण पत्र की प्रतिलिपिया साथ मे संलग्न है।

धन्यवाद !

आपका विश्वस्त

हरिनारायण उपाध्याय एम. ए.

श्री पटेल हायर सेकेंडरी स्कूल,

अम्बाला (पंजाब)।

संलग्न पत्र—५

तिथि ११-१०-६२.

(५) सम्पादक को, कविता छपाने के लिए

श्रीयुत सम्पादक महोदय
साप्ताहिक हिन्दुस्तान,
दिल्ली—१

माधव कुंज बालवाड़ा
१०-१०-६२

महोदय,

आपकी सेवा में एक छोटी सी कविता प्रकाशनार्थ भेज रहा हूं। आशा है कि उसे यथोचित स्थान देकर आप मुझे अनुग्रहीत करेंगे। आपके सहयोग से उत्साहित होकर भविष्य में भी इसी प्रकार लिखता और भेजता रहूंगा।

धन्यवाद

भवदीय
सुरेशचन्द्र अग्रवाल

सामाजिक-पत्र

जो पत्र अनेक व्यक्तियों के द्वारा या अनेक व्यक्तियों के लिए लिखा जाता है, उसे 'सामाजिक पत्र' कहते हैं. जैसे (१) सूचना, (२) निमन्त्रण-पत्र, (३) आमंत्रण-पत्र (४) समवेदना पत्र, (५) अभिनंदन पत्र (६) अपील आदि।

(१) सूचना

हिन्दी साहित्य समाज, जयपुर

१-१०-६२.

सूचना

समाज के सभी सदस्यों से प्रार्थना है कि वे कल २-१०-६२ को सायं-काल ५ बजे 'गांधी क्लब' के कार्यालय में एकत्र हों। वहां 'गांधी जयन्ती' के पुण्य अवसर पर प्रसिद्ध भूदानी नेता पं० यज्ञदत्त उपाध्याय का एक सारगर्भित भाषण होगा। तदुपरान्त वहीं गांधीजी के जीवन पर एक 'वृत्ति-चित्र' भी दिखाया जावेगा।

सुरेन्द्र शर्मा
मुख्य मन्त्री
हिन्दी साहित्य समाज, जयपुर।

(२) *निमन्त्रण-पत्र*

४-१०-६२
३३५३, अलवर गेट, अजमेर

श्रीमान्/श्रीमती वसिष्ठ प्रसाद मिश्र..................

ईश्वर की असीम अनुकम्पा से, कल दिनाक ५ अक्टूबर को सायंकाल ६ बजे मेरे निवास स्थान पर नवजात शिशु का नामकरण संस्कार सम्पन्न होगा। तदुपरान्त एक प्रीति-भोज का भी आयोजन है।

आप से प्रार्थना है कि आप कल अवश्य पधार कर मेरे भवन को पवित्र करेंगे और मुझे अपने दर्शनों से अनुग्रहीत करेंगे।

भवदीय
रामगोपाल शर्मा

(३) *आमन्त्रण-पत्र*

युवक-कल्याण समाज, श्रीगंगानगर

सेवामे, ६-१०-६२
श्रीयुत प्रधान मन्त्री,
नवयुवक मण्डल,
बीकानेर

महोदय,

आपको यह सूचना देते हुए मुझे महान् हर्ष हो रहा है कि सदा की भांति 'समाज' ने, इस वर्ष पुनः सोमवार १५ अक्टूबर १९६२ को सायकाल ४ बजे एक वाद-विवाद प्रतियोगिता का आयोजन किया है, जिसमें भाग लेने के लिए आपके मंडल को आमंत्रित किया जाता है। आप कृपया दो वक्ता अवश्य भेजें, एक पक्ष में और दूसरा विपक्ष में, प्रतियोगिता का विषय है—

'समाज का कल्याण लघु उद्योगो से नहीं हो सकता है।'

विश्वास है कि आप अपना अमूल्य सहयोग देकर 'समाज' को कृतार्थ करेंगे।

भवदीय
राजेन्द्र कुमार दीक्षित
प्रधान मन्त्री
युवक कल्याण समाज
श्रीगंगानगर

नोट—प्रतियोगिता के नियम आदि साथ में संलग्न हैं।

(४) समवेदना-पत्र

मित्र मंडल, दौसा (राजस्थान)

श्रीयुत रामकृष्ण गुप्त, एम. ए.   १५-१०-६२
नई मंडी, स्टेशन के पास
दौसा (राज०)

प्रिय भाई !

आपके पितामह श्री धनीरामजी गुप्त के निधन से 'मित्र मंडल' के सभी सदस्य अत्यन्त दुखी हैं। उन्होंने आज प्रातःकाल १० बजे एक सभा करके उसमें निम्नांकित 'शोक-प्रस्ताव' भी पारित किया है और मुझे आज्ञा दी है कि उसकी प्रतिलिपि आपकी सेवा मे प्रेषित करूं।

शोक-प्रस्ताव

'मित्र मण्डल, दौसा की यह विशेष सभा, नगर के प्रतिष्ठित व्यवसायी श्री धनीरामजी गुप्त के निधन पर शोक प्रकट करती है और ईश्वर से प्रार्थना करती है कि मृतात्मा को शान्ति प्रदान करे तथा सन्तप्त परिवार को धैर्य दे।

स्व० श्री धनीराम गुप्त, अपने मण्डल के सदस्य श्री राम कृष्ण गुप्त के पितामह थे, अतः यह सभा उनके साथ विशेष हार्दिक सहानुभूति व्यक्त करती है तथा ईश्वर से प्रार्थना करती है कि वह उन्हें इस कष्ट के सहन-योग्य आवश्यक शक्ति प्रदान करे।'

भवदीय
मनमोहन अग्रवाल
प्रधान मन्त्री, मित्र मंडल, दौसा।
(राजस्थान)

(५) अभिनन्दन-पत्र

श्रीयुत डा० मुन्शीराम जी शर्मा, एम. ए., पी-एच. डी., डी. लिट.
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
डी. ए. वी. कालेज, कानपुर
के
कर-कमलों में सादर समर्पित,

अभिनन्दन पत्र

मान्यवर

आज आप डी. ए. वी. कालेज, कानपुर के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष पद से अवकाश ग्रहण कर रहे हैं। आपने इस महनीय पद को लगातार ३० वर्षों तक सुशोभित किया है। इस अवधि में आपसे शिक्षा लाभ करके, आपके अनेक शिष्य प्रशिष्य एवं पर शिष्य देश के विभिन्न कालेजों और विश्वविद्यालयो में राष्ट्रभाषा हिन्दी की सेवा कर रहे है तथा आपकी कीर्ति को, भारत के कोने कोने मे प्रसारित कर रहे हैं।

आदरणीय,

कानपुर जैसे वणिग्वृत्ति प्रधान नगर मे, जहा प्रत्येक वस्तु का मूल्यांकन आर्थिक दृष्टिकोण से किया जाता है, हिन्दी की अनेक संस्थाओ का निर्माण, हिन्दी की उच्चतम साहित्यरत्नादि परीक्षाओं का प्रबन्ध तथा हिन्दी के प्रचार और प्रसार से सम्बन्धित अनेक प्रवृत्तियो का आयोजन, आपके ही संकेतों का वरदान है। वे संस्थाएं आज भी आपके वरद हस्त के आशीर्वाद से विकसित और प्रफुल्लित हो रही हैं।

श्रद्धेय,

भक्ति साहित्य में आपकी जो सुरुचि, आरम्भ से ही सक्रिय रही, उन दो महाग्रन्थो के रूप में आज साकार हो चुकी है जो आपके पी–एच. डी. और डी. लिट. के शोध प्रबन्धों के रूप मे विख्यात हैं। उनके अतिरिक्त आप के अन्यान्य ग्रन्थ भी आपकी अद्वितीय प्रतिभा और मौलिक विवेचन शक्ति के परिचायक हैं।

गुरुदेव,

आपके सौम्यदर्शन, प्रभावशाली व्यक्तित्व और मधुर उपदेशों को क्या कभी भुलाया जा सकता है? वे ही तो हम अकिंचनों की अमूल्य निधि हैं। अब कालेज की लघु-सीमा के अन्तर्गत हम भले ही आप से लाभान्वित न हो सकें, किन्तु आज तो आप स्वतन्त्र हैं और समस्त हिन्दी जगत् आपकी ओर आशा भरी निगाहों से निहार रहा है। उसे विश्वास है कि अब आप अपना सम्पूर्ण बहुमूल्य समय साहित्य-सेवा के लिए अर्पण कर सकेंगे।

श्रीमन्,

हम आपके स्वास्थ्य और दीर्घायुष्य की कामना करते है और परम

पिता परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं कि वह आपको सदैव समृद्ध और यशस्वी बनावे

हम हैं, आपके प्रिय छात्र,
हिन्दी साहित्य समिति,
डी. ए. वी. कालेज, कानपुर,
के सदस्य

कानपुर
७ अप्रैल १९६२.

(६) *अपील*

छात्र सभा
राजऋषि कालेज, अलवर।

२-१०-६२

अपील

मित्रों,

हमें यह सूचना देते हुए महान् शोक हो रहा है कि हमारे कालेज के एक होनहार छात्र श्री रमेशचन्द्र श्रीवास्तव (बी ए. फाइनल) के पिताजी श्री उमेशचन्द्र श्रीवास्तव का एक मोटर एक्सीडेंट मे स्वर्गवास हो गया। भाई रमेश पर इस विपत्ति के साथ ही एक दूसरी विपत्ति भी आ पड़ी है कि वे आगे अपना अध्ययन चलाए रखने मे नितान्त असमर्थ हो गए है।

ऐसे समय मे हम सब लोगों का यह पवित्र कर्तव्य है कि अपने जेब-खर्च से यथाशक्ति कुछ न कुछ बचाकर 'छात्र सभा' के कोषाध्यक्ष के पास जमा करवा दे, ताकि भाई रमेश के होस्टल-निवास और फीस आदि का शीघ्र आवश्यक प्रबन्ध किया जा सके।

कृपया मुक्तहस्त होकर सहयोग कीजिए।

भवदीय
दीनबन्धु व्यास,
मत्री, छात्र सभा।

४. सांस्कृतिक पत्र—

जो पत्र विदेशी पत्र मित्रो को लिखे जाते हैं और जिनमे अपने अपने देश की संस्कृति तथा शिष्टाचार की चर्चा होती है, वे 'सांस्कृतिक पत्र' कहलाते हैं।

(?) *जापानी पत्र-मित्र को,*

२–१०--६२

सेवा में,

कुमारी नागू सूई दी

३३/७ येवरा, कंनीलो

पिट्टमविय, टोकियो-३ (जापान)

प्रिय बहिन !

प्रसन्न रहो ।

तुम्हारा प्रथम पत्र मिला। तुम्हें 'प्रियतम' सम्बोधन नही लिखना चाहिए । हमारे देश मे केवल 'पति' को ही 'प्रियतम' लिखा जाता है । तुम भाई, बन्धु, मित्र आदि कुछ भी लिख सकती हो । मुझे यह जानकर खेद हुआ कि तुम्हारे भाई 'शेन' ने प्रेम मे असफल होकर 'हाराकिरी' (आत्महत्या) कर ली । ऐसा पागलपन यहा भी चलता है, किन्तु तुमने जिन परिस्थितियो का उल्लेख किया, उनमे यहां 'आत्महत्या' नही की जाती है । तुम्हारा भाई एक विवाहित स्त्री से प्रेम करता था, जो न करना चाहिए था और यदि वह स्त्री अपने पति के साथ विदेश चली गई, तो इसमे 'हाराकिरी' की क्या बात थी । दो के बीच मे पड़ना सदैव मूर्खता कहलाता है । अस्तु

आज २ अक्टूबर है, राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का जन्म दिन । गाधीजो न हमारे देश के लिए क्या नही किया । महात्मा बुद्ध के समान ही उन्होने हमे अहिंसा का महामंत्र दिया । उन्ही के पद-चिन्हों पर चल कर हमारे राष्ट्र-नायक पं० नेहरू आज विश्व मे अपूर्व सम्मान प्राप्त कर रहे हैं ।

हा, तुमने वेश्या-प्रथा का उल्लेख किया था । हमारे देश में वह अब लगभग समाप्त है । सुना, तुम्हारे यहां अमेरिकन प्रभाव के कारण बड़ी दुर्दशा है । क्या तुम मनचाहा सब कुछ लिख सकने मे स्वतंत्र हो ?

अच्छा, धन्यवाद !

तुम्हारा भाई

अनिलकुमार, बालबाड़ी, बापूनगर,

जयपुर [राजस्थान] भारत

ऊपर पत्रो के कुछ उदाहरण दिए गए हैं । वास्तव मे आज पत्र-लेखन अनेक दिशाओ मे विकसित हो चुका है और एक व्यक्ति या समाज के जितने

प्रकार के सम्बन्ध सोच जा सकते है उन सभी प्रकारो मे वह अनेक रूपो मे प्रतिष्ठित हो रहा है यदि सोचा जाय तो हम सार जीवन पत्र लिखन का ही तो अभ्यास करते हैं, और क्या करते है।

अब नीचे कुछ सम्बन्ध और विषय दिए जा रहे है, उन पर पत्र लिखने का अभ्यास कीजिए।

१. अपनी रेल यात्रा के अनुभवो को लेकर अपने मित्र को एक पत्र लिखिए।

२. अपनी छोटी बहिन को एक पत्र लिखिए जिसमें आपके कालेज के वार्षिक उत्सव का विवरण हो।

३. अपने वार्डन को पत्र लिखिए कि 'मेस' का प्रबन्ध ठीक से किया जावे।

४. अपने प्रधानाध्यापक से निवेदन करिए कि वह आपकी पार्टी को काश्मीर-यात्रा के लिए आवश्यक सुविधा का प्रबन्ध करा सके।

५. अपने शहर के पोस्ट मास्टर से शिकायत कीजिए कि आपकी चिट्ठियो को गायब होने से बचावे।

६. अपने प्रिंसिपल के स्थानान्तरण होने पर उन्हें एक अभिनंदन पत्र भेंट कीजिए।

७. आपको एक २००) की स्कालरशिप मिली है, उसका आनंद मनाने के लिए मित्रों को निमंत्रित कीजिए।

८. प्रान्त के दूसरे कालेजों के खेल-प्रबन्धकों को सूचना भेजिए कि वे आपके यहां आयोजित एक 'बास्कटबाल' प्रतियोगिता मे भाग ले।

अपठित

संस्कृत मे एक कहावत है कि 'पठितापठितसमानत्वं पंडितत्वं मूर्खत्वं च' अर्थात् पंडित और मूर्ख दोनो को पढ़ा और बेपढ़ा सब समान होता है। पंडित ने जो कुछ पढ़ लिया, उसे तो वह जानता ही है, साथ ही उसने जो कुछ नही पढा, उसको भी समझने की वह योग्यता रखता है। दूसरी ओर मूर्ख ने, जो कुछ पढ़ा वह भूल गया और जो नही पढ़ा, वह उसके लिए 'काला अक्षर भैंस बराबर' है। इसके लिए अपने ज्ञान को इतना बढ़ाना चाहिए कि मनुष्य पडित हो जाय और अपठित को पठित के समान ही समझ सके।

साधारण विद्यार्थियो को अंगुली पकड कर चलने की आदत हो जाती है, जो कालेज पहुँच जाने पर भी नही छूट पाती है या कठिनता से छूटती है। वे जो कुछ पढते है, उसी से सम्बन्ध रखते हैं और अपने अध्यापक से यह अपेक्षा रखते हैं कि वह उन्हें सब कुछ पढ़ा सकेगा। वे स्वयं कोई चेष्टा नही करते, फलतः वे किसी अपठित से पाला पड़ने पर मुंह फैला देते हैं। इस बुरी आदत को छोड़ने के लिए विद्यार्थियो को अधिक से अधिक पढ़ना चाहिए—इतना पढना चाहिए कि उन्हें पठित और अपठित में कोई भेद न जान पड़े।

'अपठित' मे छात्रो से यह आशा की जाती है कि वे उस अंश का उपयुक्त शीर्षक चुने, उसमें आए हुए विशेष वाक्यो तथा वाक्यांशों का आशय स्पष्ट करे, पूरे अनुच्छेद का साराश दें और व्याकरण सम्बन्धी प्रश्नो का ठीक ठीक उत्तर दे। नीचे कुछ अवतरणो मे इन्हीं बातो को स्पष्ट किया गया है।

[१]

सच्चा विद्यार्थी वही है जो केवल विद्या से अर्थ रखता है और संसार की दूसरी बातो की कोई चिन्ता नही करता है। विद्यार्थी को सोचना चाहिए कि जो अमूल्य अवसर आज उसे प्राप्त है, वह उसका सदुपयोग करे अन्यथा 'का बरखा जब कृषी सुखाने'। इसके अतिरिक्त विद्यार्थी को अपने व्यक्ति सुख

न का कोई ध्यान नही करना चाहिए। विद्या और सुख मे बर है इसीलिए द्यार्थियो को सुख नहीं मिलता है और सुखार्थियो को विद्या नही मिलता है। ाज कालेज के वातावरण मे, जो विद्यार्थी फैशन को ओर आकृष्ट हो जाते हैं, हे अपनी पुस्तक का भी उतना ध्यान नही रहता है, जितना पैंट की क्रीज । देखने सुनने मे तो बड़े शानदार और संभवतः विद्वान भी लगें, किन्तु वे ातर से खोखले होते है और उन पर 'ऊंची दुकान और फीका पकवान' ाली कहावत पूरी 'फिट' बैठती है।

प्रश्न—(१) इस अवतरण का उपयुक्त शीर्षक बताइए।

(२) सच्चे विद्यार्थी की क्या परिभाषा है और उसके क्या कर्तव्य हैं ?

(३) इस अवतरण का सारांश दीजिए।

(४) इस अवतरण में आए हुए मुहावरो का अर्थ बतलाइए।

(५) मोटे शब्दो का आशय-स्पष्ट कीजिए।

(६) विद्यार्थी, सदुपयोग और सुख-दुख में सविग्रह समास बतलाइये।

(७) विद्या, क्रीज, शानदार और फिट कैसे शब्द हैं ?

(८) बरखा, ऊंची, पकवान, कृषी के तत्सम शब्द लिखिए।

उत्तर—१. सच्चे विद्यार्थी के गुण।

२ सच्चा विद्यार्थी केवल विद्या से ही काम रखता है और किसी के बारे में नहीं सोचता है। वह अपने समय का सदुपयोग करता है और अपना सारा समय अध्ययन में ही लगाता है। वह अपने सुख की चिन्ता नही करता है। उसे चाहिए कि वह फैशन न करे, पुस्तको पर ध्यान दे और ठोस विद्वान् बने।

३. सच्चा विद्यार्थी केवल विद्याध्ययन में व्यस्त रहता है। विद्यार्थी होने के नाते वह सुखार्थी नहीं बनना चाहता है। वह फैशन से दूर रहकर सच्ची विद्या की प्राप्ति का प्रयत्न करता है।

४. 'का बरखा जब कृषी सुखाने' का अर्थ है 'समय चूक जाने के बाद पछताना व्यर्थ है।' 'ऊंची दुकान और फीका पकवान' का अर्थ है 'केवल दिखावा', 'ऊपरि चटक मटक'।

५. विद्या और सुख एक साथ नहीं प्राप्त हो सकते हैं। या तो विद्या ही मिल सकती है या केवल सुख ही मिल सकता है। विद्यार्थी को सुख की चिन्ता नही करनी चाहिए; अन्यथा लिखाई-पढाई सब नष्ट हो जायगी।

ऊंची दुकान फीका पकवान' वाली कहावत उन छात्रो पर ठीक बैठती है जो केवल दिखावा करते हैं। जो विद्यार्थी ठोस अध्ययन करते हैं और फैशन के चक्कर में नहीं पड़ते हैं, उन पर यह कहावत लागू नही होती।

६. विद्या + अर्थी = विद्या का अर्थी = विद्यार्थी — तत्पुरुष समास
सद् + उपयोग = सदुपयोग = अच्छा उपयोग — कर्मधारय
सुख + दुख = सुख और दुख = सुखदुख — द्वन्द्व समास

७. विद्या— तत्सम शब्द
फ्रीज— विदेशी शब्द (अंग्रेजी)
शानदार— विदेशी शब्द (उर्दू)

८. बरखा का तत्सम— वर्षा
ऊंची का तत्सम— उच्च
पकवान का तत्सम— पक्वान्न
कृषी का तत्सम— कृषि

(२)

सुखी कौन है, सब जगत रो रहा है।
कवी ! गा रहे तुम ये क्या हो रहा है॥

उषा रो रही अश्रु छाये सुमन पर।
निशा रो रही अश्रु छाये गगन पर॥
ये जो चन्द्रमा में प्रगट कालिमा है।
ये रोने का काला निशां है वदन पर॥

प्रकृति रो रही है, पुरुष रो रहा है।
कवी ! गा रहे तुम ये क्या हो रहा है॥

धरा रोई इतना नयन सूज आये।
जगत् ने कहा ये हिमालय सुहाये॥
हिमालय भी रो रो गला जा रहा है।
नदी नद अनेको, कहां तक गिनायें॥

ये सागर वही अश्रु जल ढो रहा है।
कवी ! गा रहे, तुम ये क्या हो रहा है॥

जमीं पर पटक सर ये रोते हैं बादल।
उन्ही के नयन-जल से प्लावित है जल-थल॥

(५) सुमन के अश्रु से ओस और गगन के अश्रु से तारो की ओर संकेत किया गया है। कवि सोचता है कि ओस उषा के आंसू हैं और 'तारे' निशा के आंसू है।

अभ्यास (अपठित)

(१)

'सुबह होती है, शाम होती है। उम्र यो ही तमाम होती है।' वास्तव मे मानव जीवन बड़ा क्षणिक है। काल का कोई भरोसा नही, कब गला दबोच ले। हम सोचते है कि हम समय को काट रहे है, लेकिन नही, समय हमको काट रहा है। इनी-गिनी सासें जो ईश्वर ने दी है, रात-दिन एक एक करके समाप्त हो रही हैं। एक दिन दिवाला निकल जायगा, तब पास मे मीठी यादो के अलावा कुछ नही बचेगा और ये आखें—जो आज इतनी रोशन है, सतर्क हैं, हमेशा दूसरो की बुराइयां देखती है और छोटे छोटे लालचो पर मंडराया करती है, सदा के लिए मुंद जायेगी। घर के लोग, जो इतने प्यारे है या जो इतना प्यार करते है, उस समय मुंह मोड़ लेंगे और कहेंगे कि इस कूडे को शीघ्र घर से हटाओ। सच है, दुनिया मे कोई किसी का नही है।

प्रश्न—(१) उपर्युक्त गद्य का शीर्षक लिखिए।
(२) इस अवतरण का साराश दीजिए।
(३) इसमे आए हुए मुहावरो और कहावतो को स्पष्ट कीजिए।
(४) शाम, गला, सांस, मीठी, प्यारे शब्दो के तत्सम शब्द लिखिए।
(५) विदेशी (उर्दू) शब्दों को छाटिए।

(२)

आजकल कालेज में एक शान्ति का वातावरण है। सभी छात्र-छात्राएं अपने अपने कार्यों में अच्छी तरह संलग्न हैं। परीक्षा के दिन निकट आ रहे हैं। परीक्षा कैसी भी हो, बड़े बडे घबड़ा जाते हैं। वर्ष भर के परिश्रम का परिणाम, केवल ३ घंटों मे जाच लिया जायगा। पता नही क्या होगा। ऊंट किस करवट बैठेगा। एक दाने मे सारी बटलोई की परख होती है। केवल कुछ ही प्रश्नो के उत्तरों से हमारी योग्यता समझ ली जाती है और कोई रास्ता भी तो नही है। १,१ नम्बर के चक्कर से डिवीजन रह जाता है। दुनियां में 'थर्ड क्लास' की कोई पूछ नहीं। वह तो 'फेल' के ही बराबर है। 'फर्स्ट आना चाहिए फर्स्ट' सभी इसी महायज्ञ में लगे हैं तभी तो इतनी शान्ति है। सब अपने

अपने दिमाग के छुरे को पैना रहे है दिमाग के रिकाड मे सारी किताब रट रट कर जमा देना चाहते है और इस तरह इस **दिमागी घुड़दौड़ का रिकाड बीट' करने की कोशिश में लगे हुए हैं।**

प्रश्न—(१) उपर्युक्त अवतरण का शीर्षक दीजिए।
(२) इसमें मोटे शब्दो का आशय स्पष्ट कीजिए।
(३) इसमे आए हुए मुहावरो और कहावतो का अर्थ बतलाइए।
(४) 'वातावरण, रास्ता, पूंछ, नबर, दिमाग, बीट, कोशिश कैसे शब्द हैं ?
(५) समास बतलाइए—छात्र-छात्राएं, घुड़दौड़, महायज्ञ।
(६) विदेशी (अंग्रेजी) शब्दो को पहचानिए।

(३)

आज कालेज का वार्षिकोत्सव है। विशाल-प्रागण में अनेकानेक छात्र-अध्यापक व्यस्त है। कही बडा वाला शामियाना लगाया जा रहा है, कही मेज-कुर्सिया जमाई जा रही है और कही स्वागत प्रबन्ध की व्यवस्था हो रही है। प्रधानाचार्य महोदय एकासन पर बैठे सभी को पृथक् पृथक् निर्देश दे रहे है। कितनी तल्लीनता है उनमे। **मस्तक के स्वेद कण उनके गौरव का यथार्थ परिचय दे रहे हैं।** इसी को उत्तरदायित्व कहते है। यदि कुछ भी अव्यवस्था हो गई तो सारे कलंक के भागी वे ही बनेंगे। किन्तु देखो, वे मुस्करा रहे है। **वे सचमुच निश्चिन्त है, क्योंकि उन्हें अपने अच्छे सहयोगियों पर गर्व है।**

प्रश्न—(१) उपर्युक्त गद्य का शीर्षक बतलाइए।
(२) सन्धि विच्छेद कीजिए—वार्षिकोत्सव, व्यस्त, तल्लीनता, यथार्थ, अव्यवस्था।
(३) समास बतलाइए—छात्र-अध्यापक, मेज-कुर्सियाँ, प्रधानाचार्य, एकासन, स्वेद-कण।
(४) रेखाकित वाक्यो का आशय स्पष्ट कीजिए।

(४)

कवि ! तुम्हारे गीत सुन्दर हैं, मगर आधार क्या है ?
नीलतम आकाश रवि-शशि से परे भी।
सघन वातावरण में तुम घूम आए।

अक्सर में भ्रमर भ्रमरी रूप धर कर
सरस सौरभ-पान कर तुम झूम आए ।।
विश्व के सर्वांग सुंदर रूप को भी ।
कल्पना से हृदय भर कर चूम आए ।
यह कल्पना का लोक सुन्दर है, मगर आकार क्या है।
कवि ! तुम्हारे गीत सुंदर हैं, मगर आधार क्या है ।
निर्झरों के सहज तुतले पर सुरीले,
गीत में तुम प्राण खोये दीखते हो ।
कुंज मे मादक बसन्ती कोकिलो से,
ताल-लय-स्वर-ध्वनि सभी कुछ सीखते हो ।
गुनगुनाते हो भ्रमर बनकर, कभी तो,
बूंद को चातक सदृश तुम चीखते हो ।
कवि ! तुम्हारा प्यार सुन्दर है, मगर उपहार क्या है ।
कवि ! तुम्हारे गीत सुन्दर हैं, मगर आधार क्या है ।

प्रश्न—(१) इस कविता का शीर्षक बतलाइए ।
(२) इस कविता का संक्षेप मे भावार्थ लिखिए ।
(३) समास बतलाइए—रविरश्मि, भ्रमरभ्रमरी, सौरभपान, ताल लय-स्वर-ध्वनि, सर्वांग सुन्दर ।
(४) सन्धि-विच्छेद कीजिए—वातावरण, सर्वांग, निर्झरों ।
(५) 'उपहार' की तरह 'हार' शब्द के पूर्व अन्य उपसर्ग लगाकर कम से कम ५ शब्द बनाइए ।

(५)

महात्मा गाधी के विचारो और सिद्धान्तो के समन्वय को ही गांधीवाद कहते हैं। इसकी मूल भावना अहिंसा पर आधारित है। गाधीजी ने अपनी अहिंसा के बल पर ही ब्रिटिश साम्राज्यवाद से टक्कर ली और उसे चारों खाने चित कर दिया । वे राजनीति मे भी मन-वचन-कर्म की अहिंसा को प्रतिष्ठित करना चाहते थे । उनके व्यवहार मे छल और कूटनीति को कोई स्थान नहीं था । वे जैसे सच्चे थे, उसी प्रकार सबको सच्चा बनाना चाहते थे । वे पाप से घृणा करते थे, पापी से नहीं । इसी प्रकार वे बुराई को मिटाना चाहते थे, बुरे लोगो को नही । गांधीवाद में साम्प्रदायिकता के लिए भी कही भी गुंजाइश

नहीं थी। वे साम्प्रदायिकता को जड़मूल से मिटाना चाहते थे। इसी प्रयत्न में उनका बलिदान हो गया।

प्रश्न—(१) उपरिलिखित अवतरण का शीर्षक दीजिए और सारांश लिखिए।

(२) इसमें आये हुए मुहावरों और कहावतों को स्पष्ट कीजिए।

(३) समास बतलाइए—राजनीति, मन-वचन-कर्म, कूटनीति, गांधीवाद, जड़मूल।

४. 'प्रतिष्ठित' की तरह 'प्रति' के बाद अन्य वर्णों को जोड़कर कम से कम ५ शब्द बनाइए।

(६)

छात्र और छात्राओं का एक साथ रहकर, एक विद्यालय में एक ही अध्यापक से शिक्षा प्राप्त करना सह-शिक्षा कहलाता है। भारतवर्ष में इसका प्रचलन अंग्रेजों की कृपा से हुआ। पाश्चात्य समाज में नारी मुक्त और स्वतन्त्र है, किन्तु यहां उसे पर्दे की बीबी बन कर रहना पड़ता है यद्यपि अब पर्दा-प्रथा बहुत कुछ शिथिल हो गई है। रूढिवादी लोग धर्म, समाज, संस्कृति आदि के नाम पर इसका विरोध करते हैं और व्यभिचार की भी आशंका व्यक्त करते हैं, किन्तु सह-शिक्षा से अनेक लाभ भी हैं। उससे स्पर्धा, साहचर्य, सहयोग आदि की भावनाओं को बल मिलता है। साथ ही परस्पर अधिक परिचय होने से, **छात्र और छात्रा एक दूसरे के बलाबल को समझ लेते हैं।** और फिर कोई भय की बात भी नहीं रह जाती है।

प्रश्न—(१) उपर्युक्त अवतरण का शीर्षक बतलाइए।

(२) मोटे शब्दों की व्याख्या कीजिए।

(३) इस अवतरण का संक्षेप में सारांश लिखिए।

(४) संधि विच्छेद कीजिए—विद्यालय, यद्यपि, व्यभिचार, बलाबल।

(५) विलोम बतलाइए—एक, पाश्चात्य, शिथिल, विरोध, सहयोग, भय।

(७)

कहा जाता है कि जंगल में पेड़ भी अकेले नहीं रहते फिर मनुष्य तो एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर जिन व्यक्तियों से उसका सम्पर्क होता है, उनमें अनुकूलता और प्रतिकूलता के दर्शन करके उसे स्वाभाविक रूप से सुख-दुख का अनुभव होता ही है तब वह प्रेम और क्रोध के माध्यम से अपने

मनोविकार व्यक्त करता है पहले पहल जब वह बोल नहीं पाता था तब वह संकेतों से इन भावों को प्रगट करता था ये संकेत अधिकतर मुंह, आंख और हाथ से किए जाते थे (**और आज भी किए जाते हैं**)। धीरे धीरे मनुष्य ने अनुकरण, प्रतीक और उपचार आदि की सहायता से कुछ ध्वनि-संकेत स्थिर किए, जिनसे आगे चल कर 'बोली' का जन्म हुआ।

प्रश्न—(१) उपर्युक्त गद्यावतरण का उचित शीर्षक दीजिए।
(२) मोटे शब्दों की व्याख्या कीजिए।
(३) तत्सम बतलाइए:—पेड़, मुंह, आंख, हाथ, आगे।
(४) 'अनुकरण' की तरह, 'अनुज' के साथ अन्य शब्दों को जोड़कर ५ शब्द बनाइए।
(५) उक्त गद्य खण्ड का सारांश लिखिए।

(८)

'ऋग्वेद' संसार का सर्वप्रथम ग्रंथ है। इसका समय ६००० वर्ष ईसा पूर्व से लेकर २००० वर्ष ईसा पूर्व तक माना जाता है। ऋग्वेद की भाषा को सुविधा के लिए हम 'वैदिक भाषा' कह देते है। ऋग्वेद की रचना भिन्न भिन्न कालों में, भिन्न भिन्न स्थानों में और भिन्न भिन्न ऋषियों के द्वारा हुई। इसी कारण उसकी भाषा में अनेकरूपता के दर्शन होते हैं। **यह अनेकरूपता, वैदिक काल की विभिन्न बोलियों और भाषाओं की स्थानीय विशेषता थी।** सुविधा की दृष्टि से इन आदिम बोलियों और भाषाओं को 'प्राकृत' (प्राकृतिक या स्वाभाविक) भाषा कहा जाता है। यही जन साधारण की भाषा थी। वेदों में प्रयुक्त होने से यही 'वैदिक भाषा' कहलाई और **एकरूपता के निर्वाह के लिए जब इसका संस्कार किया गया तब यही संस्कृत भाषा कहलाई।**

प्रश्न—(१) उपर्युक्त अवतरण का शीर्षक दीजिए और सारांश लिखिए।
(२) मोटे शब्दों का आशय स्पष्ट कीजिए।
(३) विलोम बतलाइए—प्रथम, भिन्न, अनेकरूपता, जनसाधारण, संस्कार
(४) 'प्राकृतिक' की तरह 'इक' प्रत्यय लगाकर ५ शब्द बनाइए।
(५) 'ईसा पूर्व' का अर्थ समझाइए। आज का सन् क्या और कितना 'ईसा पूर्व' है ?

(६)

क्रान्ति धात्रि कवित्ते जागे उठ,
आडम्बर मे आग लगा दे ।
पतन-पाप-पाखण्ड जले सब,
जग में ऐसी ज्वाला सुलगादे ।

विद्युत की इस चकाचौंध मे,
देख दीप की लौ रोती है ।
अरी हृदय को थाम, महल के
लिए झोंपड़ी बलि होती है ॥

उठ वीरो की भावरंगिणी,
दलितो के दिल की चिनगारी ।
युग-मर्दित यौवन की ज्वाला,
जाग जागरी क्रांति-कुमारी ॥

लाखों क्रौंच कराह रहे हैं,
जाग आदि कवि की कल्याणी ।
फूट फूट तू कवि कण्ठो मे,
बन व्यापक निज युग की वाणी ॥

प्रश्न—(१) उपर्युक्त कविता का शीर्षक बतलाइए ।
(२) मोटे शब्दों का अर्थ स्पष्ट करिए ।
(३) कविता का भावार्थ संक्षेप मे लिखिए और उसका संदेश समझाइए ।
(४) समास बतलाइएं—पतन-पाप-पाखण्ड, भावरंगिणी, युगमर्दित, क्रान्ति-कुमारी ।
(५) विलोम बतलाइए—आडम्बर, दलित, यौवन आदि ।

(१०)

बसन्त को हमारे यहां ऋतुराज कहा जाता है । उस समय सारी प्रकृति नववधू के समान शोभायमान हो जाती है । पतझड़ में जो पेड़ पत्तों से विहीन हो गए थे, वे बसंत मे, जवानी के नए जोश को लेकर अपना सिर उठाने लगते हैं । आमों पर बौरों की बहार छा जाती है । कोयल कूकने लगती है । बाग-बगीचों में कलियो और फूलो पर भौंरों की पाति मंडराने लगती हैं ।

चतुर्दिक अत्यानन्द और उल्लास छा जाता है । एक 'सर्वोदय' सा होता

है। लोगबाग प्राकृतिक दृश्यों के फेर में अपने तक को भूल जाते हैं और बस मन मे यही बारबार होता है कि यह बसन्त ऋतु अमर हो जाय। किन्तु काल बली पर कौन अधिकार पाया है।

प्रश्न—(१) उपर्युक्त अवतरण का सार लिखिए और उचित शीर्षक दीजिए।
(२) तत्सम बतलाइए—पेड़, पत्ता, आम, कोयल, पाति, लोग।
(३) मोटे शब्दो को समझाइए।
(४) सन्धिविच्छेद कीजिए—अत्यानन्द, उल्लास, सर्वोदय।
(५) समास बतलाइए—ऋतुराज, नववधू, बागबगीचो, चतुर्दिक्।

(११)

आशा एक वरदान है और निराशा अभिशाप। आशा एक स्वर्गीय स्वर्णिमकिरण है और निराशा घोर घनान्धकार। आशा हमे प्रेरित तथा उत्साहित करती है और निराशा रुलारुला कर आत्म हत्या की ओर घसीट ले जाती है। आशा हमारी कल्पना के पर लगाती है और निराशा हमें 'कटी पतंग' सा असहाय छोड़ देती है। आशा जीवनदायिनी सुधा है और निराशा मृत्युवाहिनी गरलधारा। तात्पर्य यह है कि आशा में सभी अच्छाइयां है और निराशा में सभी बुराइयां है। किन्तु यह एकांगी दृष्टिकोण है, जहां आशा को पूर्णिमा और निराशा को अमावस्या सिद्ध किया गया है। दूसरे दृष्टिकोण से देखने पर कहा जा सकता है कि बात उलटी है। आशा हमे भटकाती तथा तड़पाती है किन्तु निराशा मुक्त और स्वच्छन्द छोड देती है। आशा के दास सारे संसार के दास हो जाते है, किन्तु निराशा के दास, दास नहीं स्वामी होते है संसार के। कहा भी गया है कि निराश आदमी ही संसार की कायापलट कर सकते है और उसका नेतृत्व संभाल सकते हैं।

प्रश्न—(१) उक्त गद्य खंड का उपयुक्त शीर्षक दीजिए।
(२) मोटे शब्दों का आशय स्पष्ट कीजिए।
(३) सन्धि विच्छेद कीजिए—निराशा, घनान्धकार, एकांगी, स्वच्छन्द।
(४) आशा और निराशा के दोनो पक्षो का अन्तर स्पष्ट करिए।
(५) क्या आप गद्य के अन्तिम वाक्य से सहमत है ? हां तो क्यों और नहीं तो क्यों ?

(१२)

बचपन के क्षण बड़े मीठे और सुहावने होते हैं। इनका स्मरण भी

हृदय मे एक अजीब गुदगुदा उत्पन्न करता है। आदमी कितना भी बूढ़ा हो जाय, **मगर बचपन की याद उसे सचमुच बच्चा बना देती है**। 'बचपन मे हम भी ऐसी ही भूलें करते थे, ऐसे ही खेल करते थे और ऐसी ही शैतानी, नादानी में मस्त रहते थे' यह सोचकर **अच्छा भी लगता है और लाज भी आती है**। आज जब कभी हम बच्चों को ऊटपटांग काम करते देखते हैं तो **अक्सर** डाट देते हैं। उस समय हम यह नही सोचते कि बचपन मे हम भी ऐसा ही करते थे। **यदि एक बार भी ऐसा सोच लें तो बच्चों पर होने वाले अत्याचार आज से एकदम बन्द हो जावें।**

प्रश्न—(१) उपर्युक्त गद्य खंड को अच्छा सा शीर्षक दीजिए और उसका उद्देश्य बतलाइए।

(२) मोटे शब्दो की व्याख्या कीजिए।

(३) तत्सम बतलाइए—मीठे, बूढा, लाज, काम।

(४) लेखक के विचार से आप कहा तक सहमत हैं ?

(१३)

कृष्ण और सुदामा बचपन के मित्र थे। दोनों एक ही गुरु के समीप विद्याध्ययन करते थे। कालान्तर में कृष्ण नरेश बने और **सुदामा ज्यों के त्यों परमुखापेक्षी हो रहे**। एक बार सुदामा अपनी पत्नी के आग्रह से कुछ सकुचाते हुए कृष्ण के पास इसलिए गये कि उनकी **निर्धनता सदा के लिए मिट जाय**। द्वारका मे जाकर वे चक्कर खाने लगे। बड़ी कठिनता से वे **कृष्ण-भवन के** द्वारपाल तक पहुंचे और उससे अपना दुःख-निवेदन करने लगे। वह द्वारपाल कृष्ण के सामने जाकर सुदामा का जो चित्र प्रस्तुत करता है, **उसे नरोत्तम-दासजी के शब्दों में सुनिये**—

'सीस पगा न झगा तन मे प्रभु जाने को आहि बसै केहि ग्रामा।
धोती फटी सी लटी दुपटी अरु पाय उपानहु की नहिं सामा ॥
द्वार खड़ो द्विज दुर्बल एक, रह्यो चकिसो बसुधा अभिरामा।
पूंछत दीनदयाल को धाम, बतावत आपन नाम सुदामा ॥

प्रश्न—(१) उपर्युक्त गद्यांश का शीर्षक देकर, संक्षेप में सार प्रस्तुत कीजिए।

(२) सन्धि विच्छेद करिए—विद्याध्ययन, कालान्तर, नरेश, नरोत्तम।

(३) तत्सम बतलाइए—पास, चक्कर, सीस, दुपटी, उपानहु।

(४) रेखांकित वाक्यों का आशय समझाइए।

(१४)

जंगली मनुष्यों में परिचय का विस्तार बहुत थोड़ा होता है। बहुत से जंगली जातियां अब भी ऐसी है, जिनमें कोई एक व्यक्ति बीस-पच्चीस से अधिक आदमियों को नहीं जानता। अतः उसे दस-बारह कोस पर ही रहने वाला अगर कोई दूसरा जंगली मिले और मारने दौड़ पड़े, तो वह भागकर, उससे अपनी रक्षा, उसी समय तक के लिए ही नहीं, किन्तु सदा के लिए कर सकता है **पर सभ्य और उन्नत समाज में भय के द्वारा स्थायी रक्षा नहीं की जा सकती** इसी से जंगली और असभ्य जातियों में भय अधिक होता है। जिससे भयभीत हो सकते है, उसी को श्रेष्ठ मानते हैं और उसी की स्तुति करते है **उनके देवी-देवता भय के प्रभाव से कल्पित होते है** और किसी आपत्ति या दुःख से बचे रहने के लिए ही अधिकतर वे उनकी पूजा करते हैं।

प्रश्न—(१) उपर्युक्त गद्यांश का शीर्षक दीजिए और संक्षेप में सार लिखिए।
(२) रेखांकित वाक्यों की व्याख्या कीजिए।
(३) समास बतलाइए—बीस, पच्चीस, दस-बारह, देवी-देवता, भयभीत
(४) तत्सम बतलाइए—बहुत, बारह, कोस।

(१५)

यह समझना भूल होगी कि कहानी जीवन का यथार्थ चित्र है। यथार्थ जीवन का चित्र तो मनुष्य स्वयं हो सकता है, मगर कहानी के पात्रों के सुख-दुख से हम जितना प्रभावित होते है, **उतना यथार्थ जीवन से नहीं होते—जब तक कि वह जीवन की सीमा में न आजावे।** कहानी के पात्रों से हमें एक या दो मिनट के परिचय में निजत्व हो जाता है और हम उनके साथ हंसने और रोने लगते हैं। **उनका हर्ष और विषाद हमारा हर्ष और विषाद हो जाता है।** इतना ही नहीं बल्कि कहानी पढ़कर वे लोग भी रोते या हंसते देखे जाते है, जिन पर साधारणतया सुख दुख का कोई असर नहीं होता। जिनकी आंखें श्मशान या कब्रिस्तान में भी सजल नहीं होतीं, वे लोग भी उपन्यास के मर्म-स्पर्शी स्थलों पर पहुंच कर रोने लगते हैं।

प्रश्न—(१) इस गद्य-भाग का ठीक शीर्षक बतलाइए।
(२) रेखांकित वाक्यों का आशय स्पष्ट करिए।
(३) समास बतलाइए—यथार्थ, सुखदुख, मर्मस्पर्शी।
(४) विलोम बतलाइए—भूल, प्रभावित, निजत्व, सजल।

(१६)

ऐसो को उदार जग माही ।
बिनु सेवा जो द्रवै दीन पर राम सरिस कोउ नाही ।।
जो गति जोग बिराग जतन करि नहिं पावत मुनि ग्यानी ।
सो गति देत गीध सबरी कहु प्रभु न बहुत जिय जानी ।।
जो संपति दस सीस अरपिकर रावन सिव पहँ लीन्ही ।
सो संपदा बिभीषन कह, अति सकुच सहित हरि दीन्ही ।।
तुलसिदास सब भाँति सकल सुख जो चाहसि मन मेरो ।
तौ भजुराम, काम सब पूरन करै कृपानिधि तेरो ।।

प्रश्न—(१) उक्त कविता का सारांश संक्षेप मे लिखिए ।
(२) इसमे आई हुई अन्त कथाओ को स्पष्ट करिए ।
(३) राम की उदारता के सम्बन्ध में तुलसीदासजी के विचारो को समझाइए ।
(४) तत्सम बतलाइए—जग, सरिस, जोग, जतन, ग्यानी, सीस, सब, सिव, सकुच, काम, पूरन ।

PRE-UNIVERSITY EXAMINATION, 1960
GENERAL HINDI

३. (अ) निम्नलिखित वाक्यों में से किन्हीं तीन वाक्यों के टेढ़े शब्दों को शुद्ध कीजिये —

(क) *क्षात्रों* की प्रकृति का ज्ञान अध्यापक को *रखना* ही चाहिए।

(ख) *सरद-रितु* की चाँदनी उज्ज्वल होती है।

(ग) उपरोक्त वाक्यों को *विद्यार्थियों* ने पढ़ा भी नहीं।

(घ) कभी-कभी चोरों की *चातुर्यता* देखकर रक्षक भी *आश्चर्य* में पड़ जाते हैं।

(ङ) *विद्वान् कवियित्री* की कविता सुनकर सभी मुग्ध हुवे थे।

(च) *परिक्षक* की दृष्टि अशुद्धि पर अवश्य *पड़ती* है।

(आ) निम्नलिखित शब्द-युग्मों में से केवल तीन शब्द-युग्मों का अन्तर बताइये:—

(१) परिणाम, परिमाण। (२) स्रोत, श्रोत्र। (३) सुत, सूत्र। (४) तरणी, तरुणी। (५) अनल, अनिल। (६) भ्रम, सन्देह।

(इ) निम्नलिखित शब्दों में से केवल तीन शब्दों के दो-दो पर्याय शब्द लिखिये —

[क] विद्यार्थी। [ख] पैर। [ग] बेटा। [घ] शत्रु। [ङ] मित्र। [च] अध्यापक।

(ई) नीचे लिखे हुए मुहावरों में से किन्हीं तीन मुहावरों का अर्थ लिखकर वाक्यों में प्रयोग कीजिये:—

[क] आँखें बिछाना। [ख] कान पर जूँ न रेंगना। [ग] पानी पानी हो जाना। [घ] दाँतों तले अँगुली दबाना। [ङ] ईद का चाँद होना। [च] आड़े हाथों लेना।

(उ) निम्नलिखित लोकोक्तियों में से किन्हीं तीन का प्रयोग अपने वाक्यों में इस प्रकार कीजिये कि उनका अर्थ स्पष्ट हो सके:—

[क] मुद्दई सुस्त गवाह चुस्त ।

[ख] धोबी का कुत्ता घर का न घाट का ।

[ग] बन्दर क्या जाने अदरक का स्वाद ।

[घ] तिनके की ओट पहाड़ ।

[ङ] नीम हकीम खतरेजान ।

[च] कभी नाव गाड़ी पर कभी गाड़ी नाव पर ।

४ आज की शिक्षा की सबसे बड़ी कमी है कि वह विद्यार्थी को स्वावलम्बी न बना कर परमुखापेक्षी बनाती है । आज की शिक्षा न तो धर्म-कारी है और न अर्थकारी । अर्थकारी से अभिप्राय उस शिक्षा से है जो विद्यार्थी को अपने पैरों पर खड़ा होना सिखाती हो । हमारी वर्तमान शिक्षा प्रणाली इस दृष्टि से भी सदोष है । आज का शिक्षित व्यक्ति किसी न किसी प्रकार की नौकरी से चिपक जाना चाहता है । उसे अपने ऊपर विश्वास नहीं, वह किसी भी प्रकार का संकट उठाकर स्वावलम्बन का कार्य नहीं कर सकता । इसका सीधा सा परिणाम सामने है । बेकारी की समस्या दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही है । थोड़ी सी नौकरियां असंख्य जन-समूह के लिये भला कैसे पर्याप्त हो सकती हैं ?

उपर्युक्त गद्यांश को ध्यान से पढ़कर निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दीजिये.—

[क] आज के शिक्षित व्यक्ति को अपने ऊपर विश्वास क्यों नहीं होता ?

[ख] स्वावलम्बी न होने का क्या बुरा परिणाम होता है ?

[ग] प्रस्तुत अवतरण के रेखाङ्कित अंशों का अर्थ सरल भाषा में समझाइये ।

[घ] उक्त गद्यांश का कोई सुन्दर शीर्षक चुनिये ।

५. निम्नलिखित विषयों में से किसी एक पर हिन्दी भाषा में सुन्दर निबन्ध लिखिये.—

[क] मनोरंजन के साधन ।

[ख] हमारा प्रिय लेखक या कवि ।

[ग] विज्ञान के गुण-दोष ।

[घ] स्त्री-शिक्षा का महत्व ।

[ङ] भारत की राष्ट्रभाषा ।

[च] यदि मैं नेता बन जाऊं ।

[छ] स्वतन्त्र भारत की आर्थिक समस्यायें ।

अथवा

अपने प्रधानाध्यापक को एक पत्र लिखिये जिसमें निम्नलिखित विषयों मे से किसी एक का वर्णन हो:—

[क] छात्रावास की आवश्यकतायें ।

[ख] सहशिक्षा के गुण-दोष ।

[ग] अपनी आर्थिक स्थिति ।

P. U. EXAMINATION, 1961

४. (अ) निम्नलिखित वाक्यो मे किन्ही तीन वाक्यो के मोटे शब्दों को शुद्ध कीजिये ।

(क) *विशेष* स्थानों पर *स्त्रीयां* ही *प्रतिष्ठा* की *अधिकारिणी* होती है ।

(ख) *लक्ष्मण* और *शत्रुघ्न* *दशरथ* के *आतमज* थे ।

(ग) *सहस्त्रों* *बरस* हो चुके पर *रामराज्य* की आज भी *प्रशंसा* है।

(घ) *उपरोक्त* *प्रश्नों* का *स्वरुप* समझकर अपना *मनतव्य* समझाओ ।

(ङ) *परिक्षकों* को *क्षात्रों* की *कक्षा* का ध्यान रखकर उत्तर-पुस्तको का *संसोधन* करना चाहिये ।

(आ) निम्नलिखित शब्द-युग्मो में से केवल तीन का अन्तर अर्थ और उदाहरण देकर समझाइये:—

(i) संकर-शंकर । (ii) स्वगत-स्वागत । (iii) हरिण (हिरन)-हिरण्य । (iv) सुवर्ण-सवर्ण । (v) प्रवाद-प्रमाद ।

(इ) निम्नलिखित शब्दों में से केवल तीन शब्दो के तीन तीन पर्यायवाची शब्द लिखिये:—

कमल कनक सर्प पक्षी, हस ।

(ई) नीचे लिखे मुहावरों में से किन्हीं तीन का अर्थ लिखकर वाक्य में प्रयोग कीजिये.—

(क) शहद लगाकर चाटना। (ख) दाल न गलना। (ग) दाल में काला होना। (घ) नमक मिर्च मिलाना। (ङ) पेट में चूहे कूदना। (च) भीगी बिल्ली बनना।

(उ) निम्नलिखित लोकोक्तियों में से किन्हीं तीन का प्रयोग इस प्रकार कीजिये कि उनका अर्थ स्पष्ट हो सके:—

(क) आधी छोड़ पूरी को धावै, आधी मिलै न पूरी पावै।
(ख) आये थे हरि-भजन को, ओटन लगे कपास।
(ग) तुम डाल-डाल, हम पात-पात।
(घ) राम-राम जपना, पराया माल अपना।
(ङ) नौ सौ चूहे खाइ बिलाई, चली हज्ज करने को।

५. कवित्व को ही अपने जीवन का लक्ष्य बनाने वाले भावुक कवि कम ही हुआ करते हैं, किन्तु उद्योग और व्यवसाय तो सब के लिए समान हैं। यूरोप और अमेरिका व्यावसायिक देश है—व्यावसायिकता ने इनके राष्ट्रीय जीवन के सभी पहलुओं को दबा रखा है। कविता और व्यवसाय आपाततः विरोधी प्रतीत होते हैं, व्यापारी की दृष्टि मे कविता एक क्षणिक वस्तु है, और कवि की दृष्टि मे व्यापार, परन्तु मतिहीन एवं प्रेमहीन व्यवसाय की भित्ति पर उभरा हुआ सामाजिक चित्र सुन्दर नहीं हो सकता। व्यवसाय की इस आत्म-हीनता को दूर करने के लिए उसमें कविता की पुट देना आवश्यक है।

उपर्युक्त अवतरण को ध्यान से पढ़कर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये:—

(क) कविता और व्यवसाय विरोधी क्यों हैं?
(ख) व्यवसाय की आत्महीनता किस प्रकार दूर की जा सकती है?
(ग) रेखांकित अंशों का अर्थ सरल भाषा मे समझाइये।
(घ) उक्त अवतरण का कोई सुन्दर शीर्षक चुनिये।

६. निम्नलिखित विषयों में से किसी एक पर हिन्दी भाषा में सुन्दर निबन्ध लिखिये:—

(क) विज्ञान और नवयुग

(ख) परीक्षा-प्रणाली के गुण-दोष ;

(ग) छात्र-जीवन और सदाचार ।

(घ) समाचार--पत्र की उपयोगिता ।

(ङ) सहकारी कृषि के हानि लाभ ।

(च) समय का सदुपयोग ।

(छ) बेकारी की समस्या और उसका हल ।

अथवा

कोटा के सुशील गर्ग अथवा मनस्विनी शर्मा की ओर से डी० ए० वी० कालेज, जयपुर के प्रधानाचार्य के नाम उसी विद्यालय में प्रवेश पाने के निमित्त एक प्रार्थना-पत्र लिखिये ।

अथवा

उक्त छात्र अथवा छात्रा की ओर से कोटा स्थित उनके पिता के नाम एक पत्र लिखिए जिसमे किसी ऐतिहासिक नगर का अथवा दुर्घटना का आँखों देखा वर्णन हो ।

PRE-UNIVERSITY EXAMINATION, 1962
GENERAL HINDI

४. (अ) निम्नलिखित वाक्यो में से किन्हीं तीन वाक्यों के रेखांकित शब्दो को शुद्ध कीजिए:—

(क) मानसिक द्रढता आवश्यक है ।

(ख) मेरी द्रष्टि हृष्टव्य इस्थानों पर नही जाती ।

(ग) प्रेम की अपेक्षा मैं कर्तव्यं को अधिक महत्व देता हूं ।

(घ) तिस्यरक्षिता का चरित्र उत्क्रष्ट कोटी का नहीं ।

(ङ) नारियां तिरस्क्रित होकर भीशण प्रतिकार चाहती हैं ।

(आ) निम्नलिखित शब्द–युग्मो मे से किन्हीं तीन का अन्तर समझाइये—

[i] अनल–अनिल । [ii] शुक्ल–शुल्क । [iii] नियत–नियति । [iv] तरणि–तरणी । [v] संकर–शंकर ।

(ई) निम्नलिखित शब्दों में से किन्ही तीन के तीन-तीन पर्यायवाची शब्द लिखिए विद्यार्थी बेटा मित्र सूर्य, अध्यापक ।

(ई) नीचे लिखे हुए मुहावरों में से किन्हीं तीन का अर्थ लिखिए और वाक्यों में उनकी स्थिति दिखाइये.—

[क] आँखें लाल करना। [ख] नाक भौं सिकोड़ना। [ग] आकाश में थेगली लगाना। [घ] मुँह फेर लेना। [ङ] अंगूठा दिखाना।

(उ) निम्नलिखित लोकोक्तियों में से किन्हीं तीन का वाक्यों में इस प्रकार प्रयोग कीजिये कि अर्थ स्पष्ट हो सके :—

(क) नीम हकीम खतरे जान।

(ख) न होगा नौ मन तेल न राधा नाचेगी।

(ग) नाच न जाने आँगन टेढ़ा।

(घ) धोबी का कुत्ता घर का न घाट का।

(ङ) अन्धा क्या चाहे, दो आँखें।

५. कविता यदि वास्तव में कविता है तो संभव नहीं कि उसे सुन कर सुनने वाले पर कुछ असर न हो। कविता से दुनियां में आज तक बहुत बड़े काम हुए हैं। अच्छी कविता सुन कर कवितागत रस के अनुसार दुःख, शोक, क्रोध, जोश आदि के भाव उत्पन्न हुए बिना नहीं रहते और जैसा भाव मन में पैदा होता है, कार्य के रूप से फल भी वैसा ही होता है। हम लोगों में भाट, चारण आदि अपनी कविता ही की बदौलत वीरों में वीरता का संचार कर देते थे। पुराण आदि में कारुणिक प्रसंगों का वर्णन सुनने में जो अश्रुपात होने लगता है वह क्या है? वह अच्छी कविता का ही तो प्रभाव है।

उपर्युक्त गद्य-भाग को ध्यान से पढ़ कर निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिये—

(क) यथार्थ कविता किसे कहते हैं?

(ख) अच्छी कविता का क्या प्रभाव है?

(ग) रेखांकित शब्दों के अर्थ लिखिये।

(घ) उक्त गद्यांश का कोई सुन्दर शीर्षक चुनिये।

६. निम्नलिखित विषयों में से हिन्दी भाषा में किसी एक विषय पर सुन्दर निबन्ध लिखिये:—

(क) पुस्तकालय। (ख) समाचार-पत्र। (ग) मनोरंजन के साधन। (घ) सहशिक्षा के गुण-दोष। (ङ) सैनिक शिक्षा के हानि-लाभ। (च) भारत

की राष्ट्र भाषा । (छ) स्वतन्त्र भारत की आर्थिक समस्याएं ।

अथवा

जयपुर निवासी ऋषभदास जैन (पिता) की ओर से उनके पुत्र या पुत्री के नाम एक पत्र लिखिये, जिसमे निम्नलिखित विषयो मे से किसी एक विषय का विस्तृत वर्णन हो:—

(क) समय का सदुपयोग ।

(ख) विद्यार्थी और चरित्र ।

(ग) व्यायाम का महत्व ।

I Year Exam. of Three Year's Degree Course

Time 3 hrs. COMPULSORY–HINDI 1959 M. M. 100

२. (क) निम्नलिखित शब्द-युग्मो मे से किन्ही छः का अन्तर स्पष्ट कीजिये— विक्रम-सक्रम, निर्माण-निर्वाण; अनल-अनिल; जलद-जलज; कुल-कूल दर्प-दर्पण; अस्त्र-शस्त्र; सुवर्ण-स्वर्ण, कृतज्ञ-कृतघ्न; निर्मल-निर्मम ।

(ख) निम्नलिखित मुहावरों तथा लोकोक्तियों में से किन्ही चार का अर्थ स्पष्ट करते हुए अपने वाक्य में प्रयोग कीजिए—

भेड़ियाधसान; तिल की ओट पहाड; आग से खेलना; ओस चाटने से प्यास नही जाती; एक तो करेला दूसरे नीम चढा, आ बैल मुझे सींग मार. खेत रहना; ऊंट के मुंह मे जीरा ।

(ग) निम्नलिखित मे से किन्ही चार के पांच पांच पर्यायवाची शब्द लिखिये—

कमल, बेटा, माता; पहाड; घर; नदी; समुद्र: लक्ष्मी ।

(घ) निम्नलिखित वाक्यो में से किन्हीं चार को शुद्ध कीजिए—

१. उनको समझौते की इच्छा नही थी । २. अध्यक्ष के प्रस्ताव को जोरदार समर्थन । ३. गांवो पर सर्पो का प्रकोप । ४. आपकी राय से यह काम जरूरी है । ५. फिर कुछ देर से उसने कहा । ६ आपकी कथन उन्हे पसन्द की । उन लोगो पर कडी कार्रवाई की जावेगी । ८. वह खेल को लेकर व्यस्त था ।

(३) निम्नलिखित विषयो मे से किसी एक पर लगभग चार पृष्ठो मे निबन्ध लिखिये—

१. बहुद्देशीय शिक्षा २. विद्यार्थियो की समस्या ३. समाज और धर्म

४ आधुनिक विज्ञान ५ कोई मनोरजक घटना ६ हिंदी का महत्व ७ दीपावली।

४. निम्नलिखित अवतरण को शुद्ध हिन्दी मे अनुवाद कीजिए—

यद्यपि ससारे बहूनि वस्तूनि सन्ति, परन्तु विद्यैव सर्वश्रेष्ठ धनमस्ति। अतएवोच्यते— विद्याधनं सर्व धनप्रधानम्।' विद्यया मनुष्यं स्वकीय कर्तव्य जानाति। विद्ययैव मनुष्यो जानाति यत् को धर्मः, कोऽधर्मं, किं कर्तव्यम्, किम् अकर्तव्यम्, किं पुण्यम् किं पापम्, किं कृत्वा लाभो भविष्यति, केन कार्येण वा हानि. भविष्यति। स विद्या प्राप्या सन्मार्गम् अनुवर्तितु' प्रयतते। एव विद्ययैव मनुष्यो मनुष्योऽस्तु। यो मनुष्यो विद्याहीनोऽस्ति स कर्तव्याकर्तव्यस्य अज्ञानात् पशुवद् आचरति, अतः स पशुरित्यभिधीयते। विद्या विहीनः पशु इति।

अथवा

In the beginning of the century there took place in England what was known as the Industrial Revolution. Upto this time ost of the people in the British Isles had made their living by farming. The manufactures were small and were generally done by en and women in their own homes. But now a great change took place. The power of steam was discovered, the first steam engines were made and machinery was invented to do a great art of the work which before people had done with their own hands. Factories were built where the machinery was put up and the people came to live in towns to be near the factories, instead of living and working in their country cottage as before.

I YEAR T. D. C EXAMINATION 1960

COMPULSORY HINDI

१. "प्रेमी का हृदय दीनो का भवन है, दीनो का हृदय दीन-बन्धु भगवान का मन्दिर है, और भगवान का हृदय प्रेमी का वासस्थान है।" इस कथन की पुष्टि वियोगी हरि के निबन्ध द्वारा कीजिए। अथवा

'नर से नारायण' नामक निबन्ध किसका लिखा हुआ है? इसके नामकरण की सार्थकता बताते हुए लिखिए कि यह निबन्ध आपको क्यों पसन्द आया?

२. माखनलाल चतुर्वेदी, जैनेन्द्रकुमार तथा मोहनलाल महतो में से

किसी एक की लिखी कहानी को संक्षेप मे लिखिए और बताइए कि आपके विचारों पर उसका क्या प्रभाव पड़ा ?

३. (क) "कला के सम्मुख राज्य-शक्ति को हारना पड़ा है।" इस कथन की पुष्टि अपने पढ़े हुए एकांकी द्वारा कीजिए। अथवा

अपने पढ़े हुए एकांकी द्वारा सिद्ध कीजिए कि राष्ट्र-प्रेम व्यक्तिगत-प्रेम त्याग कर सकता है। अथवा

सेठ गोविन्ददास तथा विष्णु प्रभाकर में से किसी एक के लिखे एकांकी नाटक पर अपने विचार प्रकट कीजिए।

(ख) कहानी और नाटक में क्या भेद है, संक्षेप में लिखिए। अथवा

बताइए कि श्रेष्ठ एकांकी अथवा कहानी मे क्या गुण होने चाहिए ?

४.(क) निम्नलिखित शब्दों मे से किन्हीं चार के प्रतिलोम शब्द बताइए—

(१) क्रय (२) पक्ष (३) संयोग (४) चर (५) आदर (६) विष (७) पाप (८) उत्थान।

(ख) निम्नलिखित मे से किन्ही तीन के पर्यायवाची शब्द लिखिए—

(१) लक्ष्मी (२) शरीर (३) सूर्य (४) देवता (५) सांप (६) पहाड़।

(ग) निम्नलिखित शब्द युग्मों मे से किन्ही तीन का अन्तर स्पष्ट कीजिए—

(१) नाग और नग (२) भित्ति और भिति (३) अलि और आलि (४) अंस और अंश (५) ग्रह और गृह (६) तरणि और तरणी।

(घ) निम्नलिखित वाक्यों मे से किन्ही तीन को शुद्ध रूप में लिखिए—

(१) सीतल जल के पान सें हिरदय सान्त हो गया। (२) सीला हमारे एक मित्र की महिला है। (३) किताब मेरी मैंने उसी दिन दे दी थी। (४) वह धैर्यता से काम लेता है। (५) पूज्यनीय गुरुजी ने मुझको उपदेश दिया।

(ङ) निम्नलिखित लोकोक्तियों तथा मुहावरों में से किन्ही चार का अर्थ बताते हुए वाक्यों में प्रयोग कीजिए—

(१) खटाई मे पड़ना। (२) कान खा जाना। (३) एक लाठी से हांकना। (४) हवा लगना। (५) आसमान पर चढ़ना। (६) खोदा पहाड़ निकली चुहिया (७) चमड़ी जाय पर दमड़ी न जाय।

५. निम्नलिखित विषयों में से किसी एक पर लगभग चार पृष्ठों मे निबन्ध लिखिए—

(१) बेकारी की समस्या। (२) विद्यार्थी और राजनीति। (३) श्रमदान। (४) अनुशासन। (५) अपनी प्रिय पुस्तक। (६) आज का समाज।

६. निम्नलिखित अवतरण की शुद्ध हिन्दी मे अनुवाद कीजिए—

What will not the child do for his mother? Therefore, it is essential that the mother should be a worthy mother. Worthy mother will produce worthy sons. And when sons move heaven and earth for their mother it is but natural to expect that woman should be worthy of so much effort and sacrifice. Abrham Linclon's mother burnt the midnight oil not on books but on keeping her childern going. She was wise, hard working and honest. Above all, she was brave. Her son Aby also became brave, honest, wise and industrious because his mother taught him to be so.

अथवा

कस्यापि पीडनं दुःखदाने वा हिंसेति कथ्यते। हिंसा त्रिविधा भवति—मनसा, वाचा, कर्मणा च। मनुष्यो यदि कस्यचित् जनस्य अशुभं हानिं वा चिन्तयति, सा मानसिकी हिंसा वर्तते। यदि कठोर भाषेणन, कटु प्रलापेन, दुर्वचनेन, असत्य भाषेणन वा किमपि दुःखितं करोति तर्हि सा वाचिकी हिंसा भवति। यदि जनः कस्यापि जीवस्य हननं करोति, ताडनादि वा दुःखं ददाति, तर्हि सा कायिकी हिंसा भवति। एतासां तिसृणां हिंसानां परित्यागोऽहिंसेति न गद्यते।

I YEAR T. D. C. EXAM. 1961

GENERAL HINDI

४. (क) निम्नलिखित मे से किन्ही तीन के चार-चार पर्यायवाची शब्द लिखिये—

[i] यमुना, [ii] विष्णु, [iii] समुद्र [iv] पृथ्वी, [v] हाथी, [vi] सोना।

[ख] निम्नलिखित शब्द-युग्मो में से किन्ही चार का अन्तर स्पष्ट कीजिये—

[i] अविराम और अभिराम, [ii] अनल और अनिल, ...कि आप और जलज। [iv] प्रसाद और प्रासाद। [v] वित्त और वृत्त। [vi] श सर।

(ग) निम्नलिखित वाक्यो मे से किन्हीं तीन को शुद्ध रूप मे लिखिये—

[i] सच्चा मित्र जीवन मे कोई एक ही बिरला होता है।

[ii] नवल बाबू कल यहा मे मोटरो मे रवाना होकर गये है।

[iii] जब श्री सुशीला देवी ने सभापत्नी का आसन ग्रहण किया तो सब ने जोर मे तालियां बजाई।

[iv] सिह की पुकार सुनते ही मेरा घोडा जोर-जोर से चिल्लाने लगा।

[v] वे हर समय मूर्खो की तरह आपस मे लडते रहे।

[vi] आज इस भवन पर नेताजी ने झण्डा उडाया है।

[घ] निम्नलिखित मुहावरों मे से किन्ही चार का अर्थ बताते हुए वाक्यो मे प्रयोग कीजिये—

[i] हाथ फैलाना। [ii] हाथ मलना। [iii] कान खड़े होना। [iv] गंगा नहाना। [v] कलम तोडना। [vi] आधी के आम। [vii] आस्तीन का सांप।

५. निम्नलिखित विषयो मे से किसी एक पर लगभग चार पृष्ठों मे निबन्ध लिखिये—

६. निम्नलिखित अवतरण का शुद्ध हिन्दी में अनुवाद कीजिये—

When Rama, accompanied by Lakshmana and Sita, set out on his Journey to the forest, the people of Ayodhya followed them as far as the banks of the river Tamasa. When it grew dark all the people slept on beds of leaves. At daybreak, Rama arose from his bed of leaves and seeing the people still asleep, said to his brother—'Behold these people, devoted to us and unmindful of their own interests, sleeping beneath these trees. They have vowed to take us back and will never leave us. Let us, therefore, gently mount the chariot and take our departure.' Then Sumantra at the command of Rama, yoked the horses to the chariot and they all

अथवा

बाल्यकाले विशेषतो बालकस्योपरि संसर्गस्य प्रभावो भवति । बालकं यादृशैः बालकैः सह संगति करिष्यति तादृश एव भविष्यति । अतो बाल्यकाले दुर्जनैः सह संगतिः कदापि न करणीया । दुर्जनानां संसर्गेण बहवो हानयं भवन्ति । यथा—दुर्जन संसर्गेण मनुष्योऽसद्वृत्तो भवति, दुर्विचारयुक्तो भवति, तस्य बुद्धिर्दूषिता भवति, अतः बुद्धिः क्षीयते, दुर्व्यसनग्रतो भवति, अतस्तस्य शरीरं क्षीणं निर्बलं च भवति तस्य कीर्तिः नश्यति, सर्वत्रानादरो भवति, सर्वत्राप्रतिष्ठाभाजनं च भवति ।

I Yr. T. D. C. EXAMINATION 1962

GENERAL HINDI

४. (क) निम्नलिखित शब्द-युग्मो मे से किन्हीं तीन का अन्तर स्पष्ट कीजिये—

(i) शंकर और संकर । (ii) सर्वदा और सर्वथा । (iii) लक्ष और लक्ष्य । (iv) भुवन और भवन । (v) अनल और अनिल । (vi) बलि और बली । (vii) पानी और पाणि । (viii) प्रणाम और प्रमाण ।

(ख) नीचे लिखे मुहावरो में से किन्हीं चार का अर्थ बतलाते हुए वाक्यो मे प्रयोग कीजिये—

(i) ढाक के तीन पात, (ii) भाड़ झोंकना, (iii) भंडा फोड़ना, (iv) लुटिया डुबोना, (v) हाथ साफ करना, (vi) घी के दीपक जलाना ।

(ग) नीचे लिखे शब्दो में से किन्ही चार के विलोम शब्द लिखिये—

मुक्त, सुकर, साधारण, आकाश, उत्थान, आय, उदय, अपना ।

(घ) नीचे लिखे शब्दों में से किन्ही चार के तीन-तीन पर्यायवाची शब्द लिखिये—

किरण, तम, दूध, देवता, लक्ष्मी, शरीर, संसार ।

(ङ) नीचे लिखे वाक्यो में से किन्ही तीन को शुद्ध रूप मे लिखिये—

(i) राम अथवा श्याम कोई आयेंगे ही ।

(ii) शिष्यों ने गुरु का दर्शन किया ।

(iii) उनकी सौजन्यता पर कौन मुग्ध नहीं होगा ।

(iv) अनेकों विद्यार्थी वहा एकत्रित हुए थे ।

(v) राम की उपेक्षा श्याम श्रेष्ठ है ।

५ नीचे लिखे विषयो मे से किसी एक विषय पर चार पृष्ठों का निबन्ध लिखिये—

(क) विद्यार्थी और अनुशासन। (ख) शासन में विकेन्द्रीकरण। (ग) मनोरंजन के साधन। (घ) महिला शिक्षा।

६. नीचे लिखे अवतरण का शुद्ध हिन्दी में अनुवाद कीजिये—

The Prime Minister, Shri Nehru, said that he would not like students to become merely book-worms. They should develop an integrated personality and well in every field, in their studies, debating societies and other activities. They had to develop both their mind and body and try to become first rate men. He further said that it was the first and foremost duty of the youth to creat an atmosphere in their universities and outside where they themselves kept to the right path and also prevented others from doing wrong.

अथवा

स्वतन्त्रे भारते अस्मिन् हिन्दीभाषायाः महत्वं तु स्पष्टमेवास्ति। वर्तमानकाले आङ्ग्लभाषायाः स्थाने एषा हिन्दीभाषैव स्थापिता भविष्यति। राजकीयकार्यालयानां भाषापि एषा भाषा एव भविष्यति। परं संस्कृतभाषाया ज्ञानमन्तरेण वयं हिन्दी भाषाया सम्यक्ज्ञानमपि कर्तुं न शक्नुमः। अतः अस्ती महती आवश्यकता संस्कृतभाषायाः स्वतन्त्रे युगेऽस्मिन। न आङ्ग्लभाषायाः तादृशी आवश्यकता। गौणरूपेणैवा भाषाऽपि प्रचलिता स्यात् परं संस्कृतभाषा न अस्माभिरुपेक्षणीया।

कालेज प्रेस, जयपुर।